CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा, पुणे.

राष्ट्रभाषा का अध्यापन

प्रा. डॉ. ग. न. साठे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा-प्रकाशन – २७

राष्ट्रभाषा का अध्यापन

★

लेखक

प्रा. (डॉ.) गजानन नरसिंह साठे,

एम. ए. (बम्बई), एम. ए. (बनारस)

बी. टी., साहित्य-रत्न, पीएच. डी.

●

संशोधित तृतीय पुनर्मुद्रण

महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा, पुणे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रकाशक :

ग. वा. करमरकर,
सचिव, महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा
राष्ट्रभाषा भवन, पुणे ३०.

* *

प्रथम संस्करण : अप्रैल १९५७
संशोधित पुनर्मुद्रण : जनवरी १९६२
पुनर्मुद्रण : जनवरी १९६६
पुनःसंशोधित पुनर्मुद्रण : मार्च १९७१

* *

मूल्य छः रुपये

* *

मुद्रक :

गो. प. नेने,
राष्ट्रभाषा मुद्रणालय,
३८७ नारायण पेठ, पुणे ३०.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आमुख

[प्रथम संस्करण]

हमारी प्रार्थना के अनुसार प्रा. गजानन नरसिंह साठजी ने **'राष्ट्रभाषा का अध्यापन'** नामक पुस्तक लिखी, जिसके लिए हम उनके आभारी हैं।

हिन्दी को राष्ट्रभाषा मानकर उसका प्रचार करने की अवस्था समाप्त हो चुकी है। अब माध्यमिक पाठशालाओं के पाठचक्रम में हिन्दी को अनिवार्य स्थान मिल रहा है और सारे अहिन्दी-भाषी प्रदेशों की पाठशालाओं में हिन्दी की पढ़ाई आवश्यक कर दी गयी है। इस दृष्टि से यह स्वाभाविक है कि हिन्दी पढ़ाने की पद्धति-सम्बन्धी आविष्कार होते रहें और अनुभवसिद्ध विचार तथा प्रणालियाँ पुस्तकाकार सामग्री में हमारे सामने आती रहें। 'राष्ट्रभाषा का अध्यापन' एक प्रयत्न है, जो अहिन्दी-भाषी प्रदेश के अहिन्दी-भाषी विद्यार्थियों को ही नहीं बल्कि, हिन्दी-भाषी विद्यार्थियों को भी शिक्षणशास्त्र-सम्मत रीति से पढ़ाये गये पाठों का परिणाम है। **'अपनी बात'** में लेखक ने अनुभव और प्रेरणा का जो विवरण दिया है, वह उसका अच्छा प्रमाण है।

इधर देश में माध्यमिक पाठशालाओं के विद्यार्थियों को पढ़ायी जानेवाली भाषाओं की बड़ी चर्चा है। यह अब निःसन्देह है कि हिन्दी की पढ़ाई अनिवार्य करने की ओर लोगों का झुकाव है। इसके साथ यह भी विचारणीय विषय है कि हिन्दी के शिक्षक कैसे तैयार किये जाएँ और खास तौर से अहिन्दी प्रदेश में हिन्दी पढ़ाने के लिए किस प्रकार और कौन-सी उपयोगी तथा आसान पद्धति स्वीकार की जाए। सरकार, शिक्षण-तज्ज्ञ और संस्थाओं का ध्यान इनकी ओर खिंच गया है, यह सन्तोष की बात है। सरकार इसके बारे में अधिक दक्ष भी हो रही है।

महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा ने समय की इस आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए हिन्दी के शिक्षकों के लिए शिबिर खोलने का कार्य शुरू किया है। हर ज़िले में साल भर में एक या दो शिबिर चलाये जाते हैं, जिनमें 'पाठों की पढ़ाई' जैसा एक विषय रखा जाता है। अहिन्दी प्रदेशों में पाठशालेय विद्यार्थियों के अलावा ऐसे भी लोगों को हिन्दी पढ़ाने की समस्या रहती है, जिससे प्रौढ़ स्त्री-पुरुषों के लिए हिन्दी की पढ़ाई आसान हो।

शिक्षण शिबिर के अलावा हिन्दी-शिक्षक-विद्यालयों का संचालन किया जाता है। अभ्यास-मण्डल, निबन्ध और वाक्प्रतियोगिता, नाटच-वाचन, व्याख्यान-माला आदि शैक्षणिक प्रवृत्तियाँ 'सभा' द्वारा चलायी जाती हैं। इधर-उधर 'सभा' ने ऐसे अनुवादक तैयार करने का कार्य उठाया है, जिससे प्रत्यक्ष सभा में तत्क्षण मूल भाषण का हिन्दी भाषान्तर करनेवाले लोग तैयार हो सकें। यह 'सभा' की भिन्न-भिन्न शैक्षणिक प्रवृत्तियों में से एक विशेषता है। यह पुस्तक इन्हीं शैक्षणिक प्रवृत्तियों की एक तरह से साकार परिणति है, ऐसा कहना अतिशयोक्ति नहीं है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

क्रियाशीलता की इस अवस्था में हमने उचित समझा कि बीस-पचीस साल तक हिन्दी का प्रचार होने के बाद प्रत्यक्ष शिक्षण, लेखन, प्रकाशन आदि की ओर ध्यान दिया जाए। प्रचार का अगला कदम शिक्षण है, जिसकी परिणति साहित्य-सृजन में ही होनी चाहिए। यह पुस्तक इसी प्रगतिशील सृजनशक्ति का प्रतीक है। लेखक ने विद्यार्थी, विशेषकर अहिन्दी-भाषी प्रदेश के विद्यार्थी को केन्द्र-बिन्दु मानकर अध्यापन-सम्बन्धी विस्तृत, व्यवस्थित एवं व्यावहारिक विवेचन किया है। इसमें अहिन्दी-भाषी प्रदेश के हिन्दी अध्यापकों की कठिनाइयों के बोझ को भी हल्का करने की कोशिश की गयी है। यह बात प्रत्येक अध्याय के अन्तर्गत आनेवाले विषयों और उनके विवेचन-प्रतिपादन की रीति से स्पष्ट है। भाषा की शिक्षा-सम्बन्धी आधुनिकतम रीतियों को ध्यान में रखकर पुस्तक की रचना की गयी है और कोई भी आवश्यक विषय अछूता नहीं रहा है। कहानी, व्याकरण, कविता आदि भाषा की पढ़ाई में आनेवाले भिन्न-भिन्न विषयों के तरीके उदाहरण समेत दिये गये हैं। इससे ट्रेनिंग कॉलेज के विद्यार्थी-अध्यापकों को विशेष लाभ पहुँचेगा।

प्रा. ग. न. साठे पिछले पंद्रह साल से अध्यापन कर रहे हैं। हिन्दी प्रचार, शिक्षण आदि उनका कार्य-क्षेत्र है। हिन्दी भाषा अथवा भाषा की शिक्षण-पद्धति-सम्बन्धी आज तक जो पुस्तकें हिन्दी में लिखी गयी हैं, उनमें से करीब सभी पुस्तकों के लेखक हिन्दी-भाषी तथा हिन्दी-भाषी प्रदेश के निवासी हैं। उनकी दृष्टि में वह विद्यार्थी ही प्रधान है, जो हिन्दी-भाषी है अथवा हिन्दी के वातावरण से पूर्ण संवादी बन चुका है। अहिन्दी-भाषी प्रदेश का विद्यार्थी, जो अपनी भाषा के साथ-साथ राष्ट्रभाषा हिन्दी पढ़ना चाहता है, भाषा की शिक्षा की दृष्टि से एक नयी कुतूहल-पूर्ण समस्या उपस्थित करता है। प्रत्यक्ष प्रणाली (direct method) का प्रयोग करने की इच्छा रखनेवाला शिक्षक अनुवाद-प्रणाली का आधार लिए बगैर आगे नहीं बढ़ सकता। मराठी, गुजराती जैसी हिन्दी की ही वंशभाषा बोलनेवाले विद्यार्थी के मन में अनुवाद-क्रम जारी ही रहता है। ऐसे विद्यार्थी को लक्ष्य कर राष्ट्रभाषा के अध्यापन-सम्बन्धी सर्वग्राही पुस्तक लिखने का सम्भवतः यह पहला ही प्रयास हो, तो आश्चर्य नहीं।

राष्ट्रभाषा का प्रचार और शिक्षण के लिए स्थापित संस्था ऐसी पुस्तक का प्रकाशन करे, यह उचित और उपयोगी कार्य है, ऐसा कहा जाए तो पाठक सहमत होंगे और इस सेवा को सहर्ष स्वीकार करेंगे। इस पुस्तक के प्रकाशन में जिन्होंने हमारी सहायता की, उन सबके हम कृतज्ञ हैं।

महराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा,
राष्ट्रभाषा भवन, पुणे २
१५ चैत्र १८९७

गो. प. नेने
मंत्री

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अपनी बात

[प्रथम संस्करण : अप्रैल १९५७]

(१) आठ साल 'हिन्दी शिक्षक सनद' के तथा तीन-चार साल 'एस. टी. सी.' परीक्षा के विद्यार्थियों के सम्पर्क में आने का मुझे मौका मिला। हिन्दी, मराठी और अंग्रेज़ी के अध्यापन में मैं उनका मार्गदर्शन करता रहा। मेरी अपनी बी. टी. परीक्षा की तैयारी करते वक्त मैंने जो पढ़ा था और मुझे जो पढ़ाया गया था, उसे मैं ज्ञानार्थी छात्र की हैसियत से अपनाता गया; कुछ बातों को शायद बिना गहराई में उतरे, बिना गौर किये दिमाग में ठूंसता गया। मगर जब अपने विद्यार्थी-मित्रों के साथ-साथ उसी सम्बल के आधार पर उनका मार्गदर्शन करते हुए कदम बढ़ाना पड़ा, तो मैंने अपनी कमियों को एहसास किया। इसलिए अपने सम्बल को पर्याप्त बनाने के मकसद से मैं कुछ पढ़ता रहा, उसपर गौर करता रहा और अपनी ओर से उसमें कुछ मसाला डालकर उसे विद्यार्थियों के सामने परोसता रहा।

फिर भी खास तौर पर मैं उनके सामने ऐसी कोई किताब न रख सका कि जिसमें उन्हें पर्याप्त सामग्री एक ही स्थान पर सजी-सजायी मिल जाती। वे समय-समय पर मुझे सूचित करते रहे कि मैं ही कोई ऐसी पुस्तक लिखूं। संयोग से 'सनद' और 'एस. टी. सी.' संस्थाओं से मेरा सम्बन्ध टूट गया और मैंने अपनी उस सामग्री को पुस्तक के रूप में रखना शुरू किया। उसी वक्त मैं 'सभा' के मंत्री श्री. गो. प. नेनेजी से मिला और इस पुस्तक की योजना उनके सामने रखी। वे भी ऐसी पुस्तक की आवश्यकता अनुभव कर रहे थे। उन्होंने आवश्यक सहायता और मार्गदर्शन करने का वादा किया। उनके इस आश्वासन से उत्साहित होकर मैंने आगे कदम बढ़ाया और उसके अनुसार मैं यह पुस्तक परीक्षार्थियों के सामने रखने का साहस कर रहा हूँ।

मैं अपने व्याख्यानों में जो-जो कहता जाता था, वह सबका सब इन पन्नों में ग्रथित किया गया हो, सो बात नहीं है।

मैंने जो कुछ लिखा है, वह है उपर्युक्त परीक्षार्थियों की कठिनाइयों को दूर करने के हेतु। 'सनद' के परीक्षार्थियों की अपेक्षाएँ ध्यान में रखते हुए, इसमें कुछ बातें सविस्तार बतलायी हैं। हिन्दी शिक्षक सनद (उच्च और निम्न श्रेणी), एस. टी. सी, तथा बी. टी., (बी. एड्.) के हिन्दी-विशेष-प्रणाली (special method : Hindi) के पाठ्यक्रम का इसमें समावेश किया गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सम्भव है, बी. एड्. के विद्यार्थियों को इसमें कुछ बातें अनावश्यक-सी लगेंगी फिर भी मुझे विश्वास है कि उन्हें भी उससे लाभ पहुँचे बिना न रहेगा।

(२) **'राष्ट्रभाषा का अध्यापन'** में जो लिखा गया है, उसके मोटे, तौर पर पाँच विभाग किये जा सकते हैं।

(अ)—पहले विभाग के अन्तर्गत भाषा की शिक्षा-सम्बन्धी सिद्धान्तों का निरूपण किया गया है। अध्यापक को चाहिए कि अपने विषय के हर पहलू से वह भली भाँति परिचित हो। भाषा के अध्यापक को भाषा का स्वरूप, उसका प्रयोजन आदि की जानकारी रखनी चाहिए, इसलिए 'भाषा' शीर्षक अध्याय में कुछ विचार जुटा दिये गये हैं। 'भाषा की शिक्षा' का अभिप्राय ध्यान में लेते हुए उसे यह भी गिरह बाँध लेना चाहिए कि भाषा-शिक्षा का क्या बुनियादी स्वरूप है, और मातृभाषा तथा उसके अतिरिक्त अन्य भाषा सीखते समय उसकी कौन-सी प्रवृत्तियाँ तथा शक्तियाँ कार्यान्वित होती रहती हैं। अहिन्दी भाषी बालकों को हिन्दी पढ़ाते वक्त अध्यापक को उसी प्रणाली को अपनाकर आगे बढ़ना असम्भव होगा, जिससे उन्हें उनकी अपनी मातृभाषा पढ़ायी जाती है। इसलिए उनको किसी नयी प्रणाली को अपनाना होगा। अहिन्दी भाषी प्रदेश के अध्यापकों को चाहिए कि राष्ट्रभाषा की शिक्षा की समस्या को वे भली भाँति समझ लें। हम हिन्दी राष्ट्रभाषा के तौर पर अपना रहे हैं, उसकी शिक्षा पाँचवीं कक्षा से शुरू की जाती है और चारों तरफ का वातावरण भी प्रादेशिक भाषा का ही होता है। इस परिस्थिति में जब अध्यापक बालकों को हिन्दी पढ़ाने लगेंगे, तब उन्हें कई कठिनाइयों का मुकाबला करना पड़ेगा। इसमें इन सभी बातों पर रोशनी डालते हुए भाषा-शिक्षा की प्रणालियों का विवेचन किया गया है।

(आ)—दूसरे विभाग में हरबार्ट की पाठ-पद्धति का संक्षेप में विवेचन किया है। इससे खास तौर पर 'सनद' तथा 'एस. टी. सी.' (अब 'डि. एड्.') के परीक्षार्थियों को लाभ पहुँचेगा।

(इ)—गद्य-निबन्ध, कहानी, कविता, व्याकरण आदि के पाठ कैसे पढ़ाएँ, इस सम्बन्ध में विद्यार्थी-अध्यापकों का मार्गदर्शन तीसरे विभाग में किया गया है। पाठ की टिप्पणी तैयार करने में वे कुछ कठिनाई अनुभव करते हैं। अतः नमूने के तौर पर एक-एक टिप्पणी भी प्रस्तुत की गयी है।

(ई)—भाषण, लेखन, पठन आदि भाषा के व्यवहार-क्षेत्र हैं। विद्यार्थी इनमें से हरएक में तरह-तरह की गलतियाँ करते हैं। इन गलतियों का निर्मूलन हुए बिना वे भाषा पर सम्यक अधिकार प्राप्त नहीं कर सकेंगे। यहाँ ये गलतियाँ उनकी कारण-मीमांसा तथा उनका निर्मूलन कैसे करें, आदि के सम्बन्ध में मार्गदर्शन, करने का अल्प-सा प्रयास किया है। हरएक अध्यापक को चाहिए कि वह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

श्रुत-लेखन, प्रति-लेखन आदि व्यवसायों को काम में लाए, जिससे विद्यार्थी भाषा के हर पहलू में अपनी योग्यता बढ़ा सकें। इसलिए ऐसे सहायक-व्यवसायों के बारे में भी कुछ विचार व्यक्त किये हैं।

(उ) –'परिशिष्ट' नामक पाँचवें विभाग में हिन्दी भाषा का विकास, राष्ट्रभाषा का आन्दोलन, राष्ट्रलिपि देवनागरी आदि का संक्षेप में परिचय कराया है। 'पोतदार–समिति–रिपोर्ट' के अनुसार बम्बई राज्य की पाठशालाओं में हिन्दी की शिक्षा की व्यवस्था की गयी है। उसका भी संक्षिप्त परिचय दिया है

इस पुस्तक को 'हिन्दी शिक्षक सनद' तथा 'एस. टी. सी.', 'टी. डी.' और 'बी. टी.' के हिन्दी भाषा का अध्यापन–(विशेष प्रणाली Special method : Hindi) लेनेवाले विद्यार्थियों के लिए अधिक-से-अधिक उपयुक्त बनाने का प्रयास किया गया है। मुझे विश्वास है, इससे इन सभी विद्यार्थियों को जरूर लाभ पहुँचेगा।

फिर भी यह पुस्तक अपनी किस्म की सर्वश्रेष्ठ होने का दावा नहीं कर रही है। सम्भव है, इसमें तरह-तरह की त्रुटियाँ रह गयी हों। पाठकों से नम्र निवेदन है कि यह पुस्तक वे गौर से पढ़ें। उनकी विधायक सूचनाओं का धन्यवाद-पूर्वक स्वागत करूँगा।

महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा (पुणे) पिछले बीस साल से मराठी-भाषी प्रदेश में म. म. द. वा. पोतदारजी और मन्त्री श्री गो. प. नेनेजी के मार्गदर्शन में राष्ट्रभाषा-प्रचार का कार्य कर रही है। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद राष्ट्रभाषा के प्रचार और विकास का उत्तरदायित्व अब सरकार ने स्वीकार किया है। इस हालत में 'सभा' ने प्रचारात्मक पहलू की अपेक्षा अब शिक्षण के क्षेत्र पर अपना ध्यान केन्द्रित करना निश्चय किया है। हिन्दी के अध्यापकों के प्रशिक्षण का प्रबन्ध करना तथा पुस्तक-प्रकाशन भी सभा के क्षेत्र के अन्तर्गत रखा गया है। उसके अनुसार कार्य शुरू हुआ है। पाठशालाओं की पाठ्य-पुस्तकों के अतिरिक्त अन्य पुस्तकों का प्रकाशन करना भी सभा ने शुरू किया है। मैंने श्री गो. प. नेनेजी को इस पुस्तक की रूपरेखा बतायी, तब उन्होंने उसका सहर्ष स्वागत किया। समय-समय पर मैंने उनसे इस पुस्तक के अन्तर्गत संग्रहीत बातों के बारे में चर्चा की। उन्होंने मेरा अनमोल मार्गदर्शन किया और उत्साह बढ़ाया। प्रा. वसन्त देव ने भाषा तथा रचना के सम्बन्ध में समय-समय पर मेरा मार्गदर्शन किया। अगर मैं यह कहूँ कि श्री गो. प. नेने तथा प्रा. वसन्त देव का प्रोत्साहन मुझे न मिलता तो यह पुस्तक अधूरी ही रह जाती, तो अत्युक्ति नहीं होगी।

'राष्ट्रभाषा का अध्यापन' की पाण्डुलिपि पढ़कर मित्रवर श्री ग. वि. अकोलकर, श्री ल. नी. छापेकर, श्री गुं. दा. कंपली, डॉ. द. न. गोखले,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

श्री पु. ग. ब्रह्मे, श्री कृ. गं. दिवाकर ने उपयुक्त सूचनाएँ कीं। महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा – पुणे के मंत्री श्री गो. प. नेनेजी ने इसके प्रकाशन का भार उठाया। इन सभी सज्जनों के मार्गदर्शन तथा प्रोत्साहन के अभाव में इस पुस्तक का प्रकाशन असम्भव था। मैं उनका कृतज्ञ हूँ।

'राष्ट्रभाषा मुद्रणालय' व्यवस्थापक और कर्मचारियों ने इस पुस्तक के मुद्रण को सर्वांग-सुन्दर बनाने में हमारी मदद की, उनके सहयोग के लिए मैं उनका आभारी हूँ।

कृपाकांक्षी,

ग. न. साठे

पुनर्मुद्रण

'राष्ट्रभाषा का अध्यापन' का प्रकाशन अप्रैल १९५७ में हुआ। सौभाग्य की बात है कि इस पुस्तक को भिन्न-भिन्न अध्यापन-संबंधी परीक्षाओं की पाठ्य-पुस्तकों में नियत किया गया है। पूना, बम्बई विश्वविद्यालय तथा एस्. एन्. डी. टी. वुइमेन्स युनिवर्सिटी की बी. एड्. परीक्षा, महाराष्ट्र तथा मैसूर के शिक्षा-विभाग द्वारा संचालित शिक्षक-सनद परीक्षा जैसी परीक्षाओं के लिए यह पुस्तक स्वीकृत हुई है। वैसे ही अन्यान्य विश्वविद्यालयों से सम्बद्ध अध्यापन-महाविद्यालयों में भी 'हिन्दी के अध्यापन की प्रणाली' के लिए इस पुस्तक से सहायता ली जाती है। इससे इस पुस्तक की उपयोगिता स्पष्ट हो चुकी है। फरवरी १९६१ में इस पुस्तक का पुनर्मुद्रण आरंभ हुआ। दुर्भाग्य से १२ जुलै १९६१ को पूना में बाढ़ के कारण जो प्रलय हुआ, उसने 'सुलभ मुद्रणालय' पर ज़बरदस्त आघात किया। राष्ट्रभाषा मुद्रणालय तथा सुलभ मुद्रणालय को हज़ारों रुपयों की हानि उठानी पड़ी। इस पुस्तक के १३ फर्मे मुद्रित हो चुके थे। वे भी बाढ़ की लपेट में आ गए। इसलिए इसे फिर से मुद्रित करने की समस्या पेश हुई। लेकिन प्रथम संस्करण की एक भी प्रति प्राप्य नहीं थी और इस पुस्तक के लिए माँग बढ़ रही थी। इसलिए जितने फर्मे काम में लाना संभव था, उन्हें छाँट लिया गया और शेष का मुद्रण किया गया है। इसमें विलंब ज़रूर हुआ है — विद्यार्थी-मित्रों को असुविधा उठानी पड़ी है। हम मजबूर थे। इस असुविधा तथा विलंब के लिए हम क्षमाप्रार्थी हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नौ

यह पुनर्मुद्रण डिमाई आकार में पेश किया जा रहा है। भाषा आदि की दृष्टि से आवश्यक सुधार यत्र-तत्र किया गया है। विद्यार्थी मित्रों ने कुछ सूचनाएँ की हैं — आगामी संस्करण में उसके अनुसार सुधार किया जाएगा।

परीक्षार्थियों ने इस पुस्तक का जो स्वागत किया है, उसके लिए मैं उनका ऋणी हूँ।

बाढ़ के आघात के बाद 'सुलभ मुद्रणालय' के व्यवस्थापक तथा अन्य कर्मचारियों ने अनेकानेक कठिनाइयों का सामना करते हुए मानो मुद्रणालय का नव-निर्माण ही किया है। उनका यह परिश्रम सराहनीय है। अंतिम फरमों के मुद्रण का भार उन्हीं को सौंप दिया गया और उसे उन्होंने भली भाँति पूर्ण किया है। इसलिए मैं उनका भी ऋणी हूँ।

२६ जनवरी १९६२ — ग. न. साठे

पुनःसंशोधित पुनर्मुद्रण

[मार्च १९७१]

इस पुस्तक में नयी परिस्थितियों के प्रकाश में कतिपय बातों को समाविष्ट किया है, इधर-उधर कुछ-वाक्य, वाक्यांश और पुरानी पाठ्य-पुस्तकों के सन्दर्भ हटाये गये हैं। आशा है, पुस्तक का यह नवीनतम रूप परीक्षार्थियों के लिए अधिक उपयुक्त सिद्ध होगा।

२७ मार्च १९७१ —ग. न. साठे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विषय-सूची

(१) भाषा १–७

प्रास्ताविक, १. भाषा का महत्त्व, २. भाषा का प्रयोजन, ३. लिपि-बद्ध भाषा, ४. भाषा का स्वरूप और परिभाषा, ५. इंगित, मुख-विकार का स्थान, ६. शब्द-सम्पत्ति ७. भाषा : सामाजिक सम्पत्ति, ८. भाषा : परम्परागत सम्पत्ति, ९. आनुवंशिक गुणधर्म नहीं।

(२) भाषा की शिक्षा ८–१६

१. शिक्षा का अभिप्राय, २. भाषा की शिक्षा, ३. भाषा का व्यवहार-क्षेत्र : अ — भाषण, ब—श्रवण, क — लेखन, ड — पठन, ४. भाषा की शिक्षा की आवश्यकता, ५. अन्य भाषाओं से परिचय।

(३) अहिन्दी-भाषी प्रदेश में हिन्दी शिक्षा १७–२६

१. राष्ट्रभाषा की आवश्यकता, २. हिन्दी की शिक्षा का उद्देश्य – (अ) राष्ट्रीय कर्तव्य की पूर्ति, (आ) – सांस्कृतिक उद्देश्य, (इ) – साहित्यिक उद्देश्य, (ई)– व्यावहारिक उद्देश्य, ३. हिन्दी भाषा के ज्ञान का अपेक्षित स्तर, ४. पाठ्य-क्रम की भाषाएँ और हिन्दी, (अ) – प्रादेशिक भाषा, (आ) – राष्ट्रभाषा, (इ) – अंग्रेज़ी, (ई)–प्राचीन भाषा या अंग्रेज़ी के अतिरिक्त कोई अन्य आधुनिक यूरोपीय भाषा, ५. समस्या का और एक पहलू : (अ) – शब्द-सम्पत्ति आदि में समता, (आ)– लिपि, (इ)–वातावरण।

(४) भाषा-शिक्षा का मनोविज्ञान २७–३५

१. बालक भाषा कैसे आत्मसात करता है ? २. बालक की भाषा-शिक्षा का मनोवैज्ञानिक पहलू, ३. भाषा-शिक्षा की दूसरी अवस्था, ४. स्वाभाविक प्रणाली के और कुछ तत्त्व, ५. मातृभाषा के अतिरिक्त अन्य भाषा की शिक्षा।

(५) शिक्षा-प्रणाली की समस्या ३६–३८

१. स्वाभाविक प्रणाली, २. मातृभाषा की शिक्षा-प्रणाली, ३. और दो प्रणालियाँ।

(६) व्याकरण-अनुवाद प्रणाली ३९–४७

१. प्राचीन प्रणाली, २. व्याकरण-अनुवाद प्रणाली का स्वरूप, ३. व्याकरण-अनुवाद प्रणाली की विशेषताएँ, ४. त्रुटियाँ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(७) सम्भाषणात्मक प्रणाली (डाइरेक्ट मेथड) — ४८–५९

१. नये युग की माँग, २. 'डाइरेक्ट मेथड' का आविष्कार और प्रचार, ३. हिन्दी में नामकरण, ४. सम्भाषणात्मक प्रणाली और हिन्दी का अध्यापन, ५. सम्भाषणात्मक प्रणाली क्या है? ६. सम्भाषणात्मक प्रणाली के तत्त्व, ७. सम्भाषणात्मक प्रणाली की विशेषताएँ, ८. आलोचना।

(८) प्रणालियों का समन्वय ६०–६३

१. आवश्यकता, २. समन्वय: कैसे करें? ३. हिन्दी के पाठ में प्रादेशिक भाषा का उपयोग।

(९) हिन्दी के प्रारम्भिक पाठ ६४–७१

१. हिन्दी की शिक्षा का प्रारम्भ, २. नागरी लिपि की शिक्षा, ३. हिन्दी की शिक्षा में श्रवण और भाषण, पठन और लेखन, ४. प्रारम्भिक पाठों का चुनाव।

(१०) पाठ की तैयारी — १ ७२–९४

१. आवश्यकता, २. प्राथमिक-तैयारी: कौन-सी? ३. हरबार्ट की पंचपदी— (१) प्रस्तावना, (२) हेतुकथन, (३) विषय-प्रतिपादन या विवेचन, (४) संकलन, (५) उपयोजन, (६) स्वाध्याय।

(११) पाठ की तैयारी – २ ९५–१०७

(१) अध्यापन में प्रश्न और उत्तर — १. प्रश्नों की आवश्यकता और महत्त्व, २. अच्छे सवालों की विशेषताएँ, ३. प्रश्न कैसे पूछें? ४. विद्यार्थियों के जवाब और अध्यापक, ५. कतिपय सूचनाएँ।

(२) पाठ के उपकरण — १. आवश्यकता, २. उपकरण : कौन-से? ३. उपकरणों का उपयोग कैसे करें?

(३) फलक-लेखन

(१२) शब्द-सम्पत्ति का विकास १०८–११३

१. यह विकास क्या है? २. विकास की रूपरेखा, ३. शब्दों का चुनाव, ४. पुरानी पद्धति, ५. नयी प्रणालियाँ, ६. शब्दों का ज्ञान स्थायी करना, ७. दोहरावट या आवृत्ति– drilling, ८. शब्दकोश का उपयोग।

(१३) बातचीत के पाठ ११४–११९

१. उद्देश्य और महत्त्व, २. आवश्यक उपकरण, ३. कुछ सूचनाएँ, ४. पाठ की टिप्पणी : पाठ की टिप्पणी – १, पाठ की टिप्पणी – २

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(१४) गद्य (निबन्ध) का अध्यापन १२०–१२५

१. भूमिका, २. महत्त्व और उद्देश्य, ३. पाठ का अध्यापन, ४. पाठ की टिप्पणी, ५. गद्य पाठों का चयन।

(१५) कविता का अध्यापन १२६–१३६

१. कविता पढ़ाने का उद्देश्य, २. कविताओं का चयन, ३. हमारी कठिनाइयाँ, ४. कुछ सूचनाएँ, ५. पाठ पद्धति की रूपरेखा, ६. पाठ की टिप्पणी।

(१६) कहानी का अध्यापन १३७–१४८

१. शिक्षा में कहानी का स्थान, २. बालकों के लिए उपयुक्त कहानियाँ, ३. कहानियों का चुनाव, ४. कहानी के पाठ की पूर्व-तैयारी, ५. कहानी के पाठ के प्रकार, ६. पाठ की रूपरेखा (क) मुद्रित कहानी, (ख) कहानी-कथन, (ग) तीन-चार चित्रों की मदद से कहानी तैयारी करना।

(१७) व्याकरण का अध्यापन १४९–१६५

१. भाषा के अध्ययन-अध्यापन में व्याकरण का स्थान, २. व्याकरण : कौन-सा और कितना ? ३. व्याकरण की शिक्षा : आज की परिस्थिति, ४. आवश्यक सूचनाएँ, ५. व्याकरण पढ़ाने की प्रणालियाँ – (१) अवगामी या व्याख्या-प्रणाली, (Deductive method), (२) उद्गामी या प्रयोग-प्रणाली (Inductive method), ६. गुण-दोषों का विवेचन, ७. प्रत्यक्ष व्यवहार में, ८. व्याकरण के ज्ञान को आत्मसात कैसे कराएं ? ९. पाठ की रूपरेखा और टिप्पणी। १०. व्याकरण का अध्यापन कब शुरू करें ?

(१८) निबन्ध-लेखन का अध्यापन १६६–१७८

१. आवश्यकता और उद्देश्य, २. आज की अवस्था, निबन्धों के विषयों का चुनाव, ४. निबन्ध की लम्बाई, ५. निबन्ध-लेखनः प्रारम्भिक अवस्था, ६. चित्रवर्णन (Picture-composition,) ७. उच्च कक्षाओं में निबन्ध-लेखन, ८. और कुछ सूचनाएँ, ९. पाठ की टिप्पणी।

(१९) (अ) पत्र-लेखन का पाठ १७९–१८३

१. आवश्यकता, २. विषय-विभाजन, ३. पाठ-प्रणाली की रूपरेखा ४. पाठ की टिप्पणी।

(आ) अनुवाद का पाठ १८३–१८५

१. महत्त्व और आवश्यकता २. अनुवाद के कुछ प्रकार, ३. अनवाद-खण्ड का चुनाव, ४. अनुवाद के पाठ की रूपरेखा, ५. कुछ सूचनाएँ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(इ) सार-लेखन का पाठ १८५-१८७

१. सार-लेखन क्या है ? २. महत्त्व, ३. कुछ सूचनाएँ, ४. प्रणाली।

(ई) विचार-ग्रहण का पाठ १८७-१८८

१. आवश्यकता, २. स्वरूप, ३. कुछ सूचनाएँ, ४. प्रणाली।

(२०) शीघ्र-पठन की पुस्तक १८९-१९३

१. सूक्ष्म और स्थूल अध्ययन, २. प्रयोजन, ३. हिंदी शीघ्र-पठन की आज की अवस्था, ५. शीघ्र-पठन अवश्य रखें, ६. शीघ्र-पठन के लिए पुस्तकों का चयन, ६. शीघ्र-पठन और अध्यापक।

(२१) उच्चारण १९४-२०२

१. महत्त्व, २. परिनिष्ठित (स्टैण्डर्ड) उच्चारण-प्रणाली को अपनाने की आवश्यकता, ३. उच्चारण में गलतियाँ, ४. कारण-मीमांसा, ५. उच्चारण में सुधार।

(२२) पठन २०३-२११

१. प्रस्तावना, २. पाठ में पुस्तक-पठन, ३. अध्यापक द्वारा आदर्श पठन, ४. अध्यापक कैसे पढ़े, ५. मनोगत पठन, ६. विद्यार्थी और मौखिक पठन, ७. पठन में दोष।

(२३) लेखन २१२-२२१

१. प्रस्तावना, २. लेखन में दोष, ३. कारण-मीमांसा, ४. लेखन-सुधार, ५. निबन्ध आदि की जाँच।

(२४) हिन्दी की पाठ्य-पुस्तकें २२२-२२५

१. प्रस्तावना, पाठ्य-विषय, पाठों का सम्पादन, भाषा, बहिरंग इत्यादि।

(२५) डाल्टन-योजना और हिन्दी की शिक्षा २२६-२२९

१. शिक्षा के क्षेत्र में बालक का स्थान, २. समूह-गत शिक्षा और बालक, ३. कक्षा-गत शिक्षा की दुर्बलताएँ, ४. नयी प्रणाली का आविष्कार, ५. संक्षेप में तत्त्व, ६. संक्षेप में आलोचना, ७. हिन्दी की शिक्षा और डाल्टन योजना।

(२६) पाठ-निरीक्षण २३०-२३२

१. पाठ-निरीक्षण की आवश्यकता, २. पाठ कैसे निरीक्षण करें ? ३. विद्यार्थी-अध्यापकों को चन्द सूचनाएँ, ४. मार्गदर्शक अध्यापकों को कुछ सूचनाएँ।

(२७) भाषा-शिक्षा में सहायता २३३-२४८

प्रस्तावना, १ प्रतिलिपि करना—(अ) श्रुत-लेखन : dictation, (आ)—प्रति-लेखन : transcription, २. कण्ठस्थ या जबानी याद करना :

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

recitation. ३. अनुवाद, ४. वक्तृत्वोत्तेजक सभा, ५. हस्तलिखित-पत्रिका, मुद्रित और सामयिक पत्रिका, ६. विविध व्यवसाय, ७. पुस्तकालय और वाचनालय, ८. हिन्दी की विविध परीक्षाएँ, ९. नाटक खेलना, नाट्यीकरण : dramatization।

* परिशिष्ट १ — २४९–२७०

(अ) हिन्दी भाषा
(आ) हिन्दी-हिन्दुस्तानी-उर्दू
(इ) राष्ट्रभाषा के आन्दोलन की एक झलक
(ई) हिन्दी और भारतीय संविधान
(उ) पोतदार-समिति-रिपोर्ट
(ऊ) नागरी लिपि
(ए) मानक हिन्दी वर्णमाला
(ऐ) मानक हिन्दी वर्तनी

परिशिष्ट २ — २७१–२८०

(क) हिन्दी : परीक्षा की प्रश्नपत्रिका
(ख) वस्तुनिष्ठ प्रश्न
(ग) मौखिक परीक्षा
(घ) प्रश्न-संग्रह

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: १ :

भाषा

शिक्षा के क्षेत्र में अध्यापक, विद्यार्थी, अध्यापन का विषय और अध्यापन-प्रणाली का विशेष महत्त्व है। इस क्षेत्र में विद्यार्थी केन्द्र-बिन्दु है और उसका सर्वांगीण विकास करने में सहायता देना अध्यापक का लक्ष्य होता है। अपने लक्ष्य तक उसे ले जानेवाले मार्ग में वह कई कठिनाइयों को अनुभव करता है। सफलता के साथ उनका सामना करने के लिए उसे पहले से तैयार हो जाना चाहिए। किसी यात्री की भाँति उसे अपने लिए पर्याप्त सम्बल लेना चाहिए। यदि मनोविज्ञान का दावा यह है कि बगैर 'बालक' को समझे, अध्यापक अपने कार्य में सफल नहीं होगा, तो शिक्षा-शास्त्र कहता है कि बिना उसके सिद्धान्तों और अध्यापन-प्रणालियों को समझे, वह (अध्यापक) अपने लक्ष्य तक नहीं पहुँच पाएगा। अध्यापन के विषय के ज्ञान के अभाव में वह तो लूला-लँगड़ा ही सिद्ध होगा। इसलिए वही अध्यापक सफल होगा, जो मनोविज्ञान, शिक्षा-शास्त्र, अध्यापन-कला और अपने विषय से भली भाँति परिचित हो। कहना न होगा कि हिन्दी भाषा के अध्यापक को हिन्दी भाषा में पूरी योग्यता रखनी चाहिए। इसके साथ-साथ भाषा के अध्यापक को यह भी जानना चाहिए कि भाषा क्या है, उसका स्वरूप और प्रयोजन क्या है। इसलिए इस अध्याय में भाषा के सम्बन्ध में आवश्यक जानकारी दी जा रही है।

(१) **भाषा का महत्त्व**—दुनिया में सैकड़ों भाषाएँ बोली जाती हैं। हिन्दी, मराठी, गुजराती, अंग्रेज़ी आदि भाषाएँ आज दुनिया में प्रचलित हैं। संस्कृत, पाली, अर्धमागधी, ग्रीक आदि ऐसी भाषाएँ हैं, जो आज आम जनता में प्रचलित या बोलचाल के रूप में विद्यमान नहीं हैं, फिर भी उनका अस्तित्व उनके साहित्य से दिखायी देता है। अगर कोई मनुष्य प्रयत्न करे, तो उनमें से एक या अनेक में व्यवहार करने की क्षमता वह पा सकता है।

हरएक मनुष्य व्यवहार के लिए भाषा का उपयोग करता है। प्राचीन काल में भी भाषा का अस्तित्व था और मनुष्य-समाज के साथ-साथ उसका भी विकास हुआ है। ज़रा सोचिए तो सही कि भाषा का अस्तित्व एकदम मिट जाए तो क्या होगा। भाषा के अभाव में हम अपने विचारों और भावों को प्रकट नहीं कर सकेंगे, दूसरों के विचारों को ग्रहण न कर सकेंगे। न साहित्य होगा, न सभाएँ होंगी। यहाँ तक कहा जा सकता है कि भाषा न हो, तो मनुष्य का सामाजिक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जीवन तक असम्भव होगा। मनुष्य का सामाजिक जीवन जो इतना उन्नत हुआ है, उसकी सभ्यता का जो इतना विकास हुआ है, पशुओं से इतना ऊपर उठकर जो वह 'मनुष्य' कहलाने योग्य हुआ है, उसके कारणों में से भाषा भी एक महत्त्वपूर्ण कारण है। बगैर भाषा के यह सारी उन्नति असम्भव है। जो वस्तु हमसे चिर-परिचित होती है, उसका महत्त्व ध्यान में बिलकुल नहीं आता। मनुष्य के निजी जीवन में खुराक, पानी, हवा का जो स्थान है, वही स्थान मनुष्य के सामाजिक जीवन में भाषा का है। भाषा से उसका इतना अभिन्न सम्बन्ध स्थापित हो चुका है कि वह उसके जीवन का, उसके अस्तित्व का एक नितान्त आवश्यक अंग-सी बन चुकी है, मानो वह उसकी कोई अद्भुत इन्द्रिय हो। भाषा से विच्छिन्न मनुष्य की हम कल्पना तक नहीं कर सकते।

भाषा के ज़रिए मनुष्य ने अपने जीवन की एक कमी की पूर्ति की है। भगवान् ने उसे मर्त्य बनाया है, उसके क्रिया-कलाप को स्थल-काल की दृष्टि से सीमित बना रखा है, फिर भी उसने अपने विचारों, भावों को भाषा द्वारा शाश्वत बनाने का प्रयत्न किया है, स्थल-काल के बन्धनों को काटकर अपने को सर्व-व्यापी बनाने की चेष्टा की है। फलतः पाँच हज़ार वर्षों पहले लिखे हुए वेदों के पठन से हम उनके निर्माताओं की अन्तरात्मा का परिचय पाते हैं; कालिदास, भवभूति, शेक्स्पिअर, मिल्टन, गटे, सुकरात से आज भी हम सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं। स्व. प्रेमचन्द का 'गोदान' पढ़कर पाँच सौ साल के बाद भी लोग भारतीय किसानों की आज की दयनीय अवस्था पर आँसू बहाये विना न रहेंगे। भाषा के कारण ही यह सम्भव हुआ है। इस दृष्टि से भाषा मनुष्य की दिव्य शक्ति है।

(२) **भाषा का प्रयोजन** — भाषा शब्द संस्कृत 'भाष्' (= बोलना) धातु से व्युत्पन्न है। हम जो कुछ बोलते हैं, वह भाषा है। पर मनुष्य के बोलने का क्या उद्देश्य है? वह क्यों बोलता है? प्रत्येक मनुष्य में यह एक सहजात प्रवृत्ति है कि वह अपनी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा नित्य अनुभूतियाँ ग्रहण करता है। उससे उसके मन पर संस्कार होते जाते हैं, उसमें खलबली-सी मचती है, भाव या विचार जागृत होते हैं और इन भावों या विचारों को व्यक्त करने के लिए वह विवश हो जाता है। यद्यपि उसके ये विचार या भाव किसी अंश तक उसके चेहरे पर प्रकट होते हैं, फिर भी वह उनको अधिकतर ध्वनि-रूप में ही व्यक्त करता है। प्रतिक्षण उसकी ज्ञानेन्द्रियाँ कार्य करती रहती हैं। वह जो कुछ देखता, सुनता या अनुभव करता है, वह उसकी अनुभूति है। इन अनुभूतियों को व्यक्त करना ही भाषा का प्रमुख प्रयोजन है। भावों की यह ध्वनिमय अभिव्यक्ति एक दृष्टि से उसकी 'आत्माभिव्यक्ति' ही है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मनुष्य अपने विचारों, विकारों या भावों को समाज के दूसरे व्यक्तियों पर प्रकट करता है। दूसरे व्यक्तियों में भी यही आत्माभिव्यक्ति की प्रवृत्ति होती है और वे भी भाषा द्वारा अपने भावों को व्यक्त करते हैं। एक मनुष्य दूसरे के व्यक्त किये हुए विचारों को ग्रहण करता है। इससे विचारों का आदान-प्रदान होता है। इस तरह भाषा भावों की अभिव्यक्ति का, विचारों के आदान-प्रदान का, विचार-विनिमय का साधन है।

अधिक सूक्ष्मता के साथ विचार करने से मालूम होगा कि भाषा केवल विचारों के आदान-प्रदान का ही साधन नहीं है, बल्कि वह विचार करने का भी साधन तथा माध्यम है। उसकी सहायता न लेते हुए हम किसी बात के सम्बन्ध में विचार तक नहीं कर सकते। अपने मन में जो-जो भाव जाग उठता है, उसे भी भाषा के आधार की आवश्यकता है।

(३) **लिपि-बद्ध भाषा** – यहाँ तक बोलने याने भाषण के सम्बन्ध में विचार किया गया। मनुष्य पहले सिर्फ ध्वनिमय भाषा का प्रयोग करता था। मगर अपना विकास करते-करते उसने लिपि का आविष्कार किया, अपनी ध्वनियों को रेखाबद्ध करना सीख लिया और अपने विचारों को लिपि-चिह्नों का स्थायी स्वरूप देकर भाषा के स्थल-काल के बन्धन को काट दिया। अब वह अपने विचार लिखकर प्रकट कर सकता है और दूसरों के लिखित विचारों को ग्रहण कर सकता है। उसके निर्मित लिपि-चिह्न उसकी भाषा की अंगभूत ध्वनियों के प्रतीक मात्र हैं। वस्तुत : इन ध्वनि-चिह्नों और लिपि-चिह्नों का मूलतः अपना कोई अर्थ नहीं होता। मनुष्य ने ध्वनि-चिह्नों पर अपने विचारों या भावों का आरोप किया है। ‘ घर ’ ध्वनि-समुच्चय से जिस वस्तु का बोध होता है, उस वस्तु और उस ध्वनि-समुच्चय में मूलतः कोई सम्बन्ध नहीं है, फिर भी समाज ने उक्त ध्वनियों से वस्तु का ज्ञान स्वीकार किया है। जो लोग इस संकेत को मानते हैं, उनके ध्यान में ‘ घर ’ शब्द का अर्थ आएगा। किसी विशेष ध्वनि-चिह्न से किसी विशेष विचार-तत्त्व का सम्बन्ध जोड़ दिया गया—वह विशेष ध्वनि किसी विशेष भाव का प्रतीक मानी जाने लगी। ये लिपि-संकेत और ध्वनि-संकेत ही भाषा के आधार हैं। साधारणतः किसी मनुष्य द्वारा बोले हुए शब्द, उसी स्थान पर और उसी समय उपस्थित व्यक्ति ही सुन सकता है। मगर लिपि-बद्ध शब्द कई स्थानों पर और कई दिनों तक लिखनेवाले के अभिप्राय को प्रकट करते रहते हैं। अर्थात् लिखनेवाले ने लिपि-चिह्नों का प्रयोग जिन ध्वनि-चिह्नों के लिए किया है, पढ़नेवाले भी उसी संकेत प्रणाली के माननेवाले हों, तभी वे उनसे अर्थ ग्रहण कर सकेंगे। आज दुनिया में जैसे विभिन्न भाषाएँ हैं, वैसे ही भिन्न-भिन्न लिपियाँ भी मौजूद हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(४) भाषा का स्वरूप और परिभाषा——प्रत्येक भाषा में अ, आ, इ,...क्, ख्...आदि सैकड़ों ध्वनियाँ होती हैं। एक दृष्टि से भाषा ध्वनि-समुच्चय मात्र है। मनुष्य इन्हीं छोटे-बड़े ध्वनि-समुच्चयों को काम में लाता है। भाषा की इस ध्वनिमयता की ओर ध्यान देते हुए, हमें यह न भूलना चाहिए कि भाषा विचारों के आदान-प्रदान का साधन मात्र है। विचारों का आदान-प्रदान या अभिव्यक्ति साध्य है। साधन की अपेक्षा साध्य ही अधिक महत्त्वपूर्ण होता है। इसलिए ध्वनियों की ओर ध्यान देते समय उनके द्वारा प्रकट होनेवाले विचार-तत्त्व की उपेक्षा नहीं की जा सकती।

आपके सामने खड़ा होकर कोई व्यक्ति अगर क्, ख्, ग् आदि भिन्न-भिन्न ध्वनियाँ सुनाए जिससे किसी तरह का भी अर्थ या भाव आपके ध्यान में नहीं आता हो और न उसके ध्वनि-निर्माण में वैसा कोई उद्देश्य भी हो, तो क्या आप उसकी उन ध्वनियों को भाषा कहेंगे ? छोटा बालक लेटे-लेटे मुँह से जो ध्वनियाँ निकालता है, क्या वह भी भाषा है ? मनुष्य अपनी ध्वनियों द्वारा अपने विचार या भाव प्रकट करना चाहता है। इसलिए 'भाषा' शब्द से सिर्फ उसकी ध्वनियाँ ही नहीं, उनसे प्रकट होनेवाला अर्थ भी सूचित किया जाता है।

अर्थात् ध्वनि-समुच्चय भाषा कहलाने योग्य तभी होगा, जब उससे बोलनेवाले का, उसके निर्माता का कोई अभिप्राय प्रकट होता हो। इससे यह स्पष्ट होता है कि अर्थ-सहित ध्वनि-समुच्चयों से भाषा बनती है। अ, आ, क्, ख् आदि वर्ण या ध्वनियाँ भाषा के सबसे छोटे तत्त्व हैं।

स-अर्थ ध्वनि-समुच्चय को 'शब्द' कहते हैं। मेज़, पुस्तक, घर, चलो, प्यार आदि ध्वनि-समुच्चय इसीलिए शब्द कहलाते हैं कि उनमें से हरएक से किसी-न-किसी वस्तु या भाव का बोध होता है।

एक पूरा विचार प्रकट करनेवाले शब्द-समूह को 'वाक्य' कहते हैं। अर्थ-तत्त्व की दृष्टि से वाक्य भाषा का सबसे छोटा तत्त्व है। शब्दों का ढेर या केवल समूह 'वाक्य' नहीं कहलाएगा। विचार के प्रकटन के लिए वाक्यों के विभिन्न शब्दों में एक विशेष अन्वय या सम्बन्ध का होना नितान्त आवश्यक है। 'भारत हमारी मातृभूमि है!', 'हमें देशमाता की सेवा करनी चाहिए।', 'ज़रा आहिस्ता पढ़ो।'–आदि शब्द-समूह इसलिए वाक्य कहलाते हैं कि उनमें से हरएक से एक-एक पूरा विचार प्रकट होता है।

इन बातों से ध्यान में आता है कि भाषा के दो प्राणभूत तत्त्व हैं–(१) अर्थ, भाव या विचार और (२) ध्वनि। इनमें से अर्थ या विचार भाषा की आत्मा है, तो जिन ध्वनियों द्वारा वह अभिव्यक्त होता है, वह है भाषा का शरीर।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आत्मा के अभाव में देह का कोई मूल्य नहीं, वैसे ही अर्थ के अभाव में ध्वनियों का कोई महत्त्व नहीं; इसलिए अर्थ की अभिव्यक्ति के लिए ध्वनियों की आवश्यकता है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर भाषा की परिभाषा यों दी जा सकती है—

जिस ध्वनि-समुच्चय द्वारा मनुष्य किसी वस्तु के सम्बन्ध में अपने भावों या विचारों को प्रकट करता है, उसे भाषा कहते हैं।

(५) **इंगित तथा मुख-विकार का स्थान**—एक दृष्टि से मनुष्य का मुख उसके अन्तःस्थल का दर्पण है, उसके भावों या विकारों का प्रतिबिम्ब उसके मुख पर दिखायी देता है। किसी व्यक्ति की ओर देखकर उसके भावों को हम किसी अंश तक पढ़ सकते हैं। मुख-विकार द्वारा होनेवाली भावों की इस स्वाभाविक अभिव्यक्ति के साथ-साथ भूख, प्यास, उद्विग्नता आदि विकारों को हाथ, मुख, सिर आदि के संचलन, नेत्र-संकेत आदि के ज़रिए मनुष्य प्रकट करने की चेष्टा करता है। भूख, प्यास आदि स्थूल विकारों, भय-उल्लास आदि भावों को इस तरह वह कितना ही क्यों न व्यक्त कर सके, इन स्थूल भावों के अतिरिक्त, अन्य भावों के प्रकटन में भाषा के अभाव में उसे पूरी सफलता नहीं मिलेगी।

फिर भी व्यवहार में इंगितों का स्थान महत्त्वपूर्ण न हो, सो बात नहीं है। एक तो इंगितों द्वारा भावाभिव्यक्ति होती है—चाहे वह पूर्ण रूप से क्यों न हो; दूसरे, ये इंगित भावों के प्रकटन में ध्वनियों की मदद करते हैं; इतना ही नहीं बल्कि भावों की प्रभावकारिता बढ़ाने में सहायता करते हैं। हर्ष, शोक, क्रोध, भय आदि भाव अगर बोलनेवाले के मुख पर अपनी झलक न दिखा दें, तो वक्ता का वक्तव्य प्रभावकारी नहीं मालूम होगा। अर्थात् उनका उचित प्रयोग करने से ही यह लाभ होता है। इसके अतिरिक्त भाव की तीव्रता के कारण जहाँ शब्द उसकी अभिव्यक्ति में लूले-लँगड़े सिद्ध होते हैं, वहाँ मुख-विकार आदि से भाव-प्रकटन होता है।

(६) **शब्द-सम्पत्ति**—मनुष्य के भावों को प्रकट करनेवाले ध्वनि-समूह, शब्द ही भाषा की सम्पत्ति हैं। जिस भाषा का शब्द-भण्डार जितना पुष्ट और समृद्ध होता है, उतनी ही वह भाषा प्रौढ़ और विकसित मानी जाती है। सूक्ष्म से सूक्ष्म भाव को प्रकट करनेवाले शब्दों की विपुलता भाषा की समृद्धि की परिचायक है। वास्तव में प्रत्येक शब्द स्वतंत्र भाव का प्रतीक होता है, इसलिए विचारों को उनकी बारीकियों के साथ व्यक्त करने के लिए अर्थवाहक शब्दों की आवश्यकता होती है। ऐसे शब्दों की कमी भाषा की दरिद्रता प्रकट करती है। अर्थशास्त्र, गणितशास्त्र और तरह-तरह के नये विज्ञानों में आवश्यक पारिभाषिक शब्दों की जो कमी हमारी भाषाओं में है, उसे दूर किये बगैर हमारी भाषाएँ समृद्ध नहीं हो सकेंगी और विश्व-विद्यालयीन शिक्षा के माध्यम का काम करने योग्य नहीं हो सकेंगी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जब भिन्न-भिन्न भाषाएँ एक-दूसरी के सम्पर्क में आती हैं, तो उनमें शब्दों का लेन-देन होता है। इसलिए हिन्दी, मराठी आदि भाषाओं में अंग्रेज़ी, फारसी आदि भाषाओं के शब्द काफी तादाद में पाये जाते हैं। सैकड़ों साल के प्रचलन के कारण अब वे शब्द पराये नहीं रहे। हमें अपनी भाषाओं की सम्पत्ति में ही उन्हें स्थान देना चाहिए।

(७) **भाषा : सामाजिक सम्पत्ति** —आवश्यकता ही वस्तु के मूल्यांकन की कसौटी है। जो वस्तु व्यवहार में जितनी अधिक उपयुक्त हो, उतना ही उसका मूल्य अधिक माना जाता है। भाषा की सामाजिक उपयोगिता ने उसका महत्त्व बढ़ा दिया है और उसे सामाजिक सम्पत्ति बना दिया है। किसी भी व्यक्ति का भाषा पर एकाधिकार नहीं है, इसलिए वह उसकी निजी दौलत नहीं हो सकती। मनुष्य न अपने लिए स्वतंत्र भाषा का निर्माण कर सकता है, न दूसरों को किसी भाषा का व्यवहार करने से रोक सकता है। मनुष्य-समाज के जीवन से भाषा-रूप सम्पत्ति का अभिन्न सम्बन्ध है।

मनुष्य समाज के वैचारिक जीवन का विकास और भाषा का विकास दोनों साथ-साथ होते हैं। मनुष्य के मस्तिष्क में जो-जो विचार उठते हैं, उनको अभिव्यक्त करने के लिए भाषा की वहन-शक्ति भी उतनी ही विकसित होनी चाहिए। अक्सर देखा जाता है कि नये-नये विचारों के प्रकटन के लिए मनुष्य ने नये-नये शब्दों, संकेतों का निर्माण किया है; इससे ही भाषा की अर्थ-वहन शक्ति विकसित होती गयी है। इसलिए जो समाज जितना ही अधिक उन्नत होता है, उसकी भाषा भी उतनी ही प्रगत नज़र आती है। अँग्रेज़ी, जर्मन जैसी भाषाओं का विकास उक्त भाषा-भाषी लोगों के विकास की साक्षी दे रहा है। हिमालय, अफ्रीका आदि के आदिम निवासी जितने पिछड़े हुए तथा असभ्य हैं, उतनी ही उनकी बोलियाँ भी अविकसित हैं।

समाज के आचार-विचारों, भावनाओं, भिन्न-भिन्न आन्दोलनों का स्पष्ट प्रतिबिम्ब उसके साहित्य में दिखायी देता है। भाषा और साहित्य का सम्बन्ध अभिन्न है। भाषा और साहित्य एक दूसरे के सहारे ऊँचे उठते हैं, और उनसे समाज की वैचारिक उच्चता का भी पता चलता है।

(८) **भाषा : परम्परागत सम्पत्ति** — भाषा-रूप इस सम्पत्ति का निर्माण समाज की हर पीढ़ी को नये सिरे से नहीं करना पड़ता। हर पीढ़ी यह धरोहर नवजात लोगों के हाथों सौंपती जाती है। इस दृष्टि से हम कह सकते हैं कि वह समाज की 'परम्परागत' सम्पत्ति है। दुनिया की हर चीज़ की भाँति वह भी परिवर्तनशील तथा विकसनशील है, इसलिए इस परम्परागत सम्पत्ति का भी विकास होता दिखलायी देता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(९) **आनुवंशिक गुणधर्म नहीं**—समाज की दृष्टि से वह यद्यपि परम्परागत सम्पत्ति है, हर पीढ़ी पैतृक सम्पत्ति के रूप में उसे अपनाती जाती है, फिर भी एक व्यक्ति की दृष्टि से भाषा उसका अपना कोई आनुवंशिक गुणधर्म नहीं है। कोई भी बालक भाषाज्ञान लेकर पैदा नहीं होता। भाषा अपनाने में सहायक शक्तियाँ और इन्द्रियाँ उसके पास अवश्य होती हैं। उसके चारों तरफ जो भाषा बोली जाती है, आम तौर पर उसे वह अपनाता है। बालक की भाषा आत्मसात् करने की क्रिया में भाषा के वातावरण का नितान्त महत्त्व माना जाता है।

× × ×

उपर्युक्त पंक्तियों में भाषा का स्वरूप, गठन, भाषा का महत्त्व और कुछ विशेषताएँ समझायी गयी हैं। अब हम यह देखेंगे कि 'भाषा की शिक्षा' जैसे शब्दों से क्या अभिप्राय प्रकट होता है। उससे अध्यापक के कार्यक्षेत्र का स्वरूप भी स्पष्ट होगा।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: २ :

भाषा की शिक्षा

पिछले अध्याय में हमने यह देखा है कि भाषा मनुष्यों के विचारों के आदान-प्रदान का साधन है; उसके स्वरूप और विशेषताओं का भी परिचय हम पा चुके हैं। अब इस अध्याय में हम देखेंगे कि '**भाषा की शिक्षा**' का क्या अभिप्राय है और उसकी क्या आवश्यकता है।

'**भाषा की शिक्षा**' शब्दों में से 'भाषा' के स्वरूप और कार्य की जानकारी रखना भाषा के अध्यापक को जितना ज़रूरी है, 'शिक्षा' का मतलब समझ लेना उतना ही आवश्यक है।

(१) **'शिक्षा' का अभिप्राय** — 'शिक्षा' के सम्बन्ध में लोगों में भिन्न-भिन्न धारणाएँ दृढ़मूल हैं। कोई 'शिक्षा' का अर्थ 'ज्ञान-प्राप्ति' तक ही सीमित मानता है, तो कोई 'ज्ञान-प्राप्ति' की अपेक्षा विद्यार्थी पर होनेवाले भिन्न-भिन्न संस्कारों से उसका सम्बन्ध अधिक जोड़ बैठता है। असल में बालक के पैदा होते ही उसकी शिक्षा आरम्भ हो जाती है। कान, आँख आदि उसकी ज्ञानेन्द्रियाँ कार्यक्षम होने लगती हैं, उनके ज़रिए स्वभावतः वह कुछ संस्कार ग्रहण करता जाता है। अनजान में वह भाषा को अपनाता जाता है, पास-पड़ोस की भिन्न-भिन्न वस्तुओं का परिचय वह प्राप्त करता है। साधारण भाषा में हम इसे 'शिक्षा' नहीं कहते। शिक्षा का अभिप्राय ज्ञान-प्राप्ति अवश्य है, मगर वह केवल एक बड़े कार्य का अंग मात्र है। पाठशाला में जब बालक को शिक्षा दी जाती है, तब वहाँ एक विशिष्ट वातावरण का निर्माण किया जाता है, जिसमें अध्यापक उसपर कुछ विशेष संस्कार उत्पन्न करते हैं, कुछ नया ज्ञान प्रदान करते हैं, जिसे सम्भवतः बगैर वैसी प्रणाली को अपनाये, बालक नहीं पा सकता। अध्यापक बालक को कई विषय पढ़ाता है, नये अनुभव-क्षेत्र के द्वार उसके लिए खोलता है, वह ज्ञान-प्राप्ति में उसकी मदद करता है, उसकी कठिनाइयों को दूर करता है, वह विद्यार्थी के जीवन-विकास में उसका पथ-प्रदर्शन करता है, उसपर अभीष्ट संस्कार उत्पन्न करते हुए वह उसकी ज्ञानेन्द्रियों को अधिक से अधिक कार्यक्षम बनाने की चेष्टा करता है। इस समूचे कार्य का प्रयोजन है—बालक का सर्वांगीण विकास करना, शरीर और मन को पूर्ण विकसित करना, शील-संवर्धन तथा चरित्र-गठन करना।

इसमें अध्यापक को बालक की बुराइयों, कमज़ोरियों को हटाने की कोशिश करनी चाहिए; उसकी प्राकृतिक प्रवृत्तियों, मानसिक शक्तियों का विकास करते

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हुए उनका उदात्तीकरण करना चाहिए। भाषा के अध्यापक को चाहिए कि वह इन सिद्धान्तों को ध्यान में रखते हुए आगे बढ़े।

(२) **भाषा की शिक्षा** — किसी विषय की शिक्षा द्वारा अध्यापक उस विषय पर प्रभुता प्राप्त करने में बालक की सहायता करता है। 'किसी विद्यार्थी ने गायन-कला या चित्र-कला की शिक्षा पायी है'—इसका मतलब यह है कि उसने उक्त विषय की सम्यक् जानकारी पायी है; उसकी बारीकियों का, खूबियों का परिचय वह प्राप्त कर चुका है, उसके क्षेत्र में सफलता के साथ कार्य करने की क्षमता उसने पायी है। इस दृष्टि से जब कोई कहता है कि किसी विद्यार्थी ने भाषा की शिक्षा पायी है, तो हमें यह मानना होगा कि भाषा के व्यवहार में उसने कुशलता या प्रवीणता प्राप्त की है। अब प्रश्न यह है कि भाषा का व्यवहार-क्षेत्र कौन-सा है?

(३) **भाषा का व्यवहार-क्षेत्र** — भाषा द्वारा हम विचारों का आदान-प्रदान करते हैं, भावों की अभिव्यक्ति करते हैं। हम यह कार्य 'बोल' कर याने '**भाषण**' द्वारा और 'लिख' कर याने '**लेखन**' द्वारा करते हैं। इससे अपने विचारों को दूसरों पर प्रकट करते हैं; तथा दूसरों के शब्दों–भाषण द्वारा व्यक्त किये हुए विचारों को 'सुन' कर याने '**श्रवण**' द्वारा और लिखे हुए विचारों को 'पढ़' कर या '**पठन**' द्वारा ग्रहण करते हैं। इसलिए भाषा के व्यवहार-क्षेत्र के चार अंग होते हैं।

(अ) **भाषण** : हम अपने विचारों की अभिव्यक्ति का अधिकांश कार्य बोलकर–भाषण द्वारा, ध्वनियों की मदद से करते हैं। अगर बोलनेवाले की भाषा को सुननेवाला जानता हो और सुननेवाला बोलनेवाले के विचारों को ग्रहण करने की क्षमता रखता हो, तो उसके 'भाषण' का प्रयोजन सिद्ध हो सकेगा। बोलनेवाला अपने भावों और विचारों को तभी सफलता के साथ व्यक्त कर सकेगा, जब –

(१) वह विचार या भाव को सुयोग्य रूप में प्रकट करनेवाले शब्दों का ज्ञान रखता हो, (२) उसमें शुद्ध भाषा का प्रयोग करने की क्षमता हो, और (३) वह बोलने का प्रभावकारी ढंग अपना चुका हो।

'भाषण' का और विश्लेषण करने से नीचे लिखे तत्त्व ध्यान में आते हैं। बोलनेवाला अभ्यास से इन तत्त्वों को अपनाता है।

१. स्वतंत्र रूप में भिन्न-भिन्न ध्वनियों का शुद्ध उच्चारण करना।
२. दो या अधिक ध्वनियों के समुच्चय का उच्चारण करना–शब्द बनाना।
३. विचार की अभिव्यक्ति के लिए सुयोग्य शब्द का चयन करना।
४. भिन्न-भिन्न शब्दों के समुच्चय द्वारा वाक्य-रचना करना।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

५. किसी विचार-तत्त्व की अभिव्यक्ति के लिए वाक्य को सुयोग्य, सुगठित रूप में प्रस्तुत करना।
६. आवश्यकता के अनुसार आवाज़ में आरोह-अवरोह लाना।
७. मुख-विकार आदि से भावाभिव्यक्ति में स्वाभाविकता तथा प्रभाव-कारिता लाने की चेष्टा करना।
८. अपने विचारों को प्रकट करने के हेतु क्रमशः परस्पर सम्बद्ध वाक्यों की रचना करना। इत्यादि

भाषण के तीन अंग होते हैं—(१) विचार-तत्त्व, (२) भाषा-तत्त्व और (३) शैली-तत्त्व। यहाँ विचार-तत्त्व के बारे में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि बोलनेवाले के विचार उसे ही सुस्पष्ट न रहे हों, तो वह उन्हें अच्छी तरह से व्यक्त नहीं कर सकेगा। यहाँ दूसरे और तीसरे तत्त्व की ओर ही हमें अधिक ध्यान देना है। सामान्य अर्थ में हम सब बोलते हैं, इसलिए 'वक्ता' हैं। शब्दों के जरिए हम अपने मामूली काम तो साधारणतया कर सकते हैं, फिर भी इतने 'काम-चलाऊ' भाषा-ज्ञान पर अभिमान करना किसी पढ़े-लिखे व्यक्ति के लिए कहाँ तक उचित है? किसी विषय पर अपने विचार धारावाही भाषा में प्रभावकारी शैली में व्यक्त करने की क्षमता वांछनीय है। हम उसीको सफल वक्ता या बोलनेवाला कहेंगे, जो अपने विचारों-भावों को प्रभावकारी रीति से व्यक्त कर सकता हो, अपने विचारों को उतनी ही तीव्रता और स्पष्टता के साथ प्रकट कर सकता हो, जितनी तीव्रता से अपने मन में उन भावों को वह अनुभव करता हो। यह कहने-वाला कि 'विचार तो बहुत हैं, मगर उन्हें व्यक्त करने को मेरे पास शब्द नहीं हैं' कहाँ तक वक्ता कहलाएगा?

(ब) श्रवण : बोलने (भाषण) और सुनने (श्रवण) की क्रियाएँ परस्परा-वलम्बी हैं। बोलनेवाला भाषा द्वारा अपने भाव कितनी ही अच्छी तरह क्यों न प्रकट करता हो, जब तब उसका बोलना, उसके 'बोल' या 'भाषण' सुननेवाला कोई न हो, तब तक उसका भाषण 'अरण्य-रोदन' की भाँति व्यर्थ ही होगा। वस्तुतः बोलनेवाला इसी अपेक्षा के साथ बोलता है कि उसका बोलना कोई सुन ले। इस 'श्रवण' क्रिया की ओर गौर से ध्यान देना जरूरी है। जैसे केवल मुँह से ध्वनियाँ निकालना असल में 'बोलना' या 'भाषण' नाम प्राप्त करने का अधिकारी नहीं होता, उन ध्वनियों द्वारा किसी भाव या विचार का व्यक्त किया जाना आवश्यक है, वैसे ही केवल कानों द्वारा ध्वनियाँ ग्रहण करने का मतलब वैज्ञानिक दृष्टि से श्रवण करना नहीं होगा। उन ध्वनियों से व्यक्त होनेवाले भाव को भी ग्रहण किया जाना चाहिए। श्रवण-क्रिया तभी पूरी होती है जब श्रोता वक्ता का भाषण सुनकर, उसके अभिप्राय को ग्रहण करता है — तभी बोलनेवाले का

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उद्देश्य सफल होगा। बोलनेवाले की भाषा का ध्वनि-रूप भाषा का शरीर मात्र है और उसके विचार उसकी आत्मा है। सुननेवाले को इस 'आत्मा' को भी समझ लेना चाहिए। नहीं तो कान जब तक कार्यक्षम हैं, और जब तक उन तक ध्वनियाँ पहुँचती रहती हैं, तब तक उन ध्वनियों को तो वह अवश्य सुन लेता रहेगा। जो आदमी हिन्दी नहीं जानता, उसके सामने कोई व्यक्ति हिन्दी में भाषण देने लगे, तो हमें कहना होगा कि यद्यपि उसने हिन्दी की ध्वनियाँ सुनी हैं, तथापि उसका सुनना-न-सुनना समान ही है; क्योंकि उसके ध्यान में हिन्दी में प्रकट किये हुए विचार नहीं आये हैं। वक्ता की आवाज़ बोलने का ढंग, मुख-विकार आदि की ओर श्रोता को अच्छी तरह ध्यान देना चाहिए। वक्ता के अभिप्राय को ठीक ग्रहण करने की क्षमता श्रोता में होनी चाहिए। लेखन में सैकड़ों गलतियाँ करनेवाले छात्र से अध्यापक के इस कथन का कि 'तुम बड़े अक्लमंद हो' या रमणी के अपने प्रियतम से प्यार से इस कथन का, कि 'तुम बड़े निष्ठुर हो, छली हो' अभिप्राय तभी ध्यान में आएगा जब श्रोता 'सावधान' हो। व्याजोक्ति, वक्रोक्ति व्यंग्योक्ति के अर्थ-ग्रहण में इसी सावधानी की आवश्यकता होती है। श्रोता को बोलनेवाले के अधूरे छोड़े हुए वाक्यों का भी मतलब ग्रहण करना चाहिए। इस दृष्टि से देखा जाए तो भाषण की अपेक्षा श्रवण-क्रिया में श्रोता को सावधानी की अधिक ज़रूरत है।

भाषा की शिक्षा में भाषण और श्रवण का महत्त्वपूर्ण स्थान है। छोटा बालक दूसरों की भाषा को सुनकर ही भाषा को अपनाता जाता है। श्रवण-क्रिया के अभाव में वह भाषा को नहीं अपना सकेगा। सुनी हुई ध्वनियों का अनुकरण करते हुए वह बोलने लगता है। अतः भाषा की शिक्षा में असल में श्रवण-क्रिया 'भाषण' से पहले आती है।

भाषण के जिन तत्त्वों का ऊपर जिक्र किया गया है, उन्हीं का श्रवण-क्रिया में भी महत्त्व माना जाता है। श्रवण-क्रिया का नीचे लिखे तत्त्वों में विश्लेषण किया जा सकता है —

१ स्वतंत्र भिन्न-भिन्न ध्वनियों को सुनना।
२ शब्द की अनेक ध्वनियों को एक साथ सुनना।
३ शब्द का अर्थ समझ लेना।
४ अन्वित शब्दों के समूह याने वाक्य सुनना।
५ वाक्य का अर्थ ग्रहण करना।
६ बोलनेवाले के 'भाषण' के वाक्य-समूह को सुनते हुए अर्थ ग्रहण करना।
७ वक्ता के मुख-विकार आदि से भाव ग्रहण करना।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(स) लेखन : हमारे विचार-विकारों के प्रकटीकरण का दूसरा तरीका है – लेखन। हमारे ध्वनि-संकेतों को लिपि-चिह्नों में अंकित करने की कला का आविष्कार मानव के विकास की महत्त्वपूर्ण मंज़िल है। 'भाषण' की चर्चा के समय उचित शब्दों के चयन के बारे में जो कहा गया है, वह यहाँ भी सही है। लिखनेवाले को चाहिए कि वह जो कुछ लिखता है, वह सुवाच्य हो। अगर वह सुवाच्य न हो, तो पढ़नेवाले को काफी दिक्कत उठानी पड़ेगी। यह न हो कि वह प्रकट करना चाहता हो एक, और जो लिखा गया है उससे प्रकट हो रहा हो दूसरा ही – वह भी लिखनेवाले की भूल से। ऐसे व्यक्ति का सम्मान 'विनायकं प्रकुर्वाण रचयामास वानरम्।' में वर्णित व्यक्ति के सम्मान से क्या कम होगा? जब कोई व्यक्ति बोलता है तब उसे अपने विचारों को स्पष्ट करने का अवकाश रहता है; सुननेवाला उसके मुखविकार, आवाज़ या बोलने के ढंग से बहुत कुछ ग्रहण कर सकता है; मगर एक बार जो लिखा गया है, वह 'पत्थर की लकीर' बनकर रहेगा और पढ़नेवाले ने उसे लेखक की गलती से ही गलत समझा, तो गलतफहमियों के निवारण के लिए हर वक्त मौका कहाँ मिलेगा? हिज्जों को भली भाँति न लिख सकनेवाला क्या कभी लेखन द्वारा भावाभिव्यक्ति में सफल हो सकेगा? 'सेठजी अजमेर गये, बड़ी बही को लेकर आओ।' – लिखनेवाले ने प्रत्यक्ष जो लिखा था, उसके स्वरूप से पढ़नेवाले ने 'सेठजी आज मर गए, बड़ी बहू को लेकर आओ।' पढ़ा और रोने-धोने से सेठजी के घर में कुहराम मच गया। इस 'अनर्थ' का उत्तरदायित्व किसपर होगा? 'शीलाकुमारी' अपने आपको 'शिलाकुमारी' बनाएगी, तो अपने जन्मदाता को 'पाषाण' बनाने का पाप किसका होगा? इसलिए भाषा के व्यवहार का यह अंग (लेखन) भाषण से तनिक भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं माना जा सकता।

(ड) पठन : वक्ता का श्रोता से जो सम्बन्ध है, वही लिखनेवाले का पढ़नेवाले से है। मनुष्य लिखते समय अपनी ध्वनियों को लिपि-चिह्नों में रूपान्तरित करता है, तो पढ़नेवाला लिपि-चिह्नों को ध्वनियों में रूपान्तरित करता है। लिखनेवाले ने जिन लिपि-चिह्नों का प्रयोग किया है, उन्हें पढ़नेवाले को उन्हीं ध्वनियों के लिए ग्रहण करना चाहिए। जैसे सुनने की क्रिया में ध्वनियों के सुनने के साथ-साथ अर्थ-ग्रहण भी अपेक्षित है, वैसे ही पढ़ने की क्रिया में लिपि-चिह्नों की पहचान के साथ-साथ उनके द्वारा प्रकट होनेवाले अर्थ को ग्रहण करने की क्रिया भी अपेक्षित है। इसलिए सिर्फ अक्षरों की पहचान पर्याप्त नहीं है। अक्षर या लिपि-चिह्न तो लिखित भाषा की देह है, उस देह में स्थित अर्थ-रूप आत्मा को पहचानना असल में पढ़नेवाले का काम है। मराठी भाषा-भाषी लोग नागरी लिपि जानते हैं, इसलिए वे हिन्दी की पंक्तियाँ यों तो पढ़ सकेंगे; फिर भी जब तक उन (हिन्दी) पंक्तियों का भाव उनके ध्यान में नहीं आता, तब तक हम यह नहीं कह सकते कि वे हिन्दी पढ़ते हैं। भाषा पर जिन्हें

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पर्याप्त मात्रा में अधिकार प्राप्त नहीं हुआ है, वे लिपि-परिचय से कुछ-न-कुछ पढ़ तो लेते हैं, मगर उनके ध्यान में उसका अर्थ नहीं आता ; इसलिए उनकी यह पठन-क्रिया अधूरी ही रहती है।

अब तक भाषा के व्यवहार के क्षेत्र का वर्णन किया गया। 'भाषा की शिक्षा' शब्द-प्रयोग का पूरा मतलब तभी ध्यान में आएगा, जब हम उपर्युक्त सभी बातों को ध्यान में रखेंगे।

× × ×

भाषा पर प्रभुता पाने में बालकों की मदद करना अध्यापक का लक्ष्य होना चाहिए। 'भाषा पर प्रभुता' पाने का मतलब है – 'भाषा के व्यवहार में अधिक से-अधिक प्रवीणता पाना, सहजता से उन व्यवहारों को करने की क्षमता पाना, विचारों के आदान-प्रदान के इस साधन का कुशलता के साथ प्रयोग करने में समर्थ होना।' हम चाहते हैं कि बालक अपने विचारों, भावों को सफलता और प्रभाव-कारिता के साथ व्यक्त करने में समर्थ हो; वह इस कार्य को भाषण या लेखन द्वारा भली भाँति कर सके; और दूसरों के भाषण या लेखन में प्रकट किये गये विचारों को वह सुचारु रूप से ग्रहण करने की क्षमता पा ले। संक्षेप में **भाषा की** शिक्षा' से हमारा यह अभिप्राय है : '**भाषा के भाषण (बोलना), श्रवण (सुनना) लेखन (लिखना) और पठन (पढ़ना) के क्षेत्रों में कुशलता से व्यवहार करने की क्षमता प्राप्त कर लेने की शिक्षा।**

(४) भाषा की शिक्षा की आवश्यकता – अब यह समस्या उपस्थित होती है कि भाषा की शिक्षा की क्या आवश्यकता है? छोटा शिशु अपने आप भाषा को आत्मसात् करना आरम्भ करता है। कुछ वर्षों के अन्दर अपने कार्यक्षेत्र में जितना आवश्यक है, उतना भाषा का व्यवहार करने में वह समर्थ भी होता है। उसी तरह अपढ़ लोग भाषा की शिक्षा किसी पाठशाला में न पाकर भी भाषा द्वारा अपना काम करते हुए दिखायी देते हैं, तो इतना परिश्रम उठाकर भाषा की शिक्षा का प्रबन्ध करने की क्या आवश्यकता है?

आरम्भ में एक बात हमें स्वीकार करनी चाहिए कि भाषा की (विशेष अर्थ में) शिक्षा न पाते हुए भी कुछ लोग व्यवहार में असफल नहीं दिखायी देते, अपने क्षेत्र में वे किसी कठिनाई को अनुभव नहीं करते। इन लोगों ने पाठशाला में जाकर शिक्षा नहीं पायी है। तथापि दूसरी दृष्टि से इन बालकों और अपढ़ लोगों ने भाषा की शिक्षा अवश्य पायी है। बालक पर जन्म से ही कुछ-न-कुछ संस्कार होते हैं; उसे भाषा का व्यवहार करने का अभ्यास होता है। वह भाषा सुनता है, स्वयं बोलता है, नये-नये शब्दों को अपनाता और अपने शब्द-भण्डार को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पुष्ट करता जाता है। अगर वह शब्द के प्रयोग या उच्चारण में गलती करे, तो घर के अन्य व्यक्ति उसे दुरुस्त करते हैं, उससे सही प्रयोग का अभ्यास कराते हैं। इसको 'शिक्षा' के अतिरिक्त क्या नाम दिया जा सकता है? यहाँ बालक पाठशाला नामक किसी इमारत की चहारदीवारी के भीतर बन्द नहीं है। जहाँ वह घूमता-फिरता है वही उसकी पाठशाला है। इने-गिने दो-चार व्यक्ति ही उसके अध्यापक नहीं हैं—यहाँ तो उसके माता-पिता, भाई-बहन सभी उसके अध्यापक हैं। मतलब यह है कि छोटे बालक और अपढ़ व्यक्ति भाषा की शिक्षा बिलकुल पाते ही नहीं, सो बात नहीं।

ऊपर की पंक्तियों में भाषा के एक पहलू के बारे में ही कहा गया। भाषण और श्रवण में बालक अपने आप प्रगति कर सकता है, मगर पठन और लेखन की शिक्षा उसे प्रयासपूर्वक ही लेनी चाहिए। उसके विकास की नींव इसी शिक्षा पर डाली जाती है। इस क्षेत्र में भाषा की शिक्षा की अनिवार्यता कोई भी अस्वीकार नहीं करता। जो विद्यार्थी भाषा की शिक्षा पाते हैं, वे भिन्न-भिन्न विषयों पर अपने विचारों को अधिक प्रभावकारिता के साथ व्यक्त कर सकते हैं। शब्दों का चुनाव, वाक्य-रचना, शैली आदि बातों की ओर अधिक ध्यान देते हुए पढ़ा-लिखा व्यक्ति अपने भाषण को अधिक प्रभावकारी बना सकता है; मगर अपढ़ मनुष्य आम तौर पर सूक्ष्म भावों और गूढ़ विचारों को व्यक्त करने में कठिनाई अनुभव करता है। विचारों की गहराई में जाकर उनके प्रकटीकरण में वह असफल होता है। 'अभ्यास' का अभाव ही इस असफलता का कारण है और 'अभ्यास' शिक्षा का महत्त्वपूर्ण अंग है।

भाषा और विचार का अभिन्न सम्बन्ध है। ऊँचे और प्रौढ़ विचारों की अभिव्यक्ति के लिए हरएक को भाषा में उतनी योग्यता पाना जरूरी है। शिक्षा से विचारों के विकास में प्रगति होती है और उन विचारों के प्रकटीकरण का अभ्यास होता है। जिन्होंने भाषा पर प्रभुता नहीं प्राप्त की है, वे लोग उस भाषा में दिया हुआ भाषण भी अच्छी तरह से नहीं समझ पाते।

लेखन और पठन के क्षेत्र में शिक्षा की अनिवार्यता स्पष्ट है। शुद्ध भाषा का प्रयोग बोलने में जितना आवश्यक है उतना ही लिखने में। शुद्ध भाषा में बोलने और लिखने की कला में प्रवीणता पायी जाना मनुष्य के सुशिक्षित होने का निदर्शक है। पठन भी कला है। इस कला को अपनाने में विद्यार्थी को मार्गदर्शन की आवश्यकता प्रतीत होती है।

वही बात है मुख-विकारादि इंगितों की। इंगितों का उचित प्रयोग करने और अनुचित प्रयोग को टालने में बालक को मार्गदर्शन की आवश्यकता अनुभव होती है। – यह मार्गदर्शन 'शिक्षा' ही है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'भाषा पर प्रभुता' शब्दों से साहित्यिक अभिरुचि की ओर भी संकेत किया जाता है। साहित्य सबसे श्रेष्ठ कला कहलाता है और साहित्य कला में जो रुचि नहीं रखता, उसे सुभाषितकार ने 'पुच्छ-विषाण-हीन पशु' कहा है। भाषा की शिक्षा पाने से ही मनुष्य को साहित्य में रुचि अनुभव होगी, उस रुचि का विकास होगा। भाषा का अध्यापक अपने विद्यार्थियों के सामने साहित्य के अच्छे-अच्छे नमूने रखता है, उनका रसास्वाद करने में उनकी सहायता करता है। इस दृष्टि से भी भाषा की शिक्षा की आवश्यकता स्पष्ट होती है।

अभी तक उपर्युक्त पंक्तियों में जो विवेचन किया गया है, उसका निचोड़ यों दिया जा सकता है—भाषण, श्रवण, लेखन, पठन आदि भाषा के व्यवहार क्षेत्र के हर अंग में मनुष्य को अगर सफल होना हो, तो उसे भाषा की शिक्षा की नितान्त आवश्यकता है। ज्ञानार्जन भाषा द्वारा ही किया जा सकता है, इतिहास, भूगोल, विज्ञान आदि की शिक्षा पाने में भी भाषा की सहायता की आवश्यकता होती है। जिस विद्यार्थी ने उच्च श्रेणी का भाषा-ज्ञान पाया होगा, वही विद्यार्थी श्रेष्ठ ग्रन्थों को पढ़कर अपनी उन्नति कर सकेगा और अपने विचारों को दूसरों के सामने प्रकट कर सकेगा। किसी विद्यार्थी के पास ज्ञान है, मगर वह उसे शुद्ध भाषा में प्रकट करने में असमर्थ हो, तो इसे उसके ज्ञानार्जन की कमी ही मानना चाहिए। इसलिए भाषा की शिक्षा समूची शिक्षा की आधार-शिला है।

(५) **अन्य भाषाओं से परिचय** – ऊपर की पंक्तियों से यह स्पष्ट हुआ होगा कि बालक को मातृभाषा की शिक्षा की भी नितान्त आवश्यकता है। फिर मातृभाषा के अतिरिक्त किसी दूसरी भाषा को जब कोई सीखना चाहता हो, तब कहना न होगा कि उसे कितने परिश्रम के साथ उसे अपनाना होगा। सावधानी के साथ यदि अध्यापक बालकों की सहायता न करे, तो आरम्भ में वे इस कार्य में कठिनाई अनुभव करेंगे।

भारत में अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं। यदि विभिन्न भाषा-भाषी लोग किसी राष्ट्र में रहते हों, तो उन्हें केवल अपनी प्रादेशिक भाषा को लेकर ही चलना मुश्किल होगा। जब भिन्न भाषा-भाषी लोग एक-दूसरे के सम्पर्क में आते हैं, तब उन्हें व्यवहार की सुलभता के लिए एक-दूसरे की भाषा को भी अपनाना होगा। इसलिए आज के युग में हरएक नागरिक को अपनी मातृभाषा के साथ ही अन्य भाषाओं को सीखना भी अनिवार्य-सा हुआ है।

हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा है, इसलिए उसे अपनाना हर भारतीय नागरिक का कर्तव्य है। अहिन्दी प्रदेश के लोगों का उत्तरायित्व इससे बढ़ गया है। नागरिक के नाते अपने कर्तव्य को पूर्ण करने के लिए अपनी प्रादेशिक या मातृभाषा के साथ ही वह हिन्दी भाषा सीखे। कभी-कभी व्यापार आदि के हेतु उसे अपने प्रदेश

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के निकटवर्ती प्रदेश की भाषा को भी सीखना होगा। बम्बई जैसे शहर में व्यापार तथा अन्य व्यवसाय करनेवाले को मराठी, गुजराती और हिन्दी का ज्ञान पाना ज़रूरी है। दो प्रादेशिक भाषाओं के सीमान्त पर बसे गाँवों में, भारत के बम्बई, मद्रास, हैदराबाद आदि शहरों में, विभिन्न व्यवसाय करनेवाले लोगों को भिन्न-भिन्न भाषाओं का परिचय पाना अनिवार्य-सा हो गया है।

अपनी मातृभाषा और राष्ट्रभाषा के साथ हर पढ़े-लिखे व्यक्ति को अंग्रेज़ी जैसी विश्व-भाषा से भी परिचित होना चाहिए। आज तक अंग्रेज़ी को भारत में जो महत्त्व का स्थान रहा है, भविष्य में वैसा नहीं रहेगा; फिर भी आन्तरराष्ट्रीय व्यवहार और शिक्षा-दीक्षादि के क्षेत्र में से अंग्रेज़ी को निर्वासित नहीं किया जा सकता—यहाँ तक कि वैसा करना अभीष्ट भी नहीं होगा।

संक्षेप में, आज की दुनिया में उच्चाकांक्षा रखनेवाले प्रत्येक व्यक्ति को अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त अन्य भाषाओं का अध्ययन करना नितान्त आवश्यक है। बहु-भाषी बनने से हम अपने उद्धार के पथ पर अग्रसर हो सकते हैं।

हमारे शिक्षा-शास्त्रियों ने और सरकार ने इस बात की ओर विशेष ध्यान दिया है। उसके महत्त्व को ध्यान में लेते हुए वे अंग्रज़ी को भी शिक्षा के क्षेत्र में कायम रखना चाहते हैं। आज अहिन्दी प्रदेशों की माध्यमिक पाठशालाओं में प्रादेशिक भाषा के साथ-साथ अंग्रेज़ी और राष्ट्रभाषा हिन्दी की शिक्षा दी जाती है। विश्वविद्यालयों में अंग्रेज़ी तो है ही, हिन्दी को भी स्थान दिया जा रहा है।

× × ×

इस पुस्तक का उद्देश्य है — **अहिन्दी प्रदेशों में हिन्दी का अध्यापन करनेवालों का पथ-प्रदर्शन करना।** इसलिए अंग्रेज़ी आदि की चर्चा न करते हुए, हम अहिन्दी प्रदेशों में की जानेवाली हिन्दी की पढ़ाई के सम्बन्धमें चर्चा करेंगे। भाषा की शिक्षा के अभिप्राय को ध्यान में लेते हुए हम अब यह देखेंगे कि हमारे यहाँ के बालकों को हिन्दी में इतनी योग्यता कैसे प्राप्त होगी, जिससे वे भाषण, लेखन आदि भाषा के व्यवहारों में सफल होंगे।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: 3 :

अहिन्दी भाषी प्रदेश में हिन्दी की शिक्षा

पिछले अध्याय में यह दिखाया गया है कि 'भाषा की शिक्षा' का क्या अभिप्राय है और यह भी कि आज की दुनिया में हमें विभिन्न भाषाओं का परिचय पाना कितना ज़रूरी है। अहिन्दी भाषी प्रदेश के हर विद्यार्थी को अपनी प्रादेशिक भाषा या मातृभाषा के अतिरिक्त राष्ट्रभाषा हिन्दी सीखनी चाहिए। इसलिए ऐसे अहिन्दी भाषी प्रदेशों की पाठशालाओं में हिन्दी की शिक्षा अनिवार्य की जा रही है। राष्ट्रभाषा के अध्यापक को यह भली भाँति समझ लेना चाहिए कि वह जो कार्य करने जा रहा है, उसकी क्या आवश्यकता है, उसकी परिधि क्या है और उसका क्या लक्ष्य है। तभी वह अपनी समस्याओं को स्पष्ट रूप में देखकर हल कर सकेगा।

(१) **राष्ट्रभाषा की आवश्यकता** — भारत के विभिन्न प्रदेशों में भिन्न भिन्न भाषाएँ बोली जाती हैं। भारत के संविधान (धारा ३५१) में जिन भाषाओं को स्थान दिया गया है, वे हैं :— १. असमिया, २. बँगला ३. हिन्दी, ४. पंजाबी, ५. कश्मीरी ६. गुजराती, ७. मराठी, ८. कन्नड़, ९. तमिल, १०. तेलुगु, ११. मलयालम, १२. उड़िया, १३. उर्दू, १४. सिन्धी और १५. संस्कृत। भारत के अनेकानेक राज्य एक ही विशाल राष्ट्र के — इस विशालकाय राष्ट्र-पुरुष के अंग हैं। हमारे राष्ट्र की संस्कृति एक है, ऐतिहासिक परम्परा एक है, जीवन-विषयक दृष्टि-कोण एक-सा है, चाहे ऊपरी तौर पर थोड़ी-बहुत विभिन्नता इसमें क्यों न हो। राष्ट्र के इन विभिन्न अंगों को सुसंगठित करने के लिए उसमें आधारभूत प्राण-शक्ति की आवश्यकता प्रतीत होती है। ये प्राणभूत शक्तियाँ हैं — राष्ट्रीयता और एकता, जिनके अभाव में राष्ट्र में एकरसत्व, सामंजस्य, एकात्मता का निर्माण न होगा। हम यह चाहते हैं कि ये सब प्रदेश एक प्राण-शक्ति में बँधे हुए हों। राष्ट्रभाषा इस बन्धन का निर्माण कर सकती है।

भाषा हृदय के भावों का प्रकाशन मात्र है, इसलिए उसमें आत्मा की अभिव्यक्ति होती है। यों तो भिन्न-भिन्न प्रादेशिक भाषाएँ अपनी-अपनी प्रादेशिक विशेषताओं को व्यक्त करेंगी। फिर भी अगर भारत को सच्चे अर्थ में एक राष्ट्र होना हो, तो भारतीय जनता की आत्मा एक ऐसी भाषा में ही व्यक्त होनी चाहिए, जो दुनिया की भाषाओं की सभा में भारत का प्रतिनिधित्व करेगी। यह प्रतिनिधि भाषा राष्ट्रभाषा हिन्दी ही हो सकती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

व्यावहारिक दृष्टि से भी देखें तो अन्तर्प्रादेशिक व्यवहार के लिए किसी एक भाषा की हमारे लिए नितान्त आवश्यकता है। एक प्रदेश के निवासियों को दूसरे प्रदेश के लोगों से व्यवहार करना हो, तो उनको उनमें से किसी एक प्रदेश की या एक अन्तर्प्रादेशिक भाषा की सहायता लेनी होगी। पर यह कहना उचित नहीं होगा कि महाराष्ट्र के लोग गुजरात से व्यवहार करने के लिए गुजराती सीखें और बँगला भाषियों से बँगला में व्यवहार करें, आंध्र से तेलुगु में करें। इसमें कितनी झंझट और असुविधा पैदा होगी! एक अन्तर्प्रादेशिक भाषा से ही सबको सुविधा होगी। अगर हम सबको एक 'राष्ट्र-भवन' में एक 'परिवार' के रूप में रहना हो, तो हमें एक दूसरे को समझना चाहिए। तभी हम एक दूसरे के प्रति आत्मीयता, प्रेम, एकता का भाव, समवेदना और सहानुभूति अनुभव करेंगे; नहीं तो यह 'राष्ट्र-परिवार' एक परिवार कहलाने योग्य नहीं होगा। इसके लिए राष्ट्रभाषा की आवश्यकता है। उपर्युक्त सब भावों की जननी राष्ट्रभाषा ही है।

भारत एक संघ-राष्ट्र है, जिसमें अनेक भाषिक राज्य सम्मिलित हैं। यद्यपि इसकी कई भाषाएँ बहुत विकसित हैं, तो भी हरएक भाषा का स्थान प्रधानतः वही भाषिक राज्य होगा, जिसमें वह बोली जाती है। केन्द्रीय सरकार को किसी एक ही भाषा को राजभाषा (official language) के तौर पर अपनाना होगा; * इसी राजभाषा में भारतीय सरकार अपना कार्य करेगी, अन्य राज्यों से व्यवहार करेगी। बगैर ऐसी भाषा के बहुभाषी राष्ट्र को कार्य करना असम्भव होगा।

(२) **हिन्दी की शिक्षा का उद्देश्य** — जिन बालकों की मातृभाषा हिन्दी है, वे तो अपने आप हिन्दी भाषा को अपनाते हैं। पाठशाला में इन हिन्दीभाषी विद्यार्थियों को हिन्दी की विशेष शिक्षा दी जाती है, जिससे वे अपने भाषाज्ञान का विकास करते हैं। असल में उनके जीवन की पूरी अभिव्यक्ति हिन्दी में होनेवाली है, उन्हें हर साँस मानो हिन्दी के वातावरण में लेनी है; इसलिए उन्हें इस उद्देश्य से शिक्षा दी जाती है कि हिन्दी भाषा में वे उच्च दर्जे की योग्यता पा लें, हिन्दी साहित्य से भली भाँति परिचित हो जाएँ, उसका रसास्वाद करने में समर्थ हों, अपनी सम्पूर्ण भाव-सृष्टि को प्रकट करने की क्षमता उन्हें प्राप्त हो। ब्रजभाषा, अवधी, भोजपुरी आदि बोलियों के बोलनेवालों को खड़ी बोली हिन्दी को शिक्षा आदि के लिए अपनाना पड़ता है। उन्हें उसमें योग्यता प्राप्त करनी चाहिए।

इन विद्यार्थियों को राष्ट्रभाषा को अपनाने में स्वतंत्र रूप से कोई कष्ट उठाना नहीं पड़ता। मगर अहिन्दी भाषी प्रदेशों के विद्यार्थियों को अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त राष्ट्रभाषा को भी अपनाना चाहिए। ऐसे विद्यार्थियों को निम्न-लिखित

---

* संविधान के अनुसार, फिलहाल हिन्दी और अंग्रेज़ी भाषाओं को राजभाषाओं के रूप में स्वीकर किया गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उद्देश्यों की पूर्ति के हेतु हिन्दी की शिक्षा देनी चाहिए। वास्तव में यही कहना उचित होगा कि एक ही उद्देश्य के नीचे लिखे अनुसार भिन्न-भिन्न पहलू मात्र हैं।

(अ) राष्ट्रीय कर्तव्य की पूर्ति -- भारत के हरएक नागरिक का यह श्रेष्ठ कर्तव्य है कि वह अपनी मातृभूमि की राष्ट्रभाषा को आत्मसात् करे। बगैर राष्ट्र-भाषा के ज्ञान के उसकी शिक्षा-दीक्षा अधूरी रह जाएगी। आज के विद्यार्थी कल के नागरिक हैं, इसलिए उनकी शिक्षा में राष्ट्रभाषा को स्थान देना चाहिए।

(आ) सांस्कृतिक उद्देश्य — अंग्रेज़ों के यहाँ आने के बाद भारतीयों की शिक्षा के क्षेत्र में अंग्रेज़ी भाषा को महत्त्वपूर्ण स्थान रहा। उन दिनों अंग्रेज़ी भाषा की शिक्षा देने के जो उद्देश्य बतलाये जाते थे, उनमें एक 'सांस्कृतिक' उद्देश्य भी था। इस शब्द से यह अभिप्राय माना जाता था कि अंग्रेज़ी भाषा और साहित्य के ज़रिए भारतीय लोग अंग्रेज़ों के रहन-सहन, जीवन-विषयक दृष्टिकोण, संक्षेप में, अंग्रेज़ी संस्कृति का परिचय पा लेने में समर्थ हो जाएँ। किसी भी भाषा का अध्ययन करने-कराने में किसी हद तक ऐसा सांस्कृतिक उद्देश्य तो अवश्य रहता है। मगर हिन्दी भारतीय भाषा है, हिन्दी-भाषियों की संस्कृति भी भारतीय संस्कृति ही है; इसलिए अगर कोई ऐसा कहने लगे कि हिन्दी भाषा का ज्ञान पाकर हम अहिन्दी भाषी प्रदेशों के लोगों को उनकी – हिन्दी भाषियों की संस्कृति का – सम्यक् परिचय पाना चाहिए, तो वह बात अवश्य खटकने लगेगी। मगर इस समस्या की ओर ज़रा दूसरे दृष्टिकोण से देखना चाहिए। जब हम हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करते हैं, तब हमें चाहिए कि हम उसे किसी विशेष प्रदेश की ही भाषा न मानकर समूचे भारत की वाणी समझें। राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी का विकास हो रहा है। अभी तो वह बाल्यावस्था में है। उसका विकास जैसे-जैसे होता जाएगा वैसे-वैसे उसमें भारत की 'संपृक्त संस्कृति' (Composite culture) को व्यक्त करने की शक्ति आती जाएगी। इस राष्ट्रभाषा के संबंध में भारतीय संविधान की ३५१ वीं धारा में महत्त्वपूर्ण विचार यों व्यक्त किये गये हैं :--

'It shall be the duty of the Union to promote the spread of Hindi language, to develop it so that it may serve as a medium of expression for all the elements of the composite culture of India.....'

उपर्युक्त वाक्यों के प्रकाश में हमें कहना होगा कि भारत की यह संपृक्त संस्कृति किसी भी प्रादेशिक संस्कृति से कई बातों में कुछ भिन्नता रखती होगी। जब राष्ट्रभाषा द्वारा भिन्न-भिन्न भाषा-भाषी लोग एक दूसरे को समझने का प्रयास करेंगे, तब हम एक-दूसरे की प्रादेशिक संस्कृति की विशेषताओं का भी परिचय पा सकेंगे। राष्ट्रभाषा के द्वारा ही यह कार्य आसान प्रतीत होगा। इसलिए हिन्दी की शिक्षा के उद्देश्य के इस सांस्कृतिक पहलू को हमें न भूलना चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(इ) **साहित्यिक उद्देश्य**—भाषा के साथ-साथ, उसका साहित्य भी आता है। प्रत्येक सुसंस्कृत नागरिक को चाहिए कि वह अपनी भाषा के तथा राष्ट्रभाषा के साहित्य का परिचय प्राप्त करे। भारत की मराठी, बंगला, तमिल आदि भाषाओं का साहित्य ऊँचे दर्जे का है। इनमें से हरएक के साहित्य में ऐसे अनूठे ग्रन्थ रत्न हैं कि जिनपर हरएक भारतीय को अभिमान होना चाहिए—असल में यद्यपि वे किसी एक भाषा में लिखे हुए हों, तथापि आज वे समस्त भारत के कहलाने के अधिकारी हैं। स्व. रवीन्द्रनाथ ठाकुर के शब्दों में ये ग्रन्थ 'सार्वलौकिक' सिद्ध हो चुके हैं। वैसे ही हिन्दी में भी कई ग्रन्थ हैं। हिन्दी की शिक्षा पाने से हिन्दी तथा अन्य प्रादेशिक भाषाओं के साहित्य की ओर आगे बढ़ने का रास्ता हरएक नागरिक के सामने खुला होगा। जो चाहता हो वह आगे बढ़ेगा। इस दृष्टि से अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त भारतीय भाषाओं के साहित्य का परिचय पाने की तैयारी कर लेना भी हिन्दी की शिक्षा के उद्देश्य का एक पहलू है।

(ई) **व्यावहारिक उद्देश्य**—राष्ट्रीयता, सांस्कृतिक, साहित्यिक—जैसे बड़े-बड़े शब्द सुनकर कुछ लोगों को आगे बढने में हिचकिचाहट मालूम होगी। मगर इन उच्च स्तर की बातों के अतिरिक्त एक विशुद्ध व्यावहारिक बात भी है। हरएक राज्य-सरकार अपने कर्मचारियों को हिन्दी सीखने में प्रोत्साहित कर रही है—कहीं-कहीं, जैसे कि (भूतपूर्व) बम्बई राज्य में (अब के महाराष्ट्र और गुजरात राज्यों में) एक नियत अवधि के भीतर सरकारी कर्मचारियों के लिए हिन्दी परीक्षाओं में उत्तीर्ण होना अनिवार्य किया गया है। अब नये उम्मीदवारों की भर्ती करते समय उन्हीं लोगों को चुना जाएगा, जो राष्ट्रभाषा में विशेष योग्यता रखते हों। शिक्षा के कितने भी उच्च और उदात्त उद्देश्य क्यों न हों, जब तक मनुष्य को बगैर रोटी खाये जीवित रहना असम्भव है, तब तक शिक्षा-शास्त्री शिक्षा के व्यावहारिक उद्देश्य की ओर आँखें बन्द नहीं कर सकते। उदर-भरण की समस्या सबसे आद्य समस्या है, इसलिए इसमें अचरज की कोई बात नहीं कि हिन्दी की शिक्षा के उद्देश्य का भी रोजी पाने की दृष्टि से कोई व्यावहारिक पहलू हो। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए विद्यार्थियों को हिन्दी की शिक्षा पाना आवश्यक है।

इससे कोई यह गलत धारणा न कर बैठे कि माध्यमिक पाठशालाओं में कुछ वर्षों तक दी जानेवाली हिन्दी की शिक्षा से इन सभी उद्देश्यों की पूर्ति होगी। जब अपनी मातृभाषा की इतनी शिक्षा पा लेने के बाद भी मनुष्य पूर्णतः सफल नहीं होता दिखायी देता, तो हिन्दी के सम्बन्ध में ऐसी आशा करना बिलकुल हास्यास्पद ही प्रतीत होगा। मतलब इतना ही है कि विद्यार्थी को हिन्दी भाषा का इतना परिचय प्राप्त हो जाए कि उसके आधार पर अपनी इच्छा और रुचि के अनुसार वह आगे बढ़ सके।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इस बात को ध्यान में रखते हुए हमें स्पष्ट शब्दों में कहना चाहिए कि माध्यमिक पाठशाला के साधारण शक्ति और बुद्धिमानी के विद्यार्थी के हिन्दी के ज्ञान का अपेक्षित स्तर क्या होना चाहिए।

(३) **हिन्दी भाषा के ज्ञान का अपेक्षित स्तर** – माध्यमिक पाठशालाओं के विद्यार्थियों को कितनी हिन्दी पढ़ायी जाए? इसपर विचार करते समय हमें निम्न-लिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए —

एक तो हम अहिन्दी भाषी प्रदेशों की समस्या हल करना चाहते हैं। यहाँ की पाँचवीं कक्षा में प्रवेश करनेवाले विद्यार्थी यह भी नहीं जानते कि हिन्दी किस चिड़िया का नाम है। वे हिन्दी का श्रीगणेश यहीं करना चाहते हैं। इसलिए हिन्दी भाषा-भाषी विद्यार्थियों से हिन्दी भाषा में जो प्रवीणता अपेक्षित है, वही इनके सम्बन्ध में नहीं हो सकती। दूसरी बात यह है कि अपनी प्रादेशिक भाषा के वातावरण में रहते हुए ये विद्यार्थी अन्य विषयों के साथ-साथ हिन्दी पढ़ना चाहते हैं। उन्हें हिन्दी सुनने या बोलने का मौका बहुत ही कम मिलता है। इतना ही नहीं उन्हें हफ्ते में चन्द घण्टे ही हिन्दी पढ़ायी जाएगी। इसलिए ग्यारहवीं कक्षा तक अहिन्दी भाषी-प्रदेश के विद्यार्थी हिन्दी में इतनी योग्यता नहीं पा सकेंगे, जितनी हिन्दी भाषा-भाषी विद्यार्थी पाते होंगे। अन्य शब्दों में यह कहा जा सकता है कि इन विद्यार्थियों के मातृभाषा के ज्ञान का स्तर और हिन्दी के ज्ञान का स्तर समान नहीं हो सकते।

जन्म से लेकर ग्यारहवीं कक्षा तक अपनी मातृभाषा के वातावरण में पलने के कारण हरएक विद्यार्थी उसको बिलकुल स्वभाविक रूप में काम में ला सकता है, अपने विचारों को उसमें सहजतया व्यक्त करने की क्षमता पाता है। अपनी भाषा के साहित्य से भी उसका कुछ परिचय होता है। मगर राष्ट्रभाषा में साधारण विद्यार्थी को इतनी योग्यता नहीं प्राप्त हो सकेगी। उससे हमारी जो अपेक्षा है, वह यहाँ तक सीमित होगी —

हरएक विद्यार्थी शुद्ध और आसान हिन्दी में बोल सके। अपने क्षेत्र के भीतर के विषयों के सम्बन्ध में बातचीत कर सके, आसान हिन्दी में उसे सुनायी हुई बातों को ग्रहण कर सके, अपने विचारों को आसान और शुद्ध हिन्दी में लिखकर प्रकट कर सके और आसान हिन्दी में लिखी हुई बातों को पढ़कर समझ सके। इसके लिए उसे नागरी लिपि को अच्छी तरह से आत्मसात् करना चाहिए। मातृभाषा के साहित्य का जितना परिचय पाना उसे आवश्यक है, उतना हिन्दी साहित्य का अपेक्षित नहीं है। इस श्रेणी में हिन्दी साहित्य की शैलीगत विशेषताएँ, आलोचनात्मक विवेचन आदि बातें उससे अपेक्षित नहीं हैं।

संक्षेप में हम यों कह सकते हैं कि उसे उतनी ही हिन्दी पढ़ायी जाए जिससे वह शुद्ध हिन्दी में बोल और लिख सके, और आसान भाषा में प्रकट किये हुए

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विचारों को ग्रहण कर सके। कम-से-कम इतनी बात हरएक विद्यार्थी से अपेक्षित है। अध्यापक उसे हिन्दी के ज्ञान का इतना सम्बल देकर उसका पथ-प्रदर्शन करेगा। जो आगे बढ़ना चाहता हो, वह उसके आधार पर आगे जा सकेगा, जो हिन्दी साहित्य को पढ़ना चाहता हो वह पढ़ सकेगा।

इस बात को ध्यान में लेते हुए (भूतपूर्व बम्बई राज्य के) 'माध्यमिक शालान्त परीक्षा मण्डल (एस्. एस्. सी. ई. बोर्ड)' ने अपना पाठ्य-क्रम नियत किया है। मातृभाषा के स्तर पर आकर हिन्दी का अध्ययन करनेवालों के लिए उसने 'उच्च श्रेणी' का पाठ्य-क्रम नियत किया है और नये रूप में भाषा को अपनानेवालों के लिए 'निम्न श्रेणी' का पाठ्य-क्रम सुझाया है। इसमें व्यावहारिकता पर ही अधिक ध्यान दिया गया है।

(४) पाठ्य-क्रम की भाषाएँ और हिन्दी—अब हमें देखना चाहिए कि माध्यमिक पाठशाला के विद्यार्थियों को किस परिस्थिति में हिन्दी भाषा पढ़ायी जा रही है। उससे हम यह जान सकेंगे कि उसका उनके हिन्दी भाषा के अपनाने पर क्या प्रभाव होता है।

शिक्षा विभाग द्वारा शिक्षा के क्षेत्र की चार अवस्थाएँ स्वीकार की गयी हैं। (१) प्राथमिक शिक्षा : कक्षा १ से ४ तक, (२) माध्यमिक शिक्षा : निम्न श्रेणी या उच्च प्राथमिक : कक्षा ५ ते ७ तक, (३) माध्यमिक शिक्षा : उच्च श्रेणी : : कक्षा ८ से ११ तक, (४) उच्च या विश्व-विद्यालयीन शिक्षा। अहिन्दी भाषी प्रदेशों की प्राथमिक पाठशालाओं में आम तौर पर हिन्दी की शिक्षा अनिवार्य नहीं की है, तथा विश्व-विद्यालयीन शिक्षा इस पुस्तक का विषय नहीं है। इसलिए ५ वीं से ११ वीं कक्षा तक की (माध्यमिक पाठशालाओं की) हिन्दी की शिक्षा से ही हमें अपने विषय को सीमित करना चाहिए।

माध्यमिक पाठशाला में विद्यार्थी को कई विषयों का अध्ययन करना पड़ता है। गणित, इतिहास, भूगोल, विज्ञान, नागरिक-शास्त्र आदि विषयों के साथ-साथ प्रादेशिक भाषा, अंग्रेज़ी, संस्कृत या अन्य एक प्राचीन भारतीय या आधुनिक योरोपीय भाषा और हिन्दी का भी वह अध्ययन करता है। इससे स्पष्ट होता है कि माध्यमिक पाठशालाओं में भाषाओं की शिक्षा का स्थान विशेष महत्त्वपूर्ण माना जाता है। उनके पाठ्य-क्रम में रखी हुई भाषाओं का महत्त्व ध्यान में लेते हुए हम यह देखेंगे कि उनमें हिन्दी का क्या स्थान है।

(अ) प्रादेशिक भाषा—अधिकतर विद्यार्थियों की मातृभाषा और प्रादेशिक भाषा एक ही होती है। विद्यार्थियों की शिक्षा में उनकी मातृभाषा का स्थान सबसे उच्च होना चाहिए। बगैर उसकी समुचित शिक्षा पाये, विद्यार्थी आगे बढ़

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नहीं सकेंगे। असल में मनुष्य अपनी मातृभाषा में आत्माभिव्यक्ति जितनी स्वाभाविकता से कर सकता है, उतनी अन्य भाषा में नहीं। इसलिए आजकल मातृभाषा की शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है। मातृभाषा की शिक्षा मानो उसकी समूची शिक्षा की आधार-शिला होती है।

जिन विद्यार्थियों की मातृभाषा उनकी प्रादेशिक भाषा से भिन्न हो, उन्हें भी प्रादेशिक भाषा को सीखना अनिवार्य किया गया है। सारांश यह है कि हरएक विद्यार्थी अपनी मातृभाषा की शिक्षा पहली कक्षा से ग्यारहवीं कक्षा तक कुल ग्यारह साल पाता है।

(आ) राष्ट्रभाषा – विद्यार्थी के शिक्षा-क्षेत्र में उसकी अपनी मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा के बाद राष्ट्रभाषा आती है। महाराष्ट्र और गुजरात में विद्यार्थी को ५ वीं कक्षा से ११ वीं कक्षा तक कुल सात साल राष्ट्रभाषा पढ़ायी जाती है।

(इ) अंग्रेज़ी – पाठ्य-क्रम की तीसरी भाषा है अंग्रेज़ी। भारत का विकास करने में अंग्रेज़ी का ज्ञान लोगों को विशेष लाभ पहुँचा सका है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में अंग्रेजी की अनिवार्यता स्पष्ट है। अंग्रेज़ी आज भारत की सह-राजभाषा है। इसके अतिरिक्त वह आंतर-राष्ट्रीय भाषा, विश्व-भाषा भी है। इसलिए पाठ्य-क्रम में उसे भी स्थान दिया गया है। यह बात सही है कि १५–२० साल पहले भारत में अंग्रेज़ी का जो महत्त्व था, वह आज नहीं है और भविष्य में वह इससे भी कम हो जाएगा। अदालत, शासन, शिक्षा आदि में अंग्रेज़ी का स्थान अब राष्ट्रभाषा या प्रादेशिक भाषा या दोनों ले रही हैं। फिर भी उपर्युक्त बातों के प्रकाश में अंग्रेज़ी की ओर हमें ध्यान देना होगा। पर उसकी शिक्षा हरएक विद्यार्थी को बोझ-सी न बनी रहे, इसलिए महाराष्ट्र राज्य में अंग्रेज़ी भाषा ५ वीं कक्षा से ११ वीं कक्षा तक पढ़ायी जाती है। विद्यार्थी चाहे तो ११ वीं कक्षा में अंग्रज़ी से छूट पाकर एस्. एस्. सी. परीक्षा में शामिल हो सकता है।

(ई) प्राचीन भाषा या अंग्रेज़ी के अतिरिक्त कोई अन्य आधुनिक योरोपीय भाषा – माध्यमिक पाठशाला के हर एक विद्यार्थी को पहले ८ वीं कक्षा से १० वीं कक्षा तक निम्न-लिखित में से कोई एक भाषा सीखनी पड़ती है – संस्कृत, अर्धमागधी, पाली, फारसी, अरबी, हिब्रू, ग्रीक, लैटिक, फ्रेंच, जर्मन, आदि।

एस्. एस्. सी. परीक्षा के लिए ऐसी अतिरिक्त भाषा का अध्ययन अनिवार्य नहीं है।

इन भाषाओं को उनके सांकृतिक या धार्मिक महत्त्व के कारण पाठ्य-क्रम में स्थान दिया गया है। यह हमें भूलना न चाहिए कि भारतीय भाषाओं के विकास में संस्कृत आदि प्राचीन भाषाओं का विशेष महत्त्व रहा है। अतः उनसे हम परिचित हो जाएँ तो हमारे लिए वह लाभकारी होगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इससे नीचे लिखी बातें स्पष्ट हो जाती हैं —

१. महाराष्ट्र जैसे अहिन्दी भाषी प्रदेश की माध्यमिक पाठशालाओं में विद्यार्थियों को कम-से-कम ये तीन भाषाएँ पढ़ायी जाती हैं – विद्यार्थियों की मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा, राष्ट्रभाषा हिन्दी और अंग्रेज़ी।

२. महाराष्ट्र में राष्ट्रभाषा का अध्ययन हरएक विद्यार्थी को अनिवार्य रूप से ५ वीं कक्षा से ११ वीं कक्षा तक सात साल करना होगा।

हिन्दी के अध्यापकों को इससे लाभ ही होगा। हिन्दी भाषा पहले जैसी अब सिर्फ 'स्कूल-सब्जेक्ट' नहीं है, अनिवार्य विषय बन गयी है। इसलिए विद्यार्थियों, पाठशालाओं के व्यवस्थापकों, विद्यार्थियों के अभिभावकों और शिक्षा-विभाग के अफसरों को हिन्दी की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। विद्यार्थियों की प्रगति के लिए सात साल की अवधि कम नहीं है। इसलिए अपने कार्य में अध्यापक और विद्यार्थी सफल हो सकेंगे।

(५) समस्या का और एक पहलू – विभिन्न अहिन्दी भाषी राज्यों की पाठशालाओं में हिन्दी की शिक्षा अनिवार्य की जा रही है। राष्ट्रभाषा के अध्यापकों को अपने कार्य में जो कठिनाइयाँ प्रतीत होती हैं, वे एक-सी नहीं हैं। अहिन्दी भाषी राज्यों में निम्न-लिखित प्रादेशिक तथा अन्य भाषाओं में माध्यमिक शिक्षा दी जा रही है —

(अ) संस्कृत-परिवार की भाषाएँ — असमिया, बंगला, उड़िया, गुजराती, पंजाबी, कश्मीरी, मराठी, सिन्धी।

(आ) द्रविड़-परिवार की भाषाएँ — कन्नड़, तमिल, तेलुगु, मलयालम।

(इ) अन्य भाषाएँ — उर्दू, अंग्रेज़ी।

हिन्दी भाषा तथा इन भाषाओं की शब्द-संपत्ति, लिपि, उच्चारण-प्रणाली आदि को ध्यान में रखते हुए हम इस समस्या का स्वरूप यों स्पष्ट कर सकते हैं —

(अ) शब्द-सम्पत्ति आदि में समता – हिन्दी भाषा संस्कृत-कुलोत्पन्न है, अतः उसमें तथा असमिया, बँगला, उड़िया, गुजराती और मराठी में संस्कृत के तत्सम तथा तद्भव शब्द सैकड़ों की संख्या में पाये जाते हैं। इन सभी भाषाओं में फारसी-अरबी से आये हुए शब्दों की संख्या भी कम नहीं है। इसलिए इनमें से हरएक भाषा और हिन्दी में जो समीपता है, वह नगण्य नहीं है। अतः असमिया आदि भाषा-भाषी विद्यार्थियों को हिन्दी को अपनाना शब्द-सम्पत्ति की दृष्टि से आसान मालूम होता है।

कन्नड़, तमिल, तेलुगु और मलयालम भाषाएँ द्राविड़ परिवार की हैं। इनपर यद्यपि संस्कृत का प्रभाव पर्याप्त मात्र में दिखायी देता है, संस्कृत के कई तत्सम तथा तद्भव शब्द इन्होंने यद्यपि स्वीकार कर लिये हैं, तथापि कई बातों में ये

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भाषाएँ संस्कृतोत्पन्न भाषाओं से भिन्न हैं। शब्द-सम्पत्ति, उच्चारण-प्रणाली आदि में हिन्दी और मराठी-गुजराती जैसी किसी संस्कृतोत्पन्न भाषा में जितनी समता है, हिन्दी और कन्नड़ जैसी द्रविड़ भाषा में उतनी ही विषमता है। इसलिए इन भाषा-भाषी विद्यार्थियों को हिन्दी सीखना उतना आसान नहीं मालूम होगा, जितना मराठी, गुजराती आदि भाषा-भाषियों को।

उर्दू और हिन्दी में बहुत समता है। कुछ लोग उर्दू को हिन्दी की एक शैली मात्र मानते हैं। आसान उर्दू शब्द-सम्पत्ति की दृष्टि से 'हिन्दुस्तानी' से काफी मिलती-जुलती है। मतलब इतना ही है कि उर्दूवालों को हिन्दी सीखना कठिन मालूम नहीं होगा।

जो लोग अपनी मातृभाषा अंग्रेजी बतलाते हैं, उन्हें हिन्दी को अपनाना सबसे ज्यादा मुश्किल मालूम होगा क्योंकि शब्द-सम्पत्ति, उच्चारण-प्रणाली आदि की दृष्टि से हिन्दी और अंग्रेज़ी में कोई समता नहीं है।

(आ) लिपि – अहिन्दी भाषी प्रदेशों की अपनी अपनी लिपियाँ हैं। असमिया और बंगला लिपियाँ एक दूसरी में काफी समता रखती हैं। मराठी भाषा देव-नागरी में लिखी जाती है और गुजराती भाषा की लिपि उससे मिलती-जुलती है। दक्षिण में कन्नड़, तमिल, तेलुगु और मलयालम भाषाओं की अपनी-अपनी लिपियाँ हैं। उर्दू भाषा फारसी लिपि की एक शैली को अपनाये हुए है, ये तो अंग्रेज़ी भाषा रोमन लिपि में लिखी जाती है। बालकों को पठन और लेखन के लिए लिपि को आत्मसात् करना आवश्यक है। अहिन्दी भाषी विद्यार्थी जब पाँचवीं कक्षा में आता है, तब चार वर्षों के अभ्यास के कारण अपनी मातृभाषा की लिपि में अच्छी तरह से लिख सकता है और उसे पढ़ भी सकता है। अपनी मातृभाषा की लिपि के साथ-साथ अब उसे देवनागरी लिपि को भी पाँचवीं कक्षा में अपनाना होगा। इस दृष्टि से मराठी-भाषियों को कोई कठिनाई नहीं प्रतीत होगी, क्योंकि मराठी और हिन्दी दोनों भाषाओं की लिपि एक ही है।

गुजराती भाषा-भाषी विद्यार्थी नागरी लिपि को जल्द अपना सकते हैं। मराठीवालों की अपेक्षा उन्हें ज़रा अधिक प्रयास अवश्य करना होगा, मगर यह काम वे एक-दो हफ्तों में कर सकते हैं। बंगला-भाषी विद्यार्थियों को नागरी को अपनाने में कुछ कठिनाई अनुभव होगी। सुविधा की बात इतनी ही है कि दोनों में अधिकतर स्वर और व्यंजन समान ही हैं।

कन्नड़, तमिल, तेलुगु, मलयालम, उर्दू और अंग्रेज़ी भाषा-भाषियों को नागरी लिपि को अपनाना सबसे ज़्यादा कठिन है। उच्चारण-प्रणाली. लिपि-चिह्न आदि की भिन्नता उन्हें उलझन में डालती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मतलब यह है कि जब अहिन्दी-भाषी विद्यार्थी पाँचवीं कक्षा में आते हैं, तब हिन्दी को अपनाने की समस्या किसी को कम कठिन अनुभव होगी, तो किसी को ज़्यादा। यह समस्या तभी सबसे ज़्यादा उलझन में डालती है, जब बहुभाषी प्रदेश या शहरों के विद्यार्थियों को सरकार द्वारा नियत एक ही पाठ्य-क्रम को एक खास अवधि के भीतर पूर्ण करना पड़ता है। उदाहरण के लिए बम्बई शहर की ओर देखिए। यहाँ मराठी और गुजराती प्रमुख भाषाएँ हैं और उर्दू, अंग्रेज़ी, कन्नड़, तमिल आदि भाषा-भाषी विद्यार्थियों की संख्या नगण्य नहीं है। फिर भी पाँचवीं कक्षा के सब विद्यार्थियों को एक ही पाठ्य-क्रम पूर्ण करना है। अब मराठी-भाषी विद्यार्थियों की शिक्षा लिपि से आरम्भ नहीं करनी होगी। मराठी तथा हिन्दी भाषाओं के संस्कृतोत्पन्न होने के कारण वे जल्द प्रगति कर सकते हैं। अपनी पाठ्य-पुस्तक वे नियत समय के भीतर आसानी से पूर्ण कर सकते हैं। गुजराती भाषी विद्यार्थी नागरी लिपि को आसानी से लिख सकते हैं। उन्हें उतनी कठिनाई का सामना नहीं करना होगा, जितना कि कन्नड़, उर्दू तथा अंग्रेज़ी भाषी विद्यार्थियों को। इन विद्यार्थियों को पहले लिपि आत्मसात् करनी होगी, उच्चारण-प्रणाली को अपनाने में भी उन्हें काफी दिक्कत उठानी होगी। ये भाषाएँ संस्कृतोत्पन्न नहीं हैं, इसलिए हिन्दी की शब्द-सम्पत्ति को अपनाने में भी उन्हें बहुत मेहनत करनी होगी। फलतः मराठी और गुजराती भाषी विद्यार्थी एक साल में जितनी प्रगति कर सकते हैं, उतनी ये विद्यार्थी नहीं कर सकते।

(इ) **वातावरण** :—और भी एक बात है। बम्बई, पूना जैसे शहरों में विद्यार्थियों के कानों तक हिन्दी भाषा के आने की सम्भावना हर कदम पर बनी रहती है। वहाँ सिनेमा है, रेड़ियो है, हिन्दी भाषा के जानकर लोग हैं, पुस्तकालय हैं; मगर छोटे शहरों और देहातों में अक्सर ऐसा वातावरण नहीं होता। इसलिए पाठशालाओं में प्राप्त ज्ञान को कायम करने के लिए भाषण, श्रवण, पठन आदि के जिस अभ्यास की आवश्यकता है, वह वे नहीं कर पाते। इसलिए शहर में रहनेवाले विद्यार्थी देहात के विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक शीघ्र और अच्छी तरह हिन्दी को अपना सकते हैं।

इस विवेचन से मालूम होगा कि अहिन्दी प्रदेशों के विद्यार्थियों को जिस वातावरण में हिन्दी को अपनाना है, वह वातावरण एक-सा नहीं है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: ४ :

भाषा-शिक्षा का मनोविज्ञान

बालक की शिक्षा-दीक्षा का उसके मन और प्राकृतिक प्रवृत्तियों से घनिष्ठ सम्बन्ध है; इसलिए आधुनिक शिक्षा-शास्त्रियों ने बालकों के मनोविज्ञान का विशेष अध्ययन करके मौलिक सिद्धान्त स्थापित किये हैं और बालक की भाषा-शिक्षा पर नया प्रकाश डाला है। भाषा के दो अंगों में से ध्वन्यात्मक अंग का सम्बन्ध उसकी शारीरिक शक्तियों से है, तो विचार-तत्त्व का सम्बन्ध उसकी मानसिक शक्तियों से है। विचारों को ध्वनियों में रूपान्तरित करना, सुनी हुई ध्वनियों से अर्थ-ग्रहण करना आदि में बालक अपनी मानसिक शक्तियों को काम में लाता है। बालक की भाषा-शिक्षा की क्रिया के मनोवैज्ञानिक अध्ययन से शिक्षा-शास्त्री उसके सम्बन्ध में कुछ समस्याएँ हल कर सके हैं। उससे भाषा-शिक्षा का कार्य अब बहुत सरल, दिलचस्प और वैज्ञानिक हो गया है।

(१) **बालक भाषा कैसे आत्मसात् करता है ?** — यह पहले ही कहा गया है कि भाषा का ज्ञान बालक का कोई आनुवंशिक गुणधर्म नहीं है। अपनी अन्य इन्द्रियों की तरह वह भाषा-ज्ञान लेकर इस दुनिया में नहीं आता ; फिर भी जिन शक्तियों से वह भाषा को आत्मसात् करता है, वे शक्तियाँ उसे भगवान् की दी हुई होती हैं। इन्हीं शक्तियों के ज़रिए वह अपने लिए भाषा को अपनाता जाता है। दो-एक साल के भीतर पहले कुछ ध्वनियों को, उसके बाद कुछ शब्द आदि को अपनाते-अपनाते वह अपने अन्य भाई-बहनों की तरह अच्छी तरह से बोलने लगता है। कुछ वर्षों के बाद घर पर तथा पाठशाला में उसके माता-पिता या अध्यापक बालक को पढ़ाना शुरू करते हैं। अब वह पठन और लेखन-कला को अपनाता है। लिपि-बद्ध भाषा से विचार-ग्रहण करना वह सीखता है। उसका शब्द-भण्डार भी समृद्ध हो जाता है। यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि चारों तरफ जिस भाषा का वातावरण है, उसे वह अपनाता है।

इससे निम्न-लिखित सिद्धान्त स्पष्ट हो जाते हैं —

१. बालक की भाषा-शिक्षा के दो पहलू होते हैं। पहले पहलू में बालक की स्वाभाविक भाषा-शिक्षा आती है। इसमें बालक अपने आप भाषा को अपनाता जाता है और बोलने लगता है। दूसरे पहलू में स्वाभाविकता की अपेक्षा परिश्रम, अभ्यास, प्रयत्न और सहेतुकता का स्थान महत्त्वपूर्ण है। अपने बड़े-बुजुर्गों या

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अध्यापकों के मार्गदर्शन में बालक भाषा की शिक्षा यत्नपूर्वक पाने लगता है और लेखन, पठन आदि कलाओं को अपनाता है। २. बालक की भाषा-शिक्षा का यह कार्य किसी एक समय किसी एक ही तत्त्व तक सीमित रहता हो, सो बात नहीं है। ध्वनियों को अपनाना, शब्दों का उच्चारण करना, लेखन, पठन आदि कई कार्य वह समय-समय पर करता जाता है। ३. बालक की भाषा-शिक्षा में पहला स्थान श्रवण तथा भाषण का है और उसके बाद पठन और लेखन का है। ४. बालक की भाषा-शिक्षा का कार्य कई दिनों तक चलता रहता है। आरम्भ में किसी बात को अपनाने में बालक को जितना समय लगता हो और जितनी कठिनाई अनुभव होती हो, उतना समय और कठिनाई बाद में आवश्यक नहीं है। ५. जिस भाषा के वातावरण में बालक रहता है, उसे वह आसानी से अपनाने लगता है।

(२) **बालक की भाषा–शिक्षा का मनोवैज्ञानिक पहलू** — बालक की सहजात शक्तियों में से कुछ शक्तियों का सम्बन्ध भाषा को आत्मसात् करने की क्रिया से है। बालक की ये सहजात शक्तियाँ और ज्ञानेन्द्रियाँ आहिस्ता-आहिस्ता विकसित और कार्यक्षम होती जाती हैं। उसकी दृष्टि और श्रवण-शक्ति का विकास भी आहिस्ता-आहिस्ता होता जाता है। वैसे ही अपने मुँह से वह आरम्भ में तरह-तरह की ध्वनियों का भी निर्माण नहीं कर सकता। भाषा अपनाने की दृष्टि से बालक का विकास नीचे लिखे अनुसार होता है।

१. प्राथमिक अवस्था में उसे कुछ ध्वनियाँ सुनायी देने लगती हैं मगर उसके लिए वे मात्र ध्वनियाँ हैं, उनका अर्थ उसके ध्यान में नहीं आता। इनमें से कुछ ध्वनियाँ उसे बार-बार सुनने को मिलती हैं, तो कुछ कम। उदाहरण के लिए घर के अन्य बालक – उसके भाई-बहन अपनी माता को 'माँ' कहते होंगे, तो यह शब्द (ध्वनि) उसके कानों पर कई बार आता है। २. इस अर्से में उसकी दृष्टि भी विकसित होती रहती है। आहिस्ता-आहिस्ता उसके ध्यान में यह आने लगता है कि घर के ये बालक एक विशेष स्त्री को लक्ष्य करते हुए 'माँ' कहते हैं। अपनी माता को बार-बार देखने से वह उसे पहचानने लगता है। ३. वह अब सुनी हुई ध्वनि 'माँ' और वह स्त्री – दोनों में, 'ध्वनि' और 'व्यक्ति' में सम्बन्ध स्थापित करता है। बार-बार यह क्रिया हुआ करती है। घर के अन्य बालक या बुजुर्ग उसे गोद में उठाये हुए गाय, कुत्ता, चिड़िया आदि पशु-पक्षी या अन्य व्यक्ति या वस्तु दिखाते हैं। उसे वे वस्तुएँ बार-बार दिखाकर कहते हैं, 'मुन्नू, यह देखो गाय।', 'मुन्नू, यह देखो दीदी।' बार-बार ऐसे 'शब्द' सुनने से उसके कानों पर विशिष्ट शब्दों का संस्कार उत्पन्न होता है। उन वस्तुओं या व्यक्तियों को देखने से आँखों पर संस्कार उत्पन्न होता है। अब वह इन शब्दों या ध्वनियों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और वस्तुओं के बीच अनजान में सम्बन्ध प्रस्थापित करता है। वस्तुओं को देखना या शब्दों को सुनना उसकी 'अनुभूति' ही है। इस तरह दिन-ब-दिन वह अधिकाधिक अनुभूतियाँ पाता जाता है। ४. इस अवधि में उसकी ध्वनि-निर्माण की शक्ति भी विकसित होती रहती है। ध्वनि-यंत्र से निर्मित ध्वनि में रुकावट डालते हुए वह तरह-तरह की ध्वनियाँ निर्मित करने में समर्थ होता जाता है। उसकी सहजात प्रवृत्तियों में 'अनुकरण' प्रवृत्ति भी एक है, जो समय पाकर विकसित होती रहती है। बालक जो ध्वनि सुनता है, उसका अनुकरण करने की ओर वह यत्नशील होता है। जो ध्वनि उसने बार-बार सुनी है और जिसका सम्बन्ध किसी व्यक्ति या वस्तु से वह जोड़ बैठा है, उस ध्वनि का अनुकरण करते हुए वह उच्चारण करने लगता है। ५. सम्भव है कि कुछ शब्दों के उच्चारण में गलतियाँ होती हों, मगर बार-बार यत्न करने से – अभ्यास से वह सफलता से उस शब्द का उच्चारण करने लगता है। उसका अर्थ उसके ध्यान में आने लगता है। ६. वह उस शब्द को इतना आत्मसात् करता है कि कुछ दिनों के बाद उसके सामने वह वस्तु न भी हो और सिर्फ वह शब्द उसे सुनायी दे, तो केवल उस शब्द से उसे उस वस्तु का बोध होता है। प्रत्यक्ष माता उसके सामने न हो, तो भी वह 'माँ' शब्द को अच्छी तरह ध्यान में रखता है और किसी भी अन्य स्त्री को 'माँ' कहने को तैयार नहीं होता। ७. इस तरह वह एक-एक शब्द को अपनाता जाता है। पहले एक शब्द अपनाने में जितना समय लगा होगा, उतने ही समय में कुछ दिनों के बाद अभ्यास के कारण वह कई शब्द अपना सकता है। कुछ दिनों के बाद कोई उसे 'आम' दिखाये और कहे कि 'यह आम है' तो उक्त वस्तु और शब्द में सम्बन्ध स्थापित कर 'आम' शब्द का अर्थ उसी क्षण वह ग्रहण कर सकेगा और विशेष प्रयास के सिवा उसको ध्यान में भी रख सकेगा।

भाषा को आत्मसात् करने की यह जो स्वाभाविक क्रिया बालक द्वारा की जाती है, उसका विश्लेषण करने से इस क्रिया के निम्न-लिखित पहलू स्पष्ट हो जाते हैं—

१. श्रवण –– बालक दूसरों द्वारा उच्चारित ध्वनि पहले सुनता है। उससे उसके कानों पर संस्कार उत्पन्न होकर उसकी श्रवण-शक्ति विकसित होती है। अगर बालक के 'कान' अपने काम में क्षमता न रखें, तो भाषा अपनाने की क्रिया में बालक सफल नहीं हो सकता। गूँगे बालकों की श्रवण-शक्ति अविकसित दिखायी देती है, वे बहरे होते हैं या हम यों कह सकते हैं कि वे बहरे होते हैं, इसलिए गूँगे होते हैं। जिन बालकों को हिन्दी की शिक्षा तो दी जाती है, मगर जिन्हें हिन्दी सुनने का कम मौका मिलता है, वे उस भाषा में सम्यक् योग्यता

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नहीं पा सकेंगे। इसलिए अगर हम यों कहें कि भाषा-शिक्षा की बुनियाद श्रवण-क्रिया पर डाली जाती है, तो कोई विशेष अत्युक्ति नहीं होगी।

सही उच्चारण, बोलने के ढंग को आत्मसात् करने के लिए बालकों को अच्छी भाषा सुनने का मौका मिलना चाहिए।

२. देखना –– बालक की भाषा-शिक्षा की क्रिया का दूसरा पहलू बालक की नेत्रेन्द्रियों से सम्बन्ध रखता है। दूसरे व्यक्ति जिस वस्तु को लक्ष्य करके कोई शब्द बोलते हैं, बालक वह वस्तु देखता है। पहले-पहले बालक ऐसी मूर्त वस्तुओं में ही विशेष रस लेता है। उसे देखने से उसके अन्तःस्थल पर उस का चित्र अंकित होता है। इस संस्कार के कायम होते ही यद्यपि वह वस्तु सामने न हो, तो भी वह अपने मनश्चक्षुओं के सामने उसका चित्र खड़ा कर सकता है। बालक अनुभूतिशील होता है और अनुभूतियाँ पाने में नेत्रेन्द्रियों का स्थान महत्त्वपूर्ण है। ये अनुभूतियाँ बालक के मन में भाव या विचार जगाने में सहायक होती हैं, जिनकी अभिव्यक्ति के लिए भाषा की आवश्यकता होती है। इस दृष्टि से नेत्रेन्द्रियों के कार्य को भी इस क्षेत्र में स्थान दिया जाना उचित ही है।

३. ध्वनि और वस्तु में सम्बन्ध स्थापित करना — कानों से सुनी हुई ध्वनि और आँखों से देखी हुई वस्तु में जब तक सम्बन्ध नहीं स्थापित किया जाता, तब तक ध्वनि का अर्थ बालक के ध्यान में नहीं आएगा, वह ध्वनि उसे अर्थशून्य ही मालूम होगी। बालक जो भाषा या शब्द समझ नहीं सकता, ऐसी भाषा या शब्दों के व्यवहार में उसे रुचि क्योंकर होगी? यदि उसे उसमें रुचि न हो तो ग्रहण-शक्ति और श्रवण-शक्ति पर उसे बोझ-सा मालूम होगा। यह सम्बन्ध स्थापित करने के माने हैं – उस ध्वनि का अर्थ-ग्रहण करना, उस वस्तु का नाम जानना या उस वस्तु के ध्वनि-रूप प्रतीक से परिचित होना। यह क्रिया अन्तर्मन द्वारा की जाती है।

४. अनुकरण द्वारा उच्चारण –– बालक अपनी अनुकरण-प्रवृत्ति को काम में लाते हुए सुने हुए शब्द का उच्चारण करने की चेष्टा करता है। भाषा कला है और कला को आत्मसात् करने का एकमेव तरीका है – अनुकरण। यद्यपि ध्वनि-निर्माण करने की शक्ति उसमें सहजात होती है, तथापि भाषा में व्यवहृत भिन्न-भिन्न ध्वनियों या ध्वनि-समुच्चयों का प्रयोग करने की कला उसे आत्मसात् करनी पड़ती है। यह कला वह अनुकरण से ही अपनाता है। अनुकरण से ही उसकी जिह्वा और ध्वनि-यंत्र पर संस्कार उत्पन्न होता है, जो भाषा को सीखने की क्रिया में अति आवश्यक माना जाता है।

५. अभ्यास — किसी क्रिया को बार-बार करने को ही 'अभ्यास' कहते हैं। अभ्यास से ही आदत डाली जाती है। भाषा सीखने का मतलब भी भाषा के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

व्यवहार करने की आदत डालना है। कहा जाता है कि All language learning is a habit-formation process. बार-बार उच्चारण करने से उसमें स्वाभाविकता आ जाती है। एक बार यह बोलने की आदत, विचार को ध्वनि में रूपान्तरित करने और ध्वनि से अर्थ-ग्रहण करने की अच्छी आदत डाली जाए तो भाषा का व्यवहार बालक आसानी से करने लगेगा। वह आदत से ही अर्जित भाषा-ज्ञान का आवश्यकतानुसार उपयोग कर सकेगा।

कोई व्यक्ति किसी भाषा में अच्छी तरह से न बोल सकता हो, तो उसकी असफलता के कारणों में भाषा के व्यवहार में उसकी अनभ्यस्तता महत्त्वपूर्ण है। वह कहता है कि 'मुझे बोलने की आदत नहीं है।' इससे अभ्यास का महत्त्व स्पष्ट होता है। अधिक सुनने और अधिक बोलने से भाषा में बालक की योग्यता बढ़ जाती है।

जब बालक भाषा में बोलने का अभ्यास करता है, वह किसी भाषा में जब बार-बार बोलता है, तब वह स्मरण-शक्ति को काम में लाता है। उसे जो शब्द मालूम हुए हैं, वह उनका प्रयोग करता है। बार-बार उनका प्रयोग करते हुए ही वह उनको अच्छी तरह से याद करने लगता है। अपनाये हुए एक शब्द को वह विभिन्न सन्दर्भों में काम में लाने की कला सीखता है। इसमें वह अपनी रचनात्मक शक्ति को काम में लाता है।

६. **आत्माभिव्यक्ति की अभिलाषा** — आत्माभिव्यक्ति की प्रवृत्ति मनुष्य में सहजात होती है। मनुष्य की भाषा का बीज इसी आत्माभिव्यक्ति की प्रवृत्ति में और उसकी ध्वनि-निर्माण करने की ईश्वर-दत्त शक्ति में है। छोटे बालक में भी यह प्रवृत्ति दिखायी देती है।

(३) **भाषा-शिक्षा की दूसरी अवस्था** — यहाँ तक यह देखा गया कि बालक बाल्यावस्था में घर में अपने आप, स्वाभाविक रीति से भाषा को कैसे अपनाता है। अब हम दूसरी अवस्था की भाषा-शिक्षा के स्वरूप की ओर ध्यान देंगे। इस दूसरी अवस्था के कार्य के ये अंग हैं :—

१. **बाहरी प्रेरणा** — बालक के माता-पिता या अभिभावक और अध्यापक बालक को भाषा की शिक्षा देने में विशेष यत्नशील होते हैं।

२. **स्वयं प्रेरणा** — बालक भी भाषा की शिक्षा पाने में विशेष यत्नशील होने लगता है। इस कार्य में उसकी अपनी इच्छा और गुरुजनों द्वारा दिया जानेवाला प्रोत्साहन उसका उत्साह बढ़ाता है।

३. **अनुकूल वातावरण** — पाठशाला में भाषा का वातावरण तैयार किया जाता है और उसमें बालक के विकास के हेतु उसपर भाषा के संस्कार उत्पन्न किये जाने लगते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

४. अन्य पहलुओं का परिचय — श्रवण और भाषण के साथ-साथ पठन और लेखन की शिक्षा देना आरम्भ होता है।

५. अभ्यास की बहुलता — भिन्न-भिन्न योजनाओं द्वारा श्रवण, भाषण पठन और लेखन का अभ्यास बालक से कराया जाता है। अर्जित भाषा-ज्ञान का उपयोग करने में उसे प्रोत्साहित किया जाता है। इससे भाषा को आत्मसात् करना उसे आसान प्रतीत होता है।

६. स्वावलम्बन — बालक में स्वावलम्बन की प्रवृत्ति और आन्तरिक अभिलाषा होती है; इससे वह स्वयं भी इस क्षेत्र में अग्रसर होने लगता है।

७. स्वाभाविक विकास — जैसे-जैसे बालक की बुद्धि, ग्रहण-शक्ति आदि शक्तियाँ विकसित होती जाती हैं, वैसे-वैसे वह शीघ्र गति से प्रगति करता जाता है।

इस विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि भाषा-शिक्षा की यह पहली अवस्था स्वाभाविक ज्ञान-ग्रहण की, अहेतुक कार्य की है, तो दूसरी अवस्था सहेतुक किये हुए प्रयास की है। पहली में बालक अपनी गति से अनजान में आगे बढ़ता जाता है, तो दूसरी में एक विशेष वातावरण में अध्यापक आगे बढ़ने में उसकी मदद करते हैं। बालक की विकसित शक्तियाँ और अध्यापकों के मार्गदर्शन के कारण उसकी प्रगति शीघ्र होती है।

(४) स्वाभाविक प्रणाली के और कुछ तत्त्व — अब तक बालक के स्वभाविक रीति से भाषा आत्मसात् करने की क्रिया का जो विश्लेषण किया गया है, उससे मालूम होता है कि उस प्रणाली में भी कुछ ठोस सिद्धान्तों का अस्तित्व है। उन सिद्धान्तों के आधार पर समूचा कार्य किया जाता है। ये सिद्धान्त नीचे लिखे अनुसार हैं:—

१. संस्कारों की बहुविधता और बहुलता — ज्ञानेन्द्रियों पर अधिक-से-अधिक संस्कार करते हुए उन्हें कार्यक्षम बना देना शिक्षा-विधि का प्रमुख लक्ष्य है। भाषा के सम्बन्ध में हम इस दृष्टि से यों कह सकते हैं कि कान, आँख, जिह्वा, (लेखन में) हाथ आदि इन्द्रियों पर अधिक-से-अधिक संस्कार उत्पन्न किये जाते हैं। उससे कानों की श्रवण-शक्ति, दृष्टि, अन्तर्मन-द्वारा ध्वनि और वस्तु में सम्बन्ध जोड़ने की शक्ति, जिह्वा और स्वर-यंत्र की शक्ति, अपने विचारों को प्रकट करने की अभिलाषा आदि शक्तियों का विकास समुचित रूप में शीघ्र गति से होता है।

२. क्रियाशीलता का उपयोग करना : कार्य करते-करते सीखना (Learning by doing) — कला प्रत्यक्ष व्यवहार द्वारा ही अपनायी जा सकती है। पानी में बगैर उतरे मनुष्य तैरने की कला में प्रगति नहीं कर सकता। तूलिका द्वारा लकीर खींचे बगैर, चित्रकला में कुशलता नहीं प्राप्त की जा सकती। वैसे ही भाषा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में बोलने की कोशिश जान-बूझकर या अनजान में किये बगर, बालक भाषा को नहीं अपना सकता। मनुष्य में जो सहजात क्रियाशीलता है उसको काम में लाते हुए ही भाषा अपनायी जाती है।

३. यत्न और सुधार-प्रणाली (Trial and error method) —शुरू में जो गलतियाँ होती हैं, उन्हें सुधारते हुए ही मनुष्य किसी भी कार्य में आगे बढ़ सकता है। बालक पहले तोतली बोली बोलता है, मगर दूसरों का अनुकरण करते हुए अच्छी भाषा बोलने लगता है। अपनी गलतियों को अनजान में ही वह दूसरों के अनुकरण से दुरुस्त करते हुए प्रगति करता है। घर के अन्य व्यक्ति भी इस कार्य में उसकी सहायता करते हैं। वे बालक से सही शब्द-प्रयोग करा लेते हैं।

४. अनुकरण तत्त्व —यह दोहराने की कोई जरूरत नहीं है कि भाषा की शिक्षा में शुरू से अन्त तक अनुकरण का अत्यधिक महत्त्व है। बोलने, लिखने-पढ़ने में उसे हर वक्त महत्त्व का स्थान दिया जाता है।

५. ज्ञानार्जन की साधारण गति —बालक भाषा को अपनाते वक्त एक विशेष प्रणाली के अनुसार अपना ज्ञान-क्षेत्र बिकसित करता जाता है। वह मूर्त से अमूर्त की ओर, स्थूल से सूक्ष्म की ओर बढ़ता है।

६. बालक की **प्राकृतिक शक्तियों का** अधिक से अधिक **उपयोग** करते हुए विकास करना – पाठशालाओं में ऐसा खास वातावरण बनाया जाए कि जिसमें किये जानेवाले कार्य में बालक को रुचि अनुभव हो। अगर उसे रुचि हो, तो ही वह अपने काम में अवधान कायम रख सकता है। इससे कार्य में सफलता मिलती है। भिन्न-भिन्न बातों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने की इच्छा-जिज्ञासा जागृत की जाती है, तब कहीं बालक आगे बढ़ने में उत्साह दिखलाता है। इसलिए बालक की क्रीड़ा-सक्ति और उसकी स्वाभाविक रुचि का उपयोग करते हुए अध्यापक बालक की भाषा-शक्ति का विकास करता है।

७. रचनात्मक प्रवृत्ति — बालक अपनी ओर से प्रयोग करके कुछ रचनात्मक कार्य करने में रुचि रखता है। अर्जित ज्ञान का उपयोग करते हुए, परिचित शब्दों का नये-नये वाक्य में प्रयोग करते हुए वह अपनी इस प्रवृत्ति का परिचय देता है।

इस विवरण से हम यह कह सकते हैं कि बालक शुरू में अपने आप स्वाभाविक रीति से प्राकृतिक शक्तियों द्वारा बोलचाल की भाषा अपनाता जाता है। परन्तु पठन और लेखन की क्रिया जटिल है और उसके लिए आवश्यर्क योग्यता परिश्रम द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है। जब उसे बोलचाल की भाषा पर अधिकार प्राप्त हो जाता है तब थोड़े परिश्रम में पढ़ने-लिखने की कला में वह कुशल हो सकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(५) **मातृभाषा के अतिरिक्त अन्य भाषा की शिक्षा :—** अब तक यह देखा गया कि बालक अपनी मातृभाषा को कैसे अपनाता है। अब हम यह देखेंगे कि वह अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त हिन्दी जैसी अन्य भाषा को किस परिस्थिति में अपनाता है।

(अ) **परिस्थिति** —— बालक जब अपनी मातृभाषा को अपनाने लगता है, तब उसमें भाषा-सम्बन्धी कोई आदत डाली हुई नहीं होती है। उसका मन कोरी स्लेट की तरह होता है। मगर चौथी कक्षा तक शिक्षा पाये हुए बालक में मातृभाषा के सम्बन्ध में सभी तरह की आदतें डाली हुई होती हैं। हो सकता है कि अच्छी आदतों के साथ उसमें कुछ बुरी आदतें भी डाली गयी हों। बालक जब हिन्दी की शिक्षा पाने लगता है तब उसमें भाषा-सम्बन्धी आदतें डाली हुई होती हैं, उसका मन अब कोरी स्लेट की तरह नहीं होता, जिसपर एकदम नये संस्कार आसानी से किये जा सकते हैं। जहाँ कोई संस्कार है ही नहीं, वहाँ नये संस्कार करना आसान होता है। मगर मातृभाषा की विशेष आदतों के बीच अब हिन्दी की नयी आदतें डालनी हैं। इसलिए अध्यापक और बालक को कुछ कठिनाई अनुभव होगी।

(आ) **विकसित शक्तियों से लाभ** —— दूसरी बात यह है कि बालक जब हिन्दी जैसी अन्य भाषा सीखने लगता है, तब उसकी बुद्धि, ग्रहण-शक्ति, स्मरण-शक्ति, प्रयोगशीलता आदि प्राकृतिक शक्तियाँ बहुत कुछ विकसित हुई होती हैं। पढ़ने-लिखने में उसे रुचि अनुभव होने लगी है, कुछ अंश तक वह स्वावलम्बी हो गया है, वह अपने कार्य में देर तक अवधान कायम रख सकता है। पढ़ाई मैं उसे एक तरह का उत्साह अनुभव होता है। इससे अध्यापक को अपना काम कुछ मात्रा में आसान प्रतीत होगा। वह एक वाक्य बता दे, तो बालक उसके अनुसार कुछ और वाक्य बना सकेगा। उसके मार्गदर्शन में बालक पढ़ने-लिखने में बहुत प्रगति नियत समय में कर सकेगा। संक्षेप में बालक की इस विकसित अवस्था के कारण अध्यापक की निगरानी और मार्गदर्शन में नयी भाषा अपनाने में वह शीघ्र उन्नति कर सकेगा। पहली बात के कारण उसे जो कठिनाई अनुभव होती है, वह इस बात के कारण हटा दी जाती है।

(इ) तीसरी बात यह है कि बालक के चारों तरफ उसकी मातृभाषा का वातावरण होता है; इसलिए उसमें वह स्वाभाविक रीति से प्रगति कर सकता है। मगर जब वह हिन्दी सीखने लगना है, तो उसको अपनी मातृभाषा के वातावरण में रहते हुए ही वह भाषा अपनानी पड़ती है। हर हफ्ते में चन्द घण्टे ही वह हिन्दी की शिक्षा पाता है। हिन्दी का वातावरण उसकी चारों ओर उन चन्द घण्टों के अतिरिक्त नहीं हो सकता। इसलिए उसे हिन्दी में बोलने, सुनने, लिखने,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पढ़ने का कम मौका मिलता है। अगर उसके विकसित शक्तियों के साथ उसे वैसा वातावरण मिल जाए तो वह शीघ्र गति से प्रगति कर सकेगा। कक्षा में भी जो वातावरण बना दिया जाता है, उसमें बालक कृत्रिमता अनुभव करता है। इसलिए हिन्दी की अच्छी आदतें डाली जाने में बड़ी कठिनाई होती है।

(ई) **सावधानी की आवश्यकता** — भाषा-शिक्षा एक तरह से भाषा-व्यवहार की आदतें डाली जाने का ही तरीका है। इसलिए प्रारम्भिक अवस्था में जो आदतें डाली जाएँगी, वे बड़ी सावधानी से डाली जानी चाहिए। इमारत की मज़बूती जैसे उसकी नींव की मजबूती पर निर्भर होती है, वैसे ही प्राथमिक तैयारी के ठोस स्वरूप पर भाषा-शिक्षा की आगे की सफलता निर्भर होती है। अगर इस अवस्था में गलत आदतें डाली जाएँ, तो वे प्रगति में रुकावट डाले बिना न रहेंगी।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शिक्षा-प्रणाली की समस्या

पिछले अध्याय में यह दिखाया गया है कि बालक भाषा को कैसे अपनाता है, भाषा को अपनाने की क्रिया के कौन-से विभिन्न पहलू होते हैं और उसमें कौन-से तत्त्व समाहित होते हैं। हमने यह भी देखा कि मातृभाषा के अतिरिक्त कोई दूसरी भाषा पढ़ाते समय अध्यापक को किस तरह की अनुकूल तथा प्रतिकूल परिस्थितियों में से गुजरना पड़ता है। अब हम देखेंगे कि अहिन्दी-भाषी प्रदेशों में हिन्दी के अध्यापन की प्रणाली कैसे नियत की जा सकती है।

(१) **स्वाभाविक प्रणाली** -- भाषा की शिक्षा के क्षेत्र में अध्यापन की भाषा के वातावरण का जो महत्त्व है, उसे दोहराने की यहाँ आवश्यकता नहीं है। असल में बालक को इस नयी भाषा के वातावरण में चौबीसों घण्टे रखा जाए, तो उसपर उसी भाषा के हर क्षण संस्कार होंगे, उसी भाषा को वह सहजता से अपनाएगा। हिन्दी भाषा सुनना और बोलना ही उसको अपनाने का सही तरीका है। यद्यपि आरम्भ में कुछ कठिनाई हो, फिर भी कुछ दिनों बाद वह उसे ठीक वैसे ही अपनाएगा, जैसे कोई हिन्दी-भाषी बालक उसे अपनाता है। मनोविज्ञान के आधार पर शिक्षा-शास्त्र ने यह सिद्धान्त स्थापित किया है कि बालक के विकास की जो स्वाभाविक प्रक्रिया है, उसी को बनाये रखने से बालक का विकास जल्द होता है — हाँ, उसकी कमज़ोरियों को दूर अवश्य करें और आगे बढ़ने में उसे बढ़ावा दें, शीघ्र प्रगति करने के लिए उसके चारों ओर अनुकूल वातावरण का निर्माण कर लें।

कहना न होगा कि यद्यपि हिन्दी सीखने के लिए बालक को हिन्दी भाषा के वातावरण में–प्रदेश में रखना कितना ही लाभकारी क्यों न होता हो, तथापि यह सूचना व्यवहार्य नहीं है। जैसे हर एक अहिन्दी-भाषी बालक को हिन्दी भाषा के प्रदेश में रखना असम्भव है, वैसे ही चौबीसों घण्टे यहाँ हिन्दी भाषा का वातावरण निर्मित करना उससे कम कठिन नहीं है। हाँ, जहाँ तक हो हम जो नयी प्रणाली स्वीकार करेंगे, उसमें वातावरण तथा भाषा-शिक्षा की स्वाभाविक प्रणाली के कई तत्त्वों को आवश्यकता के अनुसार उचित स्थान ज़रूर देंगे।

(२) **मातृभाषा की शिक्षा-प्रणाली** -- अहिन्दी-भाषी बालकों को हिन्दी पढ़ाने के लिए अध्यापक उस प्रणाली को भी ठीक वैसे के वैसे नहीं अपना सकता जिससे बालक को उसकी मातृभाषा पढ़ायी जाती है। आम तौर पर बालकों को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उनकी मातृभाषा पढ़ाने का तरीका हर भाषा भाषी प्रदेश में एक-सा है। अतः महाराष्ट्र में – बालकों को मराठी जिस प्रणाली से पढ़ायी जाती है, उसी प्रणाली को हिन्दी भाषा-भाषी प्रदेश के हिन्दी के अध्यापक वहाँ के बालकों को हिन्दी पढ़ाते समय काम में लाते हैं। बालक के चारों ओर का भाषा का वातावरण, भाषा के व्यवहार के लिए मिलनेवाला मौका, बालक की स्वाभाविक रुचि और विकसित भाषा-शक्ति आदि बातों से मातृभाषा का अध्यापक जितना लाभ उठा सकता है, उतना अहिन्दी भाषी प्रदेश में काम करनेवाला हिन्दी का अध्यापक नहीं उठा सकेगा। इसलिए हिन्दी-भाषा प्रदेश में प्रचलित हिन्दी भाषा की अध्यापन-प्रणाली को अहिन्दी भाषी विद्यार्थियों को हिन्दी पढ़ाते समय अध्यापक कैसे अपना सकेगा? हाँ, बालक की भाषा-शक्ति के विकास में उसके जो तत्त्व सहायक होनेवाले हों, उनको अवश्य स्वीकार किया जाएगा।

(३) और दो प्रणालियाँ — विद्यार्थी की मातृभाषा के अतिरिक्त कोई अन्य भाषा उसे पढ़ाने की और दो प्राणालियाँ हमारे यहाँ उपलब्ध हैं। एक है **व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली** (Translation-Grammar method) और दूसरी है **सम्भाषणात्मक प्रणाली** (Direct Method)।

प्राचीन काल से हमारे यहाँ लोग संस्कृत भाषा का अध्ययन करते आये हैं। यूरोप में भी विद्यार्थी ग्रीक और लैटिन भाषाएँ पढ़ते आये हैं। ये भाषाएँ अभी परसों तक व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली से पढ़ायी जाती थीं और आज भी अधिकांश स्कूलों में संस्कृत जैसी भाषा उसी प्रणाली से पढ़ायी जाती है। दूसरी है सम्भाषणात्मक प्रणाली। यूरोप में अनेक वर्षों के प्रयोग के बाद स्वीट आदि शिक्षा-शास्त्रियों ने इसका आविष्कार किया। यूरोपीय अध्यापकों का अनुकरण करते हुए हमारे देश के अध्यापकों ने पहले पहल अंग्रेज़ी के अध्यापन में इसे अपनाया। हिन्दी जैसी भाषा अहिन्दी भाषी विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिए इन प्रणालियों को काम में लाया जा सकता है।

हमें यह ध्यान में रखना चाहिए कि अध्यापक का 'लक्ष्य' हिन्दी का अध्यापन है – वही 'साध्य' है। साध्य तक पहुँचानेवाली प्रणाली साधन मात्र है। साधन से साध्य अधिक महत्त्वपूर्ण है, इसलिए हमें किसी प्रणाली के अन्ध भक्त नहीं होना चाहिए। परिस्थिति की माँग के अनुसार हमें साधन में परिवर्तन करने के लिए तैयार रहना चाहिए। कोई भी साधन अपने में परिपूर्ण नहीं होता – हरएक की अपनी विशेषाताएँ तथा त्रुटियाँ होती हैं। हमें उन कमज़ोरियोंको दूर करने की कोशिश करनी चाहिए।

हिन्दी के अध्यापन की प्रणाली नियत करते समय हमें निम्न-लिखित बातों को भी ध्यान में लेना चाहिए —

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(१) विद्यार्थी — उम्र, सामान्य ज्ञान, ग्रहण-शक्ति, नये विषय को अपनाने तैयारी, भाषा में योग्यता। (२) अध्ययन-अध्यापन के लिए दी जानेवाली अवधि, हर हफ्ते में तथा वर्ष में मिलनेवाला समय आदि। (३) विद्यार्थी की मातृभाषा और हिन्दी में समता या विषमता, लिपि-परिचय। (४) चारों तरफ के वातावरण की अनुकूलता या प्रतिकूलता, विद्यार्थी को नयी भाषा के व्यवहार के लिए मिलनेवाला समय। (५) हिन्दी भाषा पढ़ाने का प्रयोजन, विद्यार्थी के हिन्दी भाषा के ज्ञान का अपेक्षित स्तर।

हमारे यहाँ हिन्दी की शिक्षा पाँचवीं कक्षा में शुरू की जाती है। पाँचवीं कक्षा के विद्यार्थियों की औसत उम्र १० – ११ साल होती है। वे अपनी मातृ-भाषा की और मातृभाषा में पढ़ाये जानेवाले अन्य विषयों की शिक्षा कम से कम चार साल पाकर पाँचवीं कक्षा में प्रवेश करते हैं। उनका सामान्य ज्ञान, ग्रहण-शक्ति विकसित हुई होती है। अपनी मातृभाषा में वे अच्छी तरह बोल, लिख और पढ़ सकते हैं, परिचित विषयों पर स्वतंत्र रूप में वे वाक्य-रचना कर सकते हैं। माध्यमिक पाठशालाओं में अब हिन्दी के लिए हर हफ्ते में कम से कम ४ घण्टे (पिरिअड़) दिये जाते हैं और वह शिक्षा सात साल तक जारी रहती है। क्रमांक ३, ४ और ५ में बतलायी हुई बातों का विवेचन पिछले अध्याय में किया गया है।

अब हम व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली तथा सम्भाषणात्मक प्रणाली का स्वरूप, उनकी विशेषताएँ तथा त्रुटियाँ आदि देखेंगे।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: ६ :

व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली

पिछले अध्याय में यह दिखाया गया है कि अहिन्दी भाषी विद्यार्थियों को हिन्दी पढ़ाने के लिए उस प्रणाली को स्वीकार करना लाभकारी नहीं होगा, जिससे हिन्दी भाषी प्रदेश में हिन्दी भाषी बालकों को हिन्दी पढ़ायी जाती है। विद्यार्थी की मातृभाषा के अतिरिक्त अन्य भाषा उसे सिखाने के लिए दो प्रणालियों को अपनाया जाता है, वे हैं – १. व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली और २. सम्भाषणात्मक प्रणाली। इस अध्याय में व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली के स्वरूप, उसकी विशेषताओं तथा उसकी त्रुटियों का विवेचन किया जाएगा।

(१) **प्राचीन प्रणाली** — जब से संस्कृत भाषा आम जनता की बोलचाल की भाषा न रही, केवल साहित्य और धर्म-ग्रंथों की, पण्डितों की भाषा रही, तब से संस्कृत भाषा का अध्ययन-अध्यापन भारत में अविरत शुरू है। इसके अध्ययन-अध्यापन में विद्यार्थी और अध्यापक व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली को स्वीकार करते आये हैं। यूरोप में भी प्राचीन भाषाओं – ग्रीक और लैटिन – का अध्ययन वहाँ के विद्यार्थी इस प्रणाली से करते आये हैं। यूरोप में इस प्रणाली का शिक्षा के क्षेत्र में इतना महत्त्व रहा था कि इससे जिन पाठशालाओं में ग्रीक-लैटिन भाषाएँ पढ़ायी जाती थीं, उन स्कूलों को 'ग्रामर-स्कूल्स' कहा जाता था। आज भी संस्कृत भाषा पाठशालाओं में इसी प्रणाली से पढ़ायी जाती है। अँग्रेज़ों के आने के बाद पाठशालाओं में अंग्रेज़ी भाषा पढ़ाने के लिए इसी को अपनाया गया। यद्यपि आज 'डायरेक्ट मेथड़' या 'संभाषणात्मक प्रणाली' का बोलबाला है, तथापि इस प्रणाली की महिमा शिक्षा-शास्त्री एकदम अस्वीकार करते हैं, सो बात नहीं है।

(२) **व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली का स्वरूप** — 'व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली' नाम से ही उसके प्रधान तत्त्वों के सम्बन्ध में हम अनुमान कर सकते हैं। इस प्रणाली की नींव व्याकरण पर डाली गयी है और उससे विद्यार्थियों को यह पढ़ाया जाता है कि वे नयी भाषा में वाक्य-रचना कैसे करें। उससे विद्यार्थियों को नयी भाषा की वाक्य-रचना आदि की जानकारी दी जाती है, आवश्यक शब्दों का परिचय कराया जाता है और इससे भाषा का व्यवहार करते हुए वे उसे अपनाते जाते हैं। इस प्रणाली से पढ़ाये जानेवाले पाठ की रूपरेखा यों होती है —

(अ) **वाक्य-रचना के नियमों का स्पष्टीकरण** — यह इस प्रणाली से पढ़ाये जानेवाले पाठ की पहली सीढ़ी है। अध्यापक हिन्दी में वाक्य-रचना कैसे की जाती

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है, वाक्य के पदों में परस्पर सम्बन्ध कैसे स्थापित किया जाता है, आदि बातों को स्पष्ट करता है। वर्तमानकाल की वाक्य-रचना समझाते समय वह यह दिखाएगा कि क्रिया के वर्तमानकाल के रूप कैसे बनाये जाते हैं, उद्देश्य और क्रिया का क्या सम्बन्ध है आदि। आवश्यकता के अनुसार अपनी प्रादेशिक भाषा की वाक्य-रचना और हिन्दी की वाक्य-रचना की तुलना करते हुए वह समझा देता है। वह यह विवेचन विद्यार्थियों की अपनी भाषा में ही कर सकता है। अध्यापक व्याकरण के एक-एक विभाग को लेकर पाठों की रचना करता है। उसका उद्देश्य है व्याकरण के सिद्धान्तों की सहायता लेते हुए हिन्दी में वाक्य-रचना करने में बालकों की मदद करना। उदाहरण के लिए निम्न-लिखित में से हर एक के लिए स्वतंत्र पाठ की रचना की जा सकती है —

१. 'हो' धातु का वर्तमानकाल। २. अन्य धातुओं के वर्तमानकाल के रूप। ३. आज्ञार्थ। ४. सामान्य भूतकाल। ५. तात्कालिक भूतकाल आदि।

(आ) उदाहरण — नियमों के स्पष्टीकरण के बाद अध्यापक आवश्यक उदाहरण प्रस्तुत करता है और यह समझाता है कि बतलाये हुए नियम के अनुसार वाक्य या पद-रचना कैसे की जाती है।

(इ) शब्द-संग्रह — उदाहरणों के बाद शब्द-संग्रह दिये जाते हैं। आम तौर पर विद्यार्थियों की मातृभाषा से हिन्दी में और हिन्दी से मातृभाषा में अनुवाद करने की दृष्टि से आवश्यक शब्द दिये जाते हैं। वह इनका प्रयोग अनुवाद करते समय करेंगे। इन शब्दों को कण्ठस्थ करने की सूचना उनको दी जाती है। नियमों को भी याद कराने पर विशेष ज़ोर दिया जाता है।

(ई) अनुवाद-खण्ड — अन्त में हिन्दी के कई वाक्य दिये जाते हैं और उनका अनुवाद अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी करते हैं। प्रादेशिक भाषा के वाक्य भी हिन्दी में अनुवाद करने के लिए दिये जाते हैं। पाठ में पढ़ाये गये नियमों को ध्यान में रखते हुए अध्यापक अनुवाद के वाक्य चुनता है।

(उ) पाठों का अध्यापन — व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली से जब भाषा की शिक्षा दी जाती है, तब अनुवाद-माला की कोई पुस्तक पाठ्य-क्रम में नियत की जाती है। इसके साथ-साथ भाषा के पाठ्य-क्रम में अन्य पुस्तकें भी होती हैं। ऐसी पुस्तकों में गद्य और पद्य पाठ होते हैं। उनके अध्यापन में भी इस प्रणाली का सहारा लिया जाता है। ऐसे पाठों का अध्यापन साधारणतः नीचे दिये अनुसार होता है —

१. अध्यापक आवश्यक विवरण देता है। इससे पाठ्य-विषय से बालक परिचित होता है।
२. अध्यापक पाठ पढ़कर सुनाता है।
३. व्याकरण की दृष्टि से आवश्यक स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

४, कठिन शब्दों का विद्यार्थियों की मातृभाषा में अर्थ दिया जाता है।

५. हरएक वाक्य का अनुवाद कराया जाता है।

ऊँची कक्षाओं में कठिन शब्दों का अर्थ हिन्दी के आसान और परिचित शब्दों में दिया जाता है। बीच-बीच में एकाध सवाल पूछकर यह जाँच की जाती है कि बालकों ने रचना के तत्त्वों को कहाँ तक आत्मसात् किया है। अनुवाद के लिए स्वतंत्र रूप से गद्य-खण्ड देकर हिन्दी भाषा में योग्यता बढ़ाने में अध्यापक बालकों की सहायता करता है।

(३) व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली की विशेषताएँ -- १. शीघ्र प्रगति में सहायक – विद्यार्थियों को पढ़ाते वक्त भाषा की वाक्य-रचना की विशेषताएँ समझायी जाती हैं। इससे विद्यार्थी भाषा के बुनियादी तत्त्वों को जान लेते हैं। एक बार एक तरह की वाक्य-रचना उनके ध्यान में आ जाए, तो उसके अनुसार वे अधिक वाक्य बना सकते हैं। इससे भाषा के अध्ययन में उनकी प्रगति शीघ्र गति से होती है। एक बार क्रिया के वर्तमानकाल के रूप कैसे बनाये जाते हैं, यह नियम द्वारा समझाया जाए, तो विद्यार्थी आत्मविश्वास के साथ कई क्रियाओं के रूप बना लेंगे।

२. प्रादेशिक भाषा और हिन्दी की विशेषताओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। दोनों भाषाओं की वाक्य-रचना में जो समानता या अन्तर है, उसे स्पष्ट किया जाता है। इससे विद्यार्थियों के मन पर अच्छा संस्कार होता है, जिससे नयी भाषा को अपनाने में उनकी मदद ही होती है। उदाहरण के लिए अवयव-वाचक शब्दों का प्रयोग करते वक्त मराठी की ('ला' विभक्त्यन्त) रचना और हिन्दी की ('के' विभक्तिवाली) रचना विद्यार्थियों के सामने रखी जाए, तो वे इस विशेषता को नहीं भूलेंगे।

३. अनुवाद एक ऐसी कसौटी है, जिससे हम यह जान सकते हैं कि विद्यार्थियों ने भाषा में कहाँ तक योग्यता प्राप्त की है। वाक्य-रचना शब्दों के अर्थ आदि की दृष्टि से विद्यार्थी अगर गलती करेंगे, तो मानना होगा कि उन्होंने भाषा को ठीक तरह से नहीं अपनाया है। पढ़ाते-पढ़ाते अध्यापक इस कसौटी पर कसकर विद्यार्थियों के भाषा-ज्ञान की परख कर सकता है।

४. इस पद्धति से पढ़ानेवाला अध्यापक हरएक शब्द का अध्ययन, लेखन, कण्ठस्थ कराना आदि बातों की ओर विशेष ध्यान देना आवश्यक मानता है। वह विद्यार्थियों से अभ्यास करा लेता है, इसलिए विद्यार्थियों का भाषा-ज्ञान आसानी से स्थायी होता जाता है। गहराई में उतरकर वाक्य आदि के तत्त्वों को समझाया जाता है, इससे भी उनको लाभ पहुँचता है।

इन विशेषताओं के होते हुए भी आजकल के भाषा-शिक्षा-विशारद मानते हैं कि यह प्रणाली बालकों की शिक्षा में विशेष लाभकारी नहीं है। हमें बालकों की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शिक्षा की दृष्टि से सोचना चाहिए क्योंकि हमारे सामने बालकों की समस्या है। अतः इस पद्धति में जो त्रुटियाँ दिखायी देती हैं, उनका विवरण अब करेंगे।

(४) **त्रुटियाँ** (अ)—व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली का मूलाधार व्याकरण है। इसलिए अध्यापक जिन विद्यार्थियों को इस पद्धति से मातृभाषा के अतिरिक्त कोई दूसरी भाषा पढ़ाता है, उनको व्याकरण का ज्ञान पर्याप्त मात्रा में रखना आवश्यक है। अर्थात् यह व्याकरण उनकी अपनी मातृभाषा का ही होगा। शिक्षा-शास्त्र के अनुसार शिक्षा द्वारा जिसके मन पर हम संस्कार उत्पन्न करना चाहते हैं, उसके बारे में अध्यापक को पूरी जानकारी रखनी चाहिए। केवल भाषा की दृष्टि से देखें, तो हमें यह देखना चाहिए कि विद्यार्थी अपनी मातृभाषा के व्याकरण से कहाँ तक परिचित हैं। आज हमारे सामने जो विद्यार्थी हैं, वे हैं पाँचवीं कक्षा के। इसी कक्षा से उनकी मातृभाषा के व्याकरण से परिचय करा देना आरम्भ होता है। इसलिए उनका व्याकरण का ज्ञान नहीं के बराबर है। इस परिस्थिति में काल, कारक आदि व्याकरण के तत्त्व उनके ध्यान में कैसे आएँगे। यहः अविदित नहीं है कि मातृभाषा का व्याकरण पढ़ाते वक्त अध्यापक को कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इस कक्षा का साधारण विद्यार्थी व्याकरण की अधिक जानकारी रखने में असमर्थ दिखायी देता है। कारण यह है कि व्याकरण जैसे अमूर्त (abstract) विचार-प्रधान विषय का ज्ञान ग्रहण करने और उसे व्यवहार में लाने के लिए उसकी बुद्धि विकसित होनी चाहिए। १०–११ साल उम्र के विद्यार्थी इस अवस्था तक नहीं पहुँच पाते, इसलिए उनसे कहा जाए तो, वे व्याकरण के नियम कण्ठस्थ करेंगे, मगर उनका प्रयोग करने में उन्हें कई कठिनाइयाँ उठानी होंगी। इसलिए हमारे बालकों के पास वह शक्ति नहीं है, जिसके आधार पर हम उनको नयी भाषा पढ़ाना चाहते हैं। बालकों के व्याकरण-ज्ञान की जिस आधार-शिला पर नयी भाषा की शिक्षा का भवन बनाना चाहते हैं, उस बुनियाद के ठोस न होने के कारण हमारे यत्न में अपेक्षित मात्रा में सफलता नहीं मिलेगी। कम-से-कम, अध्यापकों और बालकों के परिश्रम की तुलना में वह सफलता कम होगी। अँग्रेज़ी भाषा की शिक्षा के सम्बन्ध में अध्यापकों ने इसी तरह की कठिनाई अनुभव की है।

(आ) एक भाषा में व्यक्त किये हुए विचार दूसरी भाषा में व्यक्त करना जितना आसान मालूम होता है उतना असल में नहीं है—खास तौर पर छोटे बालकों की दृष्टि से। अनुवादकार को दोनों भाषाओं पर अधिकार होना चाहिए। किसी विशेष शब्द या मुहावरे से व्यक्त किये हुए विचार वैसे-के-वैसे अन्य भाषा में अगर व्यक्त करने हैं, तो अनुवाद को पहले एक भाषा में व्यक्त किया हुआ विचार उसकी बारीकियों के साथ ध्यान में लेना चाहिए और दूसरे उसी भाव को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

व्यक्त कर सकनेवाले नयी भाषा के शब्दों की जानकारी रखनी चाहिए। इस कार्य के लिए विद्यार्थियों को जितना भाषा-ज्ञान रखना आवश्यक है उतना वास्तव में नहीं दिखायी देता। इसलिए नयी भाषा अपनाने में वे कठिनाई अनुभव करते हैं।

(इ) — अध्यापन के क्षेत्र में अध्यापक और विद्यार्थी दोनों अपना-अपना विशेष स्थान रखते हैं। मनोविज्ञान के प्रकाश में जब बालकों को पढ़ाने की नयी-नयी प्रणालियों का आविष्कार किया जाने लगा, तो नये-नये सिद्धान्त सामने लाये गये, शिक्षा के कार्य का पूरा-पूरा विश्लेषण किया गया, बालकों की सहजात शक्तियों का मूल्य आज़माया जाने लगा और फलतः आधुनिक शिक्षा बालकाभिमुख होती गयी, बालक ही उस शिक्षा के क्षेत्र में केन्द्र-बिन्दु हो गया। इसलिए बालकों की शक्तियों को काम में लाते हुए अब उनपर अच्छे संस्कार उत्पन्न करने की ओर अध्यापक को ध्यान देना चाहिए।

व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली से पढ़ाते समय अध्यापक को इस तत्त्व को कार्य में लाने की बहुत ही कम गुंजाइश रहती है। इसका असर अन्तिम फल पर हुए बिना नहीं रहता। उदाहरण के लिए —

(क) — बालक अधिक क्रियाशील होते हैं, हमेशा कुछ-न-कुछ करते रहने की ओर उनकी प्रवृत्ति स्वभावतः होती है। अगर इस प्रवृत्ति को दबाने की कोशिश की गयी तो बालकों को कार्य में उतनी दिलचस्पी नहीं होगी और जहाँ रुचि का अभाव है, वहाँ अवधान का कायम होना असम्भव तो नहीं, मगर कठिन अवश्य है। व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली से पढ़ाये गये पाठ में बालकों को कार्य करने का अवसर कम रहता है। व्याकरण के नियमों का स्पष्टीकरण, उदाहरण प्रस्तुत करना, शब्दों के अर्थ बतलाना आदि सभी कार्य अध्यापक द्वारा ही किये जाते हैं। उस समय बालक सिर्फ सुनते रहेंगे या अपनी कापी में कुछ लिखते रहेंगे। इन बातों में उन्हें कहाँ तक रुचि मालूम होगी? शिक्षा के उद्देश्यों में बालकों की विचार-शक्ति को प्रोत्साहन देते हुए उसका विकास करना भी एक है। जब यहाँ नियम समझाये जाते हैं, उदाहरण प्रस्तुत किये जाते हैं और हर एक अपरिचित शब्द का अर्थ दिया जाता है – अध्यापक द्वारा, तब अपनी विचार-शक्ति का उपयोग करने का अवसर बालकों को कहाँ मिलेगा? ऐसी स्थिति में इस कार्य में सफलता बहुत कम मिलती है।

(ख) — व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली से पढ़ाये हुए पाठ बालकों की दृष्टि से बहुत कुछ नीरस होते हैं। उसमें बालकों की क्रियाशीलता तथा क्रीड़ासक्ति का उपयोग नहीं किया जाता। शब्दों को दोहराने के लिए भी कम अवसर रहा करता है। नियमों का स्पष्टीकरण सुनने में और उनपर अमल करने में बालकों को रुचि नहीं अनुभव होती। उनकी रुचियों की ओर ध्यान नहीं दिया जाता। चित्र आदि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उन्हें नहीं दिखाये जाते, जिससे पाठ में उन्हें दिलचस्पी नहीं होती। शिक्षा के क्षेत्र में अध्यापक को बालकों की अधिक-से-अधिक ज्ञानेन्द्रियों पर संस्कार करना चाहिए। यहाँ स्पष्टीकरण सुनने से उनके कानों पर संस्कार होता है, मगर आँखों पर, जिह्वा पर संस्कार कम ही होता है। बालकों को कहानियाँ सुनने में विशेष दिलचस्पी होती है। कहानी कहते समय अगर कथन में कुछ रुकावट हो, तो कहानी-कथन प्रभावकारी नहीं होता। इससे अच्छी से अच्छी कहानी भी बालकों के अवधान को अपनी ओर खींचने में सफल नहीं होती। मगर यहाँ पाठ में तो अनुवाद और स्पष्टीकरण के लिए वाक्य-वाक्य पर, पद-पद पर रुकना पड़ता है, जिससे बालकों को पाठ में कोई रुचि नहीं अनुभव होगी।

(ग) — बालक मूर्त वस्तु में जितनी रुचि लेते हैं, उतनी अमूर्त बातों में नहीं। अध्यापक को उनका अवधान अपनी ओर खींचकर उन्हें मूर्त से अमूर्त की ओर खींचकर ले जाना चाहिए, ज्ञात से आरम्भ कर, अज्ञात की ओर ले जाना चाहिए। व्याकरण की चर्चा, अमूर्त की चर्चा है। जो बातें बालक जानते नहीं, उन्हीं से पाठ आरम्भ किया जाता है। इससे पाठ की सफलता पर बुरा असर होता है।

(ई) — भाषा का प्रयोग करना एक दृष्टि से उसकी 'आदत डालना' है। अभ्यास से मनुष्य भाषा का प्रयोग स्वाभाविकता से करने लगता है। भाषा के प्रयोग में यह स्वाभाविकता लाने के लिए 'अभ्यास' की नितान्त आवश्यकता है। यह अभ्यास पूर्ण अवधान से करना चाहिए। अवधान के अभाव में कार्य में सफलता नहीं मिलेगी। व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली से पढ़ाये गये पाठ में बालकों के अवधान का बहुत कुछ विभाजन होता है। मनोविज्ञान का सिद्धान्त है कि जब अवधान विभाजित होता है, तब 'कार्य' कम होता है। मान लीजिए कि बालक वाक्यों का अनुवाद करने जा रहे हैं। उस वक्त के उनके मनोव्यापार किस तरह होते होंगे, इसका विश्लेषण करके देखिए। एक क्षण में उन्हें निम्न-लिखित काम करने पड़ते हैं —

१. मातृभाषा का वाक्य पढ़ना और उसका अर्थ ग्रहण करना, २. कण्ठस्थ किये हुए हिन्दी के शब्दों का स्मरण करना, ३. व्याकरण के नियम ध्यान में लाना, ४. नियमों के अनुसार शब्दों के रूप बनाना, ५. हिन्दी में वाक्य बनाना और कहना। इतने कार्य करते वक्त अवधान बहुत विभाजित होता है। फलतः वाक्य-रचना में काफी गड़बड़ी होती है। इसका असर भाषा के सही प्रयोग और वक्ता की भाषण-शक्ति पर जरूर होगा। एक बार जैसे आदत डाली जाती है, वैसे ही वह अन्त तक बनी रहेगी। उसमें यत्नपूर्वक सुधार न किया जाए, तो बालक रुक-रुक कर बोलने लगेगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(उ) किसी भाषा को सीखने में उस भाषा का वातावरण अतीव लाभदायी होता है। इसको पहले स्पष्ट किया गया है। व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली द्वारा पढ़ाते समय प्रथम कक्षा में अध्यापक को हिन्दी का वातावरण बनाने की बहुत ही कम गुंजाइश रहती है। कारण यह है कि नये व्याकरण-तत्त्वों को स्पष्ट करना होगा बालकों की मातृभाषा में ही। एक भाषा के वाक्य देकर उसके बाद हिन्दी में उसका अनुवाद किया जाता है। शब्दों का अर्थ भी विद्यार्थियों की मातृभाषा के शब्दों में दिया जाता है। हिन्दी के वाक्यों का अनुवाद उसी भाषा में किया जाता है। इस तरह एक घण्टे तक भी क्यों न हो, हिन्दी का वातावरण कक्षा के कमरे में बनाना असम्भव होता है; इसलिए बालक की प्रवृत्ति भी अपनी मातृभाषा में सोचने की या बोलने की ओर अधिक होती है। अगर सवालों का जवाब देना हो, तो भी कक्षा में हिन्दी का वातावरण न होने के कारण बालक एक तरह की कृत्रिमता अनुभव करता है। हिन्दी में जवाब देते समय गलतियाँ होने की जो सम्भावना है, उससे वह डरता है। अन्य बालक इन गलतियों को देखकर हँसेंगे, इस विचार से डर की भावना बढ़ती है। नतीजा यह होता है कि अन्त में वह अपनी मातृभाषा में जवाब देता है।

ऊपर लिखी हुई बातों से पता चलेगा कि बालक का मन अपनी मातृभाषा से हिन्दी तक और हिन्दी से अपनी मातृभाषा तक कैसे दौड़-धूप करता होगा। इससे अपने हिन्दी के वाक्यों में प्रादेशिक भाषा के शब्दोंका प्रयोग वह अनजान में करता है। ऐसे शब्दों के लिए हिन्दी के शब्द वह जानता नहीं हो सो बात नहीं है; फिर भी इस दौड़-धूप के कारण और अवधान के विभाजन के कारण स्मृति-पटल से कुछ बातें गायब हुई हों, तो इसमें क्या आश्चर्य ? प्रादेशिक भाषा के अधिक प्रयोग के कारण बालकों को ऐसी आदत-सी लगती है कि हिन्दी में पूछे गये सवाल का भी वे पहले मन में प्रादेशिक भाषा में अनुवाद करते हैं, उसका जवाब उसी में तैयार करते हैं और उसका हिन्दी में अनुवाद करने की कोशिश करते हैं। इस बहुविध व्यापार से कार्य को हानि ही पहुँचती है। इससे बोलनेवाले की भाषा में एक तरह की शिथिलता, ऊबड़-खाबड़पन रहेगा; वह मँजी हुई नहीं बनेगी।

हिन्दी का वातावरण बालकों के चारों ओर हो, तो वे हिन्दी में बोलने की कोशिश करेंगे। इतना ही नहीं, आहिस्ता-आहिस्ता वे हिन्दी में ही विचार करने लगेंगे। इससे विचार करने का और उसकी अभिव्यक्ति का माध्यम एक ही होगा। विचार और अभिव्यक्ति में सीधा सम्बन्ध स्थापित होगा। आदत से बालक भाषा पर जल्द प्रभुता पाएँगे।

(ऊ) व्याकरण के नियम याद करना और उनपर अमल करना—दोनों बातें एक नहीं हैं। बहुत बार देखा गया है कि बालकों ने जो नियम कण्ठस्थ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

किये हैं, वे उन्हें अच्छी तरह याद हैं; मगर उसके अनुसार वाक्य-रचना करने में वे गलतियाँ करते हैं। 'लाना' क्रिया के भूतकाल में और 'चाहिए' क्रिया का प्रयोग करते समय कितनी गड़बड़ी होती है। फिर भी पूछा जाए, तो बालक नियम बता सकते हैं। इसलिए व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली के तरफदार अगर केवल नियमों को कण्ठस्थ करा लेने में अपनी सफलता की बुनियाद मानते हों, तो वे धोखे में रहते हैं। गलतियाँ समझाते हुए उन्हें दुरुस्त करा लेने में नियम सहायक होते हैं अवश्य, मगर नियम कण्ठस्थ कराने से यह मानना कि उनके अनुसार भाषा का व्यवहार भी बालक करेंगे, उचित नहीं होगा।

(ए) अच्छी हिन्दी यद्यपि व्याकरण-शुद्ध होती है, तथापि उसका केवल व्याकरण-शुद्ध होना ही उसके 'अच्छी' होने के लिए पर्याप्त नहीं है। व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली से बोलचाल की हिन्दी की सारी विशेषताओं को अपनाना आसान नहीं है। उनके लिए विशेष दृष्टि से भाषाभ्यास करने की ज़रूरत है। मनमोहक शैली भी इस प्रणाली से नहीं अपनायी जा सकती। क्या सम्भाषण में, क्या लेखन में, शैली कोई अवहेलना के योग्य वस्तु नहीं है, यह किसी भी भाषाभ्यासी को अविदित नहीं है।

(ऐ) 'अच्छी' भाषा मुहावरेदार होती है। व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली से पढ़ाये गये पाठ में मुहावरेदार भाषा अपनाने के लिए बालकों को कम गुंजाइश रहा करती है। उसका ध्यान एक-एक शब्द के अध्ययन की ओर अधिक होता है। इसके साथ-साथ बोलचाल की भाषा के कुछ वैशिष्टचपूर्ण प्रयोगों को भी अपनाने के मार्ग में कई कठिनाइयाँ उपस्थित होती हैं। 'चल पड़ा', 'चलता बना', 'किसी की एक न चलना'— आदि ऐसे प्रयोग हैं।

(ओ) भाषा प्रधानत: बोलचाल के लिए होती है। इस प्रणाली के अवलम्बन से विद्यार्थियों को भाषा बोलने का अभ्यास इतना नहीं होता, जितना अपेक्षित है। फलस्वरूप बालक लेखन-कार्य में जितने प्रवीण होते हैं, उतने बोलने में नहीं।

(औ) उपरिनिर्दिष्ट बातों से यह स्पष्ट हुआ होगा कि यद्यपि भाषा-शिक्षा की यह व्याकरण अनुवाद-प्रणाली सबसे प्राचीन है, फिर भी आधुनिक युग में वह सर्वश्रेष्ठ होने का दावा नहीं कर सकती। हम मानते हैं कि इस पद्धति की अपनी कुछ विशेषताएँ हैं, जिससे उसका इस क्षेत्र में प्राचीन काल से सम्मान होता आया है और आज भी उसकी महत्ता की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। प्रौढ़ लोगों को पढ़ाने के लिए वह अधिक उपयुक्त प्रणाली है, मगर जिन बालकों को पढ़ाने की समस्या हमारे सामने है, उनका भाषा-ज्ञान, उनकी ग्रहण-शक्ति, उनकी रुचियाँ आदि को ध्यान में रखते हुए हमें यह भी मानना होगा कि छोटे बालकों की भाषा-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शिक्षा के अध्यापक को इस प्रणाली से पढ़ाने से अपेक्षाकृत सफलता नहीं मिली है। मनोविज्ञान के विकास के साथ-साथ शिक्षा के क्षेत्र में नयी-नयी बातें उपलब्ध हो चुकी हैं। शैक्षणिक मनोविज्ञान की दृष्टि से यह प्रणाली अवश्य ही अ-मनोवैज्ञानिक है। उसके स्वरूप में शिक्षा-विज्ञान के सिद्धान्तों के प्रयोग की कम गुंजाइश है, जिससे सफलता की मात्रा कम होती है। उसी तरह बालक जिस प्रणाली से स्वभावतः भाषा अपनाता है, यह प्रणाली उसके विरुद्ध है। आजकल यह माना जाता है कि बालक का स्वाभाविक विकास जिस मार्ग से होता है, उसी मार्ग को अपनाने से अध्यापक को अपने कार्य में अधिक सफलता मिलेगी। पहले सुनना और देखना, उनके बाद मनोगत अर्थ-ग्रहण करना, अनुकरण द्वारा उच्चारण करना – प्रायः इसी क्रम से छोटा बालक अपने चारों ओर के वातावरण से अपनी मातृभाषा को अपनाता है। व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली की बुनियाद इस दृष्टि से भी ठोस नहीं है।

इस पद्धति की त्रुटियों, अनुपयोगिता और असफलता की ओर श्री. एच्. चैंपियन ने भी अपनी पुस्तक में संकेत किया है। *

पिछली सदी के उत्तरार्ध में शिक्षा-प्रणालियों में महान् परिवर्तन हुआ। उसके अनुसार भाषा की शिक्षा के लिए जिस प्रणाली का आविष्कार किया गया, उसके सिद्धान्त अगले पृष्ठों में देखेंगे।

---

* एच्. चैम्पियन : 'लेक्चर्स ऑन टीचिंग इंग्लिश इन् इण्डिया'

The futility of wholesale translation as a means of teaching meanings is now realized. (पृ. ३०) (शब्दों और वाक्यों के अर्थ समझाने के कार्य के लिए केवल व्याकरण- अनुवाद प्रणाली के प्रयोग की निरुपयोगिता अब अनुभवसिद्ध हो चुकी है।)

As a general method of composition, the fundamental weakness of translation is that it prevents or retards the pupil from thinking in English, from self-expresson in English ..... As a general method of composition in English the translation method must be condemned. (पृ. ३१)

अपने विचारों को अभिव्यक्त करने के विचार से व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली में यह त्रुटि दिखायी देती है कि छात्र के अंग्रेजी में विचार करने में वह बाधा डालती है ...... अतः वह त्याज्य मानी जाए।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: ७ :

सम्भाषणात्मक प्रणाली

(डाइरेक्ट मेथड़)

(१) **नये युग की माँगा** — उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में मनोविज्ञान और शिक्षा-शास्त्र का बहुत विकास हुआ। बालक की शिक्षा की ओर मनोविज्ञान के प्रकाश में शिक्षा-शास्त्री देखने लगे। भाषा की शिक्षा भी उनकी नज़र से अछूती नहीं रही। बालक की प्राकृतिक शक्तियों को ध्यान में लेते हुए भाषा सिखाने की प्राचीन काल से चली आयी हुई प्रणाली उन्हें सदोष प्रतीत होने लगी। शिक्षा-शास्त्रियों ने अनुभव किया कि अध्यापकों और बालकों के परिश्रम की तुलना में, उनकी सफलता की मात्रा कम है। विशेषतः छोटे बालकों को उनकी मातृभाषा से भिन्न कोई अन्य भाषा पढ़ाते वक्त व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली से अध्यापकों और बालकों को काफी मेहनत करनी पड़ती है। इसलिए भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से भाषा-शिक्षा के भिन्न-भिन्न पहलुओं की बाबत शिक्षा-शास्त्री सोचने लगे और नयी प्रणाली के आविष्कार की ओर दत्त-चित्त हुए। वे एक ऐसी प्रणाली चाहते थे, जिससे बालकों को कम-से-कम आयास में शिक्षा दी जा सके।

(२) **'डाइरेक्ट' मेथड़' का आविष्कार और प्रचार** — उन्होंने देखा कि श्रवण-शक्ति, अन्तर्मन द्वारा ज्ञान ग्रहण करने की शक्ति, दूसरों के द्वारा निर्मित ध्वनि-समुच्चयों का अनुकरण करने की शक्ति, अभ्यास द्वारा प्राप्त ज्ञान को कायम करने की शक्ति और प्राप्त ज्ञान का अन्य समान परिस्थितियों में प्रयोग करने की शक्ति आदि शक्तियाँ बालक में जन्मजात होती हैं। अगर इन शक्तियों को उसी क्रम से काम में लाया जाए, तो अपनी मातृभाषा की तरह बालक दूसरी भाषा को भी अपना सकेगा। उसके लिए बालक के चारों ओर एक ऐसा स्वाभाविक वातावरण तैयार करना होगा, जिसमें रहते हुए उसे उस भाषा को सुनने और बोलने का पर्याप्त मात्रा में मौका मिले। सुधारवादी शिक्षा-शास्त्रियों का दावा है कि नयी भाषा की शिक्षा भी श्रवण और अनुकरण द्वारा भाषण से ही आरम्भ करनी चाहिए। व्याकरण के नियमों तथा मातृभाषा के समानार्थी शब्दों के साथ उस भाषा के शब्द रटाने से आरम्भ नहीं करना चाहिए। उनका यह भी कहना है कि 'भाषण' का अभ्यास भी जीवन की प्रत्यक्ष घटनाओं से सम्बन्धित हो। वे मानते हैं कि यह प्रणाली बड़ी ही स्वाभाविक और लाभकारी है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यह नयी प्रणाली ही 'डाइरेक्ट मेथड़' कहलाती है। उससे होनेवाले लाभ देखकर यूरोप में इस प्रणाली का अवलम्बन बालकों को विदेशी भाषा की शिक्षा देने में गत शताब्दी के अन्त में किया गया। इस प्रणाली के निर्माताओं में **ग्विन, पॉल पासी, स्वीट, जेस्परसन** जैसे बड़े-बड़े शिक्षा-शास्त्री हैं।

उस समय भारत के ट्रेनिंग कॉलेजों के अंग्रेज़ प्रधानाचार्य इस प्रणाली की सफलता से प्रभावित हुए और उन्होंने अंग्रेज़ी भाषा की शिक्षा के कार्य में भारत में उनको अपनाना तय किया। उसके बाद इस प्रणाली का काफी बोलबाला हुआ। उसके पक्ष और विपक्ष में अनेकानेक दलीलें और उदाहरण प्रस्तुत किये गये। फिर भी उसे अपनाया गया।

(३) **हिन्दी में नामकरण —'डाइरेक्ट मेथड़'** को हिन्दी में कुछ लोग 'प्रत्यक्ष-पाठ-पद्धति' कहते हैं। इस नाम में अंग्रेज़ी 'डाइरेक्ट' शब्द का अनुवाद किया गया है। इस नाम से उस प्रणाली के किसी भी प्राणभूत तत्त्व का बोध नहीं होता, इसलिए यह नाम सदोष मालूम होता है। इसके लिए 'सम्भाषणात्मक प्रणाली' नाम सुझाया जाता है। इस शब्द से मालूम होता है कि सम्भाषण (Conversation) या बातचीत इस प्रणाली का आत्मभूत अंग है और वास्तव में बात भी वैसी ही है। इसलिए 'प्रत्यक्ष-पाठ-पद्धति' की अपेक्षा 'सम्भाषणात्मक प्रणाली' नाम अधिक अर्थवाही है। इस पुस्तक में उसी नाम का उपयोग किया गया है।

(४) **सम्भाषणात्मक प्रणाली और हिन्दी का अध्यापन** — अब प्रश्न यह है कि अंग्रेज़ी अध्यापन के लिए काम में लायी हुई प्रणाली का हिन्दी भाषा के अध्यापन से क्या सम्बन्ध है? हाँ, अवश्य सम्बन्ध है – बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। १. अंग्रेज़ी हमारे लिए परभाषा है, उसी तरह हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा भी क्यों न हो, अहिन्दी-भाषी प्रदेश के निवासियों के लिए वह परभाषा ही है। इसलिए अंग्रेज़ी के अध्यापन की प्रणाली का प्रयोग हिन्दी के अध्यापन में भी किया जा सकता है। २. इस पुस्तक में हम खास तौर पर बालकों की शिक्षा के बारे में सोच रहे हैं। मनोविज्ञान और आधुनिक शिक्षा-शास्त्र के सिद्धान्तों पर जिसकी नींव डाली गयी है, उसे अपनाने से हानि की अपेक्षा लाभ होने की सम्भावना ही अधिक है।

इसलिए हमारी माध्यमिक पाठशालाओं में हिन्दी के अध्यापन में सम्भाषणात्मक प्रणाली का बोलबाला है और रहेगा। हाँ, उस प्रणाली में जो त्रुटियाँ हैं, उन्हें ज़रूर हटाना होगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(५) **सम्भाषणात्मक प्रणाली क्या है ?** — मद्रास विभाग के भूतपूर्व डाइरेक्ट ऑफ् पब्लिक इन्स्ट्रक्शन मि. **एच्. चैंम्पिअन** (H. Champion) ने अंग्रेजी भाषा पढ़ाने की **'डाइरेक्ट मेथड़'** के अर्थ पर नीचे दिये अनुसार प्रकाश डाला है :—

'The Direct Method is a method of teaching English directly. To teach English directly is to establish a direct or immediate association between experience and expression, between the English word, phrase or idiom and its meaning: in other words, to establish in connection with English the same habit of direct expression of experience as exists in the use of the mother-tongue :'

[— 'Lectures on Teaching English in India' — से]

इसमें 'अंग्रेज़ी' (English) शब्द के बदले 'हिन्दी' को रखते हुए हम बता सकते हैं कि 'डाइरेक्ट मेथड़' – सम्भाषणात्मक प्रणाली क्या है।

अहिन्दी-भाषी प्रदेश के बालकों को हिन्दी पढ़ाने की 'डाइरेक्ट मेथड़' वह प्रणाली है, जिससे उनको हिन्दी सीधे – बिना किसी अन्य भाषा के माध्यम के – सिखायी जाती है। – हिन्दी 'सीधे' सिखायी जाने के माने हैं – 'अनुभूति और उसकी अभिव्यक्ति में, हिन्दी शब्दों या मुहावरों और उनके अर्थ में, सीधा या प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित करना।' दूसरे शब्दों में 'बालकों की मातृभाषा के सम्बन्ध में अनुभूति और उसकी अभिव्यक्ति में जो अविच्छिन्न सम्बन्ध होता है, वही हिन्दी के सम्बन्ध में स्थापित करना।'

'अनुभूति और उसकी अभिव्यक्ति में प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित करने' के क्या माने हैं ? मान लीजिए कि हम किसी विषय के बारे में सोच रहे हैं। ये विचार अपने मन में अपनी मातृभाषा में आते हैं। जिस भाषा में ये विचार आते हैं, उसी भाषा में हम प्रकट करते हैं। याने **अनुभूति** और उसकी **अभिव्यक्ति** एक ही भाषा में होती है। विचार और उसकी अभिव्यक्ति में कोई अन्य भाषा माध्यम के रूप में नहीं आती। सम्भाषणात्मक प्रणाली भी यही चाहती है कि विचार या अनुभूति और उसकी अभिव्यक्ति दोनों एक ही भाषा में हों; यह न हो कि हम किसी एक भाषा में सोचें और उसे व्यक्त करें दूसरी भाषा में; अपनी मातृभाषा में सोचें और उसको हिन्दी में अनुवाद करते हुए प्रकट करते जाएँ। हम हिन्दी में ही सोचें और हिन्दी में ही उन विचारों को व्यक्त करें। हम अपनी मातृभाषा में यह कार्य जितनी स्वाभाविकता से करते हैं, उतनी ही स्वाभाविकता से हिन्दी में करने की क्षमता प्राप्त करें। हमें हिन्दी का इतना ज्ञान प्राप्त हो कि हम

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अपनी मातृभाषा के समान सुलभता से उसमें व्यवहार कर सकें। सम्भाषणात्मक प्रणाली का यही लक्ष्य है, जिसकी सिद्धि के लिए निम्न-लिखित सिद्धान्तों पर उसकी नींव डाली गयी है।

(६) **सम्भाषणात्मक प्रणाली के तत्त्व : १. यह बालक के भाषा अपनाने की स्वाभाविक प्रणाली** (natural method) **का अनुसरण करती है।** – मतलब यह है कि बालक के चारों ओर ऐसा वातावरण निर्मित किया जाता है, जिसमें वह हिन्दी का या किसी भी परभाषा का ज्ञान अपने आप वैसे ही ग्रहण कर सके, जैसे वह अपनी मातृभाषा को अपनाता है। इसके अनुसार यह प्रणाली नीचे लिखे अनुसार कार्य की रूपरेखा प्रस्तुत करती है —

अ : श्रवण (सुनना) – बालक भाषा को अधिक से अधिक सुन सके, तो उसके कानों पर उस भाषा का अधिकाधिक संस्कार होता जाएगा। अध्यापक बालकों के सामने बार-बार हिन्दी भाषा में बोलता है और उन बालकों से हिन्दी शब्दों या वाक्यों को दोहरा लेता है। बालकों के रोज़ के जीवन से ही विषय चुने जाते हैं। शुरू में कक्षा में जो भिन्न-भिन्न वस्तुएँ होती हैं, उनमें से हर एक की ओर निर्देश करके अध्यापक कहता है — यह मेज़ है। यह कुर्सी है। ...

प्रत्यक्ष वस्तु या चित्र दिखाकर बालकों की आँखों पर संस्कार करते हुए भी अध्यापक शिक्षादान में लाभ उठाता है।

आ : मन में अर्थ-ग्रहण करना — नए शब्दों को सुनते हुए बालक अन्तर्मन द्वारा उसका अर्थ-ग्रहण करता है। छोटा बालक भी मातृभाषा अपनाते समय इसी तरह शब्द और वस्तु (अर्थ) में सम्बन्ध स्थापित करता है। यहाँ हिन्दी में भी वही होता है। 'मेज' शब्द सुनने से और 'मेज़' को देखने से शब्द और वस्तु में सीधे सम्बन्ध जोड़ दिया जा सकता है। व्याकरण-अनुवाद पद्धति से सीखते वक्त 'दीवार' वस्तु और 'दीवार' शब्द में प्रादेशिक भाषा का शब्द आता है। जैसे कि बालकों को बताया और उनसे कण्ठस्थ कराया जाता है —

'दीवार म्हणजे (= यानी) **भित**'; 'दीवार means 'a wall.'

इसमें 'भित' मराठी या अंग्रेज़ी शब्द 'wall,' के आ जाने से वस्तु और हिन्दी शब्द – दोनों में सीधा सम्बन्ध स्थापित नहीं हुआ है। यहाँ हिन्दी शब्द से मातृभाषा के शब्द द्वारा बालक वस्तु या अर्थ तक पहुँचता है। इससे अर्थ-ग्रहण करने के लिए सोचने की चेष्टा उसे नहीं करनी पड़ती। यह सच है, फिर भी भाषा का स्वाभाविक संस्कार उसपर नहीं होता।

इ : अनुकरण द्वारा उच्चारण – भाषण — हिन्दी शब्द सुनने और उसके अर्थ-ग्रहण करने के बाद बालक शब्द का उच्चारण करता है। संस्कार के दृढ़ होने के लिए शब्दों को और कभी-कभी वाक्यों को भी दोहराया जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ई : भिन्न-भिन्न सन्दर्भों में प्रयोग — उसी शब्द को बार-बार सुनने और दोहराने के बाद बालकों को उसका भिन्न वाक्यों में और विभिन्न सन्दर्भों में प्रयोग करने का मौका दिया जाता है।

इसी सिलसिले से बालक का भाषा-ज्ञान बढ़ता है। उद्देश्य यह है कि वह अपनी मातृभाषा को जितनी स्वाभाविकता से ग्रहण करता जाता है, वैसे ही यहाँ वह परभाषा को ग्रहण करे।

२. भाषण-शक्ति का अधिक-से-अधिक उपयोग करना — भाषा प्रधानतः बोली जाती है। बालक अगर सफलता से भाषा का व्यवहार – मुख्यतः बोलचाल में करने में समर्थ न हो जाए, तो उसकी शिक्षा-दीक्षा की पूर्ति में यह त्रुटि ही मानी जाएगी। इसीलिए बालक को नयी भाषा में अधिक-से-अधिक बोलने का मौका दिया जाता है। कक्षा में बालकों से प्रश्न पूछे जाते हैं, इन प्रश्नों के जवाबों को प्राथमिक अवस्था में और आवश्यकतानुसार आगे भी दोहरवाया है। इससे बालकों की जबान और कानों पर अधिक संस्कार होता है। इस 'अभ्यास' से ही भाषा-ज्ञान आत्मसात् किया जाता है। अध्यापक कक्षा में मेज की ओर निर्देश करते हुए कहेंगे — 'यह मेज है।' उसके बाद 'मेज़' शब्द और 'यह मेज़ है' वाक्य भी वह बालकों से व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से दोहरा लेंगे। इस सवाल-जवाब का स्वरूप यों रहेगा —

प्रश्न — यह क्या है ?	उत्तर — यह मेज है।
प्रश्न — यह क्या है ?	उत्तर — यह दवात है।
प्रश्न — दवात कहाँ है ?	उत्तर — दवात मेज़ पर है।
प्रश्न — मेज़ पर क्या है ?	उत्तर — मेज़ पर दवात है।
प्रश्न — दवात में क्या है।	उत्तर — दवात में स्याही है।

अनेक बालक उत्तर दोहरा लेते है। प्रश्नों और उत्तरों को इस प्रणाली में इतना महत्त्वपूर्ण स्थान है कि कुछ लोग यह देखकर उसको 'प्रश्नोत्तर' या 'बातचीत' प्रणाली भी कहते हैं। 'बातचीत' पर ज़ोर रहने के कारण हम कह सकते हैं कि भाषा-शिक्षा की यह 'मौखिक प्रणाली' (oral method) है। भाषा के संस्कार को स्थायी करने के हेतु इसमें अभ्यास, दोहरावट या पुनरावृत्ति (drilling) को भी बहुत महत्त्व दिया गया है।

३. पूर्ण वाक्यों का प्रयोग — एक विचार व्यक्त करने के लिए वाक्य की आवश्यकता होती है। वाक्य की परिभाषा ('एक पूर्ण विचार व्यक्त करनेवाले शब्द-समुच्चय को वाक्य कहते हैं।') यह बात स्पष्ट करती है। वास्तव में देखा जाए तो हम बातचीत करते वक्त हर वक्त पूर्ण वाक्य का प्रयोग नहीं करते।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जैसे — प्रश्न : तुम्हारा क्या नाम है। उत्तर -- अनिल। प्रश्न : तुम्हारी उम्र कितनी है ? उत्तर — दस। आदि। इस प्रश्नोत्तर के सम्बन्ध में जरा बारीकी से विचार करके देखें। बातचीत करनेवाले आमने-सामने हैं; एक ही स्थान पर एक ही समय वे बातचीत कर रहे हैं। इसलिए दो-एक शब्दोंवाले जवाब से काम चल सकता है। सुननेवाला सन्दर्भ या पृष्ठभूमि को ध्यान में लेते हुए उससे पूरा अर्थ-ग्रहण कर सकता है। मतलब यह है कि वक्ता द्वारा अध्याहृत शब्दों को भी वह समझ सकता है। 'मेरा नाम अनिल है।' 'मेरी उम्र दस है।'– वाक्यों में से सिर्फ 'अनिल' और 'दस' दो शब्दों से, जवाबों का पूरा अर्थ सुननेवाले के ध्यान में आता है।

फिर भी भाषा का अध्यापक यह नहीं चाहता कि इस तरह अधूरे वाक्यों में बोलने का ही बालक 'अभ्यास' करें। इसलिए वह इस बात पर विशेष ध्यान देना चाहता है कि सवाल और जवाब पूर्ण वाक्यों में हो। इसलिए अध्यापक अधूरे वाक्यों में जवाब न स्वीकार करे या अधूरे वाक्यों को न दोहराए।

४. अनुभूति और उसकी अभिव्यक्ति में प्रत्यक्ष सम्बन्ध या इन दोनों के लिए एक ही भाषा का प्रयोग -- यह तत्त्व तो 'सम्भाषणात्मक प्रणाली की आत्मा है। इसके बारे में इसी अध्याय में अन्यत्र विवेचन किया जा चुका है। जिस भाषा में हम सोचते हैं, उसी भाषा में हम अपने विचारों की अभिव्यक्ति करते हैं; अनुभूति और अभिव्यक्ति में कोई दूसरी भाषा 'मध्यस्थ' या 'माध्यम' के रूप में नहीं आती। अनुवाद द्वारा भाषा सीखते समय मातृभाषा का उपयोग हम माध्यम जैसा करते हैं। उसमें अनुभूति और अभिव्यक्ति में नयी भाषा का 'सीधा' (direct) सम्बन्ध नहीं होता। सम्भाषणात्मक प्रणाली ऐसा सम्बन्ध स्थापित कर सकती है।

इस प्रणाली द्वारा अपनायी हुई भाषा में एक तरह की सहजता, अकृत्रिमता दिखायी देती है।

५. नयी भाषा का वातावरण -- बालक के चारों ओर जिस भाषा का वातावरण होता है, उसको वह अपने आप अपनाता है; उसे भाषा सिखानी नहीं पड़ती, वह स्वयं सीखता है। भाषा-ज्ञान कोई पैत्रिक गुणधर्म नहीं है, हरएक व्यक्ति को अपने लिए भाषा सीखनी पड़ती है। डाइरेक्ट मेथड़ में बालक के चारों ओर नयी भाषा का (जिसे बालक अपनाना चाहता है) वातावरण बना लेने की कोशिश की जाती है। इससे बालक अधिक-से-अधिक हिन्दी सुन सकता है, उसे हिन्दी में बोलने का अधिक मौका मिलता है। चारों ओर हिन्दी का ही वातावरण हो, तो हर साँस उसे हिन्दी के वातावरण में लेनी पड़ेगी। अर्थात् यह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वातावरण कक्षा की चहारदीवारी के भीतर ही बनाया जाता है। जहाँ तक हो उसमें हिन्दी में व्यवहार होता है। इस वातावरण की निर्मिति पर सम्भाषणात्मक प्रणाली की सफलता निर्भर है। इससे बालक पर भाषा का अधिक संस्कार होता है, जिससे वह भी अपने आप हिन्दी आत्मसात् करता जाता है। अतः सवाल हिन्दी में पूछे जाएँगे, जवाब हिन्दी में दिये जाएँगे, स्पष्टीकरण हिन्दी में किया जाएगा। पाँचवें दर्जे से ही कक्षा में हिन्दी पढ़ाने के समय हिन्दी भाषा का वातावरण अपेक्षित है।

हिन्दी के वातावरण का निर्माण करने के माने हैं बालकों की मातृभाषा का उस अवधि में व्यवहार न करना। कक्षा में एक ही समय दो भाषाओं का वातावरण हो, तो नयी भाषा का संस्कार दृढ़ नहीं हो सकेगा। बालक की स्वाभाविक प्रवृत्ति मातृभाषा में बोलने की ओर होगी, क्योंकि उसे वह अच्छी तरह से जानता है। उससे विचार-अनुभूति और अभिव्यक्ति में सीधा सम्बन्ध स्थापित होने की सम्भावना कम होगी। अनजान में ही बालक को मातृभाषा में सोचने के लिए प्रोत्साहन मिलता रहेगा। इसलिए सम्भाषणात्मक प्रणाली के निर्माता अध्यापन की भाषा के अतिरिक्त किसी अन्य भाषा का व्यवहार कक्षा में करने का प्रतिबन्ध करना चाहते हैं। जिस क्षण बालक अर्थ को अच्छी तरह ग्रहण करता है, उसी क्षण मातृभाषा के उपयोग को बन्द किया जाना चाहिए। अगर हिन्दी का ऐसा वातावरण बन जाए, तो उससे अध्यापन का कार्य बहुत कुछ आसान होगा। क्योंकि —— (अ) बालकों पर उस भाषा का अधिक संस्कार होगा। (आ) बालकों की प्रवृत्ति हिन्दी में सोचने और बोलने की ओर अधिक होगी। (इ) इससे मनोविज्ञान की दृष्टि से यह लाभ होगा कि गलतियों से बालक नहीं डरेंगे, क्योंकि उनसे बचनेवाला शायद ही कोई होगा। उसी तरह अध्यापक द्वारा प्रस्तुत किये गये विचार का मातृभाषा में अनुवाद करके उसे ग्ररण करने की प्रवृत्ति कम होती जाएगी।

कक्षा में प्रारम्भिक अवस्था से हिन्दी का वातावरण बनाना आसान नहीं है। ऊँची कक्षाओं के विद्यार्थी हिन्दी पर बहुत कुछ अधिकार प्राप्त किये हुए होते हैं। उनमें यह काम आसान है। शुरू-शुरू में विद्यार्थियों का भाषा-ज्ञान सीमित होता है, ऐसे समय विद्यार्थियों के भाषाज्ञान की मर्यादाओं को ध्यान में रखकर अध्यापक को हिन्दी का उपयोग करना चाहिए, यह ऐरे-गैरे का काम नहीं। हिन्दी के वातावरण की निर्मिति ही, बालक जिसे समझ सकेंगे वैसी हिन्दी के वातावरण का निर्माण ही अध्यापक की सफलता की कसौटी है।

(७) **सम्भाषणात्मक प्रणाली की विशेषताएँ**: १. यह प्रणाली भाषा अपनाने की **स्वाभाविक प्रणाली** (Natural process) का अनुसरण करती है। इसलिए बालक हिन्दी के वातावरण में रहते हुए उसे उसी प्रकार ग्रहण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

करता जाता है, जिस तरह वह अपनी मातृभाषाको अपनाता है। इससे भाषा-शिक्षा उसे बोझ-सी नहीं प्रतीत होती। इसके अनुसार भाषण के पहले श्रवण, और पठन के बाद लेखन आता है। मातृभाषा को अपनाने की प्रक्रिया के तत्त्वों को इसमें अपनाया गया है।

२. यह प्रणाली **शिक्षा-शास्त्र के सिद्धान्तों की ठोस बुनियाद पर** बनायी गयी है, इसलिए शिक्षा-शास्त्रीय है। जिन सिद्धान्तों पर इसकी नींव डाली गयी है, वे हैं – (अ) ज्ञानेन्द्रियों पर संस्कारों की बहुलना और बहुविधता – कान, आँख, जिह्वा और हाथ पर भाषा-सम्बन्धी ऐसे संस्कार किये जाते हैं, जिससे बालक भाषा के हर पहलू में व्यवहार करने का अभ्यास पर्याप्त मात्रा में करता रहता है। इससे प्राप्त भाषा-ज्ञान को सहजता से स्थायी बना दिया जाता है। (आ) कार्य करते-करते सीखना : बालक भाषा में व्यवहार करते-करते उसे सीखता जाता है। (इ) अध्यापक के मार्गदर्शन में गलतियों को सुधारते हुए भाषा में योग्यता पाना। (ई) बालक सरल, स्थूल, मूर्त और ज्ञात से आरम्भ करके कठिन, सूक्ष्म, अमूर्त और अज्ञात की ओर बढ़ता है। (उ) पाठ का अध्यापन भी ऐसे ढंग से किया जाता है, जिससे विद्यार्थी अपने आप उसमें दिलचस्पी अनुभव करने लगता है। पढ़ाते समय भी अध्यापन-कला के हर पहलू पर ध्यान दिया जाता है। (ऊ) बालक को ही हर क्रिया का केन्द्र-बिन्दु बना दिया गया है और अध्यापक उसकी सहायता करता है, ताकि वह (बालक) अपना विकास जल्द कर सके। आदि।

३. यह प्रणाली **मनोवैज्ञानिक** है; क्योंकि इससे पढ़ाते समय अध्यापक को बाल-मनोविज्ञान के कई सिद्धान्तों का आश्रय करना पड़ता है। उदाहरण के लिए– (अ) पाठ्य-विषय को ऐसे ढंग से प्रस्तुत किया जाता है जिससे उसमें बालक को **रुचि** (interest) अनुभव हो जाए। चित्र दिखाना, पाठ के उपकरणों का उपयोग, आदि से इस रुचि का निर्माण किया जाता है। इससे **अवधान** (attention) की समस्या हल की जाती है। बालक की **विचार-शक्ति को** प्रोत्साहित किया जाता है, उसे अपने लिए सोचने का मौका दिया जाता है। इससे वह अपनी **रचनात्मक प्रवृत्ति** (constructiveness) का परिचय दे सकता है। उसकी **क्रियाशीलता** और **क्रीड़ासक्ति पर** दबाव नहीं डाला जाता, बल्कि उनका अच्छा उपयोग करा लिया जाता है; उनका **उदात्तीकरण** (sublimation) होता है।

४. इस प्रणाली को लेकर तरह तरह के **प्रयोग** किये गये हैं और उसकी उपयोगिता स्पष्ट की गयी है। इससे ही वह **वैज्ञानिक** बनी है।

५. व्याकरण की शिक्षा तथा ज़बानी याद करना आदि में व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली से भाषा को अपनाते समय बालक की शक्ति का व्यय होता है। इस पद्धति

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में इन बातों पर कम ज़ोर दिया जाता है। इन बातों की नीरसता को हटा दिया गया है।

६. इस पद्धति में **मौखिक पढ़ाई का** जो महत्त्व माना गया है, उससे बालक भाषा को जल्द अपना सकता है। विचार और उसकी अभिव्यक्ति में कोई और भाषा माध्यम के तौर पर नहीं आती, इसलिए बालक की भाषा में स्वाभाविकता आती है; वह नयी भाषा में ही सोचने की ओर प्रवृत्त होता है।

७. पढ़ायी जानेवाली भाषा का वातावरण बना लिया जाता है। यह इस प्रणाली की अपनी खासियत है। इससे सुनने, बोलने, पढ़ने और लिखने की कला में बालक स्वाभाविक गति से प्रगति करने लगता है।

(८) आलोचना — भारत में अंग्रेज़ी भाषा के अध्यापन में 'डाइरेक्ट मेथड़' को स्वीकार किया गया और उसका काफी बोलबाला हुआ। एक तरफ इसके हिमायती इसे सर्वश्रेष्ठ अध्यापन-प्रणाली बतलाते हैं, तो दूसरी तरफ कुछ अध्यापक, विद्यार्थियों के अभिभावक और कुछ शिक्षा-शास्त्रज्ञ इसकी कमज़ोरियाँ दिखलाते हुए इसकी कटु से कटु आलोचना करते हैं और आजकल के विद्यार्थियों की अंग्रेज़ी का 'स्टैण्डर्ड' जो घटा हुआ है, उसका कारण इस प्रणाली को मानते हैं। तो विचारणीय बात यह है कि इतनी वैज्ञानिक कहलानेवाली यह प्रणाली आखिर असफल क्यों दिखायी देती है। अंग्रेज़ी के सम्बन्ध में जो हुआ, सम्भव है कि वही हिन्दी के बारे में भी होगा। इसलिए इसकी कमज़ोरियों तथा असफलता पर कुछ प्रकाश डालना चाहिए।

किसी योजना की असफलता के बीज स्वयं उस योजना में जितने हो सकते हैं, उतने ही जिस परिस्थिति में उसे कार्यान्वित करने की कोशिश की जाती है उसमें भी हो सकते हैं। इसलिए पहले हम यह देखेंगे कि परिस्थिति-जनित कौन-सी कठिनाइयाँ हैं और उन्हें कैसे दूर किया जा सकता है, ताकि 'डाइरेक्ट मेथड़' का उद्देश्य पूर्ण हो जाए।

(अ) परिस्थिति-जनित कठिनाइयाँ — १. तज्ज्ञ अध्यापकों की कमी — 'डाइरेक्ट' प्रणाली के तत्त्वों को अच्छी तरह आत्मसात् करके जिन्होंने उससे पढ़ाने का पर्याप्त मात्रा में अभ्यास किया है, ऐसे अध्यापक कम तादाद में पाये जाते हैं। इस प्रणाली का अल्प-सा ज्ञान पाकर प्रश्न आदि पूछकर, हिन्दी में ही अधिक बोलकर अपनी अध्यापन-प्रणाली को 'डाइरेक्ट' मेथड़ का रंग देने की कोशिश वे करते हैं। जिन्हें न इस प्रणाली में रुचि और श्रद्धा होती है, न मेहनत करने की तैयारी होती है, वे सफलता कहाँ तक पाएँगे? यह प्रणाली की त्रुटि नहीं है, उसका प्रयोग करनेवालों का यह दोष है। हिन्दी के अध्यापकों को चाहिए कि वे इस

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रणाली का सम्पूर्ण ज्ञान पाएँ और उसे काम में लाने की कोशिश करें। शब्दों की पुनरुक्ति, प्रश्नोत्तर आदि को वे 'दिखावा' या 'नाटक' न समझें। अध्यापक अगर उचित रूप में उसे न अपनाएँगे, तो वे इसमें सफल नहीं होंगे।

२. **अनेक भाषाओं का अध्ययन-अध्यापन** — बालकों को कई भाषाओं का अध्ययन करना पड़ता है। पाँचवीं कक्षा से सातवीं कक्षा तक महाराष्ट्र राज्य में वे अपनी मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा या दोनों और हिन्दी पढ़ते हैं। अब दोनों के साथ अंग्रेज़ी भी पढ़ायी जाती है। आगे चलकर संस्कृत जैसी कोई और एक भाषा पाठ्य-क्रम में आती है। इसका परिणाम यह होता है कि नियत समय में बालक नयी भाषा के तत्त्वों को ठीक तौर से अपनाने में कठिनाई अनुभव करने लगता है। पहले घण्टे (पिरियड़) में प्रादेशिक भाषा पढ़ायी जाएगी, दूसरे में हिन्दी, तो तीसरे में अंग्रेज़ी पढ़ायी जाएगी। इसलिए बालक के मन पर एक भाषा के संस्कारों के स्थिर होने से पहले ही उसे दूसरी भाषा की ओर ले लिया जाता है। अन्य विषय भी विद्यार्थी की मातृभाषा में पढ़ाये जाते हैं। हरएक भाषा का अध्यापक अपनी भाषा का महत्त्व स्थापित करने की चेष्टा करता है। अतः विद्यार्थी मानो किंकर्तव्यमूढ़ हो जाते हैं। भिन्न-भिन्न भाषाओं की ओर जितना ध्यान दिया जाना चाहिए, उतना वे दे नहीं सकते। वास्तव में इस गड़बड़ी में प्रणाली का कोई कसूर नहीं है, उसे परिस्थिति-जनित कठिनाई ही का दोष मानना चाहिए।

३. पाँचवीं कक्षा के अधिकतर विद्यार्थी अपनी मातृभाषा पर भी उतना अधिकार नहीं प्राप्त नहीं करते हैं जितना कि वास्तव में उनसे अपेक्षित है। ग्रहण-शक्ति और विचार-शक्ति की इस अविकसित अवस्था में उन्हें नयी भाषा सीखनी पड़ती है।

४. कक्षा की चहारदीवारी के भीतर ही हिन्दी का वातावरण बना लिया जा सकता है, उससे विद्यार्थियों को लाभ पहुंचेगा। मगर यह वातावरण भी हर हफ्ते में ४ – ५ घण्टों से अधिक नहीं होता। पाठशाला के बाहर बालकों को हिन्दी बोलने या सुनने का मौका साधारणतः नहीं मिलता। इसलिए प्राप्त ज्ञान को वे काम में नहीं ला सकते। उतनी मात्रा में वे हिन्दी में कम योग्यता प्राप्त करेंगे।

ऐसी कठिनाइयों के बीच जब हिन्दी पढ़ायी जा रही है, तब उसमें अध्यापकों को अपेक्षाकृत सफलता से कम सफलता मिले, तो क्या आश्चर्य।

(आ) सम्भाषणात्मक प्रणाली की या उसकी निर्मित कमज़ोरियां – १. नयी भाषा का वातावरण बना लेने पर सम्भाषणात्मक प्रणाली के प्रणेता तथा पक्षपाती अत्यधिक बल देते आये हैं। उनके मत के अनुसार अध्ययन की भाषा के सिवा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

किसी अन्य भाषा का प्रवेश उसके अध्यापन में नहीं होना चाहिए। अध्यापक अगर विद्यार्थियों की मातृभाषा को बहिष्कृत मानकर हमेशा, खास तौर पर, निम्न कक्षाओं में हिन्दी का ही उपयोग करता रहे, तो सम्भव है कुछ विद्यार्थियों को उससे काफी दिक्कत उठानी पड़ेगी। हिन्दी की शिक्षा की प्रारम्भिक अवस्था में अगर विद्यार्थी अध्यापक की बतलायी बातों में से कुछ ग्रहण न कर सका हो, तो आगे चलकर उसकी कठिनाइयाँ बढ़ती ही जाएँगी। उतनी मात्रा में वे भाषा को अच्छी तरह नहीं अपना सकेंगे। विद्यार्थियों को कोई कठिनाई हो तो वे हिन्दी में पूछकर उसे दूर नहीं करा ले सकते। मातृभाषा में पूछने में वे संकोच अनुभव करते हैं, अध्यापक का डर उनके मन में बना रहता है। कोई-कोई अध्यापक अपरिचित शब्दों के अर्थ भी हिन्दी के अतिरिक्त किसी अन्य भाषा में देना पाप समझते हैं। इस तरह वातावरण बना लेने के मोह में फँसकर वे विद्यार्थियों को हानि पहुँचाते हैं। **२. पाठ्य-पुस्तक का अधूरा अध्ययन** — प्रश्नोत्तर-प्रणाली, शब्दों के अर्थ समझा देने का तरीका, मौखिक शिक्षा का अधिक महत्त्व आदि की वजह इस त्रुटि का निर्माण हुआ है। जिस गहराई में उतरकर शब्द, वाक्य-रचना आदि का अध्ययन व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली से कराया जाता है, उतना इस प्रणाली से सम्भव नहीं होता। इसलिए पाठ्य-पुस्तक का सम्यक् अध्ययन करना असम्भव-सा होता है। इसका असर विद्यार्थियों के भाषा अपनाने पर हुए बिना नहीं रहता। **३. व्याकरण के अध्ययन की उपेक्षा** — इस प्रणाली से नयी भाषा के वातावरण में सम्भाषण द्वारा विद्यार्थियों को भाषा ज्ञान पाने की ओर प्रवृत्त किया जाता है। इसके अनुसार व्याकरण के अध्यापन का भाषा सिखाने की दृष्टि से अधिक महत्त्व नहीं माना गया है। 'अभ्यास' और 'वातावरण' के महत्त्व को मानते हुए भी हम यह कह सकते हैं कि प्रायोगिक व्याकरण (Functional grammar) की सहायता से विद्यार्थी नयी भाषा के कुछ तत्त्वों को जल्द अपना सकेंगे। **४. मौखिक पढ़ाई का अत्यधिक महत्त्व** — इसकी प्रतिक्रिया यह हुई कि अध्यापक और विद्यार्थी दोनों लेखन की ओर कम ध्यान देने लगे हैं। विद्यार्थी बोलने में अधिक सफल होते हैं। फिर भी कण्ठस्थ करने की ओर पहले जैसा ध्यान नहीं दिया जाता। इसलिए विद्यार्थियों की शब्द-सम्पत्ति कम रहा करती है। लेखन-कार्य की कोई खास क्रमबद्ध योजना भी यह प्रणाली नहीं प्रस्तुत करती। इससे विद्यार्थियों को हानि ही पहुँची है। **५. मंथर गति से पढ़ाई** — शब्दों का परिचय और दोहरावट, आदि से कक्षा में पाठ अत्यधिक धीमी गति से पढ़ाया जाता है। प्रश्नोत्तर में ज्यादा समय खर्च किया जाता है। जहाँ व्याकरण के आधार पर कोई बात चन्द मिनटों में समझा दी जा सकती है, उसके लिए दोहरावट आदि से अधिक समय लगता है। इसलिए नियत समय में अध्यापक नियत पाठ्यक्रम पूर्ण नहीं कर सकता।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यद्यापि इस प्रणाली का निर्माण ठोस वैज्ञानिक बुनियाद पर किया गया है, तथापि वातावरण-जन्य कठिनाइयों तथा प्रणाली की अपनी त्रुटियों के कारण, इसकी कटु आलोचना की गयी है। आज जिस तरह उसे अधिकांश अध्यापक काम में लाते हैं, उसमें उसकी असफलता के बीज हैं।

अब तक हमने दोनों प्रणालियों की विशेषताओं तथा त्रुटियों को देख लिया, अब यह विचारणीय है कि अध्यापक राष्ट्रभाषा के अध्यापन के कार्य में किस प्रणाली को अपनाए।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: ८ :

प्रणालियों का समन्वय

(१) **आवश्यकता** — पिछले दो अध्यायों में 'व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली' तथा 'सम्भाषणात्मक प्रणाली' के गुण-दोषों का विवेचन किया। इन दोनों प्रणालियोंमें से हरएक की जिस तरह अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं, उसी प्रकार कमज़ोरियाँ भी हैं। यह भी हमने देखा कि व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली को छोटे बालकों को हिन्दी पढ़ाने के लिए अपनाना कितना कठिन है और डाइरेक्ट मेथड़ की बुनियाद के वैज्ञानिक तथा ठोस होते हुए भी जिस परिस्थिति में उसे हमें अपनाना है, उसमें उसके हर पहलू को पूरे तौर पर अपनाने से क्या लाभ-हानि होती है। प्रणाली साधन मात्र है, इसलिए अध्यापक को चाहिए कि वह उसमें सोच-समझकर ज़रूरी बदल कर दे, ताकि अपनी मंज़िल तक वह जल्द से जल्द पहुँच जाए। दकियानूसी बनकर उसे व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली की दुर्बलताओं की ओर आनाकानी नहीं करनी चाहिए। फिर भी सम्भाषणात्मक प्रणाली के जगमगाते आलोक में अपनी आँखों को चकाचौंध हो देने से बचा लेना चाहिए। आजकल व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली की आवाज़ डाइरेक्ट मेथड़ के नक्कारखाने में तूती के बोल जैसी हुयी है। फिर भी विवेकशील अध्यापक को चाहिए कि वह दोनों की विशेषताओं से लाभ उठाए, एक की कमज़ोरियों को हटाकर वहाँ दूसरी की अच्छाइयों को रख दे। संक्षेप में, वह दोनों प्रणालियों के तत्त्वों का व्यावाहारिक स्तर पर आकर ऐसा सुन्दर समन्वय कर दे, जिससे अपने कार्य में वह अधिक-से-अधिक सफल हो जाए।

२· **समन्वय कैसे करें १**—१. आजकल के इस वैज्ञानिक युग में हमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनाने से मुँह नहीं मोड़ना चाहिए। हमारी यह नयी प्रणाली ऐसी हो, कि जिसमें सम्भाषणात्मक प्रणाली के **मनोवैज्ञानिक** और **शिक्षा-शास्त्रीय दृष्टिकोण का** महत्त्व बना रहे। यह यहाँ दोहराने की ज़रूरत नहीं है। रुचि, अवधान, क्रियाशीलता, रचनात्मक प्रवृत्ति, कार्य करते हुए सीखना, संस्कारों की बहुलता और विविधता आदि के सम्बन्ध में जो बातें बतलायी हैं, उन्हें ध्यान में रखें और उन सिद्धान्तों को कार्यान्वित करें। वैसे ही 'हरबार्ट' की पाठ-पद्धति को अपनाया जाए। २. सम्भाषणात्मक प्रणाली में भाषा अपनाने की **स्वाभाविक प्रणाली के** जिन तत्त्वों को समाहित किया गया है, उन्हें भी स्वीकार करें। ३. सम्भाषणात्मक प्रणाली में नयी भाषा के वातावरण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का जो महत्त्व है उसे हम स्वीकार करें। इससे बालकों को अधिक से अधिक हिन्दी में व्यवहार करने का मौका मिलेगा। इस तरह के अभ्यास से वे भाषा में अपनी योग्यता बढ़ा सकेंगे। सिर्फ आवश्यकता के अनुसार कक्षा में उनकी मातृभाषा को काम में लाया जाए। नये शब्दों का अर्थ हिन्दी के साथ-साथ प्रादेशिक भाषा में भी दें। ४. **प्रश्नोत्तर प्रणाली** तथा **मौखिक पढ़ाई** का मूल्य ध्यान में लें और उसे अपनाएँ। इससे बालकों को भाषण, श्रवण आदि का अभ्यास करने का मौका मिलेगा। ५. **व्याकरण** की शिक्षा आवश्यकता के अनुसार दें और व्याकरण के आधार पर हिन्दी वाक्य-रचना आदि समझा दें। पारिभाषिक शब्दों की झंझट में विद्यार्थियों को न घसीट ले जाएँ। प्रादेशिक भाषा और हिन्दी की वाक्य-रचना आदि की तुलना करके उनकी समता या विषमता दिखलायी जाए, तो विद्यार्थियों को लाभ ही होगा। संज्ञा, क्रिया आदि के रूप बना लेने का अभ्यास इससे आसानी से कराया जा सकता है। व्याकरण की शिक्षा के लिए 'प्रयोग – प्रणाली' (inductive method) को अपनाया जाए। ६. हम शब्दों के प्रयोग और अर्थ को ध्यान में न लेते हुए उन्हें कण्ठस्थ करने में प्रोत्साहन न दें; फिर भी आवश्यक शब्दों को कण्ठस्थ करा लें, इतना ही नहीं बल्कि पाठ के अच्छे वाक्य या परिच्छेद, पद्यखण्ड आदि को भी कण्ठस्थ कराने की ओर ध्यान दें। ऐसी बातें ज़बानी याद करने से विद्यार्थियों को लाभ ही पहुँचेगा। ७. **लेखन** की ओर विशेष ध्यान दें। पाठ्य-पुस्तक पर दिये गये प्रश्नों के जवाब लिखना, वाक्यों में शब्दों का प्रयोग करना, छोटे-छोटे वर्णनात्मक निबन्ध लिखना, श्रुत-लेखन (dictation) और अनुलेखन (transcription) आदि को पाठ्यक्रम में स्थान देकर विद्यार्थियों से लेखन का अभ्यास कराएं। इसके लिए क्रमगत पाठ्यक्रम ही बना लिया जाए। ८. छोटे-छोटे वाक्यों परिच्छेदों का अनुवाद कराया जाए। नयी वाक्य-रचना आदि पढ़ायी जाने के बाद उसका अभ्यास अनुवाद द्वारा कराया जा सकता है। ९. प्रादेशिक भाषा और हिन्दी के अध्यापन में अधिक-से-अधिक एकसूत्रता, समन्वय स्थापित करने की कोशिश करें।

(३) हिन्दी के अध्यापन में प्रादेशिक भाषा का उपयोग —

अ – समस्या की रूपरेखा — सम्भाषणात्मक प्रणाली और यह नयी समन्वयात्मक प्रणाली दोनों में हिन्दी के वातावरण का स्थान महत्त्वपूर्ण है। फिर भी आवश्यकता के अनुसार या 'आपद्धर्म' के तौर पर हिन्दी के पाठ में प्रादेशिक भाषा का उपयोग करना अनिष्ट नहीं है। खास तौर पर निम्न कक्षाओं में हमारे यहाँ की परिस्थितियों में कक्षा के कमरे में हिन्दी का वातावरण बना लेना कितना कठिन है, यह बतला दिया गया है। १. बालकों के चारों तरफ का प्रादेशिक भाषा का वातावरण, २. प्रादेशिक भाषा का अन्य विषयों के लिए माध्यम के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तौर पर स्वीकार किया जाना, ३. हिन्दी की शिक्षा के लिए प्राप्त समय, ४. विद्यार्थियों की हिन्दी में योग्यता, शब्द-सम्पत्ति का अपर्याप्त मात्रा में होना, ५. पाठशाला के बाहर का वातावरण, जिसमें बालकों को हिन्दी का उपयोग करने का मौका बहुत ही कम मिलता है, ६. अपनी मातृभाषा में बोलने की ओर स्वाभाविक प्रवृत्ति – आदि के कारण कक्षा में हिन्दी का वातावरण बना लेना असम्भव तो नहीं, कठिन अवश्य है।

फिर भी प्रादेशिक भाषा का अधिक उपयोग करने से नयी भाषा के अपनाये जाने में बाधा आएगी। अतः वातावरण बना लेने की आवश्यकता ध्यान में लेकर हमें प्रादेशिक भाषा का कम-से-कम प्रयोग करना ही इष्ट प्रतीत होता है।

आ – उसका उपयोग कम-से-कम कैसे करें — अध्यापक स्वयं आसान-सी आसान हिन्दी में बोले। विद्यार्थियों की शब्द-सम्पत्ति, उनकी हिन्दी में वाक्य-रचना करने की तैयारी आदि बातों का खयाल रखा जाए। अगर अध्यापक की भाषा विद्यार्थियों के ध्यान में आती हो, तो ही उन्हें पाठ में दिलचस्पी होगी। प्रश्नोत्तर प्रणाली और दोहरावट को काम में लाते हुए विद्यार्थियों को हिन्दी में बोलने का और हिन्दी भाषा सुनने का अधिक से अधिक मौका दिया जाए। अध्यापक यह ध्यान में रखे कि जहाँ अनिवार्य प्रतीत होगा, वहीं वह प्रादेशिक भाषा को काम में लाए। विद्यार्थियों की हिन्दी में योग्यता जैसे-जैसे बढ़ती जाएगी, वैसे-वैसे वे भी दिलचस्पी से इसमें सहयोग देने लगेंगे। शुरू में वे हिन्दी में बोलने से हिचकते हैं, वे समझते हैं कि गलतियाँ हो जाएँ तो उनके सहपाठी मज़ाक उड़ाएँगे, अध्यापक उनपर गुस्सा होंगे। एक बार उनमें यह डर की भावना घर बनाकर रह जाए या उनमें हीन-भावना पैदा हो जाए, तो वे हिन्दी को ठीक तरह नहीं अपना सकते। इसलिए अध्यापक को चाहिए कि वह अपने छात्रों को विश्वास में लेकर उनका मार्गदर्शन करे, उनकी गलतियों को दुरुस्त करते हुए उन्हें बढ़ावा दे। ऐसी सहानुभूति और प्रोत्साहन से उनमें आत्मविश्वास निर्मित होगा और अध्यापक को अपने कार्य में सफलता मिलेगी।

इ — प्रादेशिक भाषा का उपयोग : कहाँ और कैसे ? —– ऊपर की पंक्तियों में बतलाया गया है कि जहाँ बिलकुल अनिवार्य हो, वहीं हिन्दी के पाठ में प्रादेशिक भाषा को काम में लाया जाए। सम्भाषणात्मक प्रणाली के अभिमान की वजह बालकों की ग्रहण-शक्ति की अनावश्यक खींचातानी करना या उन्हें वैसे ही दुविधा में रखना हानिकर होगा। निम्न कक्षाओं में प्रादेशिक भाषा के उपयोग की जितनी आवश्यकता दिखायी देती है, उतनी उच्च कक्षाओं में नहीं। अध्यापक को ध्यान में रखना चाहिए कि जब एक बार कोई बात विद्यार्थियों को हिन्दी में समझा देने से, उनकी समझ में वह आ सकती है, अथवा आ गयी है, तब उसके

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लिए वह प्रादेशिक भाषा को काम में न लाए ✦ । निम्न-लिखित स्थान ऐसे हैं, जहाँ उन्हें प्रादेशिक भाषा का प्रयोग करना पड़ेगा — १. वाक्य-रचना या शब्द का कोई रूप समझा देने के लिए, २. प्रारम्भिक कक्षा में आवश्यक सूचना या जानकारी देने के लिए, ३. कठिन हिन्दी शब्दों के लिए प्रादेशिक भाषा के समानार्थक शब्द देने के लिए, ४. प्रादेशिक भाषा और हिन्दी के वाक्य आदि की रचना में समता या असमता दिखाने के लिए, ५. व्याकरण के अध्यापन में, ६. अनुवाद करने के लिए।

ध्यान में रखें कि हिन्दी के पाठ में प्रादेशिक भाषा का अधिक उपयोग करने का अध्यापकों को कोई हक नहीं है, उन्हें वैसी सहूलियत दी गयी है। इस सहूलियत का उचित उपयोग करके वे कक्षा में हिन्दी के वातावरण को बनाये रखने की अधिक-से-अधिक चेष्टा करें।

✦ The moment the experience or meaning is clearly apprehended by the pupil, the mother-tongue must be banished.

— Lectures on Teaching English in India – page 33.

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: १ :

हिन्दी के प्रारम्भिक पाठ

(१) **हिन्दी की शिक्षा का प्रारम्भ** — अहिन्दी भाषी प्रदेश में राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रचार पिछले चालीस-पचास वर्षों से शुरू है। (भूतपूर्व) बम्बई राज्य में पहले कांग्रेस-मंत्रि-मण्डल (१९३७–१९४०) ने माध्यमिक पाठशालाओं में हिन्दी की शिक्षा ऐच्छिक रूप में देने का प्रबन्ध किया। १९४० के बाद सरकारी शिक्षा – विभाग ने पहली तीन कक्षाओं (आज की ५, ६, ७ वीं) में हिन्दी की शिक्षा जारी रखी। स्वतंत्रता पाने के बाद राष्ट्रभाषा की शिक्षा का उत्तरदायित्व सरकार पर आया। उसको निभाने की दृष्टि से सरकार ने कदम उठाकर पाठशालाओं की हिन्दी की शिक्षा की समस्या सुलझाने के लिए म. म. द. वा. पोतदार की अध्यक्षता में एक समिति की नियुक्ति की, जो 'पोतदार-समिति' के नाम से मशहूर हुई। इस समिति के सामने विचारार्थ और निर्णयार्थ जो समस्याएँ थीं, उनमें से यह भी एक थी कि पाठशालाओं में हिन्दी की शिक्षा किस कक्षा से शुरू की जाए। १९४० – ४१ से बम्बई राज्य में माध्यमिक पाठशालाओं की पहली (आज की पाँचवीं) कक्षा से हिन्दी की शिक्षा शुरू होती थी। पोतदार-समिति ने भी यही उचित माना और बम्बई राज्य के लिए यह समस्य हल की। अन्य अहिन्दी भाषी प्रदेशों में भी प्रायः पाँचवीं कक्षा से ही हिन्दी की शिक्षा शुरू होती है।

कुछ लोगों की राय थी कि तीसरी कक्षा से हिन्दी भाषा की पढ़ाई शुरू हो, तो कुछ कहा करते थे कि विद्यार्थी सातवीं या आठवीं कक्षा में ही हिन्दी का अध्ययन शुरू करें। इनकी राय किसी ठोस बुनियाद पर कायम नहीं की गयी थी। जिस हालत में अहिन्दी-भाषा प्रदेशों की पाठशालाओं में हफ्ते में दो-चार घण्टे हिन्दी पढ़ायी जाती है, उस हालत में विद्यार्थियों को अपनी मातृभाषा से अच्छी तरह से परिचित होना आवश्यक है। बालकों में मातृभाषा के ज्ञान की बुनियाद चार साल की शिक्षा से मजबूत होती है। शिक्षा-शास्त्रियों की इस राय को मद्देनजर करते हुए हम यों कह सकते हैं कि तीसरी कक्षा में बालकों को हिन्दी पढ़ाना शुरू किया जाए, तो वे न अपनी मातृभाषा को अच्छी तरह अपनाएँगे, न उनमें हिन्दी भाषा के ज्ञान की नींव मज़बूत डाली जाएगी। इस जल्दबाज़ी से विद्यार्थियों के सिर पर बोझ-सा आ पड़ेगा।

आठवीं कक्षा में माध्यमिक पाठशालाओं में अंग्रेज़ी का और संस्कृत का अध्ययन शुरू होता है। (अब महाराष्ट्र में पाँचवीं कक्षा में अंग्रेज़ी की शिक्षा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आरम्भ की जाती है। इसी समय और एक नयी भाषा का बोझ बालकों के मत्थे मढ़ने से उनके साथ अन्याय करना होगा। हिन्दी आधुनिक भारतीय भाषा है और अन्य भारतीय भाषाओं के नज़दीक है, इसलिए पाँचवीं कक्षा से उसकी शिक्षा आरम्भ करें। इससे सातवीं कक्षा तक विद्यार्थी हिन्दी की तीन साल शिक्षा पाएँगे। तीन वर्षों में हिन्दी से वे भली भाँति परिचित होंगे, जिससे ८ वीं कक्षा में उनको और एक भाषा की शिक्षा देने से उनपर बोझ-सा नहीं आ पड़ेगा। अब पहले चार साल तक विद्यार्थी केवल अपनी मातृभाषा की शिक्षा पाते हैं और उसके बाद पाँचवीं कक्षा में हिन्दी भाषा पढ़ाना आरम्भ होता है।

(२) **नागरी लिपि की शिक्षा** –– अहिन्दी-भाषी विद्यार्थियों को हिन्दी भाषा के साथ-साथ राष्ट्रलिपि नागरी भी अपनानी चाहिए। मराठी भाषा प्रदेश को छोड़कर बाकी सभी अहिन्दी भाषी प्रदेशों के लोग नागरी लिपि नहीं जानते – हाँ, संस्कृत की शिक्षा आठवीं या नौवीं कक्षा से शुरू होती है और वह भी कहीं-कहीं ऐच्छिक है। हिन्दी की शिक्षा पाँचवीं कक्षा से आरम्भ होनेवाली है। इससे ऐसे विद्यार्थियों को नागरी लिपि पाँचवीं कक्षा में सीखनी पड़ेगी। महाराष्ट्र राज्य में भिन्न-भिन्न भाषा-भाषी विद्यार्थियों को एक ही पाठ्यक्रम नियत अवधि के भीतर पूरा करना पड़ता है। लिपियों की भिन्नता के कारण इन विद्यार्थियों को जिस कठिनाई का सामना करना पड़ता है, उनका ज़िक्र तीसरे अध्याय में किया गया है। इस राज्य के अंग्रेज़ी, कन्नड़, तमिल आदि भाषा-भाषी विद्यार्थियों की सुविधा के लिए एक सूचना पेश की जाती है।

नागरी लिपि न जाननेवाले विद्यार्थियों को चौथी कक्षा में ही नागरी लिपि सिखायी जाए, तो लभकारी होगा। चौथी कक्षा में केवल नागरी वर्णमाला बारहखड़ियाँ, संयुक्त अक्षरों को जोड़ सिखाया जाए। शुरू में हिन्दी शब्द लिखवाने की कोई ज़रूरत नहीं। नागरी लिपि उच्चारणानुसारी है, इसलिए अध्यापक उनकी अपनी भाषा के शब्द रोज़ विद्यार्थियों से नागरी में लिखवाएँ और उनका पठन कराएँ। नागरी लिपि से परिचय और लिखने-पढ़ने का अधिक अभ्यास चौथी कक्षा के विद्यार्थी अनायास कर सकते हैं। इसलिए जब वे पाँचवीं कक्षा में आएँगे तो आसनी से नागरी अक्षर पढ़ या लिख सकेंगे। अन्यथा उन्हें पाँचवीं कक्षा में हफ्ते में जो चार-पाँच घण्टे मिलेंगे, उनमें ही लिपि सीखनी पड़ेगी। हिन्दी के अध्यापक इससे अधिक समय नहीं दे सकेंगे। मगर चौथी कक्षा के अध्यापक प्रायः सभी विषय पढ़ाते हैं, उनको अधिक समय मिलता है, वे नागरी लिपि की पढ़ाई के लिए ज्यादा समय दे सकेंगे। इस तरह काम का बँटवारा करने से पाँचवीं कक्षा में विद्यार्थियों को नयी भाषा की शिक्षा भारभूत प्रतीत नहीं होगी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पोतदार-समिति ने नागरी लिपि की शिक्षा के सम्बन्ध में स्पष्ट शब्दों में अपनी राय यों पेश की है —

'The Committee, however, want to suggest that the teaching of the Nagari Alphabet could and should be advantageously introduced in the aforesaid standards III and IV. But such regular teaching must be confined to the mastery of the Nagari Alphabet only, (' — Report, page 23, clause IV)

[जान पड़ता है, इसलिए (भूतपूर्व) बम्बई सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा प्रकाशित गुजराती प्राथमिक पाठशालाओं की भाषा की पाठ्य-पुस्तकों में से चौथी पुस्तक में कविताएँ नागरी लिपि में छपवायी थीं ।]

(३) हिन्दी-शिक्षा में श्रवण और भाषण : पठन और लेखन :—

छोटे बालकों को हिन्दी पढ़ाने के लिए किस तरीके को अध्यापक अपनाए इसके सम्बन्ध में पर्याप्त विवेचन किया गया है । वह दोनों – व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली और सम्भाषणात्मक प्रणाली – प्रणालियों की विशेषताओं का समन्वय करने की ज़रूरत महसूस करता है । उसके अनुसार अध्यापक कक्षा के कमरे में अधिक से अधिक हिन्दी का वातावरण तैयार करने की चेष्टा करता है । सम्भाषणात्मक प्रणाली बालक की मातृभाषा को अपनाने की स्वाभाविक प्रणाली का अनुसरण करती है । उसके अनुसार श्रवण के बाद भाषण और पठन के बाद लेखन आता है । अब देखेंगे कि अहिन्दी-भाषी प्रदेशों के विद्यार्थियों को हिन्दी पढ़ाने में इस सिद्धान्त को कहाँ तक स्वीकार किया जा सकता है ।

मातृभाषा को अपनाने में भाषण के पहले श्रवण क्रिया आती है । वास्तव में पाँचवीं कक्षा के विद्यार्थियों की औसत उम्र १० – ११ वर्ष होती है । इस समय तक उनकी ग्रहण-शक्ति, प्रयत्न द्वारा ज्ञानार्जन करने की शक्ति, श्रवण-शक्ति और भाषण-शक्ति पर्याप्त मात्रा में विकसित हो जाती है । शुरू में एक-एक शब्द को अपनाने में बालक को जितनी शक्ति खर्च करना पड़ती है, उतनी १० – ११ साल के विद्यार्थी को नहीं । १० – ११ साल उम्र का विद्यार्थी एक बार सुनने से ही शब्द ध्यान में रखने में और उसका प्रयोग करने में समर्थ होता है । सिद्धान्त की दृष्टि से हम यहाँ तक मानते हैं कि अध्यापक बालकों को हिन्दी शब्द पहले सुनाएगा और उसका अनुकरण करते हुए सुनने के बाद – विद्यार्थी शब्दों का उच्चारण करेंगे । पहले विद्यार्थी शब्दों को सुनेंगे नहीं, तो भाषा को वे कैसे अपनाएँगे ? उस दृष्टि से श्रवण के बाद भाषण आ सकता है, मगर श्रवण के बाद दूसरे ही क्षण वह आ जाएगा । हिन्दी सुनकर विद्यार्थी बोलेंगे । इसमें अधिक खींचातानी के लिए कोई गुंजाइश नहीं है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हिन्दी को अपनाते हुए विद्यार्थी नागरी लिपि भी सीखते जाते हैं, या कुछ विद्यार्थी नागरी लिपि को पहले से ही जानते हैं । इसलिए 'पठन पहले और लेखन बाद' सिद्धान्त का भी अवलम्बन करने की जरूरत नहीं। दोनों क्रियाएँ साथ-साथ चल सकती हैं। एक बार नागरी लिपि का परिचय होने के बाद विद्यार्थी लेखन और पठन दोनों का अभ्यास करते रहेंगे। कभी अध्यापक फलक पर लिखेंगे और विद्यार्थी पढ़ेंगे, तो कभी विद्यार्थी स्वयं कुछ वाक्य लिखेंगे और उसके बाद पढ़ेंगे । हिन्दी सीखनेवाले विद्यार्थी कम-से-कम अपनी मातृभाषा में पठन-लेखन जानते हैं, इसलिए उन्हें लेखन और पठन का अभ्यास करने में कोई कठिनाई नहीं अनुभव होती। सुनी हुई ध्वनियों से अर्थ-ग्रहण करना, अनुकरण द्वारा उन्हीं ध्वनियों का निर्माण करना, पढ़ी हुई ध्वनियों से अर्थ-ग्रहण करना या ध्वनियों को लिपि-चिह्नों में अंकित करना आदि कार्यों के लिए आवश्यक शक्तियों का बालक में विकास हुआ होता है। इसलिए वह शीघ्र गति से प्रगति कर सकता है। कन्नड़, तमिल, तेलुगु, अंग्रेज़ी आदि भाषाओं के माध्यम से जहाँ हिन्दी पढ़ायी जा रही होगी, वहाँ शुरू में मौखिक पढ़ाई पर पहले अधिक बल दिया जाए । इस तरह वहाँ श्रवण और भाषण का महत्त्व लेखन और पठन से अधिक माना जाए।

(४) **प्रारम्भिक पाठों का चुनाव** — असल में उच्च कक्षाओं में पढ़ाना उतना कठिन नहीं है, जितना कि प्रारम्भिक कक्षा में। इसलिए उनके पाठों का चुनाव करते समय कई बातें अध्यापक को ध्यान में रखनी चाहिए। विद्यार्थियों का साधारण ज्ञान, उनकी ग्रहण-शक्ति, उनका भाषा-ज्ञान, उनकी रुचियाँ आदि-को अध्यापक ध्यान में रखे और अपने पाठ तैयार करे। पाठों की रचना करते समय अध्यापक 'सुगमता से कठिनता' की ओर, 'ज्ञात से अज्ञात' की ओर, 'मूर्त से अमूर्त' की ओर जाए। इस तरह की क्रमबद्धता (gradation) पर पाठों की सफलता निर्भर है। यह क्रमबद्धता शब्द, वाक्य-रचना, पाठ्य-विषय, व्याकरण आदि सभी बातों में आवश्यक है। इसलिए हरएक पाठ में किसी एक या दो को प्रधानता दी जाए। छः महीनों की पढ़ाई के बाद इस क्रम में परिवर्तन करने से विद्यार्थियों को अधिक कठिनाइयों का सामना नहीं करना पड़ेगा।

यहाँ हरएक के सम्बन्ध में क्रमगत पाठ्य विषय की रूपरेखा स्पष्ट की गयी है।

(अ) **शब्द : कक्षा का कमरा — संज्ञा :** मेज़, कुर्सी, फलक, अलमारी, तसवीर, खिड़की, किताब आदि । **विद्यार्थी के पास की वस्तुएँ :** कमल, बस्ता, कमीज़ आदि । **पाठशाला से** सम्बन्धित वस्तुओं के नाम, घर से सम्बन्धित वस्तुओं के नाम ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पहले जाति-वाचक संज्ञाएँ और बाद में व्यक्ति-वाचक, द्रव्य-वाचक, समूह-वाचक तथा अन्त में भाववाचक संज्ञाएँ पढ़ायी जाएँ।

सर्वनाम –– (१) यह – वह, ये – वे (२) तू, तुम, आप (३) मैं, हम।

पुरुष-वाचक और निश्चय-वाचक सर्वनामों के बाद ही सम्बन्ध-सूचक सर्वनाम (जो) आएँगे। प्रश्नों में प्रश्नार्थक सर्वनामों (कौन, क्या) का पहले ही प्रयोग किया जाता है।

विशेषण –– संख्या-वाचक (इसमें भी पूर्णांक-सूचक पहले और उसके बाद अपूर्णांक-सूचक, आवृत्ति-सूचक आदि आएँगे।)

गुण-विशेषण (पहले रंग सूचित करनेवाले – लाल, काला आदि; उसके बाद स्वरूप-दर्शक : मुलायम, मोटा, लम्बा चौड़ा आदि)

क्रियाएँ –– चलना, बैठना, उठना, लिखना जैसी क्रियाएँ शुरू में हों, जो प्रत्यक्ष क्रिया द्वारा सूचित की जा सकती हैं; उनके बाद पूछना, सोचना आदि क्रियाएँ आएँगी। संयुक्त क्रियाओं का प्रयोग शुरू में न पढ़ाया जाए।

क्रिया-विशेषण –– स्थल-वाचक और काल-सूचक के बाद अन्य प्रकार के क्रिया-विशेषण आएँगे।

सम्बन्ध-सूचक अव्यय –– ऊपर, नीचे, बाहर, अन्दर जैसे अव्ययों के बाद–बाद, सिवा, बिना, बनिस्बत जैसे शब्द आ जाएँ। अवस्था-सूचकों को आसानी से स्पष्ट किया जा सकता है।

संयोग-सूचक अव्यय –– और, मगर, लेकिन, परन्तु, या। संयोग-सूचक के बाद विरोध-दर्शक तथा विकल्प-सूचक अव्यय बतलाये जाएँ।

या – या, अगर – तो, बल्कि, न...न आदि के प्रयोग कठिन हैं, वे उच्च कक्षाओं में पढ़ाये जाएँ।

वचन — एकवचन संज्ञाओं के बाद बहुवचन संज्ञाएँ।

पहले पुंलिंग संज्ञाओं के बहुवचन और अनन्तर स्त्रीलिंग संज्ञाओं के। कारकों में भी यही क्रम रखा जाए।

कारक-चिह्न — में, पर, से (करण पहले और बाद में अपादान), को (कर्म, संप्रदान); का-की-के आदि।

'ने' सबके बाद आएगा।

यहाँ भी एकवचन में कारक-चिह्नों का प्रयोग पहले बतलाया जाए और उसके बाद बहुवचन में।

काल — वर्तमान-काल, भविष्यत्-काल भूतकाल। भूतकाल में भी पहले सामान्य-भूत, उसके बाद पहले अकर्मक क्रियाओं का और अन्त में सकर्मक क्रियाओं का प्रयोग आएगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अपूर्ण वर्तमान-काल और अपूर्ण भूतकाल।

अर्थ —आज्ञार्थ के बाद विध्यर्थ और अन्त में संकेतार्थ। जहाँ तक हो, संकेतार्थ और विध्यर्थ पाँचवीं कक्षा में न पढ़ाये जाएँ। आज्ञार्थ में पहले अ-कारान्त धातुएँ (चल, पढ़ आदि) और बाद में आ-कारान्त (खा, ला आदि) तथा अन्य आएँगी।

(ब) वाक्य — (१) विधानात्मक, प्रश्नार्थक, आज्ञार्थक, अन्त में इच्छासूचक और उद्गार-सूचक। इनमें स्वीकार-सूचक (affirmative) के बाद निषेधसूचक (negative) वाक्य आएँगे।

साधारण वाक्य (simple sentence) के बाद संयुक्त वाक्य (compound sentence) और अन्त में मिश्र वाक्य (complex sentence) होगा। संयुक्त और मिश्र में आरम्भ में दो से अधिक उपवाक्य न हों।

(क) पाठ्य-विषयों की दृष्टि से भी विद्यार्थियों को अध्यापक 'सुलभता से कठिनता की ओर' ले जाए। हिन्दी की पहली पुस्तक में (पाँचवीं कक्षा की पाठ्य पुस्तक में) कहानियाँ, वर्णनात्मक निबन्ध, बातचीत के पाठ ही अधिक होने चाहिए। विद्यार्थियों के परिचित विषयों पर पाठ पढ़ाये जाएँ —जैसे— कक्षा का कमरा, पाठशाला, घर, क्रीडांगण, मित्र-परिवार, दिनचर्या, गाय, कुत्ता जैसे पालतू जानवर, गाँव, किसान, डाकघर आदि। विवेचनात्मक पाठ उच्च कक्षा के विद्यार्थियों के लिए उपयुक्त होंगे। तत्त्वबोध कराने के लिएकहानी या सम्भाषणात्मक पाठ का उपयोग किया जाए।

यहाँ पाँचवीं कक्षा के उपयुक्त कतिपय प्रारंभिक पाठों की रूपरेखा दी है, जिससे ऊपर लिखी बातें स्पष्ट होगी। एक-एक पाठ में कुछ ऐसी बातें पढ़ायी गयी हैं, जिससे विद्यार्थी वाक्य-रचना कर सकेंगे। प्रत्यक्ष कक्षा में पढ़ाते समय अध्यापक यहाँ बतलाये हुए हर एक पाठ के ढंग पर आवश्यकतानुसार और दो-दो, तीन-तीन पाठ बना लें।

पाठ १ — १. यह, वह, है: २. कुछ जातिवाचक संज्ञाएँ (जैसे मेज़, कुर्सी, पुस्तक, दरवाज़ा आदि) ३. तीन-तीन शब्दों के साधारण वाक्य। (जैसे--यह मेज़ है, वह पुस्तक है, इ.।) ऐसे पाठों में अध्यापक **यह** और **वह** का फर्क स्पष्ट करके पास की कई वस्तुओं के नाम बताकर जातिवाचक संज्ञाओं का विद्यार्थियों को परिचय करा दें। ये संज्ञाएँ एकवचन में ही हों।

पाठ २ -- १. 'क्या' का प्रयोग (प्रश्न और उत्तर), २. कुछ जातिवाचक संज्ञाएँ। संज्ञाओं को चुनते समय ऊपर लिखी हुई बातें ध्यान में रखें।

पाठ ३ — १. क्या, कौन, कितने (प्रश्न और उत्तर), २. व्यक्तिवाचक संज्ञाओं का प्रयोग, ३. बहुवचन में पुंलिग संज्ञाएँ; ४. 'हैं' क्रिया ५. पहले पढ़ायी गयी संज्ञाओं का बहुवचन में प्रयोग कराया जाए। ६. संख्यावाचक विशेषण।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पाठ ४ — स्त्रीलिंग संज्ञाओं के बहुवचन, कितनी (प्रश्नार्थक), पुंलिग संज्ञाओं के बहुवचन के प्रयोग का अभ्यास, संख्यावाचक विशेषण।

पाठ ५ — किसका – किसकी – किसके (प्रश्न में), का, की, के – कारक – चिह्न सिर्फ एकवचन में।

पाठ ६ — १. कहां (प्रश्नार्थक, २. में, पर (कारक-चिह्न) सिर्फ एकवचन में, ३. नहीं (निषेधसूचक)।

पाठ ७ — १. मैं, हम (उत्तम पुरुषवाचक सर्वनाम दोनों लिंगों में), २. 'होना' क्रिया के आवश्यक रूप, ३. लिखना, पढ़ना, बैठना आदि क्रियाओं का उत्तम और अन्य पुरुष में प्रयोग, ४. मेरा – री – रे, हमारा – री – रे, मुझको – हमको, मुझे – हमें, ५. और, ६. कुछ काल-सूचक शब्द।

पाठ ८ — १. तू, तुम, आप (दोनों लिंगों में), २. 'होना' क्रिया के आवश्यक रूप, ३. कुछ और कियाएँ, ४. सर्वनामों की कारक-रचना, ५. पर, लेकिन, अब, इधर, उधर जैसे अव्यय।

पाठ ९ — आज्ञार्थ : कक्षा का कमरा, कक्षा का कामकाज (बातचीत के रूप में)।

पाठ १० — विद्यार्थी की दिनचर्या, बहुवचन में कारक-रूप, 'बजे' का प्रयोग, **यह-वह** की कारक-रचना, कुछ गुण-विशेषण; दिनों के नाम।

पाठ ११ — १. पाठशाला, २. **वे, ये** की कारक-रचना, बहुवचन में कारक-रूप, ३. कुछ संज्ञाएँ और क्रियाएँ, ४, कुछ गुण-विशेषण, ५. आना, पूछना, कहना आदि के प्रयोग की विशेषताएँ, ६. दिनों और महीनों के नाम।

पाठ १२ — १. शरीर के अवयव और उनके कार्य, २. आवश्यक संज्ञाएँ और क्रियाएँ (देखना, चूसना, सूंघना, सुनना आदि), ३. बहुवचन में कारक-रूप, ४. अवयव-सूचक शब्दों के प्रयोग की विशेषता।

पाठ १३ — कुत्ता या गाय जैसे किसी पालतू जानवर का वर्णन, जिसमें नीचे लिखे प्रयोग आएँगे, – १. दौड़ने लगना, घूमने जाना जैसे प्रयोग, २. 'कर' प्रत्ययान्त कृदन्तों का प्रयोग, ३. 'चाहिए' क्रिया का प्रयोग, ४. – से डरना, – की मदद करना, – से प्रेम करना, – का उपकार करना आदि के प्रयोग।

पाठ १४ — भविष्यत्-काल में पहले अ-कारान्त धातुएँ, उनके वाद आ-कारान्त और अन्य धातुएँ। अन्त में **ले, दे** आदि।

पाठ १५ — भूतकाल – अकर्मक किया आदि।

× × × ×

यहाँ जिन पाठों की रूपरेखा दी है, उनसे यह स्पष्ट होगा की विद्यार्थियों के भाषा-ज्ञान का **क्रमशः** विकास कैसे करना चाहिए। हरएक पाठ में पढ़ायी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हुई रचनाओं के अभ्यास का प्रबन्ध करके, कुछ नयी जानकारी दी जानी चाहिए। चित्रों और प्रत्यक्ष कृति से नये शब्दों का परिचय कराएँ और दोहरावट से शब्दों और वाक्य-रचना के ज्ञान को विद्यार्थियों में कायम करने की कोशिश करें। सम्भाषण पर अधिक ज़ोर दिया जाए। शब्द कण्ठस्थ करा लें और अध्यापक उनसे रोज़ कुछ लिखवाएँ। पाठ्य-पुस्तक में दिये गये विविध 'स्वाध्याय' विद्यार्थी कक्षा में हल करेंगे और घर पर से लिख लाएँगे। व्याकरण के पारिभाषिक शब्दों की झंझट में विद्यार्थियों को न घसीट ले जाएँ।

ऐसे प्रारम्भिक पाठों में नीचे लिखी बातों को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाए — (१) शब्दों का चयन : उपयोगिता, प्रत्यक्ष वस्तुओं के नाम, परिचय कराने में आसानी। (२) पुनरावृत्ति या दोहरावट : व्यक्तिगत तथा समूह-गत, (३) पाठ : उपकरणों का समुचित प्रयोग। (४) प्रश्न और उत्तर : बातचीत। (५) ज्ञानेन्द्रियों पर संस्कारों की बहुलता। (६) बालकों की क्रिया-शीलता का समुचित उपयोग कर लेना, आदि।

इस विवेचन से ध्यान में आएगा कि हिन्दी के प्रारम्भिक पाठों का क्या स्वरूप होना चाहिए।

विद्यार्थी-अध्यापक को पाठ की तैयारी करते समय अपने पाठ की टिप्पणी (lesson-note) भी बना लेनी पड़ती है। हरबार्ट आदि शिक्षा-शास्त्रियों ने उसका विशिष्ट शिल्प-विधान बना दिया है। उसकी जानकारी पाना हरएक विद्यार्थी-अध्यापक को आवश्यक है। इसलिए आगे के कुछ पृष्ठों में 'अध्यापन-कला' का परिचय कराया गया है।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: १० :

पाठ की तैयारी - १

(१) **आवश्यकता** – एक सफल अध्यापक से पूछा गया, 'आपने अध्यापन-कला में जो सफलता पायी है, उसका क्या रहस्य है ?' अध्यापक महाशय ने कहा, 'अध्यापक के नाते मैं कहाँ तक सफल रहा हूँ, इसके सम्बन्ध में मैं तो कुछ नहीं कह सकता। फिर भी अगर मुझे कुछ अंश तक सफलता मिली हो, तो उसका रहस्य मैं अपने पाठ की जो तैयारी करता हूँ, उसी में है। अपने विषय के बारे में अधिक-से-अधिक ज्ञान पाने की कोशिश करता हूँ। जिन विद्यार्थियों को पाठ पढ़ाना है, उनको वह पाठ कैसे पढ़ाया जा सकता है, इसका पूरा विचार करने की चेष्टा करता हूँ, — यही मेरे उपकरण हैं।'

इन शब्दों में अध्यापन-कला का मर्म बतलाया गया है। इसका विश्लेषण करने से मालूम होता है कि इसमें दो बातें प्रमुख हैं — १. क्या पढ़ाएँ ? — प्रत्यक्ष पाठ या पाठ्य-विषय का ज्ञान ; और २. कैसे पढ़ाएँ ? – पद्धति या कला की जानकारी दोनों बातों में अध्यापक की योग्यता पर उसकी सफलता निर्भर है। इसलिए हर अध्यापक को पाठ पढ़ाने के पहले आवश्यक तैयारी करनी चाहिए। हाँ, यह सही है कि कई दिनों के अध्यापन के बाद निम्न कक्षाओं में वही विषय पढ़ानेवाले अध्यापकों को नौसिखुए विद्यार्थी-शिक्षक (pupil-teacher) की भाँति विस्तार के साथ पाठ की टिप्पणियाँ बनाने की कोई आवश्यकता नहीं है। पाठ पढ़ाने के पहले उसे पढ़कर उसके अध्यापन के सम्बन्ध में पाँच-दस मिनिटों में विचार करने से भी काम बन सकता है, फिर भी नित्य पढ़ाते रहने से और 'विषय कैसे समझाया जाए ?' इसके सम्बन्ध में विचार करते रहने से अध्यापक की योग्यता भी बढ़ेगी और उतनी मात्रा में विद्यार्थियों को भी अधिक लाभ पहुँचेगा। वास्तव में अध्यापक को चाहिए कि पाठ की पूर्व-तैयारी न करते हुए वह कक्षा के कमरे में कदम भी न रखे। पाठशालाओं में ऐसे उदाहरण कम नहीं होते हैं, जिनमें देखा जाता है कि अध्यापक तैयारी न करते हुए कक्षा में जाता है और विद्यार्थियों द्वारा पूछे गये प्रश्नों के जवाब नहीं दे सकता, उनकी शंकाओं का समाधान नहीं कर सकता। ऐसा अध्यापक हमेशा ही विद्यार्थियों के लिए हँसी-दिल्लगी का विषय बनता है। उसको छात्रों पर काबू रखने और अनुशासन रखने की समस्या भी कठिन मालूम होती है। ध्यान में रखिए

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कि विद्यार्थी अपने अध्यापकों के कार्य की परख कर सकते हैं। विवेकशील विद्यार्थी तुरन्त पहचानते हैं कि कौन अध्यापक कितने पानी में है।

अध्यापक को कक्षा में आत्मविश्वास के साथ पढ़ाना चाहिए। यह तभी सम्भव होगा जब वह पाठ की पूर्ण तैयारी करके ही अपना काम शुरू करेगा। आत्म-विश्वास के अभाव में कोई भी काम अच्छी तरह से पूर्ण नहीं किया जा सकता। उसके अभाव में अध्यापक धाराबाही भाषा में बोल तक नहीं सकेगा। इसलिए हरएक बात की पूर्ण तैयारी करना उसका कर्तव्य है।

(२) **प्राथमिक तैयारी : कौन-सी ? (अ) विषय-ज्ञान — क** – कक्षा में जो पाठ पढ़ाना है, अध्यापक उसे अच्छी तरह से पढ़े। यह भी देखा जाए कि उसका प्रत्येक वाक्य, शब्द उसे स्पष्ट हुआ है या नहीं। उसे पाठ के कठिन शब्दों, मुहावरों का अर्थ आसान भाषा में देने की तैयारी करनी चाहिए।

ख — पाठ में कोई ऐतिहासिक, पौराणिक, राजनैतिक घटना आदि का उल्लेख हो, तो उसकी जानकारी प्राप्त करे। कक्षा में अगर ऐसे उल्लेखों को स्पष्ट नहीं किया जाएगा, तो पाठ की पढ़ाई पूरी नहीं मानी जाएगी।

ग — विद्यार्थी क्या शंकाएँ उपस्थित कर सकेंगे इसपर पहले से विचार करके, उनमें से जो विचार में लेने लायक हों, उनका समाधान करने की तैयारी पहले से की जाए।

घ — ऊँची कक्षाओं में पढ़ाते वक्त पहले वह पाठ के लेखक का परिचय देने की तैयारी करे तथा साहित्य के प्रकार का शिल्प-विधान आदि की विशेषताएँ जान ले।

ङ — अध्यापक पाठ अच्छी तरह से पढ़कर सुनाने की तैयारी करे। कहानी हो तो प्रभावकारी ढंग से कहने का अभ्यास करे।

च — व्याकरण जैसे विषय में जो बारीकियाँ होती हैं, उनपर वह गौर करे, समुचित उदाहरणों की सूची बना ले।

छ — पाठ के विषय के सम्बन्ध में, मगर पाठ में न दी हुई कुछ बातें अध्यापक अगर बता सके, तो विद्यार्थियों को वह जानकारी दिलचस्प मालूम होती है वैसी जानकारी भी प्राप्त करने की कोशिश की जाए।

(ब) पाठ का चयन — आम तौर पर अध्यापकों को पाठ्य-पुस्तक में से ही पाठ चुनने पड़ते हैं। पाठशाला में जो हिन्दी के लिए पाठ्य-पुस्तक नियत की जाती है, उसमें से पाठ पढ़ाये जाते हैं। फिर भी पाठ-पद्धति आदि बातों की तैयारी करने में कई बातों की जानकारी अध्यापक को रखनी चाहिए। अध्यापन-विद्यालय के विद्यार्थी – शिक्षकों के लिए इसकी नितान्त आवश्यकता है। अपनी पाठ की टिप्पणी में इन बातों की जानकारी वह लिखे। इनका ब्योरा नीचे लिखे अनुसार है —

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१. पाठशाला का नाम, २. कक्षा और विभाग, ३. छात्र-अध्यापक का नाम, ४. तारीख, ५. घण्टा (period) ६. समय : मिनिटों में, ७. विषय और उप-विभाग, ८. विद्यार्थियों की औसत उम्र, ९. पाठ का उद्देश्य, १० विद्यार्थियों का पूर्वज्ञान, ११. उपकरण या सामग्री।

इनमें से १. पाठशाला का नाम, २. छात्र-अध्यापक का नाम, ३. तारीख, ४. विषय और उप-विभाग सिर्फ साधारण महत्त्व रखते हैं। हिन्दी पढ़ानेवाला अध्यापक विषय – हिन्दी और उप-विभाग में गद्य, कविता, कहानी आदि आवश्यकता के अनुसार लिखे।

उसके बाद १. कक्षा, २. विद्यार्थियों की औसत उम्र और ३. विद्यार्थियों का पूर्वज्ञान – इन सबकी जानकारी पाठ के चयन में सहायक होगी। इनसे अध्यापक यह जान सकता है कि (क) विद्यार्थियों का सामान्य ज्ञान कितना है ? (ख) उनकी ग्रहण-शक्ति का विकास कहाँ तक हुआ है ? (ग) भाषा पर उनकी कितनी प्रभुता है ? इस जानकारी से वह यह तय कर सकेगा कि अपने सामने जो पाठ हैं, उनमें से कौन-सा पाठ विद्यार्थियों को रोचक लगेगा, उनको कौन-से शब्द, विचार या कल्पनाएँ कठिन मालूम होंगी और पूर्वज्ञान से नये ज्ञान का सम्बन्ध कैसे स्थापित किया जा सकता है। अपने पाठ की व्याप्ति भी वह तय कर सकता है। उदा :—१. व्याकरण के पाठ के समय विद्यार्थी संज्ञा और सर्वनाम जानते हों, तो उसे विशेषण के सम्बन्ध में पाठ लेना उचित प्रतीत होगा। पाँचवी कक्षा में 'किसान' पर निबन्ध लिखाना हो, तो निबन्ध में उसके काम का वर्णन करना होगा, जो दस-बारह पंक्तियों तक लिखा जाएगा। उसमें भारतीय किसानों की आज की स्थिति और राष्ट्रीय जीवन में किसानों का स्थान आदि बातों की चर्चा करना बेकार होगा। श्री भगवतीचरण वर्मा की 'भैंसा-गाड़ी' या श्री बच्चनजी की 'माँझी' कविता अच्छी होने पर भी सातवीं कक्षा में उत्साही अध्यापक भी नहीं पढ़ा सकेगा। प्रसाद की 'बिसाती', 'देवरथ', जैसी कहानियों कोनौवीं, दसवीं कक्षाओं की भी पाठ्य-पुस्तकों में स्थान देना इष्ट नहीं होगा। तो दसवीं कक्षा के विद्यार्थियों को कौए-चिड़िया की मामूली कहानी बिलकुल रोचक नहीं मालूम होगी।

घण्टा (period) कितने मिनटों का है, यह जानकर हम पाठ की लम्बाई तय कर सकेंगे। विद्यार्थी-अध्यापकों के लिए पाठ ३० – ३५ मिनिटों के होते हैं। उन्हें दस-बारह, अधिक से अधिक पंद्रह पंक्तियों का ही विभाग चुनना चाहिए। उसी तरह हिन्दी के लिए पाठशाला का अन्तिम घण्टा हो, तो उसमें पढ़ाने के लिए व्याकरण या विवेचनात्मक निबन्ध की अपेक्षा कोई दिलचस्प कहानी ही चुनना अधिक ठीक होगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सम्भाषणात्मक प्रणाली द्वारा पढ़ाते समय अध्यापक बालकों की अधिक-से अधिक ज्ञानेंद्रियों पर संस्कार करना चाहता है। वह वस्तु और शब्द में सीधा सम्बन्ध प्रस्थापित करना चाहता है। इसलिए आवश्यकता के अनुसार उसे पाठ में नक्शे, चित्र, मॉडेल, प्रत्यक्ष वस्तु आदि का उपयोग करना चाहिए। झाड़न खड़ी जैसी चीजें अध्यापक के पास हमेशा हुआ करती हैं, उनके नाम लिखने की पाठ कोई ज़रूरत नहीं। बालकों की ग्रहण-शक्ति का जिनसे विकास होगा, जिनसे उस में एक तरह की रोचकता आ जाएगी, उन्हीं उपकरणों को कक्षा में ले जाना होगा और उनके नाम नोट में लिखने होंगे। गाय, पालतू या जंगली जानवर, खेतीबाड़ी, बगीचा आदि विषयों पर लिखे जानेवाले निबन्धों में उनके चित्र सहायक होंगे। कहानी के पाठ में कहानी में वर्णित किसी घटना का चित्र उपयुक्त होगा।

(ख) पाठ का उद्देश्य — अध्यापक पहले यह तय करे कि वह क्या करने जा रहा है। अगर उसके पाठ का उद्देश्य उसके अपने ही ध्यान में न आया हो, तो आखिर वह बालकों को किस बात की ओर प्रवृत्त करेगा ? निरुद्देश्य कार्य म सफलता-असफलता का क्या मूल्य है ? यह उद्देश्य वह कैसे लिख दे ? 'हिन्दी भाषा सिखलाना', 'हिन्दी भाषा का ज्ञान बढ़ाना', 'महात्मा गांधीजी की जीवनी पढ़ाना', 'वाच्य-परिवर्तन पढ़ाना'— जैसे शब्द-प्रयोग कुछ सदोष दिखायी देते हैं। 'हिंदी भाषा पढ़ाना' — यह तो बिल्कुल संदिग्ध है। 'पढ़ाना', 'सिखाना' क्रियाओं का भी कम से कम प्रयोग किया जाए। बालक स्वयं अध्यापक के मार्गदर्शन में ज्ञानार्जन करते हैं। वे समझ लेने की चेष्टा करेंगे और अध्यापक उनकी मदद करेंगे। इसलिए यों लिखा जाए — 'महात्मा गांधी के जीवन की कुछ घटनाएँ समझ लेने में बालकों की मदद करना', 'वाच्य-परिवर्तन की पद्धति अपना लेने में विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करना', 'पाठशाला के मैदान पर जो कुछ चलता है उसका वर्णन करने में बालकों की सहायता करना', 'बालकों को सियार और ऊँट की कहानी सुनाकर बालकों से कहलवाना और उनकी कथन शक्ति का विकास करने की कोशिश करना' आदि।

पाठ के चयन और ऊपर दी हुई बातों की तैयारी के बाद कक्षा में अध्यापक जो कार्य करेगा, उसकी रूपरेखा वह पहले से टिप्पणी के रूप में कैसे तैयार करे, इसकी जानकारी आगे के कुछ पृष्ठों में दी जा रही है।

(ङ) पाठ की टिप्पणी तैयार करना

" Class teaching is not a natural process and therefore has had to develop a special technique to cope with artificial conditions..... As a matter of fact, however, school conditions commonly destroy that natural atmosphere which stimulates the child to ask questions......The teacher has by art, therefore, to

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

awaken that natural questioning frame of mind which the unnatural school situation tends to crush."

— 'Matter and Method in Education.'

कक्षा की चहारदीवारी के भीतर कई बालकों को सामूहिक रूप से पढ़ाना कोई स्वाभाविक कार्य नहीं है; अतः उस अप्राकृतिक अवस्था में अध्यापक को अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए इस 'अभिनव कला' का निर्माण करना होगा। जिस खुले वायु-मण्डल द्वारा बालकों की जिज्ञासा को प्रोत्साहन मिलता है और जिसकी पूर्ति के लिए वे यत्न करने लगते हैं, पाठशाला की अनेक पाबन्दियों के बीच वैसे वातावरण का कायम रहना असम्भव दिखायी देता है। इसलिए अपनी अध्यापन-कला द्वारा अध्यापक को बालकों की उस जिज्ञासा को जागृत करने और उसकी पूर्ति करने के लिए यत्नशील होना चाहिए।

पिछली सदी में इस समस्या को हल करने का प्रयत्न शिक्षा-शास्त्रियों ने किया और एक अभिनव प्रणाली का निर्माण और विकास करने की चेष्टा की। **हरबार्ट** और उनके शिष्यवर **झिलर, वुल्हेल्म रेन्** जैसे शिक्षा-शास्त्रियों ने उसकी रूपरेखा तैयार की। अमरिका में भी **डेगार्मो, मँग्मरी** आदि ने इसका काफी प्रचार किया। 'हरबार्ट-पद्धति' का जिस अति उत्साह से प्रचार किया गया, उसकी प्रतिक्रिया में उसकी उतनी ही कटु आलोचना भी की गयी; फिर भी उसके मूलभूत सिद्धान्तों को चारों ओर अपनाया गया। जिस विश्व-विख्यात शिक्षा-शास्त्रज्ञ **पेस्टालाझी ने** पिछली सदी में कहा था, 'I wish to psychologize education (मैं शिक्षा-शास्त्र को मनोवैज्ञानिक बनाना चाहता हूँ)' और शिक्षा के क्षेत्र में मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण उपस्थित किया, उसकी परम्परा में हरबार्ट ने अपनी प्रणाली का निर्माण किया। बालक के सर्वांगीण विकास के लिए हरबार्ट ने एक तर्कशुद्ध रूपरेखा तैयार की। उसमें ये सिद्धान्त हैं — (१) नयी जानकारी या विचार प्रस्तुत करने के पहले उसमें स्पष्टता (clearness) चाहिए। (२) पहले विचारों से नये विचारों का साहचर्य (association) चाहिए। (३) जो पढ़ाया जाता है, उसमें तर्कशुद्ध संगति (system) चाहिए। (४) जो नया ज्ञान विद्यार्थियों द्वारा सम्पादित किया जाता है, उसका उपयोजन (application) चाहिए। हरबार्ट की बतलायी हुयी इस रूपरेखा में आवश्यकतानुसार परिवर्तन करके **झिलर** आदि उसके शिष्यवरों ने यह रूपरेखा बनायी, जिसे '**हरबार्ट की पंचपदी**' कहा जाता है।

हरबार्ट की 'पंचपदी'

(१) Preparation : प्रस्तावना (इसे प्रस्ताव, पूर्व-तैयारी, विषय-प्रवेश आदि नाम भी दिये जा सकते हैं।)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(२) Presentation : विषय-विवेचन या प्रतिपादन, स्पष्टीकरण
(३) Recapitulation : संकलन या आवृत्ति
(४) Generalization : सार, सिद्धान्तीकरण
(५) Application : उपयोजन या कक्षापाठ

इससे स्पष्ट होता है कि 'स्पष्टता' (clearness) को प्रस्तावना (preparation) और विषय-विवेचन (presentation) में विभाजित किया गया है। विद्यार्थियों को स्पष्ट रूप से यह जानकारी देनी चाहिए कि वे क्या करने जा रहे हैं, इसलिए प्रस्तावना के अन्त में अध्यापक को पाठ का उद्देश्य स्पष्ट करना चाहिए। 'हेतु कथन' (statement of aim) कोई स्वतंत्र विभाग नहीं है, प्रस्तावना का अन्तिम और विषय-विवेचन के आरम्भ का 'पद' है। उसी तरह भाषा के हरएक पाठ में किसी 'सिद्धान्त की स्थापना' होती ही है, सो नहीं। इसलिए उसे स्वतंत्र न मानते हुए हम उसे अगर संकलन के अन्तर्गत ही मानें, तो ठीक होगा। मगर व्याकरण के पाठों में उसका अवलम्बन करना चाहिए। कक्षा में जो पढ़ाया जाता है, उसे स्थायी करने के लिए, घर पर स्वतंत्र रूप से करने के लिए कुछ गृहपाठ या स्वाध्याय (assignment) भी देना ज़रूरी है, इसलिए उपयोजन (application) के अन्त में स्वाध्याय को भी स्थान दिया गया है। इस तरह आम तौर पर हमारे हिन्दी के पाठों की रूपरेखा में निम्म-लिखित विभाग होते हैं —

(१) अ – प्रस्तावना, ब – हेतुकथन, (२) विषय-विवेचन, (३) संकलन, (४) उपयोजन, (५) स्वाध्याय।

अब इनमें से हरएक के सम्बध में अधिक जानकारी दी जा रही है :—

(१) प्रस्तावना

— 'प्रस्तावना' हरएक पाठ का नितान्त आवश्यक तथा महत्त्वपूर्ण विभाग है। अगर यों कहा जाए कि 'प्रस्तावना' की सफलता पर अध्यापक की आधी सफलता निर्भर है, तो अत्यक्ति नहीं होगी।

आवश्यकता — (१) विद्यार्थियों का अवधान पाठ के पहले, अध्ययन में नहीं होता। अगर दूसरे या अन्य किसी घण्टे में अध्यापक पाठ पढ़ाए तो तब तक उनका अवधान हिन्दी के पहले जो विषय पढ़ाया गया है, उसके वातावरण में होता है। पाठ की ओर तो अवधान होना ही चाहिए, इसलिए प्रस्तावना द्वारा अध्यापक विद्यार्थियों का अवधान अपने विषय की ओर खींचना चाहता है। (२) विद्यार्थियों की मनोभूमिका तैयार करने के लिए भी प्रस्तावना सहायक होती है। विद्यार्थियों से किसी विषय पर बातचीत शुरू करते हुए अध्यापक उनके मन में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जिज्ञासा को जागृत करता है, **विचारशक्ति को प्रोत्साहित करने की** चेष्टा करता है। आगे चलकर ऐसे विचारों से नयी कल्पना की ओर वह बढ़ता है और साहचर्य का निर्माण करता है। तभी विद्यार्थी नये ज्ञान की प्राप्ति के लिए उत्सुक हो उठते हैं। इससे अध्यापक बालकों को लेकर विषय में आसानी से प्रवेश कर सकता है। (३) निम्न कक्षाओं में नये शब्दों का परिचय कराने के लिए भी प्रस्तावना का उपयोग किया जाता है।

समय — प्रस्तावना यद्यपि पाठ का महत्त्वपूर्ण विभाग है, तथापि उसमें अधिक समय खर्च करना ठीक नहीं होगा। ३० मिनटों के पाठ में उसके लिए पाँच-छः मिनटों से अधिक अवधि नहीं देनी चाहिए।

प्रस्तावना कैसे करें ? — (१) आम तौर पर प्रस्तावना प्रश्नोत्तर द्वारा की जाती है। प्रश्न के पहले कोई बात कही जाए, तो ठीक होगा। जैसे —'बगीचा' पाठ पाँचवीं कक्षा में पढ़ाना है। पाठ वर्णनात्मक है। इसकी प्रस्तावना यों की जा सकती है —

'शाम को लोग घूमने जाते हैं। तुम कहाँ घूमने जाते हो ?' (यहाँ कथन के बाद प्रश्न किया गया है।)

(२) बालकों को चित्र दिखाकर और चित्र में दिखलायी हुई वस्तुओं के सम्बन्ध में प्रश्न करके–जैसे —

'यह चित्र ध्यान से देखो। (कुछ क्षण ठहरकर) इसमें तुम क्या देखते हो ?' (या – यह क्या है ?)

(३) पाठ के विषय से सम्बन्धित विषय के बारे में बातचीत शुरू करके – जैसे – तुम्हारे भोजन में कौन-कौन-सी चीज़ें होती हैं ? तुम चावल-दाल कहाँ से लाते हो ? साग, तरकारी कहाँ से लाते हो...सब्जी-मण्डी तो तुमने देखी है। ...

(४) बालकों को कहानी सुनने में बड़ी दिलचस्पी होती है। अगर उनका ध्यान पढ़ाई की ओर पहले से तो कहानी-कथन के पाठ की प्रस्तावना यों भी की जा सकती है —'आज मैं एक मज़ेदार कहानी सुनाता हूँ। तुम गौर से सुनो।'

(५) अध्यापक जो पाठ पढ़ाने जा रहा है, वह किसी बड़े पाठ का उत्तरार्ध हो, तो आम तौर पर प्रस्तावना पाठ के पूर्वार्ध पर दो-चार प्रश्न पूछकर की जाए।

(६) अध्यापक जो पाठ पढ़ाने जा रहा है, उससे मिलता-जुलता कोई पाठ बालकों ने पढ़ा हो, तो उसके सम्बन्ध में प्रश्न करके वह अपने पाठ की ओर विषय का रुख बढ़ा दे। जैसे – एक शेर को किसी सियार ने कैसे धोखा दिया, इसके बारे में एक कहानी तुमने पढ़ी है। (उसके बारे में दो-तीन प्रश्न पूछने के बाद) ऐसी ही एक और कहानी है – वही आज में कहूँगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(७) व्याकरण के पाठ में सामान्यतः विद्यार्थियों के पूर्वज्ञान से लाभ उठाकर प्रस्तावना की जाती है। जैसे 'विशेषण' पर पाठ पढ़ाते वक्त अध्यापक संज्ञाओं के उदाहरण देकर संज्ञाओं को विद्यार्थियों द्वारा पृथक् करवा ले; और उसके बाद 'विशेषण' की ओर बढ़े।

विशेष सूचनाएँ — १. प्रस्तावना उचित और आकर्षक हो। २. वह अत्यन्त आवश्यक शब्दों में मगर अनावश्यक विस्तार न करते हुए की जाए। ३. अध्यापक समय का खयाल रखे। पाँच-सात मिनटों से ज़्यादा समय प्रस्तावना में खर्च न करे। ४. वह सुस्पष्ट हो। नहीं तो अगले पाठ की ओर विद्यार्थियों का अवधान खींचने में सफलता न मिलेगी। ५. प्रस्तावना में विषय-प्रवेश की दृष्टि से नितान्त आवश्यक सामग्री का ही उपयोग करें। जहाँ एक चित्र से काम चल सकता है, वहाँ अध्यापक ज़्यादा चित्र या वस्तुएँ न दिखाए। ६. प्रस्तावना में जिस विषय पर अध्यापक बातचीत शुरू करेगा, उसकी पाठ के विषय से कोई संगति, सम्बद्धता हो। असम्बद्ध प्रस्तावनाओं के उदाहरण कम नहीं मिलते; तो भी वे वांच्छनीय नहीं हैं। संगति यों स्पष्ट की जा सकती है —

पाठ का विषय	**प्रस्तावना में बातचीत**
डाकघर	चिट्ठियाँ
यातायात के साधन	सैर
दूध या चाय	सुबह – पेय पदार्थ
कागज़	पुस्तक, अखबार आदि
देहाती जीवन	शहर या गाँव
गांधीजी	हमारे नेता
पुस्तकालय	पुस्तकें

७. ऊपर लिखी हुई बातों से स्पष्ट होता है कि प्रस्तावना करते हुए अध्यापक ज्ञात (known) से अज्ञात (unknown) की ओर, साधारण (general) से विशेष (particular) की ओर, मूर्त (concrete) से अमूर्त (abstract) की ओर, आसान से कठिन की ओर विद्यार्थियों को ले जाए। ८. प्रस्तावना में वह पढ़ाये जानेवाले नये शब्दों का परिचय कराए।

(२) हेतु-कथन

पहले ही बताया गया है कि हेतु-कथन कोई स्वतंत्र विभाग नहीं है। वह प्रस्तावना और विषय-प्रतिपादन को जोड़नेवाली कड़ी है। वह प्रस्तावना की अन्तिम सीढ़ी है, जिससे होकर अध्यापक विषय-विवेचन की ओर बढ़ता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आवश्यकता — शिक्षा का कार्य कभी भी अहेतुक नहीं होता। खास उद्देश्य से किया जानेवाला वह एक संस्कार है। यह 'हेतु' या उद्देश्य अध्यापक को ही ज्ञात होने से काम नहीं बनेगा। पाठ के उद्देश्य का अर्थ यह है कि अध्यापक विशिष्ट पाठ क्यों पढ़ाने जा रहा है। विद्यार्थियों को भी यह जान लेना आवश्यक है कि वे आखिर क्या करने जा रहे हैं। अगर उन्हें यह उद्देश्य स्पष्ट न हुआ हो, तो पाठ के वक्त वे मन में सोचते रहेंगे कि आखिर यह बोझ वे किसलिए उठा रहे हैं। वे दुविधा में पड़े रहेंगे, उनमें दिलचस्पी नहीं होगी और दिलचस्पी के अभाव में पाठ की ओर अवधान देना उन्हें मुश्किल मालूम होगा, जिसपर पाठ की सफलता निर्भर रहती है। एक बार वे पाठ का उद्देश्य जान लें, तो उनकी मानसिक शक्ति उसी लक्ष्य की ओर अग्रसर होगी, और पाठ को वे जल्द ग्रहण कर सकेंगे। इसलिए अध्यापक को चाहिए कि वह स्पष्ट शब्दों में पाठ का हेतु बता दे। जैसे – आज हम सब्जी-मण्डी के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करेंगे। **या** यह देखेंगे कि हमें राष्ट्रभाषा की क्या आवश्यकता है। **या** गांधीजी के जीवन की कुछ घटनाएँ पढ़ेंगे। **या** आज हम संज्ञाओं से सम्बन्ध रखनेवाले (विशेषणों के बारे में) इन शब्दों के बारे में विचार करेंगे।

हेतु-कथन की अनावश्यकता — पाँचवीं कक्षा में जहाँ हिन्दी का अध्यापन शुरू होता है, शुरू-शुरू में वाक्य-रचना के पाठ अधिक होते हैं। अध्यापक भिन्न-भिन्न शब्दों का बालकों को परिचय कराता है और वाक्य-रचना करने में उनकी मदद करता है, वहाँ हेतु-कथन अनावश्यक-सा लगता है। अगर अध्यापक ऐसा कहे, — 'बच्चो, आज हम मेज़, कुर्सी आदि शब्द सीखेंगे।' तो हास्यास्पद होगा। ऐसे पाठों को छोड़कर अन्य सब पाठों में अध्यापक 'हेतु-कथन' करे।

उदाहरण के तौर पर यहाँ 'प्रस्तावना और हेतु-कथन' की रूपरेखा दी गयी है।

— १ —

	विषय	प्रणाली
प्रस्तावना		(फलक पर चित्र लटकाकर और उसकी ओर संकेत करके)
		यह चित्र ध्यान से देखो।
	यह बन्दर है।	यह कौन है?
		(चित्र में 'मगर' दिखाते हुए।)
	मगर	यह **मगर** है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विषय	प्रणाली
	(मगर शब्द फलक पर लिखकर विद्यार्थियों से दोहरा लेना।)
बन्दर मगर की पीठ पर बैठा है।	बन्दर कहाँ बैठा है ?
मगर पानी में है।	मगर कहाँ है ?
वह तैर रहा है।	वह क्या कर रहा है ?
	तुम तो जानते हो कि मगर जानवरों को खाता है। फिर भी यह बन्दर उसपर बैठा है, और वह उसे ले जा रहा है।
हेतु-कथन	यह ऐसा क्यों हो रहा है, इसके बारे में एक मज़ेदार कहानी है। आज वही कहानी मैं कहूँगा।

– २ –

विषय	प्रणाली
प्रस्तावना	समझो, तुम्हारा कोई दोस्त दिल्ली में रहता है। उसको तुम यहाँ बुलाना
हम पत्र लिखकर उसको बुलाएँगे।	चाहते हो। तुम उसे कैसे बुलाओगे ? (पत्र लिखते हुए)
यह पत्र है।	यह क्या है ?
	पत्र को ' चिट्ठी ' भी कहते हैं।
चिट्ठी	('**चिट्ठी**' शब्द फलक पर लिखकर बालकों से दोहरवाना) (लिफाफा दिखाते हुए) देखो, यह लिफाफा है।
लिफाफा	(**लिफाफा** शब्द फलक पर लिखना और दोहरवाना।)
हम चिट्ठियाँ और लिफाफे पोस्ट ऑफिस से लाते हैं।	हम चिठ्ठियाँ और लिफाफे कहाँ से लाते हैं ?
डाकघर	' पोस्ट ऑफिस ' को हिन्दी में 'डाकघर ' कहते हैं।
हेतु-कथन	आज हम डाकघर के कामकाज की जानकारी प्राप्त करेंगे।

× × ×

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(३) विषय-प्रतिपादन या विवेचन

(अ) **महत्त्व** -- हरबार्ट की पाठ-पद्धति में दूसरा पद है, विषय-विवेचन। यह पाठ का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण विभाग है और इसी के लिए 'पाठ' पढ़ाया जाता है। अगर इस विभाग का कार्य स्पष्ट, सुसंगतिपूर्ण और सुसम्बद्ध न हो, तो पाठ असफल ही माना जाएगा। 'नया ज्ञान' इसी में दिया जाता है, इसलिए पाठ के अधिकांश मिनट उसके लिए खर्च किये जाते हैं। विवेचन, प्रतिपादन, स्पष्टीकरण आदि शब्दों से इस विभाग के कार्य का स्वरूप स्पष्ट होता है। अंग्रेज़ी का '**प्रेज़ेण्टेशन**' शब्द भी यही सूचित करता है : Presentation is exposition i. e. setting out matter, generally new matter, in a clear and comprehensible form. विषय को, नये ज्ञान को सुस्पष्ट और सु-ग्राह्य तथा सुसंगत रूप में बताना ही 'विषय-विवेचन' कहलाता है। इससे अगर यह कहा जाए कि स्पष्टता, सुसंगति-पूर्णता और सु-ग्राह्यता ही विषय-विवेचन की आत्मा है, अन्तिम और निश्चित कसौटी है, तो अत्युक्ति नहीं होगी। इसी स्पष्टता (clarity) सुसंगतिपूर्णता (logical order) और सुग्राह्यता (comprehensibility) की साधना में निम्न-लिखित बातें सहायक हो सकती हैं —

(१) विवेचन का विषय एक स्वयंपूर्ण विभाग या इकाई हो। याने पाठ का कोई एक ही उद्देश्य होना चाहिए और उस उद्देश्य की सिद्धि के लिए ही वह विभाग पर्याप्त हो। वह भिन्न-भिन्न असम्बद्ध विभागों का ढेर मात्र न हो। पाठ का यह एकत्व विवेचन की सफलता की पहली कुंजी है। उद्देश्यों की बहुलता और भिन्न-भिन्न विभागों से बालकों का अवधान किसी एक लक्ष्य की ओर नहीं लगेगा। इससे उसकी सुग्राह्यता भी घटेगी।

(२) अध्यापक पाठ का उद्देश्य निश्चित करे और उसी की सिद्धि को लक्ष्य मानकर हरएक बात करे। विद्यार्थियों को भी समझा दे कि वे अब क्या करने जा रहे हैं। पाठ का ऐसा ही विस्तार किया जाए, जिससे उसके उद्देश्य को वे अन्त तक न भूल जाएँ। भूमिति के सिद्धान्त में लक्ष्य की एकता का जो स्थान है, वही ऐसे पाठ में भी हो। उससे हमारे सामने क्या है और हम क्या करना चाहते हैं, उसका ज्ञान हमें होता है। क्रिया लाभदायी और सुलभ तभी हो सकती है, जब वह सहेतुक (Purposive) हो।

(३) अध्यापक आवश्यकतानुसार पाठ के उपविभाग बना ले। ऊँची कक्षाओं में पाठ लम्बे-चौड़े होते हैं, वहाँ तो ऐसे उपविभागों की निःसन्देह आवश्यकता होती है। वह पाठ के अनुच्छेद बना ले। यह विभाजन मनोवैज्ञानिक महत्त्व रखता है। एक-एक विचार स्पष्ट करने से ग्रहण करनेवालों को भी सुविधा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

होगी, तथा धीमी गति से चलनेवालों को नये विचार के ग्रहण के लिए मनोभूमि को तैयार कर लेने का अवकाश मिलेगा।

(४) एक अनुच्छेद से दूसरे की ओर बढ़ते समय उन दोनों में जो सम्बन्ध है, उसे अध्यापक स्पष्ट करे। जैसे –(पाठ : बड़े घर की बेटी – ले. स्व. प्रेमचंद) 'यह हमने देखा कि लालबिहारी और आनन्दी में झगड़ा क्यों हुआ ? अब अगले अनुच्छेद में देखेंगे कि उसका क्या परिणाम हुआ।' या 'श्रीकण्ठसिंह घर छोड़कर जाने को तैयार हुआ। अब यह देखेंगे कि आगे क्या हुआ' इससे बालकों को फिर एक बार स्पष्ट होगा कि उन्हें क्या बताया जा चुका है और आगे क्या किया जानेवाला है। हाँ, ऐसा उप-विभाजन सिद्धान्त की अपेक्षा सुविधा और आवश्यकता के अनुसार ही किया जाना चाहिए।

(ब) रूपरेखा––आम तौर पर विषय-विवेचन की रूपरेखा नीचे लिखे अनुसार होती है। उसका स्थान दिखाने के लिए दूसरे विभाग भी दिये गये हैं।

विषय	प्रणाली
(१) प्रस्तावना	....
हेतु-कथन	....
(२) विषय-विवेचन	(१) अध्यापक-द्वारा पठन *
	(२) विद्यार्थियों द्वारा मनोगत पठन *
हेतु-प्रश्न	(अ) ....
	(ब) ....
पाठ की रूपरेखा या प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर लिखे जाएँ	(३) विद्यार्थियों द्वारा पढ़े हुए विभाग पर प्रश्न पूछते हुए नये ज्ञान के ग्रहण में उनकी मदद करना। (आवश्यकतानुसार अध्यापक समय-समय पर आवश्यक बातों को तथा कठिन शब्दों को भी स्पष्ट करे।) प्रश्नों की सूची ....
(३) संकलन	....
(४) उपयोजन	....
(५) स्वाध्याय	....

× × ×

* लिखा हुआ पाठ हो तो ही 'अध्यापक द्वारा पठन' तथा 'विद्यार्थियों द्वारा मनोगत पठन' हो सकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(स) * छपे हुए पाठ के अध्यापन में ही 'अध्यापक द्वारा पठन' विभाग हो सकेगा। मौखिक पाठ (oral composition), व्याकरण, कहानी-कथन, निबन्ध-लेखन के पाठों में उसे स्थान नहीं मिलेगा। कविता के पाठ में कविता-पठन विशेष ढंग से करना चाहिए। छपी हुई कहानी के पाठ में पठन के स्थान में 'कहानी-कथन' होगा और निम्न कक्षाओं में आवश्कतानुसार 'पठन' भी होगा जिससे हिन्दी भाषा का संस्कार बालकों पर अधिक हो सकेगा।

अपने पठन के बाद वह विद्यार्थियों से कहे कि 'अब ये पंक्तियाँ तुम मन में पढ़ो, और मैं फलक पर सवाल लिखता हूँ (या मैं सवाल देता हूँ), तुम उनके जवाब ढूँढ़ निकालो।' अध्यापक के पठन और विद्यार्थियों के मनोगत पठन के बीच इस तरह सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है। ये सवाल ही 'हेतु-प्रश्न' (objctive questions) कहलाते हैं।

(ड) **हेतु-प्रश्न** — विषय-विवेचन' में विद्यार्थियों को जब मनोगत-पठन के लिए गद्य या पद्य-खण्ड दिया जाता है, तब उनको दो-एक सवाल भी दिये जाते हैं। अध्यापक चाहता है कि विद्यार्थी इन सवालों के जवाब उन पंक्तियों को पढ़कर ढूँढ़ निकालें। उनके जवाब ढूँढ़ना ही विद्यार्थियों के मनोगत पठन का 'हेतु' होता है, या यों कहा जाए कि ये सवाल ही उनके पठन के हेतु की ओर संकेत करते हैं। इसलिए इन सवालों को 'हेतु-प्रश्न' कहा जाता है।

आवश्यकता — विद्यार्थी जब मनोगत पठन करते हैं, तब हेतु-प्रश्नों की आवश्यकता होती है। मनोविज्ञान का सिद्धान्त है कि अगर कोई कार्य निरुद्देश्य करने को किसी से कहा जाए तो वह कार्य अच्छा नहीं हो सकता। हमारी हर एक क्रिया सहेतुक हो। हेतु ही उस कार्य की प्रेरक शक्ति है। आखिर बालकों के सामने कोई हेतु या उद्देश्य न हो, तो वे ये पंक्तियाँ क्यों पढ़ें? हेतु-प्रश्नों द्वारा उनके सामने पठन का उद्देश्य रखा जाता है। 'Activity is most effective and pleasant when it is purposive.'

जहाँ पाठ में मनोगत पठन होता है वहाँ अध्यापक हेतु-प्रश्न देता है।

हेतु-प्रश्नों का स्वरूप — १. हेतु-प्रश्न गद्य या पद्य-खण्ड के केन्द्रीय विचार के सम्बन्ध में पूछे जाएँ। २. वे बहुत न कठिन हो, न आसान। ३. वे विद्यार्थियों की विचार-शक्ति को जागृत करनेवाले हों। ४. ऐसे ही सवाल पूछे जाएं, जिनके जवाब विवेचनात्मक न हो, विवरणात्मक हों। 'क्यों है' की अपेक्षा 'क्या है' जैसे सवाल उचित होंगे ५.। जिनके उत्तर लम्बे-चौड़े हों, ऐसे सवाल न पूछें। ६. हेतु-प्रश्न आम तौर पर एक, पर विशेष परिस्थिति में दो ही हों। दो से अधिक हेतु-प्रश्न देना ठीक नहीं है। क्योंकि विद्यार्थियों को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

परिच्छेद पढ़कर उनके उत्तर ढूंढ़ने और याद करने का कार्य करना पड़ता है। अधिक सवाल देने से उनपर एक बोझ-सा डाला जाएगा, उनके अवधान का विभाजन होगा और कार्य में हानि पहुँचेगी। सवाल बिलकुल छोटे-छोटे हों। वे दो स्वतंत्र बातों को लेकर पूछे गये हों, तो ठीक ही होगा। नहीं तो एक ही हेतु-प्रश्न दिया जाए।

फलक पर हेतु-प्रश्न लिखें या न लिखें? — यह परिस्थिति पर निर्भर है। छोटे बालकों की कक्षा में सवाल फलक पर लिखने से लाभ ही होगा। कारण यह है कि मनोगत पठन करते समय उनको सवाल भी ध्यान में रखने चाहिए। उनके जवाब ढूंढ़ने की ओर भी उन्हें अवधान देना पड़ता है। एक साथ ऐसे तीन मानसिक कार्य करने के वे आदी नहीं हैं, इसलिए वे ठीक-ठीक जवाब नहीं ढूंढ़ सकेंगे। कभी-कभी सवाल को भी वे भूल जाते हैं। इसलिए प्रश्न लिखे जाएँ, जिससे आवश्यकतानुसार वे उन्हें देख सकेंगे। हिन्दी जैसी भाषा के वाक्यों को याद रखने में मामूली विद्यार्थी कठिनाई अनुभव करेगा। इसलिए प्रश्न लिखने से उसे भी लाभ पहुँचेगा। ऊँची कक्षाओं के विद्यार्थियों की ये शक्तियाँ विकसित हुई होती हैं। उनको पढ़ाते समय अध्यापक अगर हेतु-प्रश्न फलक पर न लिखे तो भी चल सकता है। ऊँची कक्षाओं में भी, अगर अध्यापक अनुभव करे कि विद्यार्थियों ने भाषा पर प्रभुता नहीं प्राप्त की है, तो वह हेतु-प्रश्न फलक पर अवश्य लिखे।

और एक समस्या है – विद्यार्थियों का मनोगत पठत पूरा होने के बाद, तुरन्त अध्यापक उससे उन सवालों के जवाब पूछे या नहीं?

एक दृष्टि से विद्यार्थियों से उन सवालों के जवाब अध्यापक पूछे तो ठीक होगा। उपचार की अपेक्षा इसका कारण मनोविज्ञान से अधिक सम्बन्ध रखता है। अध्यापक ने उनको सवाल देकर पढ़ने को और सवालों के जवाब ढूंढ़ने को कहा है, अतः उन्होंने जवाब तैयार किये होंगे। वे सवालों के जवाब देने के लिए उत्सुक हुए होंगे। इस हालत में उनसे जवाब न लेना उनकी वंचना करना होगा। अगर उन बालकों को यह मालूम होगा कि उस हेतु-प्रश्न का जवाब नहीं पूछा जाता, तो अगले पाठ से उनके मन में वह प्रेरणा नहीं होगी — वे सोचेंगे कि अध्यापक यदि जवाब नहीं पूछ लेते, तो हम क्यों पढ़ें, या हम उन सवालों के जवाब ढूंढ़ निकालने की तकलीफ क्यों उठाएँ? इस बुरी आदत से उनको बचाने के लिए हेतु-प्रश्नों के जवाब पूछना ही अच्छा होगा। हो सकता है कि विद्यार्थी सही जवाब न दे सकेंगे। तब उनसे कहें 'ठीक है, आगे चलकर फिर इन सवालों पर गौर करेंगे'।

अगर हेतु-प्रश्नों के जवाब शुरू में हम लेना नहीं चाहते या लेना इष्ट नहीं समझते, तो विद्यार्थियों से कहें— 'हाँ, तुमने तो जवाब तैयार किये होंगे, मगर मैं कुछ और सवालों के बाद पूछूंगा।' इससे उनकी मानसिक दुविधा दूर होगी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अगर किसी गद्य या पद्य-खण्ड पर एक ऐसा हेतु-प्रश्न पूछना पड़ा कि जिसके जवाब में उक्त खण्ड का पूरा केन्द्रीय विचार विद्यार्थी को स्पष्ट करना होगा, तो शुरू में उसका जवाब न पूछना ही इष्ट मानना होगा। ऐसे समय ऊपर कहे अनुसार कहकर विद्यार्थियों का रुख दूसरे सवालों की ओर लाएँ।

(ई) **प्रश्न** — विषय-विवेचन में प्रश्नों का अत्याधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है। यों तो आधुनिक काल के अध्यापन में प्रश्नों का इतना महत्त्व है कि अगर उन्हें पाठ की आत्मा कहें, तो इसमें अत्युक्ति नहीं है। पाठ एक बार अध्यापक ने पढ़ा है और बहुतेरे कठिन शब्दों के अर्थ भी स्पष्ट किये हैं। दूसरे, विद्यार्थियों ने उसका मनोगत पठन किया है। इसलिए अब उसपर सवाल पूछते हुए अध्यापक पाठ को समझ लेने में विद्यार्थियों की मदद करे। प्रश्नों द्वारा उनको विचार करने की ओर प्रवृत्त किया जाता है, उनकी मनन-शक्ति, ग्रहण-शक्ति और क्रियाशीलता को प्रोत्साहित करते हुए अध्यापक अपने कार्य में आगे बढ़ता है। इन प्रश्नों पर अध्यापक की सफलता निर्भर है।

[अध्यापक द्वारा पूछे जानेवाले सवाल कैसे हों, उनको कैसे पूछना चाहिए आदि का विवेचन अगले अध्याय में किया जाएगा।]

(फ) कठिन शब्द : वैसे तो प्रस्तावना में कुछ कठिन शब्दों का अर्थ स्पष्ट किया जाता है; पर ऐसे कुछ शब्द होते हैं, जिनको उसमें स्पष्ट किया जाना सम्भव या इष्ट नहीं होता। ऊँची कक्षाओं में प्रस्तावना का वही स्थान होता है जैसे जो निम्न कक्षाओं में होता है। दसवीं कक्षा में मामूली पाठ में चित्र वगैरह लाकर प्रस्तावना करने और शब्दों को स्पष्ट करने की कोई ज़रूरत नहीं है। इस हालत में विषय-विवेचन में ही उनको स्पष्ट करना होगा। वैसे तो सन्दर्भ से विद्यार्थी कुछ शब्दों का अर्थ जान ले सकते हैं। अध्यापक उनकी सिर्फ मदद करे। मुहावरों को तो इसमें ही स्पष्ट करना लाभदायी होता है। जैसे —

"कुमार ने यशपाल से कहा — तुमने मेरी मदद करने का **वादा किया** था, अब क्यों **धोखा देते** हो? तुम्हारा **यकीन** न करना ही अच्छा।"

विषय	**प्रणाली**
यशपाल ने कुमार से कहा था, 'मैं तुम्हारी मदद करूँगा।'	यशपाल ने कुमार से क्या कहा था?
'वादा किया'	ऐसा ही उसने स्वीकार किया था, अभिवचन दिया था। 'अभिवचन दिया' इसके लिए लेखक ने कौन-से शब्द लिखे हैं?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

	उसने क्या वादा किया था ?
उसने·········अपना वादा नहीं पूरा किया।	देखो – वादा करके भी उसने उसे पूरा नहीं किया। कुमार के किन शब्दों से तुम्हें यह मालूम होता है।
" धोखा दिया " " तुमने······धोखा दिया। "	कुमार ने यशपाल के बर्ताव का वर्णन कैसे किया है ?
" तुमने मेरी मदद करने का अभिवचन दिया था, मगर अब तुमने मुझे धोखा दिया, अपने वचन का पालन नहीं किया। "	दूसरे शब्दों में अर्थ स्पष्ट करो।
उसपर मैं विश्वास नहीं करूँगा।	" जो वादा करके भी धोखा देता है, उससे तुम कैसे व्यवहार रखोगे ?
यकीन	हाँ, तुम **विश्वास** नहीं करोगे, यानी तुम उसका **यकीन** नहीं करोगे।
यशपाल का **यकीन** न करना अच्छा।	कुमार ने क्या सोचा ?
....	ऐसा उसने क्यों सोचा ?

(ग) **सन्दर्भ-स्पष्टीकरण** — गद्य या कविता के पाठों में कभी-कभी ऐतिहासिक, पौराणिक, राजनैतिक या कई महानुभावों के जीवन की घटनाओं का उल्लेख मिलता है। उनको स्पष्ट किये बिना अध्यापक का काम पूरा नहीं होता। विद्यार्थियों को भी इन बातों की जानकारी रखना आवश्यक होता है। इसलिए अध्यापक इन उल्लेखों (references) की जानकारी प्राप्त करे और विद्यार्थियों से कह दे। ऐसी जानकारी देते समय निम्न-लिखित बातों का खयाल रखा जाए—

१. जानकारी सही हो। २. जितनी आवश्यक है, उतनी ही मगर संक्षेप में, जानकारी दी जाए। अध्यापक मुख्य विषय से विद्यार्थियों का अवधान दूर न होने दे। ३. उनमें कुछ बातें ऐसी होती हों जिन्हें आम लोग ठीक तरह से जानते हों। हो सकता है, विद्यार्थी भी उन्हें जानते हों। इसलिए स्वयं कहने से पूर्व विद्यार्थियों से सवाल पूछकर देखो कि उनमें से कोई बता सकता है या नहीं। अगर कोई विद्यार्थी बता दे सके, तो उसको वैसा करने में प्रोत्साहन दिया जाए। ४. कभी-कभी ऐसे संकेत प्रस्तुत विषय के स्पष्टीकरण के लिए दृष्टान्त के रूप में दिये जाते

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हैं। उस वक्त अध्यापक उन्हें स्पष्ट करे या विद्यार्थियों से स्पष्ट करा ले कि ये दृष्टान्त उचित कैसे हैं। ५. पाठ में कभी-कभी संस्कृत या पुराने काव्य की सूक्तियाँ दी जाती हैं। कभी-कभी कहावतों का भी प्रयोग किया जाता है। अध्यापक उनका अर्थ तथा उनकी सार्थकता स्पष्ट करे। और कहावतों का अर्थ समझाकर यह बता दे कि वे कैसे प्रस्तुत विषय पर लागू होती हैं, हो सके तो विद्यार्थियों से भी इसमें सहायता ली जाए। ६. आवश्यकतानुसार अध्यापक अन्य दृष्टान्त, सूक्ति, कहावत या उदाहरण भी दे। ७. कोई कठिन विचार या कल्पना पाठ में हो, तो अध्यापक उसे स्पष्ट करें; विद्यार्थियों से प्रश्न पूछकर स्पष्टीकरण करते समय मदद ली जा सकती है। इसके बाद विद्यार्थियों से आसान हिन्दी में उसका स्पष्टीकरण फिर एक बार कहलवाया जाए, जिससे उसे हज़म करने में वे समर्थ होंगे।

उदाहरण—' जब तक हिन्दू जान-बूझकर अछूत प्रथा में विश्वास करते हैं तथा इसे धर्म समझते हैं, जब तक अधिकांश हिन्दू अपने एक अंग को, भाइयों को छूना पाप समझते हैं, स्वराज्य को स्थिर रखना असम्भव है। **युधिष्ठिर ने अपने कुत्ते को लिये बिना स्वर्ग जाना अस्वीकार कर दिया था।** इसी प्रकार अब उसी **युधिष्ठिर की** सन्तान बिना अछूतों के स्वराज्य (स्वर्ग) प्राप्त करना चाहती है। ... '

इन पंक्तियों में लेखक ने अपने विचार के स्पष्टीकरणार्थ युधिष्ठिर का दृष्टान्त दिया है। यह परिच्छेद पढ़ाते समय अध्यापक नीचे लिखे अनुसार उक्त बात समझ लेने में विद्यार्थियों की मदद करे —

हिन्दू लोग किस प्रथा में विश्वास करते हैं? इस प्रथा को वे क्या समझते हैं? वे किसे पाप मानते हैं? क्यों? अछूत लोग असल में हिन्दू धर्म में क्या स्थान रखते हैं? ऐसे लोगों को लेखक ने क्या चेतावनी दी? ' स्वराज्य ' प्राप्ति से किसकी तुलना की गयी? हम हिन्दू लोगों को किसकी सन्तान कहा गया है? युधिष्ठिर कौन था? हम युधिष्ठिर की सन्तान कैसे? युधिष्ठिर ने क्या अस्वीकार किया था? (इसके बाद धर्मराज के जीवन की यह घटना अध्यापक बयान करें। युधिष्ठिर को महासमर के बाद ग्लानि क्यों हुई...आदि सवाल पूछते हुए वह आगे बढ़े।)

× × ×

(४) संकलन (Recapitulation)

पाठ में ' विषय-विवेचन ' के बाद ' संकलन ' आता है। इसको ' आवृत्ति ' भी कहा जाता है, मगर आवृत्ति शब्द ठीक अर्थवाही नहीं है। ' आवृत्ति ' का मतलब है, ' फिर से एक बार करना, दोहराना '। ' संकलन ' में जो कुछ पहले हुआ है,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उसकी यह ठीक तो आवृत्ति या दोहरावट नहीं होती। कई एक विद्यार्थी-अध्यापकों के मन में 'संकलन' के अर्थ के सम्बन्ध में गलत धारणा होती है। वे 'विषय-विवेचन' करते समय पूछे गये सवालों को पुनश्च पूछते हैं। मगर यह 'संकलन' नहीं है। चित्रपट के निर्माता जिस तरह पहले भिन्न-भिन्न स्थानों और समय पर भिन्न-भिन्न दृश्यों की कई तसवीरें उतारते जाते हैं, और उन विभागों को सूत्रबद्ध करते हुए अन्त में फिल्म बनायी जाती है, उसी तरह 'विषय-प्रतिपादन' में जिन भिन्न-भिन्न विचारों का अध्ययन कराया जाता है, जो टुकड़ों का ढेर इकठ्ठा किया जाता है, उन्हें सूत्रबद्ध, सुव्यवस्थित और संक्षेप में रखना ही एक दृष्टि से 'संकलन' करना है। अंग्रेज़ी शब्द 'रिकैपिच्युलेशन' यही सूचित करता है। To recapitulate is to summarise, to put in precise form. एक बार जो हुआ है, उसका सार कहना। इसलिए विषय-विवेचन में पढ़ाये हुए विभाग के महत्त्व के विचार फिर एक बार विद्यार्थियों से कहलवाये जाएँ। यह एक दृष्टि से 'सिंहावलोकन' ही है।

आवश्यकता — भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में पड़े हुए विचारों को सुगठित रूप में एक स्थान पर लाने से विद्यार्थियों को उन्हें ध्यान में रखना आसान प्रतीत होगा। यह एक तरह का '**पुनरालोचन**' है, जिससे 'विषय-विवेचन' में किये गये संस्कारों को अध्यापक कायम करने की चेष्टा करता है। यह देखना भी आवश्यक है कि विद्यार्थियों ने पाठ कहाँ तक ग्रहण किया है। संकलन में कुछ इसी तरह का कार्य भी होता है। अगर किसी विद्यार्थी ने किसी बात को ग्रहण न किया हो, तो इससे वह अपने को कक्षा के अन्य विद्यार्थियों के समकक्ष ला सकता है।

'संकलन' का स्वरूप — संकलन प्रश्नोत्तर रूप में ही होता है। पाठ के महत्त्व के पहलुओं पर करीब चार-पाँच सवाल पूछे जाएँ। इन सवालों के जवाबों से पाठ का 'सार' तैयार होता है। इन सवालों की संख्या-पाँच छः से ज्यादा न हो। सवालों के जवाब दोहराने की यहाँ आवश्यकता नहीं है। पाठ के शीर्षक के सम्बन्ध में प्रश्न पूछा जा सकता है तथा कहानी या कविता का 'सन्देश' भी पूछ लें।

'संकलन' के पहले पाठ का अध्यापन पूर्ण-सा होता है। इसलिए विद्यार्थी पाठ्य-पुस्तक से मदद लिये बगैर प्रश्नों के जवाब दे सकेंगे और वैसा अपेक्षित भी है। इसलिए पाठ्य-पुस्तकों को बन्द रखने की सूचना विद्यार्थियों को दी जाए। संकलन तीन-चार मिनटों में पूर्ण करना चाहिए।

× × ×

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(५) उपयोजन

'विषय-विवेचन' विभाग में पाठ का सूक्ष्म अध्यापन करने और उसके भिन्न-भिन्न विभागों का 'संकलन' करने के बाद 'हरबार्ट पद्धति' के अनुसार 'उपयोजन' विभाग आता है। उपयोजन में यह देखा जाता है कि अर्जित ज्ञान का उपयोग स्वतंत्र रीति से करने में विद्यार्थी कहाँ तक समर्थ हुए हैं। भूमिति या बीजगणित या विज्ञान के पाठ में जिस सिद्धान्त का ज्ञान विद्यार्थियों ने पाया है, उनका उपयोग करा लेना, याने पाये हुए सिद्धान्त को 'apply' करना ही उसका उपयोजन होता है।

आवश्यकता — "The use of knowledge is the surest way of impressing it and making it permanent To learn a thing and have that skill idle is to lose it almost at once. Therefore we should naturally expect children to apply what we teach them."

(Matter and Method in Education)

१. ज्ञान शक्ति है, मगर कब? व्यवहार में उसका उपयोग किया जाता है, तब। अर्जित ज्ञान वैसा ही 'मन' में पड़ा रहे, उसको काम में लाने का अगर अवसर न मिले, तो वह 'शक्ति' नहीं कहलाएगा। कुछ दिनों में उसे हम भूल जाएँगे। इसलिए कक्षा में ही विद्यार्थियों को मौका दिया जाता है, जिससे वे अपनी 'ज्ञान-शक्ति' आजमा सकते हैं। उपयोजन में विद्यार्थियों पर पाठ में पढ़ाये गये विचारों का संस्कार किया जाता है। अर्जित ज्ञान इससे स्थायी बन सकता है। ३. यहाँ कक्षा में विद्यार्थी स्वतंत्र रूप से काम करने लगते हैं। इससे उनका आत्मविश्वास बढ़ेगा। उनकी क्रियाशीलता को प्रेरणा मिलेगी और उसको अच्छे काम की ओर प्रवृत्त किया जाएगा। अभिनव तरह के 'उपयोजन' दिये जाएँ, तो उनकी विचार-शक्ति काम में लायी जाएगी। इससे उनकी यह शक्ति भी आज़मायी जाएगी।

उपयोजन का स्वरूप — विषय और उसके उपविभाग के अनुसार उपयोजन का स्वरूप बदलता रहता है। गणित भूमिति के पाठों में पढ़ाये गये सिद्धान्त का प्रयोग करते हुए हल करने को कुछ गणित या समस्याएँ दी जा सकती हैं। भाषा के पाठों में इसका स्वरूप कुछ भिन्न होगा। आम तौर पर भाषा के पाठों में नीचे लिखे अनुसार उपयोजन होता है —

क – गद्य-पाठ — विद्यार्थियों द्वारा पाठ-पठन।

ख – कविता — विद्यार्थियों द्वारा व्यक्तिगत और सामूहिक रूप में कविता-पठन या गायन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ग – कहानी –– विद्यार्थियों द्वारा कहानी-कथन।

घ – निबन्ध — स्पष्ट किये हुये विषय के आधार पर निबन्ध-लेखन का प्रारम्भ।

च – वार्तालाप, या बातचीत — विद्यार्थियों द्वारा अभिनीत कराना।

छ – व्याकरण — व्याकरण के सिद्धान्तों के उदाहरण प्रस्तुत कराना या स्पष्ट कराना।

इन उपयोजनों में विविधता लाकर उन्हें और भी उपयोगी तथा दिलचस्प बनाया जा सकता है। अध्यापक को सिर्फ परिपाटी छोड़कर स्वतंत्र बुद्धि को काम में लाना चाहिए। कुछ अभिनव प्रकार यहाँ बतलाये हैं —

१. शब्दों और मुहावरों का वाक्यों में प्रयोग करना।

२. पाठ में आयी हुयी कहावतों के लिए सन्दर्भ तैयार करके उनका प्रयोग करना।

३. रिक्त-पूर्ति करना।

४. कहानी-कथन में नये ढंग को अपनाना – जैसे ––

(अ) – कहानी के किसी पात्र के शब्दों में कथन। (ब) – कहानी का भिन्न-भिन्न ढंग से आरम्भ और अन्त करना। (क) – अधिक प्रभावकारी बनाने के हेतु कहानी भिन्न-भिन्न ढंग से कह लेना। (ड) – (उच्च कक्षाओं में) कहानी के दोषों को हटाकर उसकी भिन्न-भिन्न ढंग से पुनर्रचना कर लेना।

५. निबन्ध-लेखन (अ) – भिन्न-भिन्न ढंग से एक ही विषय का 'आरम्भ' या 'प्रस्तावना' करा लेना और उनपर चर्चा कराना। (ब) – (ऊँची कक्षाओं में) विवेचनात्मक निबन्ध में विषय के अगर दो पहलू हों तो दो विद्यार्थियों से दोनों पक्षों का समर्थन या खण्डन करा लेला। (जैसे – विज्ञान : हानिकारी या लाभदायी।) (स) – आत्मकहानी — भिन्न-भिन्न ढंग से कहना।

अध्यापक यह सावधानी रखे कि उपयोजन नीरस, विषय से असम्बद्ध न हो।

× × ×

(६) स्वाध्याय

स्वाध्याय क्या है ? : पाठ पूर्ण होने पर विद्यार्थियों को घर पर करने को अध्यापक जो काम देता है, उसे 'स्वाध्याय' कहते हैं। अपेक्षा यह है कि विद्यार्थी स्वयं स्वतंत्र रूप से घर पर वह काम करें। 'स्वाध्याय' को 'गृहपाठ' (Homework) भी कहा जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'स्वाध्याय' के सम्बन्ध में आज की परिस्थिति बिलकुल शोचनीय है। इसका उत्तरदायित्व अध्यापकों, विद्यार्थियों तथा उनके अभिभावकों पर है। विद्यार्थियों को सुचारु रूप से कई अध्यापक स्वाध्याय नहीं देते। ऐसे भी स्वाध्याय दिये जाते हैं, जिन्हें देखकर या तो उस बोझ को वे उठाने में असमर्थ होते हैं या उनमें उन्हें कोई रुचि या दिलचस्पी नहीं होती। 'सुयोग्य' स्वाध्याय बहुत ही कम हुआ करते हैं। विद्यार्थी गृहपाठ करते हैं या नहीं, यह अध्यापक उतने उत्साह से नहीं देखते; देखा भी, तो केवल दस्तखत करने के लिए। इससे स्वाध्याय देने का उद्देश्य ही सफल नहीं होता। अभिभावकों को भी यह देखने की फुरसत नहीं है कि उनके पाल्य गृहपाठ करते हैं या नहीं। इन हालत में कोई अचरज नहीं, यदि 'गृहपाठ' या 'स्वाध्याय' हँसी-दिल्लगी का या उपेक्षा का विषय बन गया हो।

भाषा विषय के 'स्वाध्याय' की ओर जितना ध्यान दिया जाना चाहिए, उतना नहीं दिया जाता। पाठ्य-पुस्तकों में पाठ के अन्त में 'स्वाध्याय' छपे हुए रहते हैं, ज़रा देख लें उनका क्या स्वरूप है। प्रेमचंद की कहानी अगर पाठ्य-पुस्तक में हो, तो स्वाध्याय होता है। – 'प्रेमचंद की कहानियाँ पढ़ो।' गांधीजी के जीवन से कोई घटना उद्धृत की गयी हो तो, 'गांधीजी की जीवनी पढ़ो।' किसी कविता के बाद कहा जाता है, 'ऊपर की कविता का अर्थ लिखो।' ऐसे स्वाध्यायों में प्रमाण-बद्धता और औचित्य का अभाव दिखायी देता है। बहुतेरी पुस्तकों में दिये जानेवाले या अध्यापकों द्वारा कहे गये स्वाध्याय, 'स्वाध्याय कैसे न हों' इसके ही नमूने होते हैं। मानो वे स्वाध्याय देने का प्रयोजन ही भूल जाते हैं।

स्वाध्याय की आवश्यकता—यद्यपि मनुष्य जन्म से लेकर काल-कवलित होने तक एक दृष्टि से जान-बूझकर या अनजान में ज्ञानार्जन करता रहता है, शिक्षा पाता रहता है, तथापि उसको विद्यार्थी-अवस्था ही व्यावहारिक दृष्टि से शिक्षा-प्राप्ति का काल है। इस अर्से में वह अपना सारा समय, अपनी सारी शक्तियाँ एक ही लक्ष्य की ओर, ज्ञान-प्राप्ति द्वारा अपना विकास करने की साधना में लगाता है। जैसे-जैसे विद्यार्थी ऊँची कक्षाओं में पहुँचता है, वैसे-वैसे उसे ज्ञानार्जन के सम्बन्ध में अधिकाधिक स्वावलम्बी बनना पड़ता है, अध्यापक सिर्फ मार्गदर्शन करते रहते हैं। स्वाध्याय देकर अध्यापक स्वावलंबी बनने में विद्यार्थी की मदद करते हैं। अपनी शक्तियों को आज़माने का मौका उसे देते हैं। उसकी कार्यशक्ति काम में लायी जाती है। जब वह अपने आप कुछ काम अच्छी तरह से करने लगेगा, तब उसमें आत्मविश्वास का निर्माण होता है, जो जीवन में सफलता की ओर जाने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की पहली सीढ़ी है। कुछ दिनों बाद, वह अपने आप अध्ययन करने में समर्थ हो जाता है। उसकी बुनियाद इस 'स्वाध्याय' द्वारा डाली जाती है।

कक्षा में अध्यापक द्वारा दिये गये ज्ञान को आत्मसात करने में और उसका विकास करने में बालक को पाठशाला पर ही निर्भर नहीं रहना चाहिए। पाठशाला में पढ़ाई नियत समय में होती है, इसलिए बालकों को 'स्वाध्याय' देकर उनके अर्जित ज्ञान की जड़ पक्की करें, उसे स्वतंत्र रूप से व्यवहार में लाने की ओर उन्हें प्रवृत्त करें।

'स्वाध्याय' का स्वरूप —भिन्न-भिन्न विषयों में 'स्वाध्याय' का प्रयोजन यद्यपि एक-सा है, तथापि उसमें भी विविधता का निर्माण किया जा सकता है। विद्यार्थी स्वाध्याय स्वयं-प्रेरणा से करता है, यद्यपि अध्यापक उससे वैसा करने को कहता है। इसलिए (क) स्वाध्याय का स्वरूप ऐसा होना चाहिए, जिससे विद्यार्थियों को उसमें दिलचस्पी अनुभव हो। (ख) वह बहुत छोटा या लम्बा न हो। छोटा होने से उसकी शक्ति की पूरी परख नहीं होगी, तो लम्बा होने से उसे वह बोझ-सा मालूम होगा। (ग) वह अधिक आसान तथा ज़्यादा कठिन भी न हो। आसान होने से वह अपनी शक्ति लगाकर अपना काम नहीं करेगा, तो कठिन होने से उसमें उसे कठिनाई अनुभव होगी और उसकी ओर वह प्रवृत्त नहीं होगा। (घ) स्वाध्याय के लिए लगनेवाले समय का भी ख्याल रखा जाए। साधारणतः छोटे बालकों को ऐसा ही स्वाध्याय देना उचित होगा जो लगभग आधे घण्टे में पूरा किया जा सके। (ङ) स्वाध्याय ऐसा हो कि अध्यापक यह देख सके कि बालकों ने वह किया है या नहीं। 'घर पर पाठ पढ़ो', 'घर पर शब्द कण्ठस्थ करो', 'फलानी कहानी या निबन्ध पढ़ो' ऐसे स्वाध्याय उपयुक्त तो हैं ही, फिर भी उससे बालकों को टालमटोल करने का मौका मिलता है। बालक से पूछने पर जवाब मिलेगा, 'हाँ, पढ़ा है', 'शब्दों को याद करने की कोशिश की है।', 'फलानी किताब नहीं मिल सकी।' और सैकड़ों तरह के जवाब मिलेंगे। (च) स्वाध्याय पाठ पर आधारित हो।

'स्वाध्याय' के कुछ नमूने — १. पाठ पर आधारित किसी प्रश्न का जवाब लिखना। २. कक्षा में पढ़ी हुई कहानी संक्षेप में किसी पात्र के शब्दों में लिखना; भिन्न ढंग से आरम्भ करके लिखना। दूसरे दृष्टिकोण से लिखना। ३. पाठ के विषय पर वार्तालाप – dialogue की रचना करना। ४. मित्र को पत्र लिखकर पाठ में बतलाये विचारों के बारे में अपनी राय लिखना। ५. रिक्त-पूर्ति करना। ६. कविता की पंक्तियाँ ज़बानी याद करना। ७. पाठ में से कुछ पंक्तियों का प्रादेशिक भाषा में अनुवाद करना। ८. कक्षा में चर्चा किये हुए विचार-तत्त्वों के आधार पर निबन्ध लिखना। ९. पाठ में से कुछ पंक्तियों की प्रतिलिपि करना।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१०. व्याकरण के पाठों में विविध तरह के व्यवसाय : जैसे — वाक्यों में प्रयोग, संज्ञाएँ आदि पाठ से चुनना आदि। ११. वाक्यों में शब्दों या मुहावरों का प्रयोग करना।

अध्यापक का उत्तरदायित्व –– घर पर स्वाध्याय करने का उत्तरदायित्व विद्यार्थियों का जितना है, अपने पाल्य उसे करते हैं या नहीं यह देखने की ज़िम्मेवारी जितनी अभिभावकों की है, उतनी ही विद्यार्थी गृहपाठ या स्वाध्याय करते हैं या नहीं, यह देखने की ज़िम्मेवारी अध्यापकों की है। बालकों को जब ऐसा मालूम होता है कि अध्यापक गृहपाठ की ओर से उदासीन हैं, तब वे भी अपने आप उदासीन बनते जाएँगे, कुछ दिनों के बाद गृहपाठ करना ही छोड़ देंगे और पूछने पर बहाने बनाएँगे। उन्हें इसकी बुरी लत से बचाने की कोशिश अध्यापक को करनी चाहिए। अध्यापक स्वयं पूछताछ करे, कुछ विद्यार्थियों की कापियों पर दस्तखत करे और दो-चार विद्यार्थियों से उनके लिखे गृहपाठ पढा ले तथा ऐसी आवश्यक सूचनाएँ दे, जो सबके लिए उपयुक्त हों।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: ११ :

पाठ की तैयारी - २

[१] अध्यापन में प्रश्न और उत्तर

आधुनिक पाठ-प्रणाली में प्रश्नों का स्थान इतना महत्त्वपूर्ण है कि उसको 'प्रश्नोत्तर-प्रणाली' कहा जाए, तो भी अत्युक्ति नहीं होगी। यह भी कहा जा सकता है कि इसमें आरम्भ से अन्त तक प्रश्नों की बहुलता होने के कारण अध्यापक की सफलता उसके द्वारा पूछे जानेवाले सवालों पर निर्भर होती है। नयी प्रणाली सम्भाषणात्मक है। अध्यापक और विद्यार्थियों के बीच में प्रश्नोत्तर द्वारा ही यह 'सम्भाषण' होता है।

(१) **प्रश्नों की आवश्यकता और महत्त्व** — पाठ की **प्रस्तावना में** अध्यापक विद्यार्थियों से प्रश्न पूछकर पूर्व-ज्ञान और नये दिये जानेवाले ज्ञान में सम्बन्ध स्थापित करता है। इससे विद्यार्थियों की विचार-शक्ति कार्यान्वित होती है। विद्यार्थी जब मनोगत पठन करते हैं, तब उनको दो-एक हेतु-प्रश्न दिये जाते हैं, इन प्रश्नों का जवाब वे ढूँढने लगते हैं। **विषय-प्रतिपादन** में जो प्रश्न पूछे जाते हैं, उनका उद्देश्य है — विद्यार्थियों की विचार-शक्ति को प्रेरणा देकर नये ज्ञान की प्राप्ति में उनकी सहायता करना। जो बातें वे जानते हैं, उनको सबके सामने रखने की प्रेरणा देना। **संकलन** के प्रश्न प्राप्त ज्ञान को फिर से सुसम्बद्ध रूप में रखने की दृष्टि से पूछे जाते हैं। **उपयोजन** और **स्वाध्याय** के प्रश्नों का उद्देश्य है —— प्राप्त ज्ञान का उपयोग करने में बालकों की परीक्षा करना, उन्हें स्वतंत्र रूप से कार्य करते की प्रेरणा देना।

कुछ प्रश्न इसलिए भी पूछे जाते हैं कि अध्यापक उनके द्वारा यह जान लेना चाहता है कि विद्यार्थी विशिष्ट विषय के सम्बन्ध में क्या जानते हैं।

अच्छे प्रश्न पूछना कला है और वह जितनी समझी जाती है, उतनी आसान नहीं है। जीवन के मामूली व्यवहार में यह जितनी कठिन है, अध्यापन में उससे कई गुना अधिक जटिल है। कारण यह है कि मामूली व्यवहार में पृच्छक जानकारी प्राप्त कनने के लिए प्रश्न पूछता है, उस प्रश्न का जवाब वह स्वयं जानता नहीं, उनके उत्तर में मिलनेवाली जानकारी पृच्छक के लिए नयी होती है। मगर अध्यापक स्वयं विद्यार्थियों से जो सवाल पूछता है, उनका जवाब वह स्वयं

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जानता है, और जिनसे सवाल पूछे जाते हैं, वे तो उसके बारे में अधिक जानते नहीं। इस अस्वाभाविक परिस्थिति में अध्यापक को अपने काम में सफलता पाने के लिए एक विशेष विधि का निर्माण करना पड़ता है। अध्यापक के प्रश्नों की इस विशेषता के कारण वे नितान्त महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं।

सम्भाषणात्मक प्रणाली से हिन्दी पढ़ाकर अध्यापक भाषा पर प्रभुता पाने में बालकों की सहायता करता है। इन प्रश्नों द्वारा उनको हिन्दी में बोलने का मौका दिया जाता है।

विद्यार्थी जो कुछ थोड़ा बहुत जानते हैं, उसके आधार पर अध्यापक सवाल पूछता है और नया ज्ञान पाने में उनकी मदद करता है। उनकी विचार-शक्ति को प्रोत्साहन देकर यह कार्य किया जाता है।

पाठ के अध्यापन में प्रश्न का इतना महत्त्व है कि उसे अध्यापन-कला की आत्मा कहा जा सकता है। अध्यापक अगर पाठ के अन्य पहलुओं की कितनी ही तैयारी करे, तो भी जब तक वह अच्छे प्रश्न तैयार करने और पूछने की कला में प्रवीण नहीं होगा, तब तक उसे अपने काम में सफलता नहीं मिलेगी। अक्सर देखा जाता है कि अन्य बातों में अच्छा होने पर भी अध्यापक अच्छे प्रश्नों की तैयारी न करने की वजह से अपने पाठ में सफलता नहीं पाता।

इसलिए अब 'अच्छे सवालों' की विशेषताएँ देखेंगे।

(२) **'अच्छे' सवालों की विशेषताएँ — (क)** सवाल बहुत आसान न हो, तथा अत्यन्त कठिन भी न हो। आसान होने से विद्यार्थी उसके उत्तर के सम्बन्ध में अधिक विचार करने के लिए प्रवृत्त नहीं होंगे; और अधिक कठिन होने से उसके बारे में विचार करने में उन्हें उत्साह नहीं होगा। विद्यार्थियों की उम्र, पूर्व-ज्ञान, भाषा से परिचय आदि बातों को ध्यान में लेते हुए अगर अध्यापक सवाल तैयार करे, तो वे अच्छे होंगे। सातवें दर्जे के विद्यार्थियों से 'यह क्या है ?', 'वह क्या है ?' जैसे सवाल पूछते रहने से उनको पाठ में विशेष रस नहीं आएगा। पाँचवें दर्जे के विद्यार्थियों से 'तुम्हारा क्या ध्येय है ?' पूछने की अपेक्षा 'तुम कौन होना चाहते हो ?' जैसा सवाल पूछने से लाभ होगा।

(ख) सवाल की भाषा भी ऐसी हो, जो विद्यार्थियों की समझ में आ सके। यह सोचने की नौबत उनपर नहीं आ जाए कि प्रश्न क्या है। जो शब्द विद्यार्थी जानते हैं, उन्हीं का प्रयोग किया जाए। 'आग बबूला होना' मुहावरे का अर्थ विद्यार्थी न जानते हों, तो उनसे 'किसान आग-बबूला क्यों हुआ ? पूछना बेकार है। उनसे पूछें — 'किसान गुस्सा क्यों हुआ ?'

(ग) प्रस्तावना में पूछे जानेवाले प्रश्न परिचित विषय पर ही पूछे जाएँ। अपरिचित विषय पर सवाल पूछे जाएँ, तो उनके जवाब ठीक-ठीक नहीं मिलेंगे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और पाठ्य-विषय की ओर विद्यार्थियों को ले जाने में कठिनाई होगी। 'तुलसीदास' पर पाठ लेनेवाले किसी अध्यापक ने पाँचवें दर्जे में हिन्दी के सन्त कवियों के नाम पूछे थे। इसका जवाब नहीं मिला। वहाँ यह पूछना चाहिए था – 'किन्हीं दो-तीन सन्तों के नाम कहो।' उसके बाद हिन्दी की ओर वह बढ़ सकता था।

(घ) प्रश्न संदिग्ध न हो। प्रश्न का लक्ष्य स्पष्ट हो। उसमें विद्यार्थियों को कल्पना की उड़ान भरने का अनुचित मौका न दें। जैसे –– किसान का जीवन कैसा है'? या 'यह कहानी तुम्हें कैसी लगी?' – ये प्रश्न संदिग्ध हैं।

(ङ) प्रश्न की रचना अच्छी हो। अन्वित शब्द उचित स्थान पर हों। – 'तुम क्या चाहते हो?' पूछना हो, तो 'तुम चाहते हो क्या?' या 'क्या तुम चाहते हो?' ऐसी वाक्य रचनावाले प्रश्न पूछने से काम में सफलता नहीं मिलेगी, क्योंकि ऐसे प्रश्न से अर्थ दूसरा ही निकलेगा।

(च) जहाँ तक हो प्रश्न साधारण वाक्य के रूप में हो, मिश्र या संयुक्त वाक्यों का प्रयोग विशेषतः छोटे बालकों के लिए उचित नहीं होगा। कारण यह है कि जो विद्यार्थी भाषा से अधिक परिचित नहीं हैं, उनके ध्यान में ऐसे वाक्य का अर्थ उसी समय नहीं आ सकेगा। ऐसे वक्त एक से अधिक प्रश्न या आवश्यकतानुसार पहले प्रास्ताविक कथन करके उसके बाद प्रश्न दिया जाए, जैसे ––

'कल जब तुम स्टेशन गये थे, वहाँ तुम जिस व्यक्ति से मिले थे, वह तुम्हारा कौन है?' – ऐसे प्रश्नार्थक वाक्य के बदले यों पूछा जाए ––

'कल तुम कहाँ गये थे? (या कथन: कल तुम स्टेशन पर गये थे।) वहाँ तुम किससे मिले? वह तुम्हारा कौन है?'

(छ) प्रश्नार्थक वाक्य अधूरा न हो। जैसे –– 'तुमने प्रदर्शनी में क्या...?'

(ज) एक ही प्रश्न में दो या अधिक उपप्रश्न न हों। जैसे ––

'तुमने यह परिच्छेद पढ़ा है। अब बताओ – कौन कहाँ गया? या किसान कहाँ गया था और कब? या बन्दर ने पैसे की थैली लेकर क्या किया? क्यों?' इनमें से प्रत्येक प्रश्न स्वतंत्र रूप से पूछा जाए।

(झ) प्रश्न के बीच पूरक और स्पष्टीकरणार्थ शब्दों को न रखें। जैसे –– 'तुमने –– सच-सच बताओगे न? –– शोरोगुल क्यों मचाया?' इसके बदले पूछें – 'सच बताओ, तुमने शोरोगुल क्यों मचाया?'

(ञ) प्रश्न में ही उसका जवाब समाहित न हो, या उसके शुरू के कथन में भी न हो। जैसे –– 'वीर राजपूतों का कोई एक गुण बताओ।' या "राजपूत

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लोग शूर थे – राजपूत कैसे थे ? ' इसमें ' वीर ' या ' शूर ' शब्द प्रश्न का जवाब सूचित करता है ।

(ट) जिन प्रश्नों के जवाब में ' जी हाँ ' या ' जी नहीं ' शब्द आते हैं, ऐसे सवालों के बाद ' क्यों ' या अन्य कोई पूरक सवाल पूछा जाए, क्योंकि ऐसे सवालों के जवाब विद्यार्थी प्रायः अनुमान से भी दे सकते हैं । जैसे ' क्या, उसने अपने दोस्त से सब बातें कह दीं ? ' इसके बाद पूछें, ' उसने सब बातें क्यों कह दीं ?'

(ठ) प्रश्न ऐसा हो, कि जिसका जवाब एक ही हो सकता है । प्रश्न ही सन्दिग्ध हो तो विद्यार्थी कल्पना की उड़ान भरते रहेंगे ।

(ड) जहाँ कहीं प्रश्न पूछने हैं, हर कहीं वे सूत्र-बद्ध हों । एक से दूसरा, दूसरे से तीसरा – ऐसा सिलसिला होने से अध्यापक और विद्यार्थियों को भी सुविधा होती है । उन दोनों का विचार-सूत्र कायम रहता है । उदा० —

परिच्छेद — कुछ दिनों के बाद मगनलाल एक मुर्गी लाया । वह मुर्गी अजीब थी । यह रोज़ एक सोने का अण्डा देने लगी । मगनलाल अब खुश हुआ । अब उसको ज़्यादा मेहनत करने की ज़रूरत नहीं थी । वह सोचने लगा — ' मैं अब मालामाल बनूँगा; एक आलीशान महल बनाऊँगा, सब लोग मेरा सम्मान करेंगे ।

प्रश्न — कुछ दिनों के बाद मगनलाल ने क्या किया ? उसे रोज मुर्गी से क्या मिलने लगा ? मुर्गी को ' अजीब ' क्यों कहा है ? मगनलाल पर इसका क्या प्रभाव हुआ ? अब उसे मेहनत करने की क्यों ज़रूरत नहीं थी ? वह अब मालामाल कैसे बनेगा ? उसने क्या सोचा ? वह कैसा महल बनवाना चाहता था ? लोग उसका सम्मान क्यों करेंगे ?

(३) **प्रश्न कैसे पूछें** — यह दिखाया गया है कि अध्यापन-कला में ' प्रश्नों ' का स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण है । इसके बाद यह भी बतलाया गया है कि ' अच्छे ' प्रश्न कैसे होते हैं । अध्यापक यह ध्यान में रखे कि केवल सवाल ' अच्छे ' बनाने से उसका काम पूरा नहीं होता । सवाल पूछने के लिए होते हैं न ? ' क्या पूछा जाता है ' – इसके साथ महत्त्व की यह बात है कि वह ' कैसे पूछा जाता है ' । सवाल अच्छे होकर भी अगर अध्यापक उन्हें अच्छे ढंग से पूछ न सके, तो उनका ' अच्छापन ' बेकार ही साबित होगा । इसलिए अध्यापक के लिए सवाल पूछने के बारे में कुछ ज़रूरी सूचनाएँ पेश की गयी हैं —

(क) बोलनेवाले के विचार तो महत्त्व रखते ही हैं, मगर उसके बोलने का ढंग भी उचित होना चाहिए । वह अगर उचित लहजे को न अपनाए, तो उसका वक्तव्य प्रभावकारी न होगा । प्रश्न पूछने का भी एक खास ढंग होता है । प्रश्न

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सूचित करने के लिए प्रश्नार्थक वाक्य के इस खास ढंग को अपनाया जाए। मामूली कथन की तरह प्रश्न पेश नहीं किया जाए।

(ख) अध्यापक पहले कक्षा के विद्यार्थियों को लक्ष्य करके सवाल पूछे; शुरू में किसी एक से ही सवाल न पूछा जाए। सवाल सबके लिए हो, तो हरएक विद्यार्थी उसके जवाब के बारे में सोचने लगेगा। अगर एक ही विद्यार्थी से शुरू में सवाल पूछा जाए, तो दूसरे छात्रों की यह धारणा होगी कि सवाल उनके लिए नहीं है, सिर्फ उनमें से एक से ही पूछा गया है और वही उसका जवाब तैयार कर लेगा। इसलिए वे उसकी ओर ध्यान नहीं देंगे।

(ग) उसके बाद क्षण भर के लिए उन्हें उस सवाल पर सोचने का अवसर देना चाहिए। इससे ज्यादा समय न दिया जाए। इस अर्से में विद्यार्थी प्रश्न का जवाब तैयार करते हैं।

(घ) अध्यापक अब किसी एक विद्यार्थी को जवाब देने की सूचना दे।

(ङ) अध्यापक अपना सवाल न दोहराए। निम्न कक्षाओं में एक ही सवाल का जवाब विद्यार्थियों से दोहरा लिया जाता है। पर हर वक्त अध्यापक सवाल न पूछे, सिर्फ 'तुम कहो' जैसी सूचना से काम बना ले।

(च) कुछ विद्यार्थियों के ध्यान में कभी-कभी यह नहीं आता कि अध्यापक ने क्या पूछा है। उनके मौन से या गलत जवाब से अध्यापक उनकी यह कठिनाई अनुभव कर सकता है। उस वक्त अध्यापक किसी विद्यार्थी से पूछे कि सवाल क्या है। अगर एक भी विद्यार्थी सवाल बता न सके, तो ही वह फिर से सवाल कह दे। अगर विद्यार्थी बार-बार सवाल पूछे जाने के आदी हो जाएँ, तो वे कक्षा में ध्यान नहीं देंगे।

(छ) अध्यापक विद्यार्थियों के दिये हुए जवाब न दोहराए। अनजान में अध्यापक सवालों और जवाबों को दोहराता है। इस बुरी आदत से वह यत्नपूर्वक छुटकारा पाए। उसके द्वारा जवाब दोहराये जाएँ तो विद्यार्थियों को उनकी ओर ध्यान देने की कोई ज़रूरत नहीं महसूस होगी।

(ज) कक्षा के अधिक-से-अधिक विद्यार्थियों से सवाल पूछे जाएँ। वह पूरी कक्षा में सवालों को फैला दे। कुछ विद्यार्थी अच्छे जवाब देते हैं, इसलिए उनसे ही ज्यादा सवाल अध्यापक को नहीं पूछने चाहिए।

(झ) अगर किसी सवाल का मतलब उनके ध्यान में न आया हो, तो दूसरे आसान शब्दों में वही सवाल पूछा जाए।

(४) **विद्यार्थियों के जवाब और अध्यापक** — (अ) पहले कहा जा चुका है कि अध्यापक विद्यार्थियों के दिये हुए जवाब न दोहराये। (आ) निम्न

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कक्षाओं के छात्रों से जवाब दोहराये जाएँ। यह दोहरावट आवश्यकता के अनुसार व्यक्तिगत और सामूहिक रूप में होगी। (इ) विद्यार्थी का दिया हुआ जवाब गलत हो, तो वैसा सहानुभूति-पूर्वक वह सूचित करे। उसे दुरुस्त करने को या इससे 'अच्छा जवाब' देने को दूसरे छात्र से कहे। भाषा की गलती भी दुरुस्त करने का अवसर पहले दूसरे छात्रों को दे। यदि अध्यापक देखेगा कि सभी छात्र इस कार्य में असफल हैं, तो उनकी गलती समझा दे और स्वयं उसे दुरुस्त करे। जिन छात्रों ने वही गलती की है, उनसे सही जवाब दोहरा लिया जाए। (ई) 'प्रस्तावना' में विद्यार्थियों से जो जवाब मिलता है, उन्हें वह स्वीकार करे। उन जवाबों से अपने पाठ की ओर बालकों को लाना भी कला है और कुशल अध्यापक ही यह कार्य आसानी से कर सकता है। कभी-कभी शुरू में ही अध्यापक को आवश्यक शब्द मिलता है; फिर भी अन्य विद्यार्थियों से सवाल पूछने में कोई हानि नहीं है। यहाँ दो एक नमूने प्रस्तुत किये गये हैं।

१. पाँचवीं कक्षा में 'दूध' पर पाठ दिया जा रहा है --

विषय	प्रणाली
प्रस्तावना मैं चाय पीता हूँ। (कॉफी, दूध आदि)	रोज़ सुबह तुम उठते हो। हाथ मुँह धोने के बाद तुम क्या पीते हो? (यही सवाल चार-पाँच विद्यार्थियों से पूछा जाए।)
हेतु-कथन	हाँ, तुममें से बहुतेरे विद्यार्थी चाय पीते हैं। फिर भी लोग कहते हैं कि दूध अधिक अच्छा है। आज हम दूध के बारे में जानकारी पाएँगे।

[यहाँ पहले छात्र ने अगर 'दूध' उत्तर दिया हो, तो भी अन्य विद्यार्थियों से भी सवाल पूछा जाए। अगर एक भी विद्यार्थी दूध' शब्द न बतलाए, तो स्वयं अध्यापक कहे – 'हाँ, तुम तो चाय पीते हो मगर उससे भी अच्छा पेय पदार्थ है 'दूध'। आज हम उसके बारे में जानकारी पाएँगे। – इस तरह अपने विषय की ओर वह बढ़े।]

२. कविता – **'वन में आज दीवाली।'**

प्रस्तावना दीवाली (और भी त्यौहारों के नाम आएँगे)	अपने यहाँ कई त्यौहार हम मनाते हैं। तुम्हें कौन-सा त्यौहार अधिक पसंद है?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दीवाली में घर-घर में लड्डू आदि मिठाइयाँ बनती हैं। लोग घरों को खूब सजाते हैं, दीप जलाते हैं, गाने गाते हैं — वगैरह।	दीवाली में कौन-सी मिठाइयाँ घर-घर में बनती हैं? लोग सजावट कैसे करते हैं? लोग और कैसे खुशियाँ मनाते हैं?
हेतु-कथन	यह बात तो हुई मनुष्यों की। एक कवि ने कल्पना की है कि जंगल के जानवर दीवाली का त्योहार मना रहे हैं। उसका वर्णन एक कविता में है। आज हम वह कविता पढ़ेंगे।

[इन उदाहरणों से स्पष्ट हुआ होगा कि प्रस्तावना में सवाल पाठ्य विषय से सम्बन्धित विषयों पर हों और विद्यार्थियों से जो जवाब मिलेंगे, उनसे लाभ उठाकर अध्यापक उन्हें विषय की ओर ले जाए।]

(उ) अध्यापक विद्यार्थियों से कहे कि 'जो विद्यार्थी प्रश्न का जवाब जानते हैं, वे हाथ ऊपर उठाएँ।' इस सूचना के अनुसार अगर कक्षा में वह बर्ताव करेगा तो कक्षा में गड़बड़ी न होगी। ...... (ऊ) किसी विद्यार्थी ने कोई ऐसी शंका उपस्थित की हो जो विषय की दृष्टि से महत्त्व रखती हो, तो अध्यापक संक्षेप में उसका समाधान करे। (ए) कुछ विद्यार्थी अधिक जानकारी रखते हैं और खूब बोलना चाहते हैं।सवाल पूछा जाने पर वे अनावश्यक बातें या अगले सवालों के जवाब भी कह देते हैं। अध्यापक को चाहिए कि ऐसे विद्यार्थी को बीच में ही रोककर वह उचित जवाब ही उससे कहलवाए। (ऐ) गलत जवाब और भाषा की अशुद्धियों की ओर अध्यापक अनवधान न करे। उन्हें तुरन्त दुरुस्त करे या करा ले। उसके लिए ज़्यादा समय दिया जाए, तो वह दोष नहीं माना जाएगा। (ओ) कभी-कभी देखा जाता है कि कई विद्यार्थी तो अपना मुँह खोलने को भी तैयार नहीं होते। ऐसे विद्यार्थियों को भी प्रोत्साहन देकर बोलने को प्रेरित करे — कम-से-कम दूसरे छात्रों द्वारा दिये गये जवाब उनसे दोहरा लिये जाएँ।

(५) **कतिपय सूचनाएँ** — अध्यापक-विद्यालय के विद्यार्थी-अध्यापकों में यह आदत पायी जाती है कि वे सवालों को लिखने में हिचकते हैं या उत्साह नहीं दिखाते। शुरू-शुरू में उनको चाहिए कि पाठ पढ़ाने से पूर्व वे सवालों की सूची बना लें, उनमें जो दोष दिखायी देते हों, उन्हें दुरुस्त कर लें। पाठ की टिप्पणी में सब-के-सब सवाल लिखने की कोई जरूरत नहीं है। उसी तरह टिप्पणी के 'विषय-विभाग' में हरएक प्रश्न का पूरा जवाब लिखने की भी आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता के अनुसार जवाब या विषय का (सवालों को ध्यान में रखते

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हुए) ढाँचा तैयार करके वहाँ लिख दें। सवालों की बौछार से विद्यार्थियों को तंग न होने दें।

कुछ विद्यार्थी – अध्यापक प्रश्नावली को जबानी याद करने में काफी समय और ताकत खर्च करते हैं। ऐसे अध्यापकों को उनकी मेहनत के पैमाने पर कामयाबी नहीं मिलती। अपेक्षा के अनुसार जवाब न मिलने से या सूत्र के टूटने से से दुविधा में पड़ते हैं और निरुत्साह होकर ठीक सवाल नहीं पूछते। उन्हें ध्यान में रखना चाहिए कि वे प्रश्नों को सूत्रबद्ध रूप में तैयार करें; फिर भी प्रत्यक्ष पूछते वक्त, वे आवश्यक परिवर्तन कर लें। उसी प्रश्नावली को चिपके रहने की कोई ज़रूरत नहीं है। बालकों के जवाबों की दृष्टि से अपरिहार्य हो तो और प्रश्न भी उस सूची में जोड़ दें या कुछ कम कर दें।

[२] पाठ के उपकरण

पाठ की तैयारी करते वक्त अध्यापक को यह भी देखना चाहिए कि पाठ दिलचस्प बनाने के लिए वह किन-किन उपकारणों का उपयोग करे। आवश्यकता के अनुसार सामग्री जुटाकर कक्षा में अपने साथ वह ले जाए। ऐसे उपकरणों का प्रयोजन, उनका समुचित उपयोग, उपकरणों की उचितता आदि बातों से जो विद्यार्थी-अध्यापक अच्छी तरह परिचित नहीं है, वह उनके बारे में कुछ गलत धारणाएँ रखते हुए कक्षा में उपकरणों से भरी बड़ी भारी थैली लेकर बालकों के सामने उपस्थित होता है। विद्यार्थी चकित मुद्रा से देखते हैं कि अब यह 'जादूगर' अपनी थैली से क्या-क्या निकालेगा। उनकी उत्कण्ठा और दिलचस्पी देखकर अध्यापक तो समझने लगता है कि कामयाबी की कुंजी हस्तगत हुई है – फिर भी बदकिस्मती से उसे नाउम्मीद होकर पाठ के बाद लौटना पड़े तो क्या आश्चर्य! असल में वह भूल जाता है कि उपकरणों की संख्या की अपेक्षा उनके समुचित उपयोग पर अध्यापक के प्रयोजन की सिद्धि निर्भर होती है। इसलिए यहाँ उपकरणों की आवश्यकता और समुचित उपयोग के बारे में कुछ मार्गदर्शन किया जा रहा है।

(१) आवश्यकता — रुचि और अवधान का सम्बन्ध घनिष्ठ है – रुचि के अभाव में अवधान का टिकना असम्भव तो नहीं, मगर मुश्किल ज़रूर है। बालकों को पाठ में अगर रुचि या दिलचस्पी न हो, तो उनका अवधान पाठ में न रहेगा और अध्यापक उनपर जो संस्कार करना चाहता है, वह स्थायी नहीं बन पाएगा। रुचि और अवधान से स्मरण-शक्ति का भी बड़ा सम्बन्ध है। जिस बात में बालकों को रुचि और अवधान हो, उनको वे अनायास याद कर सकते हैं। इन तत्त्वों की दृष्टि से अध्यापक को अपना पाठ रोचक बनाने की कोशिश करनी चाहिए, जिससे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बालक सहजता से उसकी ओर ध्यान दे सकेंगे। बालकों की रुचि और अवधान कायम रखने के लिए अध्यापक जिन भिन्न-भिन्न युक्तियों का अवलम्बन करता है, उनमें उपकरण का उपयोग महत्त्वपूर्ण है। बगीचा, खेलकूद, सब्ज़ी-मंडी, किसान जैसे विषय पर पाठ हो, या कोई कहानी सुनानी हो, और अध्यापक अगर कक्षा में कोरी चर्चा करे, सवाल पूछे और जवाब दोहरा ले, तो वह पाठ नीरस होगा, बालकों को उसमें बिलकुल दिलचस्पी मालूम नहीं होगी। बालक मूर्त वस्तुओं में दिलचस्पी रखते हैं, कोरी कल्पनाओं में नहीं। केवल सोचते रहने की अपेक्षा, वे कुछ देखना या कृति करना ज्यादा पसन्द करते हैं। उसमें उनकी क्रीड़ासक्ति और क्रियाशीलता भी काम में लायी जाती है। इसलिए 'हवाई जहाज़' का ज़बानी बयान सुनाने की अपेक्षा उसका चित्र या नमूना सामने रखते हुए अगर अध्यापक उसका वर्णन करे, तो बालकों को पाठ में रुचि अनुभव होगी, उन्हें खयाली दुनिया में घूमना न पड़ेगा। 'खेतीबाड़ी' के भिन्न-भिन्न कार्य चित्र की सहायता से स्पष्ट करने से, विद्यार्थियों को वे अधिक दिलचस्प प्रतीत होंगे। बालकों में चित्र देखने की जो विशेष रुचि होती है, अध्यापक उसका उचित उपयोग पाठ में कर ले।

चित्र, नमूना या प्रत्यक्ष वस्तु दिखाकर अध्यापक एक महत्त्वपूर्ण काम करते हैं। अध्यापक को बालकों की ज्ञानेन्द्रियों पर अधिक-से-अधिक संस्कार करना चाहिए, जिससे उनकी ज्ञानेन्द्रियाँ कार्यक्षम हो जाती हैं। प्रत्यक्ष वस्तु देखने से, उसका वर्णन सुनने से और निरीक्षण द्वारा स्वयं ज्ञानार्जन करने से बालकों का ज्ञान अधिक स्थायी बनेगा। चित्रों द्वारा प्रत्यक्ष कार्य का स्वरूप स्पष्ट किया जाता है और उस वक्त देखनेवालों को कल्पना-शक्ति और स्मरण-शक्ति की खींचातानी नहीं करनी पड़ती।

चित्रों की सहायता से पाठ्य-विषय आसान और सुगम बनाया जाता है। जो बातें समझ में आसानी से नहीं आ सकतीं, उन्हें प्रत्यक्ष दिखाया जाए, तो विद्यार्थी उन्हें आसानी से ग्रहण कर सकते हैं।

अध्यापक हिन्दी के पाठों में चित्रों, वस्तुओं या नमूनों द्वारा नये शब्दों का परिचय आसानी से करा सकता है। वस्तु का चित्र दिखाकर उसका नाम बताने से प्रत्यक्ष वस्तु और शब्द में सीधा सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है। कई एक संज्ञाओं, क्रियाओं को भी इस तरह परिचित कराया जा सकता है।

इस विवेचन से स्पष्ट हुआ होगा कि अध्यापन में इस तरह की सामग्री का क्या महत्त्व है।

(२) उपकरण : कौन-से ? —— अध्यापक पाठ पढ़ाते समय कई उपकरणों से लाभ उठाता है। कई विद्यार्थी – शिक्षक खड़ी, झाड़न (duster) आदि सामग्री

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के नाम भी टिप्पणी में लिखते हैं। असल में इन चीजों के नाम लिखने की कोई जरूरत नहीं है, क्योंकि अध्यापक की यह नित्य की सामग्री है।

(अ) **प्रत्यक्ष वस्तुएँ** — किताब, मेज़, दवात, फूल, गेंद आदि वस्तुएँ कक्षा में दिखायी जा सकती हैं। खास तौर पर शब्दों का परिचय कराते वक्त इनका उपयोग किया जाता है।

(आ) **नमूने** -- जहाँ प्रत्यक्ष वस्तुओं को दिखाना सम्भव या इष्ट नहीं होता, वहाँ आवश्यकता के अनुसार उनके नमूने दिखाये जाएँ।

(इ) **चित्र** -- पशु-पंछी, बगीचा, खेलकूद आदि से सम्बन्धित पाठों में ये उपयुक्त होते हैं। व्यक्तियों की जीवनी पर जो पाठ होंगे, वहाँ उनके चित्र (फोटो) दिखाएँ। कहानियों के पाठों में कहानी की घटनाओं में से कोई एक चित्र में दिखायी हुई हो, तो उसे दिखाकर प्रस्तावना की जा सकती है। किसी यात्रा आदि से सम्बन्धित पाठ में किसी प्रदेश का नक्शा आवश्यकता के मुताबिक दिखाया जाए।

(उ) **प्रत्यक्ष कृती** — चलना, बैठना, लिखना, खींचना आदि क्रियाओं को समझाने के लिए प्रत्यक्ष कृति करके दिखाएँ।

(ऊ) **लिखा हुआ फलक** — व्याकरण के पाठ में कभी-कभी कई एक वाक्यों को लिख देने की ज़रूरत अध्यापक महसूस करता है। कक्षा में समय की बचत करने की लिए अध्यापक उन वाक्यों को फलक (Roll-up black-board) पर लिखकर कक्षा में ला सकता है।

(३) **उपकरणों का प्रयोग कैसे करें ?** : उपकरणों की उपयोगिता के बारे में मतभेद की कोई गुंजाइश नहीं है। मगर उपकरण उपलब्ध हैं, इसीलिए ही उनको काम में लाना कहाँ तक उचित होगा ? अध्यापक को इसमें विवेकशीलता से काम लेना चाहिए।

इस दृष्टि से दो बातें महत्त्वपूर्ण हैं — (अ) **उपकरणों का चुनाव** और (आ) **उनका प्रत्यक्ष उपयोग करना**। असल में पाठ में उपकरणों की उपलब्धता की अपेक्षा उनके उपयोग का औचित्य ही ध्यान में लेकर उपकरण चुने जाएँ। अध्यापक पहले यह सोचे कि कोई उपकरण दिखाने से बालकों को कुछ ठोस लाभ होगा या नहीं। उपकरणों का कक्षा में ढेर लगाना भी हास्यास्पद होगा। वह विद्यार्थियों का सामान्य ज्ञान भी ध्यान में ले। निम्न कक्षाओं में ये उपकरण अधिक ज़रूरी होते हैं, मगर भाषा के पाठों में उच्च कक्षाओं में उनकी ज़रूरत कम होती है। पाँचवीं या छठी कक्षा में कहानी के लिए चित्र की जितनी ज़रूरत होगी, दसवीं कक्षा में उतनी नहीं रहेगी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(अ) उपकरणों का चुनाव करते वक्त अध्यापक यह ध्यान में रखे कि वे साध्य नहीं, साधन मात्र हैं। उन वस्तुओं पर पाठ नहीं लेना है। अगर उनसे विद्यार्थियों का अवधान पाठ की ओर से हटने की सम्भावना हो, वे वस्तुएँ ही पाठ की अपेक्षा अधिक दिलचस्प बननेवाली हों, तो ऐसी वस्तुओं को न चुनना ही अच्छा होगा। 'तोते' पर निबन्ध लिखानेवाला कोई अध्यापक कक्षा में पिंजड़े में तोता ले आया। फलतः बालकों का अवधान उस तोते की ओर ही अधिक रहा और पाठ सफल नहीं हुआ। 'दूध और खुराक' के पाठ के वक्त दूध से बनी मिठाइयों को कक्षा में दिखानेवाला अध्यापक बालकों की रुचि मिठाइयों पर केन्द्रित करेगा, पढ़ाई की ओर नहीं। कविता के पाठ में अध्यापक कविता-पठन करते हैं, गायन नहीं। वहाँ 'हारमोनियम' लाना अनुचित है। ये पाठ सफल नहीं होंगे।

चित्रों का चुनाव गौर से करना चाहिए। पाठ से सम्बन्धित बातों को उसमें सुस्पष्ट दिखाया हुआ हो। गाढ़े रंगों के चित्र या चित्रकला के उत्तमोत्तम नमूने पाठ के लिए उतने उपयुक्त नहीं होते। रेखाचित्र काम में लाये जाएँ। ये चित्र पाठ्य-विषय के अनुसार खींचे गये हुए हों। वे इतने बड़े हों कि उन्हें कक्षा के सब विद्यार्थी देख सकें। छोटे होने से वे दिखायी न देंगे और अध्यापक को बालकों के सामने उन्हें ले जाकर दिखाना पड़ेगा। वस्तुएँ गन्दी और घिनौनी न हों, सदभिरुचि की दृष्टि से दोषास्पद न हों।

इससे मालूम होगा कि जहाँ जो उपकरण आवश्यक है, पाठ को समझ लेने में बालकों की जो मदद कर सकता है, जिसे कक्षा में लाने से बालकों को विषय आसान मालूम होगा, वही उपकरण चुना जाए। ऐसे उपकरणों की संख्या तीस मिनटों के पाठ में ५ – ६ से ज्यादा न हो। अर्थात् यह स्थूल नियम ही है, अध्यापक का औचित्य-विवेक ही उनके चुनाव की आद्य और अन्तिम कसौटी है।

(आ) १. उपकरण का उपयोग जहाँ करना आवश्यक है, वहीं किया जाए। अनावश्यक होकर भी किया जाए तो विद्यार्थियों का अवधान टूट जाएगा। अयोग्य स्थान में उसे सामने रखने से उनकी विचार-शृंखला टूट जाती है। २. आवश्यक उपकरण ही कक्षा में लाये जाएँ। उन्हें कक्षा में मेज़ पर फैलाकर न रखें। ३. उपकरण दिखाने के बाद बालकों को उसे गौर से देखने के लिए ज़रा समय दें। ४. प्रश्न पूछते समय चित्रों में से किसी एक या अधिक वस्तुओं की ओर निर्देश करें। ५. उपयोग के बाद चित्र को सामने से हटा दें। अधिक वक्त सामने रखे जाने से कुछ विद्यार्थियों का ध्यान उसी चित्र की ओर ही रहेगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

[३] फलक-लेखन

हर एक कक्षा के कमरे में फलक (ब्लॅक-बोर्ड) होता है। अध्यापक को इसका बार-बार उपयोग करना पड़ता है। अनुभव की बात है कि कई अध्यापक उसका ठीक उपयोग नहीं करते।

अध्यापक द्वारा फलक पर किये गये लेखन से उसकी परीक्षा की जा सकती है। वह अगर फलक पर अशुद्ध भाषा में कुछ लिखे या उसका लेखन सुवाच्य न हो, उसमें अस्तव्यस्तता हो तो निरीक्षक और विद्यार्थी अध्यापक की योग्यता (?) का परिचय पाएँगे। अगर विद्यार्थियों में से कोई उसकी गलती दिखाए, तो वह उसके लिए बहुत बुरी बात होगी। पाठशालाओं में आज जो कुछ फलक-लेखन दिखायी देता है, उससे मालूम होता है कि उसकी बहुत दयनीय अवस्था है।

फलक पर लिखने की ज़रूरत होते हुए भी कुछ अध्यापक नहीं लिखते। कुछ ऐसे भी अध्यापक हैं जो उसका उपयोग आवश्यकता से ज़्यादा करते हैं। पहले प्रकार के अध्यापकों से ये दूसरे कई गुना अच्छे हैं। फलक पर जो कुछ लिखा जाता है, वह आम तौर पर अस्तव्यस्त होता है। भाषा की अशुद्धियाँ भी कम नहीं दिखायी देतीं। अध्यापक का आलस्य, अपने उत्तरदायित्व के ज्ञान का अभाव आदि इसके कारण हो सकते हैं।

फलक पर लिखते वक्त अध्यापक निम्न-लिखित बातें ध्यान में रखें —

१. पूरा फलक अच्छी तरह से साफ करें। २. आवश्यकतानुसार खड़ी से दो या तीन विभाग करें। खास तौर पर इस तरह के विभाजन की तभी ज़रूरत होती है, जब फलक पर भिन्न-भिन्न तरह की बातें लिखनी हैं या फलक अधिक लम्बा है। नये शब्दों को लिखना हो तो एक विभाग में एक में नीचे दूसरा संज्ञा-शब्द लिखें, दूसरे में क्रियाएँ लिखें, तीसरे में विशेषण या अव्यय। जैसे–

सियार	चिल्लाना	फौरन
केकड़ा	शोर मचाना	जल्द
कूड़ा-करकट	डुबोना	बेगुनाह

प्रश्न — सियार ने केकड़े से क्या कहा ?

३. आवश्यकतानुसार पाठ के अन्त तक फलक पर लिखी बातें वैसी ही रखें। ४. फलक पर जो कुछ लिखा है, अगर वह बालकों को कापी पर लिख लेना आवश्यक हो, तो सामान्यतः पाठ के अन्त में लिख लेने को कहें। ५. अध्यापक का लेखन सुवाच्य, सुव्यवस्थित और भाषा की दृष्टि से शुद्ध हो। वाक्य या शब्द इधर-उधर बिखरे हुए न हों। शुद्धता और सुवाच्यता की ओर अध्यापक ध्यान न

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दें, तो विद्यार्थी भी वैसा लिख लेते हैं। उनको इन गुणों का कोई महत्त्व नहीं मालूम होगा। उसी मात्रा में उन्हें भाषा में योग्यता कम प्राप्त होगी। ६. फलक पर लिखा हुआ मज़मून विद्यार्थी लिखते हैं या नहीं, यह उनके पास जाकर देखें। सुवाच्यता, शुद्धता और सुव्यवस्थितता आदि की दृष्टि से उन्हें सूचनाएँ दी जाएँ। ७. अध्यापक वही मज़मून विद्यार्थियों को पढ़कर सुनाए और फलक पर लिखे। ज़रूरत पड़ने पर एक बार किसी विद्यार्थी से फलक पर लिखा हुआ मज़मून पढ़वा लें। ८. फलक पर ऐसे हरफों में लिखें जो बहुत छोटे न हों और अधिक बड़े भी न हों। निम्न कक्षाओं में बड़े हरफों की जितनी ज़रूरत होती है, उतनी उच्च कक्षाओं में नहीं। ९. फलक कक्षा में ऐसे स्थान पर रखा जाए, जिससे कक्षा के सब विद्यार्थी उसपर लिखा हुआ मज़मून पढ़ सकें। १०. अगर अध्यापक लगातार बहुतेरी पंक्तियाँ फलक पर लिखना चाहे और सब पंक्तियाँ एक ही समय वहाँ नहीं लिखी जा सकती हों, तो वह पहले ऊपर की पंक्तियाँ पोंछ ले, वहीं नयी पंक्तियाँ लिखे और उसके बाद नीचेवाली हटाकर वहीं लिख दे। इससे बालकों के लेखन-कार्य के पूर्ण होने की प्रतीक्षा करने की ज़रूरत नहीं होगी और समय की बचत होगी। ११. पाठ पूरा होने के बाद फलक साफ करके अध्यापक कक्षा से बाहर जाए। १२. पाठ की टिप्पणी तैयार करते वक्त, विद्यार्थी-शिक्षक यह सोच ले कि उसे फलक पर कोई चित्र या आकृति खींचनी हो, तो वह सुव्यवस्थित हो।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: १२ :

शब्द-सम्पत्ति का विकास

(१) **यह विकास क्या है**? मनुष्य अपने विचार, विकार भाषा द्वारा व्यक्त करता है। अर्थ-सहित ध्वनि-समुच्चय शब्द कहलाता है। इन्हीं स-अर्थ ध्वनि-समुच्चयों – शब्दों – से भाषा का निर्माण होता है। इसलिए शब्द ही भाषा की सम्पत्ति है। मनुष्य भाषा की इस शब्द-सम्पत्ति को अपनाता है, इसका मतलब यह है कि वह व्यवहार में आवश्यक शब्दों को जान लेता है, उनका सही उच्चारण वह अपनाता है, बोलते या लिखते समय उनका उचित प्रयोग करने की कला सीखता है। बालक बचपन में अपनी मातृभाषा के शब्द आहिस्ता-आहिस्ता अपनाता जाता है। अब जब उसे हिन्दी भाषा सिखायी जाएगी, तब असल में हिन्दी शब्दों को तथा उनका बोलते या लिखते समय उचित प्रयोग करने की कला को उसे अपनाना चाहिए। इस क्षेत्र में आगे बढ़ना, अधिकाधिक शब्दों की जानकारी पाना, उनका समुचित प्रयोग करने की कला सीखना ही शब्द-सम्पत्ति का विकास करना कहलाता है। इसलिए बालकों को नये-नये शब्दों का परिचय कराते समय अध्यापक को यह ध्यान में रखना चाहिए कि वे उन शब्दों का सही उच्चारण करें और उनका उचित प्रयोग करने की कला सीख लें।

शब्द-सम्पत्ति का विकास करने के लिए अगर कोई विद्यार्थी शब्द-कोश लेकर सैकड़ों शब्दों को ज़बानी याद करने की कोशिश करे, तो उसकी मेहनत में से अधिकांश बेकार ही साबित हो जाएगी। 'मैंने पचीस हज़ार शब्द कण्ठस्थ किये हैं' जैसे शब्दों में, कहनेवाले का जो घमण्ड प्रकट होता है, उसका नशा तभी उतर जाएगा, जब उसपर उन शब्दों का प्रयोग करने की नौबत होगी। कहने का मतलब इतना ही है, बालक ने कितने शब्द कण्ठस्थ किये हैं, इसकी अपेक्षा वह कितने शब्दों का व्यवहार में समुचित प्रयोग कर सकता है, इसपर उसकी शब्द-सम्पत्ति का महत्त्व अधिक निर्भर होता है। जो शब्द प्रतिदिन के व्यवहार में जितने अधिक प्रयुक्त होते हैं, उन्हें ध्यान में आसानी से रखा जा सकता है। जिन शब्दों का प्रयोग करने का मौका साल में एक बार भी नहीं आता हो, उन्हें कण्ठस्थ करना बालकों को बोझ-सा प्रतीत होगा।

(२) **विकास की रूपरेखा** –– बालकों को नये शब्दों का परिचय कराते वक्त कई सिद्धान्तों की ओर अध्यापक को खास ध्यान देना चाहिए। एक तो यह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है कि वह कितने शब्दों का परिचय कराए और दूसरे, वे कौन-से शब्द हों। तीसरी बात है, उनका परिचय कैसे कराया जाए और अन्त में, इन शब्दों के ज्ञान को कायम करने की दृष्टि से उसे कोशिश किस प्रकार करनी चाहिए।

एक साल की अवधि में कितने शब्द पढ़ाये जाएँ ? पाँचवीं कक्षा में अहिन्दी भाषी विद्यार्थियों को कितने हिन्दी शब्द पढ़ाये जाएँ ? इस सवाल का ठीक जवाब देना कठिन है। फिर भी भाषा-कोविदों की राय ध्यान में लेकर हम कुछ विचार प्रकट कर सकते हैं। आम तौर पर साधारण मनुष्य अपने नित्य के व्यवहार में पाँच हज़ार से अधिक शब्दों का प्रयोग नहीं करता। यदि किसी आदमी का व्यवहार-क्षेत्र विशाल हो तो यह संख्या दस हज़ार से भी ज़्यादा हो सकती है। पाँचवीं कक्षा के बालक की ग्रहण-शक्ति, हिन्दी की पढ़ाई के लिए उसे मिलनेवाला समय, हिन्दी की शिक्षा का उद्देश्य, उसका अपनी मातृभाषा का ज्ञान आदि को ध्यान में लेते हुए हम कह सकते हैं कि पाँचवीं कक्षा में बालक को हिन्दी के छः सौ से सात सौ शब्द ही पढ़ाये जाएँ। छठी कक्षा में यह संख्या आठ सौ तक जाएगी, तो सातवीं कक्षा में एक हज़ार तक ही हो सकती है। मतलब इतना ही है कि तीन साल की हिन्दी की पढ़ाई के बाद अहिन्दी भाषी बालक को हिन्दी के करीब ढाई हज़ार से तीन हजार तक शब्दों का परिचय हो जाएगा।

गुजराती, मराठी, बँगला भाषा-भाषी विद्यार्थियों को इतने शब्दों को अपनाना कठिन नहीं होगा, क्योंकि इनमें से हर एक भाषा और हिन्दी में सैकड़ों शब्द समान ही हैं। मगर अँग्रेज़ी, कन्नड़, तमिल, तेलुगु आदि भाषा-भाषी विद्यार्थियों की हिन्दी की शब्द-सम्पत्ति इससे भी कम होगी।

वैसे ही यह बताना भी कठिन है कि हर एक पाठ में कितने शब्द पढ़ाएँ। साधारणतः दस-बारह से अधिक शब्द पढ़ाना उचित नहीं होगा, क्योंकि शब्दों के परिचय के साथ-साथ उनका ज्ञान स्थिर करने की भी कोशिश की जानी चाहिए।

(३) **शब्दों का चुनाव** करते समय अध्यापक को कुछ सिद्धान्तों को ध्यान में रखना चाहिए। वह मूर्त (concrete) वस्तुओं के नाम पहले बताएँ और उसके बाद प्रेम, दया आदि भावों के। पास की वस्तुएँ पहले आएँगी। पाँचवीं और छठी कक्षा में नीचे लिखे अनुसार विषय लेकर शब्दों का चुनाव किया जाए –

कक्षा का कमरा, पाठशाला, पाठशाला का मैदान – क्रीडांगण, घर, बगीचा, गाय, कुत्ता आदि पालतू जानवर और पशु-पंछी, कुछ फूल-पेड़ और फल, सब्ज़ी-मण्डी, डाकघर, खेल-कूद खान-पान की चीज़ें, खेती-बाड़ी, दिन और मौसम, त्यौहार-उत्सव-समारोह, यातायात के साधन, बस का अड्डा, रेल्वे स्टेशन, सिक्के, रंग, अवस्था-सूचक विशेषण, संख्या-विशेषण शरीर के अवयव और प्रतिदिन के कार्य आदि।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इनसे सम्बन्धित संज्ञाएँ, विशेषण, अविकारी शब्द, क्रियाएँ – आवश्यकता के अनुसार अध्यापक चुन ले और उनका परिचय कराए। अब हम यह देखेंगे कि इन शब्दों का परिचय कैसे कराया जाए।

(४) **पुरानी पद्धति** — व्याकरण-अनुवाद प्रणाली को अपनाकर पढ़ाने-वाले अध्यापक आम तौर पर विद्यार्थियों के सामने हिन्दी शब्दों का अर्थ प्रादेशिक भाषा में दिया करते हैं। अनुवाद-माला की पुस्तकों में ऐसे शब्दों के छोटे-छोटे 'संग्रह' हुआ करते हैं। अध्यापक विद्यार्थियों से कहते हैं कि इन शब्दों को वे ज़बानी याद करें। विद्यार्थी उन्हें रटते हैं और ज़बानी याद करने की चेष्टा करते हैं। असल में इस तरह शब्दों को 'रटना' बड़ा ही नीरस प्रतीत होता है। इन शब्द-संग्रहों में कई ऐसे शब्द भी हुआ करते हैं, जिनका प्रयोग करने का मौका बालकों को बहुत ही कम मिलता है। कई अध्यापकों का यह अनुभव रहा है कि विद्यार्थी इस तरह शब्दों को रटने में और कण्ठस्थ करने में अधिक उत्साह नहीं दिखलाते।

आधुनिक शिक्षा-शास्त्र ने इस तरह के 'रटने' की क्रिया की कटु से कटु आलोचना की है। कई बार देखा गया है कि विना अर्थ को जाने हुए भी विद्यार्थी शब्दों को रटते हैं। सबसे खतरनाक बात यही है। विद्यार्थियों की मानसिक शक्तियों पर यह बोझ किसलिए लादा जाता है? दूसरी बात यह है कि इस तरह 'दोहराने' में सिर्फ जिह्वा पर संस्कार होता है; अगर उन शब्दों को लिखवाया भी जाए, तो हाथ पर संस्कार होगा। मगर इससे अन्य ज्ञानेन्द्रियों पर संस्कार कहाँ तक होता है? नयी प्रणाली के निर्माताओं ने इस प्रणाली की और एक खामी बतलायी है। वह यह है कि विचार और अभिव्यक्ति में जहाँ प्रादेशिक भाषा माध्यम होती है, उनमें सीधा सम्बन्ध स्थापित नहीं किया जाता। उनकी राय में यह हानिकारी है।

आधुनिक अध्यापन-कला के प्रवर्तकों ने, नीचे दिये अनुसार, शब्दों का परिचय कराने की कुछ प्रणालियाँ बतला दी हैं।

(५) **नयी प्रणालियाँ : १. प्रत्यक्ष वस्तु** दिखाकर या **क्रिया** (action) दिखाकर उसका नाम बताना। पाँचवीं कक्षा के प्रारम्भिक पाठों में इसी तरह शब्दों का परिचय कराया जाता है। उदाहरण के लिए – संज्ञाएँ : मेज़, कुर्सी, कलम, दवात, दरवाज़ा, खिड़की, अलमारी, घड़ी, कमीज़, टोपी आदि। कुछ **क्रियाएँ** :— बैठना, चलना, लिखना, उठना, पकड़ना, पटकना, दौड़ना, पोंछना आदि।

२. जहाँ वस्तु दिखाना सम्भव या इष्ट न हो, वहाँ उसका **नमूना – मॉडेल – दिखाकर** शब्द-परिचय कराना।

३. चित्र दिखाकर शब्दों का परिचय करना। जहाँ वस्तु, उसका नमूना दिखाना सम्भव या इष्ट नहीं होता, वहाँ उसका चित्र दिखाकर नये शब्दों का

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

परिचय करा दें। सब्ज़ी-मंडी, खेल-कूद का मैदान, कहानी की कोई घटना, आदि के चित्रों से इसमें लाभ उठाया जा सकता है। 'किसान' पर पाठ पढ़ाया जा रहा हो, तो उसमें ऐसा चित्र दिखा दें कि जिसमें यह बतलाया हो कि किसान खेत में तरह-तरह के काम कर रहा है। उससे खेत, हल चलाना, खेत जोतना, बीज बोना, पौधा आदि शब्द पढ़ाय जा सकेंगे। नारियल का पेड़ और उससे बनायी अन्य वस्तुओं के चित्र दिखाकर शब्द पढ़ाये जा सकते हैं।

छोटे बालकों को इससे बड़ा लाभ पहुँचता है। एक तो वस्तुओं को देखने से उनमें रुचि जागृत होती है, अवधानपूर्वक वे पढ़ने लगते हैं। उसी तरह आँखों पर संस्कार होता है। इससे शब्दों को वे अच्छी तरह ध्यान में रख सकते हैं।

४. हिन्दी के कठिन शब्दों का अर्थ आसान, परिचित हिन्दी शब्दों में बताना। जैसे वह आदमी **सोचता** है – वह आदमी **विचार करता** है। वह **इम्तहान में** असफल हुआ – वह **परीक्षा में** असफल हुआ।

५. शब्द या मुहावरे का अर्थ आसान हिन्दी में समझाया जाए। जैसे – रघुवीर ने जब देखा कि अब भरपेट खाना भी मुश्किल है, तब उसकी **आँखें खुल गयीं**। — तब उसकी समझ में आया कि परिस्थितियाँ कितनी कठिन हैं और अपनी भूल उसे दिखायी देने लगी।

६. विरुद्ध (विपरीत) अर्थवाले परिचित शब्द बताना – जैसे **बासी** रोटी खाना उसे पसन्द नहीं आता था — जो रोटी बासी हो, याने ताज़ी न हो, अभी-अभी बनायी हुई न हो, वह खाना उसे पसन्द नहीं आता था। वह **बेगुनाह** था — वह **गुनहगार** नहीं था।

७. अब उपर्युक्त प्रणालियों में से एक भी काम में न आती हो, तो अध्यापक हिन्दी शब्द का अर्थ विद्यार्थियों की मातृभाषा में बतला दे। पहले वह यह देखे कि किसी विद्यार्थी के ध्यान में उस शब्द का अर्थ आया है या नहीं। अगर आया हो तो उससे ही यों पूछा जाए – इसे तुम्हारी भाषा में क्या कहते हैं? जब उसकी ज़बान से वह शब्द अन्य विद्यार्थी सुनेंगे, तो उनके भी ध्यान में वह हिन्दी शब्द आएगा।

(६) **नये शब्दों का ज्ञान स्थायी करना** — हिन्दी के शब्दों को सिर्फ एक या दो बार सुनकर या पढ़कर विद्यार्थी ध्यान में नहीं रख सकते। अध्यापक को उन शब्दों को आत्मसात् करने में विद्यार्थियों की मदद करनी चाहिए। यह कार्य यों किया जा सकता है —

उपर्युक्त प्रणालियों में से किसी एक या अधिक से हिन्दी शब्दों का परिचय कराया जाए। अधिक ज्ञानेन्द्रियों पर संस्कार करने की कोशिश करें। शब्द दोहरा लिया जाए, वस्तु दिखाकर और शब्द फलक पर लिखकर आँखों पर संस्कार कराया जाए। ये शब्द विद्यार्थियों को लिखने के लिए दिये जाएँ। उन्हें

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इन शब्दों को कण्ठस्थ करने की सूचना दी जाए। प्रश्न पूछकर उन्हीं शब्दों का अधिक से अधिक प्रयोग करा लें। रिक्तपूर्ति, वाक्यों में प्रयोग, अर्थ लिखना आदि विविध व्यवसाय (exercises) कराये जाएँ। समानार्थी या विरुद्ध अर्थवाले शब्दों की सूची बनाकर चाहे तो विद्यार्थियों के सामने रख दें। आवश्यकता के अनुसार यह भी दिखा दें कि उन्हें शब्दकोश का उपयोग कैसे करना चाहिए।

(७) **दोहरावट या आवृत्ति** (drilling) पुराने ज़माने से 'दोहरावट' या 'ज़बानी अभ्यास' का प्रयोग कण्ठस्थ करने में विद्यार्थी करते आये हैं। इसमें कोई शब्द या पंक्ति या वाक्य बार-बार कहा जाता था। 'रटना' क्रिया का भी इसके लिए प्रयोग किया जाता है। कम-से-कम बार दोहराकर कण्ठस्थ करने की शक्ति से विद्यार्थी की बुद्धिमानी का अनुमान किया जाता था। आज भी दोहरावट को अध्ययन-अध्यापन में स्थान दिया गया है।

(अ) **पाठ में दोहरावट की आवश्यकता** — 'दोहरावट' एक तरह से 'अभ्यास' ही है, जिससे आदत डाली जाती है। किसी शब्द को दोहराने से उसका अर्थ और उच्चारण अपनाया जा सकता है। आवृत्ति, कण्ठस्थ या ज़बानी याद करने का महत्त्वपूर्ण साधन है।

(आ) **'दोहरावट' – कहाँ ?** शब्दों या पद्यखण्डों को कण्ठस्थ करते वक्त या यों कह सकते हैं कि जहाँ-जहाँ कुछ ज़बानी याद करना है, वहाँ इसको ही काम में लाया जाता है। पाठ पढ़ाते समय अध्यापक विद्यार्थियों से नये शब्दों को दोहरा लेता है। इससे सही उच्चारण ग्रहण करने में विद्यार्थियों की मदद की जाती हैं। शुरू-शुरू में कुछ वाक्य भी दोहरा लिये जाएँ।

(इ) **दोहरावट के प्रकार** — दोहरावट के दो प्रकार हैं — १. **व्यक्तिगत** (individual) और, २. **सामूहिक** (chorus)। फलक पर लिखे हुए या अध्यापक द्वारा कहे गये शब्द को एक-एक विद्यार्थी जब स्वतंत्र रूप से दोहराता जाता है, तब तक 'व्यक्तिगत' दोहरावट होती है और पूरी कक्षा या अधिकांश विद्यार्थी सामूहिक रूप से-एक साथ – दोहराएँगे, तब वह सामूहिक दोहरावट ही है। पाठ में दोनों तरह की दोहरावट ज़रूरी होती है।

(ई) **दोहरावट : कैसे ?** — आम तौर पर हरएक नया शब्द विद्यार्थियों से दोहरा लिया जाए। हिन्दी भाषा आसान है, फिर भी दोहरावट की ज़रूरत इससे कम नहीं दिखायी देती। जो शब्द उच्चारण की दृष्टि से आसान है, वह अधिक बार न दोहरा लें, तो चल सकता है; मगर जिन शब्दों के उच्चारण में कोई विशेषता है, उन्हें अधिक बार दोहराया जाए। जैसे **फरियाद, काफी, गरीब, कहना, ज़रूरी, गौर, गैर** वगैरह शब्द अध्यापक कहेंगे और विद्यार्थी उनके अनुकरण में उनको दोहराएँगे। शुरू में सामूहिक दोहरावट करा लें और उसके बाद

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

व्यक्तिगत। जरूरत हो तो उसमें परिवर्तन किया जाए। विद्यार्थी शब्दों का जब उच्चारण करतें हैं, अध्यापक गौर से सुने और यह देखे कि कोई विद्यार्थी गलत उच्चारण तो नहीं कर रहा है। गलत उच्चारण करनेवाले विद्यार्थी से स्वतंत्र रूप से सही शब्द दोहरा लिये जाएँ और उसी क्षण गलतियों को दुरुस्त कराया जाए।

उच्च कक्षाओं में दोहरावट का महत्त्व उतना नहीं है, जितना वह निम्न कक्षाओं में होता है।

शुरू-शुरू में विद्यार्थियों से प्रश्नों के जवाब भी दोहरा लिये जाएँ। जैसे – यह क्या है? जवाब – 'यह मेज है।' यह उत्तर दो-चार विद्यार्थियों से दोहरा लें।

नये शब्दों को आत्मसात् करा लेने की दृष्टि से अध्यापक विद्यार्थियों को सूचना दे कि घर पर वे इन नये शब्दों को बार-बार पढ़ें ओर उन्हें जबानी याद करें।

(८) **शब्दकोश का उपयोग** — निम्न कक्षाओं में अध्यापक नये शब्दों का अर्थ स्पष्ट करता है। इसके लिए बालक पूर्णतः अध्यापक पर निर्भर रहते हैं। मगर उच्च कक्षाओं में अध्यापक द्वारा हरएक शब्द का अर्थ दिया जाना सम्भव नहीं है, या इष्ट भी नहीं है। शब्दों के अर्थ समझाने के लिए निम्न कक्षाओं में जिन तरीकों का अवलम्बन किया जाता है, उनमें से उच्च कक्षाओं में केवल हिन्दी समानार्थक शब्द देना या भाव स्पष्ट करना आदि को ही काम में लाया जाता है। साथ-साथ विद्यार्थियों को चाहिए कि भाषाज्ञान के विकास में वे अब स्वावलम्बी बनें; इस दृष्टि से अध्यापक शब्दकोश का उपयोग करने में उनको प्रोत्साहन दे।

सातवीं-आठवीं कक्षा से ही इस दृष्टि से अध्यापक को कदम उठाना चाहिए। कठिनाई इसमें यह है कि हरएक विद्यार्थी के पास शब्दकोश होता ही है, सो बात नहीं है। अध्यापक विद्यार्थियों को शब्द-कोश खरीदने को कह दे तथा पाठशाला के पुस्तकालय में अच्छे शब्द-कोश रखवा ले। अध्यापक को चाहिए कि एक ही शब्द के भिन्न-भिन्न अर्थों में से सुयोग्य अर्थ को चुनने में वह विद्यार्थियों का पथदर्शन करे। शब्दकोश का उपयोग करने की आदत अगर विद्यार्थियों में डाली जाए, तो वे अपनी प्रगति पाठ्य-पुस्तक की दृष्टि से ही नहीं, अन्यत्र भी करेंगे और अपनी शब्द-सम्पत्ति का विकास कर लेंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: १३ :

'बातचीत' के पाठ

नौवें अध्याय में यह स्पष्ट किया गया है कि अहिन्दी भाषी प्रदेशों में हिन्दी की पढ़ाई पाँचवीं कक्षा से ही शुरू की जाए। शुरू-शुरू के पाठों की रूपरेखा भी नियत कर देने की कोशिश की गई। उससे यह ध्यान में आया होगा कि हिन्दी की पढ़ाई की प्रारम्भिक अवस्था में हमें सम्भाषणात्मक प्रणाली को अपनाना होगा। इस प्रारम्भिक अवस्था में 'बातचीत' (oral composition) के पाठों का स्थान महत्त्वपूर्ण माना जाता है। इस अध्याय में ऐसे पाठों का महत्त्व, उससे होनेवाले लाभ, ऐसे पाठ की रूपरेखा आदि के बारे में कुछ विचार प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

(१) उद्देश्य और महत्त्व — अध्यापक बालकों पर हिन्दी भाषा का अधिकाधिक संस्कार करना चाहता है, ताकि वे उस भाषा को आसानी से अपनाने लगें। इसलिए कक्षा की चहारदीवारी के भीतर वह हिंदी का वातावरण बना लेने की कोशिश करता है। वह स्वयं हिंदी में बोलता है, बालक प्रश्नों के जवाब हिन्दी में देते हैं, शब्दों या वाक्यों को दोहराते हैं इससे बालकों के कानों पर संस्कार होगा। हिन्दी में बोलने की जब वे कोशिश करते हैं, तब उनकी ज़बान पर संस्कार होता है। विद्यार्थियों के उच्चारण की ओर अध्यापक को गौर से ध्यान देना चाहिए और उच्चारण को अपनाने में उनकी मदद करनी चाहिए। पढ़ाते समय अध्यापक कुछ उपकरणों (lesson aids) को काम में लाता है, फलक पर शब्द या वाक्य लिखता है, उससे विद्यार्थियों की आँखों पर संस्कार होता जाता है। इससे विद्यार्थियों को लाभ पहुँचता है।

शिक्षा-शास्त्र और मनोविज्ञान के कई महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों की नींव पर ऐसे पाठों की रचना की जाती है। विद्यार्थियों की क्रियाशीलता और क्रीड़ासक्ति से लाभ उठाया जाता है। वे कुछ न कुछ करते रहते हैं, उससे ऐसे पाठ रोचक होते हैं। इसलिए अवधान की समस्या हल हो जाती है। शब्दों की दोहरावट आदि से विद्यार्थियों का प्राप्त ज्ञान स्थिर होता जाता है। वस्तुओं और शब्दों — विचार और अभिव्यक्ति में सीधा सम्बन्ध भी स्थापित हो जाता है।

फलतः विद्यार्थियों में श्रवण और भाषण की आदत ठोस बुनियाद पर डाली जाती है। बातचीत के पाठों द्वारा हिन्दी भाषा सुनने और हिन्दी में बोलने के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अभ्यास से भाषा-ज्ञान ग्रहण करने, उसे कायम करने और विकास करने में बालकों की मदद करना ही अध्यापक का प्रधान लक्ष्य होता है।

(२) **आवश्यक उपकरण** -- नये शब्दों का परिचय कराने तथा ज्ञानेन्द्रियों पर किये जानेवाले संस्कारों में बहुलता और विविधता का निर्माण करने के लिए 'बातचीत' के पाठ पढ़ाते वक्त अध्यापक आवश्यक उपकरणों को काम में लाता है। उपर्युक्त पंक्तियों में यह स्पष्ट हुआ होगा कि ऐसे पाठों में ज्ञानेन्द्रियों पर किये जानेवाले संस्कार किस तरह अधिक और विविध हो सकते हैं। बातचीत को आगे बढ़ाने में यह उपकरण अवश्य सहायक होते हैं। पाठ के स्वरूप के अनुसार निम्नलिखित उपकरण चुने जाएँ - १. प्रत्यक्ष वस्तुएँ — मेज़, कुर्सी, तिपाई, घड़ी, किताब, अलमारी, कलम, दवात आदि अनेकानेक वस्तुएँ, जो कक्षा में ही होती हैं। **२. नमूने** - मॉडेल - हवाई जहाज़ आदि। **३. चित्र** - गाय, घोड़ा, हाथी, जहाज, रेलगाड़ी, सब्ज़ी-मंडी आदि के बारे में पढ़ाये जानेवाले पाठों में उपयुक्त चित्र। कहानी के पाठ में भी ऐसे चित्रों की आवश्यकता होती है। ४. नक्शे और आलेख।

इन उपकरणों का उपयोग किस तरह किया जाए, आदि की जानकारी अन्यत्र दी गयी है।

(३) **कुछ सूचनाएँ** -- १. पाठ पढ़ाने के पहले अध्यापक उसकी रूपरेखा अवश्य तैयार करे। जो उपकरण आवश्यक हों, उन्हें जुटा ले। यह भी तय करे कि पाठ में किन नये शब्दों का तथा नयी वाक्य-रचना का परिचय कराया जाए। २. वह नये शब्दों को तथा आवश्यकता के अनुसार वाक्यों को भी विद्यार्थियों से दोहरा ले। ३. अध्यापक यह देखे कि फलक पर लिखे हुए शब्दों को विद्यार्थी अपनी कापी में लिख लेते हैं या नहीं और उनमें से हरएक शब्द का मतलब उन्होंने अच्छी तरह से ग्रहण किया है या नहीं। ऐसे नये शब्दों को ज़बानी याद करने की सूचना विद्यार्थियों को दी जाए। उनसे लेखन का अभ्यास करा लिया जाए। ४. जहाँ नितान्त आवश्यक हो, वहीं अध्यापक प्रादेशिक भाषा का उपयोग करे। ५. जहाँ जरूरी होगा, वहाँ विद्यार्थियों की मातृभाषा और हिन्दी की वाक्य-रचना, पद-रचना आदि की तुलना करते हुए उनकी समता या असमानता स्पष्ट करे। व्याकरण की बारीकियों में विद्यार्थियों को न घसीट ले जाते हुए भी यह काम किया जा सकता है। संज्ञाओं के एकवचन और बहुवचन के तथा क्रियाओं के रूप आदि में इससे लाभ उठाया जा सकता है।

(४) **पाठ की टिप्पणी** — अध्यापक-विद्यार्थियों के मार्गदर्शन के लिए यहाँ 'बातचीत' के पाठ की दो टिप्पणियाँ (lesson-notes) प्रस्तुत की जा रही हैं।

उनके अनुसार वे और टिप्पणियां तैयार कर लें। पहली टिप्पणी उन विद्यार्थियों के लिए है, जो पाँचवीं कक्षा में अभी-अभी आये हैं। यह हिन्दी के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रथम पाठ की टिप्पणी है। इसलिए आवश्यक सूचनाएँ देने के लिए मातृभाषा को काम में लाना अनिवार्य है। पहले पाठ में ही इसकी आवश्यकता होगी। दूसरे पाठ से उसे दोहराने की सूचना देने की ज़रूरत नहीं रहेगी। विद्यार्थी अपने आप उन शब्दों या वाक्यों को दोहराएँगे।

'बात-चीत' के पाठ का उद्देश्य आम तौर पर 'शब्द-सम्पत्ति का विकास करते हुए हिन्दी में वाक्य-रचना की जानकारी प्राप्त करने में विद्यार्थियों की सहायता करना' होता है। ऐसे पाठ में 'हेतु-कथन' की भी आवश्यकता नहीं होती। 'पाठ की टिप्पणी' लिखने से पूर्व आवश्यक जानकारी (कक्षा विद्यार्थियों का पूर्व-ज्ञान, पाठ का उद्देश्य आदि) लिखें।

पाठ की टिप्पणी — १

आवश्यक जानकारी : पाठ-क्रमांक ······ तारीख ······

१. विद्यार्थी-अध्यापक का नाम ······

२. पाठशाला का नाम ······

३. कक्षा ··· ५ वीं ४. विद्यार्थियों की औसत उम्र ··· १० वर्ष

५. घण्टा ··· तीसरा ६. समय ··· ३५ मिनट

७. **पूर्व-ज्ञान** — विद्यार्थी सिर्फ नागरी लिपि जानते हैं। (नागरी में लिख सकते हैं और लिखा हुआ पढ़ सकते हैं।)

८. **पाठ का उद्देश्य** — हिन्दी के कुछ शब्दों को अपनाकर साधारण वाक्य में उनका प्रयोग करने में विद्यार्थियों की मदद करना।

९. **आवश्यक उपकरण** — मेज़, कुर्सी, कलम, दवात, अलमारी, तिपाई, घड़ी, किताब।

× × ×

विषय	**प्रणाली**
प्रस्तावना	**(अध्यापक विद्यार्थियों को उनकी अपनी भाषा में समझाता है कि वह कुछ चीजें दिखाएगा, हिन्दी में उनके नाम बताएगा, विद्यार्थी इन शब्दों को गौर से सुनेंगे और उन्हें दोहराएँगे।)**

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विषय-प्रतिपादन	(**किताब** दिखाकर) **किताब**
किताब	(अध्यापक यह शब्द सुनाएगा और विद्यार्थी उसका अनुकरण करते हुए उसे दोहराएँगे । इस तरह सात-आठ बार अभ्यास (drilling) कराया जाएगा । हरएक शब्द के सम्बन्ध में यही किया जाएगा । अध्यापक हरएक शब्द फलक पर भी लिखेगा ।)
कलम	(**कलम** दिखाकर) **कलम** (अभ्यास)
दवात	(**दवात** दिखाकर) **दवात** (अभ्यास)
मेज़	(**मेज़** दिखाकर) **मेज़** (अभ्यास)
कुर्सी	(**कुर्सी**) दिखाते हुए) **कुर्सी** (अभ्यास)
	इसके बाद अन्य वस्तुएँ दिखाकर सवाल पूछे जाएँगे । सवालों के जवाबों का भी सामूहिक और व्यक्तिगत रूप में अभ्यास करा लिया जाएगा ।
यह **किताब** है ।	(**किताब** दिखाकर) यह क्या है ?
यह **कलम** है ।	(**कलम** दिखाकर) यह क्या है ?
यह **मेज़** है ।	(**मेज़** दिखाकर) यह क्या है ?
यह **घड़ी** है ।	(**घड़ी** दिखाकर) यह **घड़ी** है ।
यह **तिपाई** है ।	(**तिपाई** दिखाकर) यह **तिपाई** है ।
वह अलमारी है ।	(**अलमारी** दिखाकर) यह **अलमारी** है ।
	(ऊपर के वाक्यों का अभ्यास कराया जाने के बाद उन वस्तुओं में से एक एक
यह घड़ी है ।	को दिखाकर) यह क्या है ?
यह अलमारी है ।	यह क्या है ?
यह तिपाई है ।	यह क्या है ?
संकलन	(उपर्युक्त वस्तुओं में से चार-पाँच वस्तुएँ दिखाकर सवाल पूछना) यह क्या है ?

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उपयोजन — विद्यार्थी अपनी कापी में इन वस्तुओं के (हिन्दी में) नाम लिखेंगे।

स्वाध्याय — पढ़ाये हुए शब्दों को याद करने को और उनका वाक्यों में प्रयोग करने को कहना। (जैसे – यह मेज़ है।)

× × ×

फलक-लेखन

मेज़	कलम	अलमारी	किताब
कुर्सी	दवात	तिपाई	घड़ी

× × ×

पाठ की टिप्पणी – २

पाँचवीं कक्षा : समय – ३० मिनट

पूर्व-ज्ञान –– विद्यार्थियों को दो हफ्ते तक हिन्दी पढ़ायी गयी है।

पाठ का उद्देश्य –– सम्भाषण द्वारा **में** और **पर** विभक्तियों का प्रयोग समझ लेने में विद्यार्थियों की सहायता करना।

आवश्यक उपकरण –– कागज़, दवात, थाली, गिलास और पानी, रूमाल घड़ी आदि।

× × ×

विषय	प्रणाली
प्रस्तावना	
यह मेज़ है।	(**मेज़** दिखाकर) यह क्या है?
यह कागज़ है।	(**कागज़** दिखाकर) यह क्या है?
यह दवात है।	(**दवात** दिखाकर) यह क्या है?
विषय-प्रतिपादन **थाली**	(**थाली** दिखाकर) यह **थाली** है। (**थाली** शब्द फलक पर लिखकर और उच्चारण का अभ्यास कराया जाए।)
मेज़ पर	देखो, कागज़ **मेज़ पर** है। (**मेज़ पर** शब्द फलक पर लिखे।)
कागज़ मेज़ पर है।	कागज़ कहाँ है?
दवात मेज़ पर है।	दवात कहाँ है?
किताब मेज़ पर है।	किताब कहाँ है?
दवात किताब पर है।	(किताब पर दवात रखकर) दवात कहाँ है?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कलम कागज़ पर है।	(कागज़ पर कलम रखकर) कलम कहाँ है ?
यह गिलास है।	(पानी से भरा गिलास दिखाते हुए) यह क्या है ?
	सुनो, **गिलास में** पानी है।
पानी गिलास में है।	पानी कहाँ है ?
स्याही दवात में है।	स्याही कहाँ है ?
गिलास थाली में है।	(थाली में गिलास रखकर) गिलास कहाँ है ?
अलमारी में किताबें हैं।	अलमारी में क्या है ?
	(रूमाल दिखाकर) यह **रूमाल** है।
रूमाल	(शब्द दोहरा लेना और फलक पर लिखना)
घड़ी रूमाल में है।	(रूमाल में घड़ी रखकर) घड़ी कहाँ है ?
मेज़पर किताब, गिलास और रूमाल हैं।	मेज़ पर क्या है ?
संकलन	किताबें किसमें हैं ? दवात कहाँ है ? मेज़ पर क्या है ? गिलास में क्या है ?
उपयोजन	वाक्य पूर्ण करो :– पुस्तक – तसवीर है। थाली – फल है। ज़मीन – मेज़ है। स्याही – में है।
स्वाध्याय	वाक्यों में प्रयोग करो — स्याही, पानी, पुस्तक, ज़मीन, मेज़, तिपाई।

फलक-लेखन

थाली	थाली में	रूमाल	रूमाल में
मेज़	मेज़ पर	गिलास	गिलास में

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: १४ :

गद्य (निबन्ध) का अध्यापन

(१) **भूमिका** -- अहिन्दी भाषी प्रदेश की पाठशालाओं में हर कक्षा के लिए हिन्दी की एक-एक पाठ्य-पुस्तक नियत की जाती है। उसमें कुछ गद्य-पाठ तथा कुछ पद्य-पाठ होते हैं। पाँचवीं कक्षा की पाठ्य-पुस्तक के आरम्भ में 'बातचीत' के कुछ पाठ होते हैं और उसके बाद कुछ अन्य पाठ होते हैं। इनमें कुछ छोटी-छोटी कहानियाँ और निबन्ध तथा कविताएँ होती हैं। दो-चार पाठ सम्भाषणत्मक (dialogue) भी अवश्य रहते हैं। 'बातचीत' के पाठ मौखिक वाक्यरचना (oral composition) पढ़ाने के हेतु हुआ करते हैं; छठी कक्षा के बाद ऐसे पाठों की आवश्यकता नहीं होती। सारांश यह कि हिन्दी की पाठ्य-पुस्तक में जो गद्य-पद्य पाठ होते हैं, उनका स्वरूप यों होता है — निबन्ध, कहानी, सम्भाषण (संवाद), कविता।

यह आगे के अध्यायों में बतलाया जाएगा कि कहानी आदि का अध्यापन कैसे किया जाए। यहाँ निबन्ध के पाठ के अध्यापन में जो विचार सहायक होंगे, उनका विवेचन किया जा रहा है। हरएक पाठ पढ़ाते समय हमें हरबार्ट की पद्धति को अपनाना होगा।

(२) **महत्त्व और उद्देश्य** -- पाठ्य-पुस्तकों में विवरणात्मक, कथनात्मक, वर्णनात्मक, विवेचनात्मक निबन्धों का स्थान महत्त्वपूर्ण समझा जाता है। ऐसे पाठों को यहाँ जो स्थान दिया जाता है, उसके उद्देश्य के निम्नलिखित भिन्न-भिन्न पहलू होते हैं - (अ) विद्यार्थियों को नये-नये शब्दों से तथा भाषा की विशेषताओं से परिचित कराना। ख़ास तौर पर पाँचवीं, छठी और सातवीं कक्षा में इस पहलू का महत्त्व अधिक दिखायी देता है। घर, पाठशाला, पाठशाला का मैदान, रेल की यात्रा, बगीचा, डाकघर, गाय जैसे पालतू जानवर, सिक्के, सब्ज़ी-मण्डी की सैर - आदि पाठ्य-विषय देखिए। इनपर छोटे-छोटे निबन्ध लिखे हुए होते हैं। ऐसे पाठों के अध्यापन द्वारा विद्यार्थियों को नये-नये आवश्यक शब्द पढ़ाये जाते हैं, तरह-तरह की वाक्य-रचना का परिचय कराया जाता है। मतलब इतना ही है कि कुछ पाठों के अध्यापन द्वारा अध्यापक बालकों के भाषा-ज्ञान के विकास में सहायक होता है। प्रारम्भिक अवस्था में हिन्दी के अध्यापन का यह उद्देश्य महत्त्वपूर्ण है। (आ) भाषा द्वारा मनुष्य अपने विचार व्यक्त करता है, इसलिए अध्यापक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पाठ पढ़ाकर ज्ञानार्जन करने में विद्यार्थियों की मदद करेगा। ऐसे पाठ पढ़कर विद्यार्थी नयी-नयी बातें जान लेंगे। प्रारम्भिक अवस्था में इस ज्ञानार्जन के लक्ष्य की अपेक्षा भाषा के तत्त्व सिखलाने की ओर हिन्दी के अध्यापक को ध्यान देना चाहिए। नये विचार पढ़ाये ही न जाएँ, सो बात नहीं है, मगर हम चाहते हैं, कि पहले विद्यार्थी भाषा में अपनी योग्यता बढ़ा लें और दूसरी अवस्था में भाषा-ज्ञान के साथ-साथ विचार सम्पदा को भी आत्मसात् करते जाएँ। उच्च कक्षाओं में गद्य की भिन्न-भिन्न शैलियों से भी उन्हें परिचित कराया जा सकता है, मगर प्रारम्भिक अवस्था में पाठ पढ़ाते समय अध्यापक को विद्यार्थियों का भाषा-ज्ञान बढ़ाने में मार्गदर्शन करना चाहिए।

हिन्दी के ऐसे गद्य पाठ पढ़ाते हुए अध्यापक विद्यार्थियों को हिन्दी में अधिकाधिक शब्दों को जान लेने का, उनका प्रयोग करने का मौका दे। हिन्दी में पठन, श्रवण और भाषण का पर्याप्ति मात्रा में उनसे अभ्यास करा ले। इससे भाषा में उनकी योग्यता बढ़ेगी। उच्च कक्षा में भाषागत सौन्दर्य, भिन्न-भिन्न शैलियों की विशेषताएँ आदि की ओर अध्यापक संकेत मात्र कर सकता है। ऐसे गद्य पाठों का सूक्ष्मता के साथ विद्यार्थी जितना अधिक से अधिक अध्ययन करेंगे, उतना ही वह उन्हें लाभदायी होगा।

(३) **पाठ का अध्यापन (अ) प्रस्तावना** –– पाठ्य-विषय से सम्बन्धित किसी विषय पर अध्यापक विद्यार्थियों से प्रश्न पूछेगा। इससे प्राप्त ज्ञान का नये ज्ञान से सम्बन्ध जोड़ दिया जाएगा। प्रारम्भिक कक्षाओं में चित्र की सहायता से प्रस्तावना की जाए। इसमें जहाँ तक हो नये शब्दों का परिचय करा दे। (‘ पाठ की तैयारी – १ ’ से ‘ प्रस्तावना ’ पढ़ें।)

(आ) हेतु-कथन — अध्यापक यह कह दे कि अब हम पाठ-पुस्तक में से एक पाठ (शीर्षक बताया जाए) पढ़ेंगे।

(इ) विषय-प्रतिपादन — (क) अध्यापक द्वारा पाठ का पठन। (ख) विद्यार्थियों द्वारा मनोगत पठन और अध्यापक द्वारा दिये गये हेतु-प्रश्नों का जवाब ढूंढना। (ग) इसी समय अध्यापक दो-एक हेतु-प्रश्न देगा और उन्हें फलक पर लिखेगा। (घ) प्रश्नों द्वारा पाठ्य-विषय ग्रहण करने में विद्यार्थियों की सहायता करना। (ङ) आवश्यकतानुसार अध्यापक स्पष्टीकरण प्रस्तुत करेगा और आवश्यक जानकारी देगा। (च) कोई अपरिचित शब्द रह गया हो, तो उसका परिचय कराएगा।

(उ) संकलन – चार-पाँच सवालों द्वारा पाठ्य-विषय की आवृत्ति – पढ़ी हुई बातों को सार-रूप में ग्रथित करना।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(ऊ) **उपयोजन** — विद्यार्थियों द्वारा पाठ-पठन। शब्दों और मुहावरों का आवश्यकता के अनुसार वाक्यों में प्रयोग भी करा लें।

(ए) **स्वाध्याय** — पाठ्य-विषय पर या उससे सम्बन्धित विषय पर दस-बारह पंक्तियाँ लिखकर लाने को कहें या सवाल देकर उनके जवाब लिखने को कहा जाए। उदाहरण के लिए – 'गाय' पर पाठ पढ़ाया गया हो, तो कुत्ते की जानकारी लिखने को कहें।

उच्च कक्षाओं में प्रस्तावना के लिए चित्रों की ज़रूरत नहीं होती। उसमें विषय-प्रतिपादन का महत्त्व अधिक समझा जाता है।

(४) यहाँ विद्यार्थी-अध्यापकों के मार्गदर्शनार्थ पाठ की टिप्पणी का एक नमूना प्रस्तुत किया जा रहा है।

पाठ की टिप्पणी – १ (संक्षिप्त)

कक्षा –– ५ वीं **समय** –– ३० मिनिट

पूर्व-ज्ञान –– विद्यार्थियों ने दो महीने तक हिन्दी पढ़ी है।

पाठ का उद्देश्य— 'गाय' की जानकारी देते हुए हिन्दी के कुछ नये शब्दों तथा रचना-विशेषों को अपना लेने में विद्यार्थियों की मदद करना।

आवश्यक उपकरण –– एक चित्र (जिसमें गाय और उसका बछड़ा दिखाये गये हैं। गाय के सामने घास बिखरी हुई दिखायी देती है।), कंघी

× × ×

विषय	**प्रणाली**
(१) **प्रस्तावना**	तुम कुछ जानवरों को जानते हो।
मैं कुत्ते और घोड़े को जानता हूँ। मैं बिल्ली को जानता हूँ।	(एक से) तुम कौन-से जानवर जानते हो? (अन्य दो-चार विद्यार्थियों से यही सवाल पूछा जाए।)
यह गाय है।	(गाय का चित्र फलक पर लटकाकर) अब यह चित्र देखो। (**गाय** दिखाकर) यह कौन है? (यह देखो। **बछड़ा** दिखाते हुए) उसके पाँस उसका बच्चा भी है।
बछड़ा	इसे **बछड़ा** कहते हैं। (इसका और आगे के हरएक नये शब्द का अभ्यास कराना।)
सींग	(**सींग** दिखाकर) ये गाय के **सींग** है।
पूँछ	(**पूँछ** दिखाकर) यह **पूँछ** है।
घास	(**घास** दिखाकर) यह **घास** है।
घास हरी और पीली होती है।	घास कौन रंग होती है?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दूब	हरी और छोटी घास को **दूब** कहते हैं।
चमड़ी	(चमड़ी दिखाकर) यह **चमड़ी** है।
कंघी	(कंघी दिखाकर) यह **कंघी** है।
(२) **हेतु-कथन**	आज हम गाय के बारे में एक पाठ पढ़ेंगे।
(३) **विषय-प्रतिपादन**	अध्यापक पाठ पढ़कर सुनाएगा। विद्यार्थियों द्वारा मनोगत पठन।
हेतु-प्रश्न	दूध से कौन-कौन-सी चीज़ें बनती हैं? नीचे लिखे अनुसार सवाल पूछकर पाठ समझ लेने में विद्यार्थियों की मदद करना।
गाय सीधा-सादा और गरीब जानवर है।	गाय कैसा जानवर है?
लाल, भूरी, काली, सफ़ेद आदि	गाय कौन-कौन रंग होती है?
(ज़रूरत के अनुसार इन प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर यहाँ लिख दें।)	गाय के कितने पैर होते हैं? गाय के कितनी आँखें होती हैं? गाय के कितने सींग होते हैं?
नुकीले	(पेन्सिल की नोक दिखाकर) यह पेन्सिल है -- यह **नुकीली** है। गाय के सींग **नुकीले** होते हैं।
	गाय क्या खाती है? हम उसे खाने को क्या देते हैं? वह क्या पीती है? गाय हमें क्या देती है? गाय का दूध कैसा होता है?
दही	दूध से क्या बनता है?
मट्ठा	अच्छा, दही में कुछ पानी डालते हैं और उससे **मट्ठा** बनाते हैं।
मक्खन	उससे हमें **मक्खन** भी मिलता है।
घी	मक्खन से क्या बनता है?
जूते	चमड़ी से क्या बनाते हैं?
सींगों से कंघी बनाते हैं।	जानते हो, कंघी किससे बनाते हैं?
	तो गाय हमारी बड़ी मदद करती है? वह हमारा **उपकार** करती है?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संकलन गाय के बारे में चार वाक्य कहो।
गाय के दूध से क्या बनाते हैं ?
गाय क्या खाती है ?
गाय को उपकारी जानवर क्यों कहा है ?

उपयोजन विद्यार्थी पाठ पढ़ेंगे।

स्वाध्याय 'गाय' पर दस वाक्य लिखो।

× × ×

(५) **गद्य-पाठों का चयन** — अब तक यह देखा गया कि हिन्दी पाठ्य-पुस्तकों के गद्य पाठ कैसे पढ़ाये जाएँ। अब यह भी विचारणीय प्रतीत होता है कि उनका चुनाव किस सिद्धान्त के अनुसार किया जाए। इसका कारण यह है कि कई पाठ्य-पुस्तकों में संग्रहीत पाठों के बारे में कड़ी आलोचना सुनने में आती है—कहा जाता है कि ये पाठ उस दर्जे के विद्यार्थियों की दृष्टि से सर्वथा अनुपयुक्त हैं। ऐसे पाठ अगर अध्यापकों को पढ़ाने हों, तो उनको और विद्यार्थियों को भी काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इसलिए यहाँ कुछ विचार प्रकट किये हैं, जिससे पाठ्य-पुस्तकों को नियत कर सकने में या नियत पाठ्य-पुस्तक में से अध्यापन के लिए पाठों का चुनाव करने में अध्यापकों का मार्गदर्शन हो सकेगा।

(भूतपूर्व बम्बई सरकार द्वारा नियुक्त पोतदार समिति ने अपनी रिपोर्ट में इसके बारे में कुछ सूचनाएँ पेश की हैं, उनके अनुआर इस प्रदेश के लिए लेखक या सम्पादक पाठ्य-पुस्तकें तैयार करते हैं।)* पाँचवीं, छठी और सातवीं कक्षाओं की पाठ्य-पुस्तकों के पाठ आम तौर पर लेखक स्वयं तैयार करते हैं, तो आठवीं, नौवीं और दसवीं कक्षाओं की पाठ्य-पुस्तकें विख्यात लेखकों के लेखों का संकलन करके तैयार की जाती हैं।

इस के सम्बन्ध में अधिक चर्चा 'पाठ्य-पुस्तकें' नामक अध्याय में की जाएगी।

विद्यार्थी-अध्यापकों के लिए यहाँ कतिपय सूचनाएँ दी गयी हैं; उनके अनुसार वे पाठ का चुनाव करें — (क) पाठ का विषय विद्यार्थियों के अनुकूल हो। छोटे बालकों के लिए राजनीति, धर्मशास्त्र, नीतिशास्त्र आदि से सम्बन्धित

---

* महाराष्ट्र सरकार की नयी नीति के अनुसार, पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण और प्रकाशन की जिम्मेदारी अब सरकार ने स्वीकार की है। १९७० में पाँचवीं कक्षा के लिए पाठ्य-पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है। छठी और सातवीं के लिए पुस्तकें शीघ्र ही तैयार होंगी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पाठ कठिन मालूम होंगे। (ख) पाठ की भाषा विद्यार्थियों की भाषा के अपेक्षित स्तर से कठिन न हो। आठवीं कक्षा के लिए इस दृष्टि से श्री चंडीप्रसाद 'हृदयेश' की 'संकल्प', 'अनुष्ठान' जैसी कहानियाँ अनुपयुक्त सिद्ध होंगी। वही बात 'चुने हुए मज़मून' में संग्रहीत उर्दू शैली के पाठों के बारे में होगी। (ग) पुराने गद्य के नमूने, जहाँ तक हो, छोटे बालकों के सामने न रखे जाएँ। (घ) पाठ में अंकित भाव, विचार आदि विद्यार्थियों के अनुभव-क्षेत्र के ही हों। (ङ) इस दृष्टि से पाठ अधिक कठिन या अत्यधिक आसान न हो। (च) जहाँ तक हो, पाठ ऐसा ही हो जो नियत समय में पूरा हो सके। सातवीं कक्षा तक दो पन्नों तक के पाठ ही चालीस मिनटों में पूरे हो सकते हैं। पाठशाला का हिन्दी अध्यापक अगर बड़ा पाठ दे, तो उसमें से विद्यार्थी-अध्यापक ऐसा ही अंश चुन ले, जो स्वतंत्र विभाग दिखायी देता हो।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: १५ :

कविता का अध्यापन

पाठ्य-पुस्तक और कविता — विद्यार्थियों के लिए जो पाठ्य-पुस्तकें बनायी जाती हैं, उनमें से हरएक में कविता को स्थान दिया जाता है। पाँचवीं कक्षा की हिन्दी – पाठ्य-पुस्तक में भी छोटी-छोटी कविताएँ रखी जाती हैं। उसमें करीब ८० पद्य-पंक्तियाँ पढ़ायी जाती हैं, तो माध्यमिक शालान्त परीक्षा की (एस्. एस्. सी. परीक्षा की) निम्न श्रेणी – हिन्दी की पाठ्य-पुस्तक में लगभग चार-पाँच सौ पद्य-पंक्तियाँ होती हैं। मतलब इतना ही है कि क्या मातृभाषा, क्या राष्ट्रभाषा क्या अंग्रेजी, हरएक भाषा के विद्यार्थी के लिए कविता का अध्ययन अनिवार्य किया गया है।

पिछले अध्याय में गद्य-निबन्ध के पाठ के अध्यापन की पद्धति का विवेचन किया गया है। इस अध्याय में यह बतलाया जाएगा कि कविता के अध्यापन-अध्ययन का क्या प्रयोजन है, उसकी प्रणाली का क्या स्वरूप है और कविता पढ़ाते समय अध्यापक कौन-कौन-सी कठिनाइयाँ अनुभव करता है।

(१) कविता पढ़ाने का उद्देश्य — काव्य सर्वश्रेष्ठ कला है। उसका सम्मान प्राचीन काल से सभी देशों में होता आया है और दुनिया के अन्त तक होता रहेगा। इस श्रेष्ठ कला में रुचि होना मनुष्य की सुसभ्यता का लक्षण माना जाता है। जिसे काव्य (साहित्य) आदि में रुचि न हो, उसे सुभाषितकार ने 'पुच्छ – विषाण – हीन पशु' कहा है। ऐसी कला का परिचय पाना हरएक मनुष्य का कर्तव्य है। कविता से परिचय वह प्रारम्भिक सीढ़ी है, जिसके आधार पर वह इस क्षेत्र में आगे बढ़ सकता है। असल में इस रुचि के निर्माण की नींव कविता के अध्यापन द्वारा ही डाली जाती है। अध्यापक को इसका महत्त्व जान लेना चाहिए।

श्रेष्ठ काव्य से रसिक को 'ब्रह्मानन्द-सहोदर' आनन्द की प्राप्ति होती है। कविता या काव्य प्रधानतः हृदय की वस्तु है, बुद्धि की नहीं। वह पढ़कर हृदय-सागर में बाढ़-सी आती है और मनुष्य अद्‌भुत आनन्द को अनुभव करने लगता है। आनन्ददायिनी वस्तु से लाभ उठाना हरएक का कर्तव्य है। अच्छी-अच्छी कविताएँ पढ़कर अध्यापक बालकों को इस आनन्ददायिनी कला से परिचित कराता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इसपर कोई यह आपत्ति उठाएगा कि जो बालक अभी अच्छी तरह से भाषा का व्यवहार भी नहीं कर सकते हैं, उसके सामने काव्य-कला के बेहतरीन नमूने रखने से क्या लाभ होगा ? मगर यह कौन कहता है कि बालक अच्छे-अच्छे काव्यों को कामायनी, साकेत या भँवर-गीत को पढ़कर 'ब्रह्मानन्द – सहोदर आनन्द' में निमग्न हो जाएँगे ? हमारा कहना इतना ही है कि बालकों का भाषा-ज्ञान, उसका भाव-क्षेत्र आदि को ध्यान में लेते हुए उनके सामने छोटी-छोटी कविताएँ रखी जाएँ। उन्हें उनमें रुचि होने लगेगी। एक बार इस तरह रुचि पैदा हो जाए, तो आगे चलकर वे उसका विकास कर सकेंगे और उस अद्‌भुत आनन्द को अनुभव करने में समर्थ होंगे। इस अवस्था में इस रुचि की बुनियाद डालना ही हमारा कार्य है।

इन उच्च स्तर की बातों के अतिरिक्त **शिक्षा के क्षेत्र में कविता का विशेष महत्त्व** स्वीकार किया गया है। इस व्यावहारिक पहलू की ओर हरएक अध्यापक को खास तौर पर ध्यान देना चाहिए।

(अ) मनुष्य मात्र को गाने में रुचि होती है। इस स्वाभाविक रुचि से अध्यापक अपने कार्य में लाभ उठा सकते हैं। वे ऐसे पद्य-खण्ड चुन लें, जो गय हों। बालक बड़े चाव से ये कविताएँ पढ़ेंगे, गाएँगे। उसमें उन्हें आनन्द आएगा, पढ़ाई की ओर वे अधिक ध्यान देने लगेंगे। (आ) बालक भाषा के शब्द, गद्य-खण्ड, पद्य-खण्ड कण्ठस्थ कर लें, तो भाषा में उनकी योग्यता बढ़ती है। गद्य-खण्ड की अपेक्षा (गेय) पद्य-खण्डों को आसानी से ज़बानी याद किया जा सकता है। इससे उन्हें लाभ पहुँचता है तथा कण्ठस्थ कर लेने की आदत भी डाली जाती है। (इ) छोटे बालकों के लिए जो कविताएँ चुनी जाती हैं, उनमें से कुछ ऐसी भी हैं, जिनमें कुछ नीति-बोध कराया गया हो, व्यावहारिक सिद्धान्त का उद्‌घाटन कराया गया हो। 'सुभाषित' इसी तरह के होते हैं। उनसे अध्यापक विद्यार्थियों का कुछ मार्गदर्शन भी कर सकते हैं। यहाँ एक ज़रूरी सूचना देनी चाहिए। एक वह ज़माना था कि जिसमें कुछ अध्यापक काव्य के अध्यापन को भाषा की बारीकियों, अलंकारों से परिचित करा देने का साधन मात्र समझते थे। वे कविताओं का चुनाव भी इसी दृष्टि से करते थे, कदम-कदम पर रुक-रुककर इन्हीं बातों की ओर विद्यार्थियों का ध्यान दिलाते थे। इसका नजीता यह होता था कि विद्यार्थी उन कविताओं का रसास्वाद करने में असमर्थ हो जाते थे। 'कर्तव्य की महिमा' या 'जगत्-सचाई – सार' समझानेवाली कविताएँ पाकर ऐसे अध्यापक खुश हो उठाते थे, उपदेश देने के लिए अच्छा अवसर पाकर बालकों के सिर पर कई बातें मढ़ते थे, समास, अलंकार, रस, व्युत्पत्ति आदि की बारीकियों में उन्हें घसीट ले जाया करते थे, भाव की अपेक्षा वे बुद्धि का ही अधिक संस्कार करना

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चाहते थे। इन बातों का महत्त्व बिलकुल न हो, सो बात नहीं है। परन्तु हरएक बात अपने-अपने स्थान पर शोभा देती है – फिर भी हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि उपर्युक्त सभी विश्लेषणात्मक बातें अप्रधान होनी चाहिए। काव्य के अध्यापन का प्रधान उद्देश्य तो रसास्वाद कराना ही होना चाहिए। खास तौर पर उच्च कक्षाओं की दृष्टि से यह बातें बतला दी जा रही हैं। जब तक अध्यापक इस दकियानूसी दृष्टिकोण को अपनाये रहेंगे, तब तक वे काव्य के अध्यापन में सफल नहीं होंगे। (ई) अच्छे काव्य में कवि अपने किसी भावात्मक आन्दोलन का चित्रण करता है, वह भावात्मक अनुभूति को शब्दों द्वारा साकार करने की कोशिश करता है। 'हरिजन बालक' की मन्दिर में जाकर भगवान के दर्शन करने की असमर्थता देखकर कवि ने उसमें भावना की जो अनुभूति पायी वही अनुभूति 'हरिजन बालक की फरियाद' में व्यक्त हुई है। अध्यापक को चाहिए कि वह इसी 'मानसिक आन्दोलन' का विद्यार्थियों को अनुभव कराए, और उसी भावनात्मक वातावरण का निर्माण करे। 'मुँह-फटी झोली' को फैलाते हुए, 'कलेजे के दो टूक करते हुए' आनेवाले भिखमँगे के सामने पड़ी हुई 'जूठी पत्तल' कुत्ते झपट ले रहे हैं – यह करुण दृश्य देखते हुए कवि का हृदय रो उठा और उसने (श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' ने) 'भिक्षुक' कविता लिखी। अध्यापक को चाहिए कि कवि ने जो अनुभव किया है, उसे करने में विद्यार्थियों को भी वह समर्थ बनाए।

इसी तरह वह विद्यार्थियों को रसास्वाद करने में समर्थ बना सकता है। उच्च कक्षाओं में रस और सौन्दर्य का आस्वाद कराने की दृष्टि से कविता पढ़ायी जाए। भाव और भाषा के सौन्दर्य का अनुभव कराया जाए। विद्यार्थी कवि का जीवनविषयक दृष्टिकोण समझ लेने में समर्थ हो जाएँ।

प्रत्यक्ष व्यवहार में — अब सवाल यह आता है कि जब पाँचवीं कक्षा के विद्यार्थी अपनी मातृभाषा की कविताओं का रसास्वाद करने में असमर्थ हैं, तब हिन्दी के बारे में उनसे यह उम्मीद करना कहाँ तक उचित होगा? ऊपर की बातें पढ़कर किसी को यह धारणा नहीं कर लेनी चाहिए कि निम्न कक्षाओं में कविताओं का अध्यापन 'रसास्वाद' वाले हेतु को सामने रखते हुए किया जाता है। किसी कविता का रसास्वाद करना कोई मामूली बात नहीं है। एस्. एस्. सी. की कक्षा का विद्यार्थी भी उसमें कठिनाई अनुभव करता है। इसलिए यह स्पष्ट रूप से ध्यान में रखे कि हिन्दी के अध्यापक नौवीं कक्षा तक रसास्वाद कराने के हेतु ही कविता नहीं पढ़ाएँगे। दसवीं और ग्यारहवीं कक्षाओं में भी सिर्फ कुछ काव्य-गत विशेषताओं की ओर विद्यार्थियों का ध्यान खींचा जाए। किसी शब्द, विचार या कल्पना में जो सौन्दर्य हो, उसे पहचानने में उनका मार्गदर्शन करें। अनुभाव, विभाव,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अलंकारों के सूक्ष्म भेद आदि के पारिभाषिक शब्दों की झंझट में उन्हें न उलझा दें। चाहे तो कथन-प्रणाली को बीच-बीच में अपनाकर कविता के भाव-सौन्दर्य को स्पष्ट किया जाए। इन बातों को वे अच्छी तरह समझ लें, तो आगे चलकर वे रसास्वाद कर सकेंगे।

इसके सम्बन्ध में अध्यापक एक ही सूत्र को ध्यान में रखे – विद्यार्थियों की भाषा-शक्ति, ग्रहण-शक्ति, अनुभव-क्षेत्र आदि बातों को ध्यान में रखते हुए वह यह तय करे कि उसे किन बातों की ओर संकेत करना चाहिए।

(१) **कविताओं का चयन** – विद्यार्थियों के लिए उपयुक्त कविताओं का संकलन करनेवालों को कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। विद्यार्थियों की मातृभाषा के बारे में भी यही हाल है, तो हिन्दी के सम्बन्ध में इससे ज्यादा कठिनाइयाँ पेश आएँगी; इसमें कोई अचरज की बात नहीं है। माध्यमिक पाठशालाओं के विद्यार्थियों के लिए उपयोगी कविताओं को चुनते वक्त निम्न-लिखित बातें ध्यान में रखें —

क – कविता की भाषा : वह विद्यार्थियों की दृष्टि से आसान हो। उनके भाषाज्ञान को विचार में लेकर ही कविता अध्यापन के लिए चुन लें। विषय आसान होते हुए भी कई कविताओं की भाषा आसान नहीं होती, ऐसी कविताएँ विद्यार्थियों को पसंद नहीं आएँगी। संस्कृत या उर्दू-फारसी के अपरिचित शब्दों की विपुलता के कारण कुछ आसान विषय पर लिखी हुई पंक्तियाँ भी कठिन बन जाती हैं। हर पंक्ति में कठिन शब्दों से टकराने से विद्यार्थियों की रुचि नष्ट होगी।

ख – कविता में अभिव्यक्त विचार या भाव भी ऐसे हों जो विद्यार्थियों के ध्यान में जल्द आ सकें। आध्यात्मिक या दार्शनिक विचारों को वहन करनेवाली कविताएँ विद्यार्थियों के लिए उपयुक्त नहीं होंगी। 'हिमालय के प्रति' (दिनकर), 'सतपुड़ा पहाड़ के झरने को देखकर' (भारतीय आत्मा), 'भैंसा-गाड़ी' (भगवतीचरण वर्मा), 'माँझी' (बच्चन) जैसी कविताएँ नौवीं, दसवीं कक्षा के लिए भी कठिन सिद्ध होंगी। छायावादी और रहस्यवादी कविताओं को तो विचार में ही न लेना चाहिए।

ग – कविताओं के भाव, विचार, विषय आदि विद्यार्थियों के अनुभूति-क्षेत्र की परिधि के भीतर के हों। घर और पाठशाला के विविध अनुभव यदि कविताओं में ग्रथित किये हुए हों, तो वे बालकों को पसंद आएँगी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

घ – छोटे बालकों के लिए वर्णनात्मक, कथात्मक, नाट्यात्मक कविताएँ अधिक उपयुक्त होंगी।

ङ – ये कविताएँ गेय हों।

च – उनमें से कुछ समूह-गीत (chorus songs) भी हों।

छ – कुछ कविताएँ हास्य-रसात्मक हों, कुछ **सुभाषितात्मक** – सूक्तियाँ हों।

ज – ये कविताएँ आठ से सोलह पंक्तियों तक की हों : उच्च कक्षाओं के लिए अधिक पंक्तियों की कविताएँ चलेंगी।

झ – प्राचीन कविताएँ कितनी ही अच्छी क्यों न हों, सातवीं कक्षा तक वे न रखी जाएँ। उच्च कक्षाओं में भी कबीर, रहीम आदि के आसान से आसान दोहे और सूरदास, तुलसी के आसान से आसान पद चुने जाएँ। इनकी संख्या मर्यादित हो। ये कविताएँ नीरस और कोरी विचारात्मक न हों, विद्यार्थियों के हृदय को स्पर्श करनेवाली हों।

ञ – अन्त में कहा जा सकता है कि **विद्यार्थियों की रुचियाँ, ग्रहण-शक्ति, अनुभव-क्षेत्र, भाषा-ज्ञान** और **कविताओं के अध्यापन का उद्देश्य** आदि बातों को मद्देनज़र करके अध्यापक कविताओं का चुनाव करे।

(३) **हमारी कठिनाइयाँ** — १. अहिन्दी भाषा-भाषी विद्यार्थियों की समस्या हिन्दी मातृभाषा-भाषी विद्यार्थियों की समस्या से पूर्णतः भिन्न है। उनकी मातृभाषा हिन्दी, हिन्दी की कोई भी उपभाषा क्यों न हो, होने से वे विद्यार्थी अहिन्दी भाषी विद्यार्थियों से हिन्दी के अधिक जानकर होते हैं। महाराष्ट्र में जिस तरह बचपन में सन्त रामदास के 'श्लोकों' या सन्त तुकाराम के 'अभंगों' को विद्यार्थी पढ़ते हैं, ज़बानी याद करते हैं, उसी तरह उनके यहाँ कबीरदास, सूरदास के दोहे – पद पढ़ाये जाते हैं। तुलसी रामायण का पठन हर घर में होता है। पाँचवीं कक्षा में अन्य प्रदेशों के विद्यार्थियों को जो कठिनाइयाँ महसूस होंगी, वे हिन्दी प्रदेशवालों को नहीं होंगी। इसलिए हिन्दी प्रदेश की पाठ्य-पुस्तकों की कविताएँ हमारे बालकों के लिए भाषा की दृष्टि से उपयुक्त नहीं होंगी, वे अधिक कठिन होंगी। वैसे ही उनकी प्राथमिक पाठशाला में पढ़ायी जानेवाली कविताएँ भी हमारे विद्यार्थियों के लिए उपयुक्त नहीं होंगी। विषय और भाव की दृष्टि से वे उनके लिए बहुत आसान होंगी। इसलिए हमारी माध्यमिक पाठशालाओं के ५, ६ ७ कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए वे ही कविताएँ योग्य होंगी, जो भाषा की दृष्टि से प्राथमिक पाठशालाओं की जैसी आसान हों, मगर विषय और विचार की दृष्टि से माध्यमिक पाठशालाओं के विद्यार्थियों के अनुकूल हों।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

२. हिन्दी के अध्यापकों को और एक कठिनाई उठानी पड़ती है। पाठशालाओं में नियत पाठ्य-पुस्तकों में कविताओं की संख्या एक तो कम होती है और दूसरे, जो कविताएँ होती हैं, उनको ऊपर कहे हुए सिद्धान्तों के अनुसार नहीं चुना जाता। इसलिए बहुत ही मर्यादित संख्या में से उन्हें कविताएँ चुननी पड़ती हैं। उन्हें अपनी रुचि के अनुसार चुनाव करने का अवसर नहीं मिलता।

३. हमारी एक कठिनाई यह है कि हममें से बहुतेरे अध्यापक अभी-तक कविता के अध्यापन की ओर उसी दकियानूसी निगाह से देखते हैं। वे कविता से कुछ न कुछ 'सन्देश' चाहते हैं। कविता पढ़ाते समय वे 'रसिक' की अपेक्षा 'चिकित्सक' ही अधिक बनकर 'छिद्रान्वेषण' करने लगते हैं; प्राचीन कविता के अभिमान में आधुनिक कविता की हँसी-दिल्लगी उड़ाते हैं; — फलतः विद्यार्थी कविता की आत्मा तक नहीं पहुँच पाते — काव्यानन्द को अनुभव नहीं कर पाते।

४. अध्यापकों की इस दुर्बलता के साथ बहुतेरे विद्यार्थियों में भी एक दोष दिखायी देता है। वह यह है कि काव्य के लिए जिस मनोभूमिका की आवश्यकता है, वह उनमें कम दिखायी देती है। कई बार देखा जाता है कि अध्यापक 'रसिक' है, अध्यापन-कला में 'प्रवीण' है और कविता भी 'रसात्मक' है, फिर भी विद्यार्थियों की मनोभूमिका काव्य के अनुकूल न होनेके कारण पाठ असफल होते हैं। ऐसे अध्यापक अगर कहें कि 'अरसिकेषु कवित्व-निवेदनं, शिरसि मा लिख मा लिख' तो क्या आश्चर्य ?

५. बालकों को कविताओं को गाने में दिलचस्पी होती है। वे अध्यापक से कविता की तर्ज़ पूछते हैं, मगर अध्यापक स्वयं वह न जानता हो, तो वह स्वयं ठीक ढंग पर कविता पढ़ या गा नहीं सकेगा। इससे भी कविता का भाव विद्यार्थियों के ध्यान में नहीं आता। इस तरह की कठिनाइयों का मुकाबला करते हुए अध्यापक को अपने मार्ग पर अग्रसर होना चाहिए। यहाँ दी हुई कुछ सूचनाएँ उसके लिए सम्बल का काम ज़रूर करेंगी।

(४) **कुछ सूचनाएँ** — अध्यापक पहले यह देखे कि कविता का पूरा भाव उसके अपने ध्यान में आया है या नहीं। वह उससे निकलनेवाले (ध्वनित) अर्थ भी ठीक समझ ले और पृष्ठभूमि का मूल्य पहचाने। 'सूखी पत्ती' कविता पढ़ाने के पहले अध्यापक शाब्दिक अर्थ के साथ यह भी देख ले कि उससे मनुष्य जीवन के किस पहलू पर प्रकाश पड़ता है। तभी वह आत्मविश्वास के साथ कविता पढ़ा सकेगा। प्रत्येक अध्यापक को कविता पढ़ने की कला आत्मसात् करनी चाहिए। तभी वह कक्षा में उस भावनात्मक वातावरण का निर्माण कर सकेगा जिसे कवि ने कविता में अंकित किया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उच्च कक्षाओं में रसास्वाद करना ही कविता के अध्यापन का प्रधान उद्देश्य होता है। अध्यापक को चाहिए कि वह स्वयं अच्छी तरह से वैसा कर सके। कविता का असली सौन्दर्य किसमें है, यह अगर वह ही खुद न जाने, तो वह विद्यार्थियों की क्या मदद करेगा ? वह समूची कविता को एक कलाकृति माने, उसका खण्डशः मूल्यांकन न करे। कविता के सौन्दर्य को पहचानने में वह उच्च कक्षाओं में विद्यार्थियों की मदद करे।

(५) **पाठ-पद्धति की रूपरेखा** — (क) **प्रस्तावना** — गद्य पाठ की भाँति कविता के पाठ की प्रस्तावना भी कई तरीकों से की जा सकती है। अध्यापक जिस ढंग को उचित समझे, उसे अपनाए। उसका चुनाव करते वक्त वह कविता का विषय तथा विद्यार्थियों का पूर्व-ज्ञान ध्यान में रखे।

कविता के विषय से **सम्बन्धित विषय पर बातचीत** करके प्रस्तावना की जा सकती है। कुछ नमूने —

कविता	**प्रस्तावना**
१. बालक की कल्पना	बालक क्या बनना चाहते हैं ?
२. वन में आज दिवाली	दिवाली के त्यौहार पर हम क्या करते हैं ?
३. अगर न नभ में बादल होते !	बरसात : अकाल

कविता पौराणिक या ऐतिहासिक विषय पर हो, तो उक्त घटना के बारें में बातचीत करें या स्पष्टीकरण करें। उदाहरण के लिए —

कविता	**पुस्तक**	**प्रस्तावना**
१. यशोधरा-राहुल-संवाद	यशोधरा (मैथिलीशरण गुप्त)	गौतम के सिद्धि के लिए चले जाने के बाद छोटे राहुल को समय-समय पर यशोधरा उनके जीवन की कुछ घटनाएँ बताती है।
२. भीलनी के बेर	(सुदर्शन)	शबरी की कथा की भूमिका समझाएँ।

पहले आधी कविता पढ़ायी गयी हो और उसे पूरा करना हो, तो पढ़ाये गये विभाग पर आवृत्ति के लिए दो-चार सवाल पूछे जाएँ।

उच्च कक्षाओं में **कवि का परिचय** देते हुए, उक्त काव्य-विषय की ओर संकेत करते हुए या किसी अन्य कवि की या उसी कवि की अन्य पढ़ी हुई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कविता के बारे में बातचीत करते हुए प्रस्तावना करें। उच्च कक्षाओं में "आज हम '...' कविता पढ़ेंगे और उसका भावार्थ समझ लेंगे।" – ऐसी प्रस्तावना भी पर्याप्त होगी।

निम्न कक्षाओं में आवश्यकतानुसार **चित्र आदि द्वारा** भी प्रस्तावना करें। कठिन शब्दों का परिचय जहाँ तक हो प्रस्तावना में ही कराया जाए। कविता का भावार्थ पहले न कहें ताकि विद्यार्थियों की दिलचस्पी अन्त तक बनी रहे।

(ख) हेतुकथन — स्पष्ट शब्दों में सूचित किया जाए कि वे उस कविता का भावार्थ देखने जा रहे हैं।

(ग) विषय-प्रतिपादन –– १. अध्यापक द्वारा प्रभावकारी रीति से पठन। २. हेतुप्रश्नों के जवाब ढूँढते हुए विद्यार्थियों द्वारा कविता का मनोगत पठन। ३. प्रश्नोत्तर और आवश्यकतानुसार स्पष्टीकरण। ४. दो-दो या चार-चार पंक्तियों का भावार्थ विद्यार्थियों से कहलाया जाए। ५. वाच्यार्थ के बाद लाक्षणिक अर्थ खोजने में प्रश्नोत्तर द्वारा विद्यार्थियों की सहायता करना। ६. आवश्यकता के अनुसार काव्य-सौन्दर्य की ओर संकेत करना। एक बात पूरी होने के बाद दूसरी की ओर बढ़ें।

(घ) संकलन –– १. कविता पर तीन चार महत्त्व के सवाल पूछना। २. आवश्यकतानुसार 'शीर्षक' के बारें में चर्चा करना। ३. केन्द्रीय विचार बताना।

(ङ) उपयोजन –– कविता दोहरा लें।

(च) स्वाध्याय –– १. कविता ज़बानी याद करना। या २. केन्द्रीय विचार या भावार्थ लिखना। या ३. किसी सवाल का जवाब लिखना। ४. (उच्च कक्षाओं में) वैसे ही ढंग की किसी अन्य कविता से तुलना करवाना। या कविता के बारे में अपने विचार लिखवाना।

(६) पाठ की टिप्पणी

कक्षा – ७ वीं **समय** – ४० मिनट

पूर्वज्ञान –– विद्यार्थियों ने रामायण की कथा पढ़ी है। वे यह जानते हैं कि राम वन में क्यों गये और उनके साथ कौन-कौन थे।

पाठ का उद्देश्य –– 'भीलनी के बेर' पद्य-खण्ड का भावार्थ समझ लेने में विद्यार्थियों की मदद करना।

विषय	प्रणाली
✦ **प्रस्तावना** राम अपने भाई लक्ष्मण और पत्नी सीता को लेकर वन में गये।	तुमने रामायण पढ़ी है। बचपन में ही राम ने राजमहल छोड़ा दिया। तब वे कहाँ गये? उनके साथ कौन-कौन थे?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हनुमान, तुलसीदास, रामदास

राम के दो-एक भक्तों के नाम बताओ !

✦ हेतुकथन

आज हम राम के और एक भक्त की कहानी पढ़ेंगे। वह कविता में दी है। यह शबरी नामक भीलनी की कथा है। वह प्रभु रामचन्द्र से वन में मिलने आयी थी।

✦ विषय-प्रतिपादन

पहली चौदह पंक्तियाँ पढ़ना।

विद्यार्थियों द्वारा मनोगत पठन।

हेतुप्रश्न —

१. शबरी कैसी स्त्री थी ?

२. 'राम आ रहे हैं।' यह सुनकर वह क्या सोचने लगी ?

[यहाँ छोटे छोटे विभाग बनाकर प्रश्नों के अनुसार इन पद्य-पंक्तियों का सार लिखें।]

नीचे लिखे अनुसार सवाल पूछते हुए कविता का भावार्थ ग्रहण करने में अध्यापक विद्यार्थियों की मदद करे।

इक भीलनी से

प्रभु रामचन्द्र जंगल में किससे मिले ?

'एक भीलनी से' शब्दों के बदले कवि ने कौन-से शब्द लिखे हैं ? यह

भली और नेक

औरत कैसी थी ? दया-धर्म में वह कैसी

लाख में एक

थी ? हाँ, लाख लोगों में श्रेष्ठ थी।

सरोकार

किसी से उसका **सम्बन्ध** न था।

किसी से उसका **सरोकार** न था।

प्रभु रामचन्द्र

वह भक्त थी। हर वक्त उसके मन में कौन-से देवता थे ? रामचन्द्र **परमात्मा**

करतार

ही हैं। कवि ने **परमात्मा को** यहाँ क्या कहा है ?

कवि हमें क्या देखने को कहता है ? यह कौन-सा अन्याय है ? उसे कौन

नर-नार

नहीं छूते थे ? 'नर-नार' याने 'पुरुष और स्त्रियाँ' उसे छूते न थे। वे क्या क्या कहते थे ?

उससे वे कैसे डरते थे ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बिदकना — 'डरना' के बदल कवि ने कौन-सा शब्द लिखा है, आसान भाषा में कहो। शबरी को राम की खबर मिली। तब वह क्या करने लगी? क्यों? वह क्या सोचने लगी?

उपविभाग – २

हेतु-कथन — राम को भी शबरी की बात मालूम हुई। अब हम देखेंगे कि राम ने उसके बाद क्या किया।

✦ विषय-प्रतिपादन

अध्यापक द्वारा अन्तिम दस पंक्तियों का पठन।

विद्यार्थियों द्वारा मनोगत पठन।

हेतु-प्रश्न — राम ने दुनिया को क्या दिखा दिया?

(अन्य सवाल) राम ने क्या खबर सुनी? सुनते ही उन्होंने क्या किया? इससे राम का कौन-सा गुण दिखायी देता है? क्या राम भी भीलनी को अछूत समझते थे? क्यों नहीं?

[पद्य – पंक्तियों का सार लिखें।]

राम ने वहाँ क्या किया? वे बेर कैसे खाने लगे? (**चाव** शब्द स्पष्ट करना – उदाहरण: बालक मिठाई बड़े चाव से खाते हैं।

मुस्कराते हुए
बड़े चाव से वे बेर खाने लगे।

किसको अछूत कहना पाप है? स्वयं अछूत कौन है?

बुरा है वह, हो काम जिसका बुरा। — राम ने दुनिया को क्या दिखला दिया? कैसे? कवि सुदर्शन लोगों को क्या नसीहत देते हैं?

✦ संकलन — भीलनी में कौन-से गुण दिखायी देते हैं? लोगों ने उसके साथ क्या अन्याय किया? प्रभु रामचन्द्र ने शबरी के दिये हुए बेर क्यों खाये? प्रभु रामचन्द्र ने दुनिया को क्या दिखाया? इस कविता से हमें क्या नसीहत मिलती है?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उपयोजन — विद्यार्थियों द्वारा सामूहिक रूप में कविता का पठन।

स्वाध्याय — शबरी की यह कथा दस-बारह पंक्तियों में लिखो।

फलक – लेखन

इक	सरोकार	(१) शबरी कैसी स्त्री थी ? 'राम आ रहे हैं' – यह सुनकर वह क्या सोचने लगी ?
लाख में एक	करतार	(२) राम ने दुनिया को क्या दिखला दिया ?
भली और नेक	नर-नार	
बड़े चाव से	बिदकना	

✦ ▸ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: १६ :

कहानी का अध्यापन

(१) **शिक्षा में कहानी का स्थान** – छोटे बालकों के लिए जो पाठ्य-पुस्तकें नियत की जाती हैं, उनमें कहानियाँ या कथात्मक पाठ बड़ी तादाद में होते हैं। अन्य पाठों की अपेक्षा विद्यार्थी ऐसे पाठों पर सबसे पहले झपट पड़ते हैं। पुस्तकालय में भी कथा-संग्रहों की माँग सबसे अधिक होती है। उच्च कक्षाओं के विद्यार्थी भी कहानियों, उपन्यासों और भली-बुरी जासूसी कथाओं को पढ़ने में कितना समय खर्च करते हैं, इसका अनुमान करना आसान नहीं है।

प्राचीन काल से ईसप नीति, अरेबियन नाइटस, पंचतंत्र, हितोपदेश, दशकुमार-चरित आदि की कहानियाँ कितनी लोकप्रिय बनी रही हैं और आज भी जो साहित्य प्रकाशित होता है, उसमें कथा-साहित्य के लिए कितने पन्ने होते हैं, इसका ज़रा हिसाब लगाइए। यह भी जाने दीजिए – कक्षा में प्रवेश करके यह देखकर कि विद्यार्थी शोरोगुल मचा रहे हैं, आप कह दें, 'मैं कहानी सुनाने जा रहा हूँ', तो देखिए उसका क्या असर होता है।

इन बातों से स्पष्ट होगा कि छोटे बालकों को ही नहीं, मनुष्य-मात्र को कथा-साहित्य सबसे ज़्यादा प्यारा लगता है।

बालकों को कहानियाँ सुनने में बड़ा मज़ा आता है। यद्यपि वे थके-माँदे हों, तो भी वे कहानी का नाम सुनते ही बहुत उत्साहित हो उठते हैं और दिलचस्पी से कहानी सुनने लगते हैं। उनकी मानसिक थकावट कहानी सुनने से ग़ायब होती है। कहानी के घटना-प्रवाह के साथ वे भी बहते जाते हुए अजीब दुनिया में प्रवेश करते हैं। सिन्दबाद के साथ जाकर ही नहीं, स्वयं सिन्दबाद की भूमिका लेकर हीरों की घाटी में वे प्रवेश करते हैं, शिवाजी महाराज के साथ झाबे में बैठकर आगरा से लिकल पड़ते हैं।। कहानी के पात्रों के साथ वे इसी तरह की एकात्मता अनुभव करते हैं। इसमें उन्हें अनोखा आनन्द आता है। संक्षेप में, हम यों कह सकते हैं कि बालकों के लिए कथा-साहित्य आनन्द का अविरत स्रोत है।

बालकों को कथा-साहित्य में यह जो दिलचस्प होती है, उसे देखकर प्राचीन काल से ही शिक्षा-शास्त्री उसका अपने कार्य में उपयोग करते आये हैं। हितोपदेश,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ईसप-नीति की कहानियाँ आदि की रचना इसी सिद्धान्त पर हुई है। शिक्षा-शास्त्रियों को बालकों में दिखायी देनेवाली कथा-साहित्य के प्रति यह रुचि काफी उपयुक्त सिद्ध हुई है। अध्यापक उसका उपयोग कई तरह के कामों के लिए कर सकता है —

अ — जब वह बालकों को उपदेश देकर मार्गदर्शन करना चाहता हो, तब वह खुल्लम-खुल्ला वैसा कह दे, तो वह असरकार नहीं होता। इसलिए कहानी द्वारा वह बात बता दी जा सकती है। बालक कहानी सुनते हुए अनजान में उस उपदेश को भी ग्रहण करता है। इस तरह कहानी 'शुगरकोटेड़ क्विनाईन' का-सा काम कर देती है।

आ — छोटे बालकों में पुस्तक-पठन की ओर रुचि बढ़ाने के लिए अध्यापक कहानियाँ सुनाए और कथा-साहित्य उनको पढ़ने दे। इससे आगे चलकर अन्य तरह के साहित्य की ओर भी वे बढ़ सकते हैं।

इ — सामान्य बातें भी कथात्मक ढंग से सामने रखने पर विद्यार्थियों को दिलचस्प लगती हैं।

ई — विद्यार्थियों की दिलचस्पी और अवधान कायम रखने में कहानियाँ अध्यापक की बहुत मदद करती हैं।

उ — बालकों की **कल्पनाशक्ति का विकास** करने के लिए कहानी उपयुक्त होती है।

ऊ — **कहानी-कथन भी कला** है। विद्यार्थियों को इस कला का अभ्यास करना आवश्यक है। कक्षा में कहानी सुनाने की आदत जिन विद्यार्थियों को होती है, वे अपने विचार प्रकट करने में भी काफी सफलता पाते हैं। इसलिए **वक्तृत्व कला का श्रीगणेश** और अभ्यास कहानी-कथन से कराया जाए।

ए — कक्षा में सुनायी हुई कहानी बालकों से लिखने को कह दें, तो वे बड़ी खुशी से लिखेंगे। इससे **लेखन का** भी अभ्यास कराया जा सकता है।

ऐ — कहानी-कथन **फुरसत के घण्टों** (off periods) को अच्छे काम में बिताने का महत्त्वपूर्ण साधन है।

ओ — **इतिहास**, **भूगोल**, **विज्ञान** आदि विषयों में भी देश-विदेश के नेताओं, वैज्ञानिकों की साहस-कथाएँ सुनाने से बालकों को वे विषय आसान और दिलचस्प लगेंगे। उससे विद्यार्थियों का **सामान्य ज्ञान बढ़ेगा**। भूगोल के अध्यापन में देश-विदेश के लोगों की जानकारी कथात्मक ढंग को अपनाकर रोचक बनायी जा सकती है।

औ — नेताओं, अन्वेषकों की जीवन-कथाएँ **विद्यार्थियों के लिए स्फूर्तिदायी** सिद्ध हो सकती हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बालक बड़े चाव से कहानियाँ सुनते हैं। अगर बालक के माता-पिता या भाई-बहन उसे बचपन से कहानियाँ सुनाते हों, तो यह चाव बढ़ता जाता है। ऐसे कई बालक देखे गये हैं, जिनके माता-पिता ने कहानियाँ सुनाकर ही उन्हें संवेदनाशील और सुशील बनाया है। कहानी के प्रति बालकों को ऐसा जो प्रेम अनुभव होता है, उससे शिक्षा के क्षेत्र में लाभ उठाकर उनका विकास किया जा सकता है।

(२) बालकों के लिए उपयुक्त कहानियाँ — आठ-नौ साल उम्र के बालकों को पशु-पंछियों की कहानियाँ अधिक पसन्द आती हैं। इसके बाद तेरहवें साल-तक उन्हें साहस की कहानियाँ पसंद आती हैं। ये कहानियाँ आम तौर पर घटना-प्रधान रहा करती हैं और नायक के धैर्य, शौर्य आदि गुणों का उसमें प्रभावकारी रीति से अंकन किया हुआ होता है। हम चाहते हैं कि विद्यार्थी केवल ख्वाबी दुनिया में ही विचरण न करें; उनका चरित्र-बल भी विकसित होता जाए, इसलिए उन्हें स्वतंत्रता-संग्राम के वीरों तथा अन्वेषकों की रोमांचकारी कथाएँ भी सुनायी जाएँ। उनका मन इस उम्र में इतना संवेदनाशील और भावुक होता है कि इस वक्त उनपर जो संस्कार होते हैं, उनमें से अधिकतर स्थायी बन जाते हैं। इसलिए कहानी-कथन द्वारा उनपर अच्छे संस्कार करने की कोशिश की जाए।

(३) कहानियों का चुनाव – कक्षा में पाठ के लिए कहानी का चुनाव करते वक्त अध्यापक को निम्न-लिखित बातें ध्यान में रखनी चाहिए :—

कहानी दिलचस्प और आकर्षक हो। वह घटना-प्रधान होते हुए भी किसी सत्प्रवृत्ति का उदघाटन करनेवाली हो। उसका विषय और भाव बालकों के अनुभव क्षेत्र से सम्बन्धित हो। उसकी भाषा भी कठिन न हो। कहानी इतनी ही बड़ी हो कि नियत समय के भीतर पढ़ायी जा सके। कहानी में पात्रों और घटनाओं की संख्या अधिक न हो। नहीं तो उनका परस्पर सम्बन्ध ध्यान में रखने में बालक कठिनाई अनुभव करेंगे और उन्हें उसमें दिलचस्पी नहीं होगी।

(४) कहानी के पाठ की पूर्व-तैयारी —- कहानी को चुनने के बाद अध्यापक यह तय करे कि वह किस ढंग से पाठ पढ़ाना चाहता है। कहानी छपी हुई हो, और विद्यार्थियों की पाठ्य-पुस्तक में हो, तो पाठ के अध्यापन की रूपरेखा में कुछ परिवर्तन करना पड़ेगा। कहानी-कथन का पाठ हो, तो अलग ढंग को अपनाना होगा। इसलिए वह पहले पाठ का स्वरूप तय करे और उसके अनुसार आवश्यक तैयारी करे।

बालकों को कक्षा में जब कहानी पढ़ायी जाती है, तो आम तौर पर अध्यापक चित्रों का उपयोग करता है। इससे प्रस्तावना करते हुए कठिन शब्दों को भी अच्छी तरह समझाया जा सकता है। इसलिए अध्यापक को पाठ के लिए उपयुक्त चित्र आदि उपकरण जुटाने चाहिए। कहानी का पाठ किसी भी ढंग से क्यों न

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पढ़ाया जाए, अध्यापक को बालकों को कहानी सुनानी चाहिए। कहानी-कथन पर उसके पाठ की आधी सफलता निर्भर है। अगर वह कहानी अच्छी तरह से न सुना सके तो बालकों को उसमें रुचि नहीं होगी। इसलिए उसे कहानी-कथन की कला आत्मसात् करनी चाहिए। कथन के सम्बन्ध में यहाँ चन्द सूचनाएँ पेश की हैं —

क — कहानी धारावाही भाषा में सुनायी जाए।

ख — आवश्यकतानुसार अभिनय किया जाए।

ग — घटनाओं का वर्णन ऐसे ढंग से किया जाए जिससे सुननेवालों की आँखों के सामने उसका चित्र ही खड़ा हो जाए।

घ — महत्त्व की बातों पर ज़ोर दिया जाए।

ङ — कल्पनाशक्ति को प्रेरणा देने की दृष्टि से बीच बीच में कोई एकाध सवाल भी पूछा जाए।

च — कहानी की घटनाओं का सिलसिला ऐसा रखा जाए, जिससे बालकों की जिज्ञासा अन्त तक बनी रहे।

छ — कहानी सुनाते वक्त ऐसे कठिन शब्दों का प्रयोग न किया जाए, जो बालकों की समझ में न आएँ। जहाँ तक हो, ऐसे कठिन शब्द प्रस्तावना में ही समझा दिये जाएँ।

(५) **कहानी के पाठ के प्रकार :** कहानी के पाठ के कई प्रकार हैं, जिनमें से तीन यहाँ बतलाये हैं —

(क) **मुद्रित कहानी :** जो कहानियाँ पाठ्य-पुस्तकों में छपी हुई होती हैं, उन्हें पढ़ाने के लिए किसी विशेष ढंग को अपनाना होगा।

(ख) **कहानी-कथन का पाठ :** यहाँ अध्यापक बालकों को कहानी ज़बानी सुनाता है और सवालों द्वारा यह देखता है कि विद्यार्थियों ने उसे कहाँ तक ग्रहण किया है।

(ग) **तीन-चार चित्रों की मदद से कहानी तैयार करना :** बालकों को कहानी की भिन्न-भिन्न घटनाओं पर खींचे हुए चित्र क्रमशः दिखाये जाते हैं और प्रश्नोत्तर द्वारा कहानी की रचना करायी जाती है।

(६) पाठ की रूपरेखा :

(क) मुद्रित कहानी

✦ **प्रस्तावना :** आम तौर पर ऐसी कहानी की प्रस्तावना चित्र की सहायता की जाए। जहाँ तक हो कठिन शब्दों के अर्थ इसी समय समझा दे। पाठ की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कहानी से मिलती-जुलती कोई अन्य कहानी विद्यार्थियों द्वारा पहले ही पढ़ी हुई हो, तो उसके बारे में चर्चा करते हुए भी प्रस्तावना की जा सकती है।

✦ **हेतुकथन में** कहा जाए कि ऐसी ही एक दिलचस्प कहानी आज हम पढ़ेंगे।

✦ **विषय प्रतिपादन :** १. अध्यापक द्वारा कहानी-कथन। २. आवश्यकतानुसार पठन। ३. हेतु प्रश्नों के जवाब ढूँढते हुए विद्यार्थियों द्वारा मनोगत पठन। ४. सवाल और जवाब; आवश्यक हों तो अध्यापक कुछ बातें स्पष्ट करेगा।

✦ **संकलन :** १. कहानी की कथा-वस्तु पर महत्त्व के तीन-चार सवाल, शीर्षक, ३. नसीहत आदि।

✦ **उपयोजन :** विद्यार्थियों द्वारा कहानी-कथन।

✦ **स्वाध्याय :** कहानी-लेखन या कहानी पर दिये हुए कुछ सवालों के जवाब लिखना।

पाठ की टिप्पणी

पाँचवीं कक्षा : **समय** ४० मिनट।

पूर्व-ज्ञान : विद्यार्थियों ने छ : महीने तक हिन्दी पढ़ी है और वे सरल हिन्दी में बातचीत कर सकते हैं।

पाठ का उद्देश्य : पाठ्य-पुस्तक में से 'सोने का अण्डा' कहानी समझ लेने में विद्यार्थियों की मदद करना।

आवश्यक उपकरण : एक चित्र, जिसमें एक आदमी बैठा हुआ दिखाया गया है। सामने एक छुरी और एक कटी हुई मुर्गी नज़र आती है। पास ही और एक मुर्गी दिखायी देती है।

विषय	प्रणाली
✦ **प्रस्तावना**	(चित्र फलक पर लटकाकर) यह देखो। (आदमी दिखाकर) यह कौन है?
यह आदमी है।	
छुरी	(छुरी दिखाकर) यह छुरी है। (शब्द का अभ्यास कराना।)
मुर्गी	(मुर्गी दिखाकर) यह **मुर्गी** है। (अभ्यास) मुर्गी हमें **अण्डे** देती है।
अण्डे	
कमाई	कुछ लोग मुर्गियाँ पालते हैं। उनके अण्डे बेचते हैं, उससे वे पैसे कमाते हैं। ये पैसे उनकी **कमाई** है। उससे वे
पेट पालना	अपना **पेट पालते** हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

✦ **हेतुकथन**

देखो, यह आदमी रो रहा है। उसने मुर्गी को छुरी से काट दिया है। इसके बारे में एक मज़ेदार कहानी आज हम पढ़ेंगे।

✦ **विषय – प्रतिपादन**

✦ अध्यापक द्वारा कहानी-कथन

✦ अध्यापक द्वारा कहानी-पठन

✦ विद्यार्थियों द्वारा मनोगत पठन

हेतु-प्रश्न

– सोने का अण्डा पाकर मगनलाल क्या सोचने लगा?

नीचे लिखे अनुसार सवाल पूछते हुए कहानी समझ लेने में विद्यार्थियों की मदद करना।

मगनलाल मज़दूरी करके पेट पालता था।

इस आदमी का क्या नाम है? वह क्या करता था? वह अपना पेट कैसे पालता था?

कमाई कम थी, इसलिए वह दुखी, था। एक दिन वह एक मुर्गी लाया, जो सोने के अण्डे देने लगी।

वह दुखी क्यों था? वह क्या ले आया? उसकी मुर्गी को अजीब क्यों कहा है?

सोने का अण्डा पाकर वह खुश क्यों हुआ? वह क्या सोचने लगा?

वह सोचने लगा, मैं दौलतमन्द हो जाऊँगा। एक महल बनवाऊँगा। मगर रोज थोड़ा-थोड़ा सोना उसे नहीं चाहिए था।

वह कैसा आदमी होना चाहता था? वह एक ही दिन में ज़्यादा सोना क्यों चाहता था?

मुर्गी के पेट में सोना होगा, इस विचार से उसने उसको काटना तय किया।

उसने मुर्गी के बारे में क्या सोचा? उसने क्या तय किया? वह छुरी क्यों लाया? छुरी से उसने क्या किया?

सोना नहीं मिला, मुर्गी भी मर गयी। इसलिए वह रोने लगा।

अब वह रोने क्यों लगा?

लालच बड़ी बुरी बात है।

इस पाठ से क्या सबक मिलता है?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

✦ **संकलन**	१. मगनलाल दुखी क्यों था ? २. सोने के अण्डे पाकर वह क्या सोचने लगा ? ३. उसने मुर्गी को क्यों मार डाला ? ४. उसका क्या नतीजा हुआ ? ५. **इस** कहानी से हमें क्या उपदेश मिलता है ?
✦ **उपयोजन**	विद्यार्थियों द्वारा कहानी-कथन ।
✦ **स्वाध्याय**	यह कहानी दस पंक्तियों में लिखो ।

फलक-लेखन

छुरी	पछतावा	पेट पालना
मुर्गी	लालच	मालामाल होना
अण्डे	कमाई	मार डालना

प्रश्न—सोने का अण्डा पाकर मगनलाल क्या सोचने लगा ?

× × ×

(ख) कहानी-कथन

✦ **प्रस्तावना** — (क) की तरह । कहानी-कथन के पाठ में ऐसे शब्द कम हों, जिन्हें विद्यार्थी न जानते हों ।

✦ **हेतुकथन** — कहा जाए कि 'इसके सम्बन्ध में एक मज़ेदार कहानी मैं तुम्हें सुनाता हूँ ।'

✦ **विषय प्रतिपादन**—१. अध्यापक द्वारा कहानी-कथन ।

(छपा हुआ मजमून विद्यार्थियों के पास न होने के कारण 'मनोगत पठन' नहीं हो सकता । अर्थात् हेतु-प्रश्नों की भी जरूरत नहीं है । यदि कहानी सविस्तार और प्रभावकारी रीति से कही जाए, तो ही कहानी-कथन का पाठ सफल होगा ।)

२. अध्यापक विद्यार्थियों से सवाल पूछते हुए यह जान लेगा कि कहानी विद्यार्थियों ने कहाँ तक ग्रहण की है । पूरी कहानी पर सवाल पूछ लिये जाएँ ।

✦ **संकलन** — कथा-वस्तु पर दो-तीन सवाल पूछना । शीर्षक के बारे में चर्चा करना । यह भी देखा जाए कि कहानी से क्या नसीहत मिलती है ।

✦ **उपयोजन और स्वाध्याय** — (क) की तरह ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पाठ की टिप्पणी

सातवीं कक्षा : समय चालीस मिनट।

पाठ का उद्देश्य—'पानी का पैसा पानी में' कहानी सुनाना और उसे समझ लेने में विद्यार्थियों की सहायता करना।

आवश्यक उपकरण — एक चित्र जिसमें यह दिखाया है – तालाब के पास के पेड़ पर बैठे हुए बन्दर कुछ नोट, सिक्के फेंक रहे हैं। किनारे पर एक आदमी बैठा रो रहा है। दूसरा उसे समझा रहा है।

विषय	प्रणाली
✦ **प्रस्तावना** (संक्षेप में उत्तर लिखें।)	(चित्र दिखाते हुए) यह चित्र देखो। बन्दर कहाँ बैठा है? उसके हाथ में क्या है? बैठा हुआ आदमी क्या कर रहा है?
✦ **हेतुकथन**	दिखायी देता है कि यह थैली इस आदमी की है। यह आदमी क्यों रो रहा है, बन्दर ने क्या किया है आदि के बारे में एक मज़ेदार कहानी है। वही मैं सुनाऊँगा। तुम गौर से सुनो।
✦ **विषय-प्रतिपादन**	अध्यापक द्वारा कहानी-कथन
मुनाफा दिन-ब-दिन	[कहानी की रूपरेखा – दूध में पानी मिला कर बचनेवाला ग्वाला – भैंसें खरीदन के लिए शहर की ओर— रास्ते में तालाब के किनारे रुकना – एक और मुसाफिर से मिलना – तालाब में नहाने के लिए उतरना – बन्दर थैली ले जाता है – थैली पाने की कोशिश असफल – बन्दर थैली फाड़कर नोट और रुपये चबाकर फेंक देता है – कुछ तालाब में पड़ते हैं।
उलट-पलटकर फूट-फूटकर रोना	— ग्वाले को आधी रकम मिलती है — पानी का पैसा पानी में —]

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बीच-बीच में एकाध सवाल भी पूछा जाए, जिससे विद्यार्थियों की विचार-शक्ति को प्रोत्साहन मिले। पहले आसान समानार्थी शब्दों का प्रयोग करते हुए इन नये शब्दों का परिचय कराएँ— मुनाफा, दिन-ब-दिन, उलट-पलट कर, फूट-फूटकर रोना आदि।

कहानी-कथन के बाद नीचे लिखे अनुसार कुछ सवाल पूछकर देखें कि विद्यार्थियों की समझ में कहानी कहाँ तक आयी है — ग्वाले ने पैसे कैसे कमाये? वह शहर क्यों जा रहा था?

रास्ते में वह कहाँ रुक गया? क्यों? बन्दर ने थैली कब उठायी? क्यों? उन दोनों ने तब क्या किया? बन्दर ने थैली लेकर क्या किया? ग्वाले को कितने पैसे मिले? क्यों? वह क्यों पछताया? उसने क्या कहा?

✦ संकलन

ग्वाला शहर क्यों जा रहा था? बन्दर ने थैली लेकर क्या किया? ग्वाले को आधे ही रुपये क्यों मिले? बन्दर ने न्याय कैसे किया? इस कहानी से हमें क्या नसीहत मिलती है?

इसके लिए कोई अच्छा नाम बताओ।

✦ उपयोजन

विद्यार्थियों द्वारा कहानी-कथन।

✦ स्वाध्याय

ग्वाले के शब्दों में कहानी लिखो —- जैसे 'मैं दूध बेचता था...।'

फलक-लेखन

मुनाफा	दिन-ब-दिन	उलट-पलट कर
मुसाफिर	फूट-फूटकर रोना	

× × ×

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(ग) तीन-चार चित्रों की मदद से कहानी तैयार करना

✦ **प्रस्तावना** –– दो-एक चित्र दिखाकर उसमें अंकित घटना का परिचय कराना।

✦ **हेतुकथन** –– ऐसे और दो तीन चित्र हैं, हम उनके आधार से कहानी तैयार करेंगे।

✦ **विषय-प्रतिपादन** — एक चित्र दिखाते हुए सवालों द्वारा घटनाओं का विकास करा लेना। बीच-बीच में आवश्यकता के अनुसार अध्यापक स्वयं कथन करेगा। इस तरह पूरी कहानी तैयार होगी।

ऐसे पाठ में कठिन शब्द अधिक न हों। [उनका परिचय, अगर हो सके तो प्रस्तावना में चित्र की सहायता से ही किया जाए, नहीं तो विषय-प्रतिपादन में करें।]

चित्रों को हटा दें। अब सवालों के उत्तरों के रूप में विद्यार्थी कहानी की प्रधान घटनाएँ बताएँगे।

✦ **संकलन** –– कहानी से क्या सबक मिलता है ? शीर्षक के बारे में चर्चा करें।

✦ **उपयोजन और स्वाध्याय** ... (क) की तरह।

पाठ की टिप्पणी

छठी कक्षा : समय चालीस मिनट।

पाठ का उद्देश्य — चार चित्रों की सहायता से एक पूरी कहानी बना लेने में विद्यार्थियों की मदद करना।

आवश्यक उपकरण — एक कागज़ पर छपे हुए चार चित्र –– १. सिर पर मछलियों से भरी टोकरी ले जानेवाला मछुआ, उसकी ओर उड़ते हुए आनेवाला कौआ। २. पेड़ की डाल पर मुँह में मछली दबाये बैठा हुआ कौआ, धीमी गति से चलनेवाला सियार। ३. सियार मानो कौए से कुछ कह रहा है। ४. मछली को सियार उठा रहा है।

× × ×

विषय	प्रणाली
✦ **प्रस्तावना**	(चित्र फलक पर लटकाते हुए)
यह आदमी है।	यह चित्र देखो। (**आदमी** दिखाकर) यह कौन है ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

टोकरी	(टोकरी दिखाकर) यह **टोकरी** है।
मछली	(मछली दिखाकर) यह **मछली** है।
मछुआ	मछली पकड़नेवाले को **मछुआ** कहते हैं। मछुआ मछलियाँ बेचता भी है।
कौआ	(कौआ दिखाकर) यह **कौन** है ?
सियार	(सियार दिखाकर) यह **सियार** है। (समय-समय पर नये शब्दों का अभ्यास कराया जाए।)
✦ **हेतुकथन**	ये मछुआ, कौआ और सियार हैं – इनके बारे में एक कहानी इन चित्रों के आधार से हम बना लेंगे।
✦ **विषय प्रतिपादन** टोकरी में मछलियाँ लेकर यह मछुआ बाज़ार जा रहा है।	(पहला चित्र दिखाकर) यह कौन है ? उसके सिर पर क्या है ? टोकरी में क्या है ? वह मछुआ कहाँ जा रहा है ?
कौआ टोकरी की ओर आ रहा है। वह मछली उठाएगा।	यह कौआ किसकी ओर आ रहा है ? वह भूखा है। वह क्या करेगा ?
मछली को चोंच में दबाये वह पेड़ पर जा बैठा। उधर से एक भूखा सियार आ रहा था। उसने यह देखा था।	(दूसरा चित्र दिखाकर) देखो, कौआ कहाँ बैठा है ? उसकी चोंच में क्या है ? वह उसे कहाँ मिली ? वह देखो, कौन आ रहा है ? यह सियार भी बहुत भूखा है ? सियार कैसा जानवर होता है ?
सियार ने कौए से कहा, 'तुम्हारी आवाज़ मीठी है।' उसने कौए को खुश करने के लिए ऐसा कहा था।	(तीसरा चित्र दिखाकर) यह कौए से कुछ कह रहा है। उसने कहा – भाई कौए, तुम अच्छा गाते हो। तुम्हारी आवाज़ बहुत मीठी है। क्या कौए की आवाज़ सचमुच मीठी होती है ? फिर भी सियार ने ऐसा क्यों कहा ? सियार उसका गाना सुनना चाहता है। उसने कौए से क्या कहा होगा ?
कौए से गाना सुनाने को कहा। कौआ तारीफ सुनकर खुश हुआ और गाने लगा।	मगर कौआ बड़ा बेवकूफ है। उसने सियार का कहना ठीक माना। तब उसने क्या किया होगा ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चोंच से मछली गिर पड़ी। सियार मछली लेकर चला गया।	(चौथा चित्र दिखाते हुए) देखो, इसका क्या नतीजा हुआ।
✦ संकलन	यह मछली क्यों गिर पड़ी ? सियार क्या कर रहा है ? कौए को मछली कहाँ मिली ? सियार ने उससे क्या कहा ? कौआ क्यों गाने लगा ? सियार कैसा है ? क्यों ? इस कहानी के लिए नाम बताओ।
✦ उपयोजन	विद्यार्थियों द्वारा कहानी-कथन
✦ स्वाध्याय	यह कहानी पंद्रह पंक्तियों में लिखो।

फलक-लेखन

मछली	टोकरी	चालाक
मछुआ	सियार	बेवकूफ

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: १७ :

व्याकरण का अध्यापन

(१) **भाषा के अध्ययन-अध्यापन में 'व्याकरण का स्थान** – प्राचीन युग से हमारे यहाँ और यूरोप में भी प्रचलित भाषाओं के अतिरिक्त संस्कृत, ग्रीक, लैटिन जैसी किसी एक या अनेक भाषाओं का अध्ययन-अध्यापन होता आ रहा है। सब यह जानते हैं कि उस भाषा की शिक्षा में व्याकरण को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाता था। व्याकरण को इतना महत्त्व दिया जाने लगा कि उसका अध्यापन विद्यार्थियों को बोझ-सा मालूम होने लगा। इसकी प्रतिक्रिया यह हुई कि आधुनिक काल में भाषा-शिक्षा में व्याकरण का बिलकुल महत्त्व न माननेवाले अध्यापक भी दिखायी देने लगे हैं। व्याकरण की शिक्षा की आवश्यकता और महत्त्व पर काफी गर्मागर्म बहस हुई। अब बगैर पक्षपात के दोनों दलों की विचार-प्रणालियों का हम मूल्यांकन कर सकेंगे।

पुरानी प्रणाली के पक्षपातियों का कहना था कि व्याकरण के सम्यक् अध्ययन के बगैर, भाषा को अपनाकर उसमें हम सफलता से व्यवहार करने में समर्थ नहीं हो सकेंगे। उनकी यह धारणा थी कि ऐसी भाषा के व्याकरण के नियमों को याद करने से ही उनके अनुसार विद्यार्थी बोलने-लिखने में सफल हो सकता है। व्याकरण के नियमों और शब्दों को ज़बानी याद करना उनकी दृष्टि से उस भाषा पर प्रभुता पाने का खास तरीका था। इसमें भाषण और लेखन शक्ति के विकास के पहले ही व्याकरण पढ़ाया जाता था। इससे व्याकरण साधन की अपेक्षा साध्य ही अधिक माना जाने लगा।

सम्भाषणात्मक प्रणाली के आविर्भाव और विकास के बाद कुछ शिक्षाशास्त्री यह मानने लगे कि भाषण-शक्ति और लेखन-शक्ति के विकास के लिए व्याकरण की जानकारी कोई ज़रूरी बात नहीं है; उससे विद्यार्थी अपनी भाषा की आलोचना कर सकता है कि क्या गलत है और क्या सही है; मगर उससे उनकी भाषण-शक्ति और लेखन-शक्ति का विकास होगा ही, सो बात नहीं है। उन्होंने देखा कि व्याकरण की जानकारी रखते हुए भी विद्यार्थी भाषा के व्यवहार में गलतियाँ करते हैं। इन लोगों की जब आवाज़ बुलन्द हो गयी, तब मामूली हैसियत के अध्यापकों ने भी इनके कहने पर ज़्यादा सोच-विचार न करते हुए, व्याकरण के अध्यापन को महत्त्व देना बन्द किया। नयी प्रणाली के हिमायतियों ने एक मूर्ति के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भंजन का काम अवश्य किया, फिर भी उसके स्थान पर वे ऐसी दूसरी मूर्ति नहीं बिठा सके, जो अपनी शक्ति से सबपर अपना अधिकार जमाए, पुरानी प्रणाली की कमजोरियों को भी हटा दे और अपने में त्रुटियाँ न रखे। इससे इस क्षेत्र में बड़ी गड़बड़ी दिखायी देने लगी। अध्यापकों ने पुरानी प्रणाली को छोड़ दिया और नयी प्रणाली को वे ठीक तौर पर नहीं अपना सके।

नयी प्रणाली के अनुसार मातृभाषा के अतिरिक्त अन्य भाषा को आत्मसात् करने के लिए भाषण, लेखन, पठन तथा श्रवण का अभ्यास विद्यार्थी ज्यादा से ज्यादा अवश्य करें; फिर भी भाषा की विविध विशेषताओं को केवल इस तरह के अभ्यास द्वारा अपनाने में उन्हें काफी शक्ति और वक्त खर्च करना होगा। कितना ही अभ्यास वे क्यों न करे, 'आदर्श' की ओर पहुँचने में परिस्थिति द्वारा निर्मित कई एक कठिनाइयाँ पेश आती हैं। इससे उन्हें भाषा पर अपेक्षित और परिश्रम के प्रमाण में ज्यादा प्रभुता नहीं मिलती। इसलिए पुरानी प्रणाली की विशेषताओं को अपनाना चाहिए। विद्यार्थियों को भाषा का आवश्यक व्याकरण पढ़ाएँ, उसकी विशेषताएँ समझाएँ और रचना का अभ्यास भी कराएँ। इससे विद्यार्थी उन नियमों के अनुसार वाक्य-रचना करने में समर्थ होंगे। एक बार शब्दों और रचना-प्रणाली की जानकारी को हज़म करने से वे नये-नये वाक्य बनाएँगे। इससे समय और शक्ति की बचत होगी। साधन और प्रणाली की जानकारी उन्हें ऐसी भाषा में व्यवहार करने में समर्थ बनाएगी। अपने आप विद्यार्थी जब वाक्य-रचना करने लगेंगे, तब उनकी रचनात्मक क्रिया-शीलता काम में आएगी और नयी बात सीखने का आनन्द उसका उत्साह दुगुना कर देगा।

यथायोग्य स्थान पर और समुचित प्रणाली द्वारा दिये गये व्याकरण के ज्ञान के आधार पर, विद्यार्थी भाषा को आत्मसात् करने में द्रुत गति से ज़रूर आगे बढ़ेंगे। व्याकरण के अध्यापन से विद्यार्थी यह जान लेंगे कि क्या सही है और क्या गलत है। यह कोई कम महत्त्वपूर्ण लाभ नहीं है। इसलिए पहले से ही व्याकरण की दृष्टि सही प्रयोग करने की आदत विद्यार्थियों में डाली जाए। अगर वे विचारपूर्वक बोलेंगे और लिखेंगे, तो अपनी गलतियाँ उनके ध्यान में आ सकती हैं — उन्हें वे अगली बार नहीं दोहराएँगे। यद्यपि अक्सर देखा जाता है कि व्याकरण का ज्ञान रखनेवाले भी गलतियाँ करते हैं, फिर भी उससे हमें नाउम्मीद नहीं होना चाहिए। भाषा का शुद्ध व्यवहार करने में व्याकरण विद्यार्थियों की मदद ज़रूर करता है। हरएक अध्यापक ध्यान में रखे कि इस दृष्टि से व्याकरण साधन मात्र है, साध्य नहीं, उसका अवलम्बन इस दृष्टि से ही किया जाए। व्याकरण के नियम को मद्देनज़र रखकर भाषा का अभ्यास कराने से अध्यापक विद्यार्थियों की काफी मदद कर सकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

व्याकरण के अध्ययन की आवश्यकता तभी अधिक अनुभव होने लगती है जब हम देखते हैं कि सम्भाषणात्मक प्रणाली की दृष्टि से हिन्दी का आदर्श वातावरण विद्यार्थियों के चारों ओर नहीं बन पाता। उनको हिन्दी सुनने और बोलने का सीमित अवसर ही मिलता है। इस त्रुटि की पूर्ति व्याकरण द्वारा विद्यार्थियों की मदद करके ही की जा सकती है।

इस व्यावहारिक महत्त्व के साथ और भी एक पहलू पर हमें ध्यान देना चाहिए। व्याकरण भाषा के गठन का शास्त्रीय अध्ययन मात्र है। भाषा के व्यवहार में यद्यपि उसका उपयोग प्रत्यक्ष कम होता हो तो भी विद्यार्थी को चाहिए कि वह इस पहलू पर भी ध्यान दे। भाषा के बारे में उसका ज्ञान तभी पूर्ण माना जाएगा जब वह उसके व्याकरण का भी परिचय प्राप्त करेगा, भाषा के अंतररंग को भी समझ लेगा।

व्याकरण के सम्यक् ज्ञान की आवश्यकता स्पष्ट करने में पुरानी प्रणाली के हिमायतियों ने कोई गलती नहीं की है; वैसे ही भाषण और लेखन के अभ्यास का जो महत्त्व स्वीकार किया गया है, वह भी अनुचित नहीं है। इसलिए दोनों के सिद्धान्तों का समुचित समन्वय करने की ज़रूरत है।

(२) **व्याकरण कौन-सा और कितना?**—यह महत्त्वपूर्ण समस्या है कि हमारी माध्यमिक पाठशालाओं में पढ़नेवाले विद्यार्थियों को कौन-सा और कितना व्याकरण पढ़ाया जाए। मोटे तौर पर यों कहा जा सकता है कि उन्हें उतना ही व्याकरण पढ़ाया जाए, जितना उनके लिए जरूरी है—यानी उसका अध्ययन उन्हें लाभकारी हो सकता है। मगर अध्यापकों की दृष्टि से जब हमें बोलना हो तो ऐसी संदिग्धता के साथ बोलना उचित नहीं है। 'जितना आवश्यक है, उतना।' – शब्द तो ठीक हैं – फिर 'आवश्यक', 'अनावश्यक' का निर्धारण कैसे करें? विद्यार्थी कहेंगे कि उन्हें व्याकरण की बिलकुल जरूरत नहीं है। क्या उनकी राय विचारणीय होगी? अध्यापक बालकों पर संस्कार करके उनका विकास करना चाहता है, उनकी प्रवृत्तियों, और विकास की दृष्टि से उनकी आवश्यकताओं को वह जानता है, इसलिए अध्यापक को चाहिए कि वही इसपर अधिक विचार करे।

अध्यापक भी इसपर मनचाहा विचार नहीं कर सकेगा। विद्यार्थियों को हिन्दी पढ़ाने के उद्देश्य और उसकी मर्यादाओं को मद्देनज़र रखते हुए उसे यह तय करना चाहिए कि वह कौन-सा और कितना व्याकरण विद्यार्थियों को पढ़ाए।

माध्यमिक पाठशालाओं के हिन्दी भाषा के अध्यापक विद्यार्थियों को हिन्दी भाषा से परिचित कराना चाहते हैं – हिन्दी भाषा पर प्रभुता प्राप्त करने में उनकी सहायता करना चाहते हैं। हिन्दी भाषा में वे सफलता से बोल सकें, लिख सकें और दूसरों के (हिन्दी में) प्रकट किये हुए विचारों को समझ सकें, यही उनका

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उद्देश्य है। इससे स्पष्ट होता है कि वे अपने विद्यार्थियों को व्यावहारिक दृष्टि से आवश्यक हिन्दी भाषा का ज्ञान प्रदान करना चाहते हैं -- वे चाहते हैं कि विद्यार्थी हिन्दी में इतनी योग्यता पाएँ कि आगे चलकर वे हिन्दी में अपनी योग्यता बढ़ा सकें। इतनी ठोस बुनियाद डालना वे अपना कर्तव्य समझते हैं और यह भाषा-शिक्षा का व्यावहारिक पहलू मात्र है।

इससे यह स्पष्ट होता है कि विद्यार्थियों को भी व्यवहार के लिए उपयुक्त **प्रायोगिक** (functional) **व्याकरण** मात्र पढ़ाया जाए। व्याकरण के कई प्रकार हैं -- ऐतिहासिक व्याकरण, तुलनात्मक व्याकरण, व्याख्यात्मक व्याकरण और वर्णनात्मक व्याकरण। जो विद्यार्थी व्याकरण-शास्त्र में प्रवीणता प्राप्त करना चाहते हैं, उनको इन सबका बारीकी से अध्ययन करना चाहिए। वहाँ व्याकरण का अध्यापन वे स्वतंत्र ज्ञान-शाखा की दृष्टि से करेंगे – वही उनका लक्ष्य होगा। मगर ऐसा अध्ययन मामूली विद्यार्थी की हैसियत के बाहर की वस्तु है। मामूली विद्यार्थियों का सम्बन्ध 'वर्णनात्मक' व्याकरण से ही रहेगा। व्याकरण का यह प्रकार-विशेष इतना ही बताता है कि फलानी बात क्या है, वह क्या कार्य करती है। 'करना' के भूतकाल के रूप किया, किये, की, कीं – होते हैं, सामान्य अ-कारान्त धातुओं की तरह करा, करी, करे आदि नहीं, यही वर्णनात्मक व्याकरण बताएगा। यह ऐसा क्यों है, वे रूप कैसे बने, आदि की चर्चा वह नहीं करेगा। माध्यमिक शाठशालाओं के विद्यार्थियों को इतनी ही जानकारी पर्याप्त होगी। इसलिए उन्हें वही व्याकरण पढ़ाया जाए, जो भाषा का शुद्ध व्यवहार करने में उनकी मदद करेगा। संक्षेप में सैद्धान्तिक पहलू की अपेक्षा उसकी व्यावहारिक उपयोगिता पर अध्यापक अधिक ध्यान दें।

आज जो राष्ट्रभाषा के नाते हम सीख रहे हैं, वह हिन्दी की उपभाषा 'खड़ी बोली' है। इसलिए ब्रजभाषा, अवधी जैसी हिन्दी की अन्य उपभाषाओं का व्याकरण पढ़ाने की उनको ज़रूरत नहीं है। प्राचीन कविताओं को पढ़ाते समय सम्बन्धित ब्रज, अवधी आदि के शब्दों के रूपों की ओर ध्यान दें; पर व्याकरण की विशेषता समझाने की कोई ज़रूरत नहीं है। वैसे ही आज जो हिन्दी का रूप प्रचलित है, उसी का व्याकरण पढ़ाएँ, न कि पुरानी हिन्दी का।

'व्याकरण कितना और कौन-सा पढ़ाएं' — इसका विचार करते हुए अधिक स्पष्टता के लिए हम निम्न-लिखित बातों की ओर संकेत कर रहे हैं। इससे यह स्पष्ट होगा कि प्रायोगिक व्याकरण के अन्तर्गत कौन-सी बातें आ सकती हैं।

(अ) **शब्द विचार** – शब्दों के भेद और महत्त्व के उपभेद : उनका रूप बनाने के प्रत्यय (कारक-चिह्न-आदि), लिंग, वचन।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(आ) वाक्य-विचार – वाक्य, वाक्यों के प्रकार, उपवाक्य, वाक्य-विश्लेषण (analysis), कालविचार, अर्थविचार (moods), वाच्य-विचार (Voice), वाक्य के शब्दों का परस्पर अन्वय।

(इ) समास और संधि का स्थूल ज्ञान : हिन्दी के प्राचीन काव्य में भी समासों की बहुलता कहीं नहीं दिखायी देती। गद्य में वैसे तो बहुत ही कम सामासिक शब्द होते हैं। इसलिए विद्यार्थियों को व्यवहार में आनेवाले शब्दों का अर्थ जान लेने में जो जानकारी आवश्यक है वही दी जाए। समासों के भिन्न-भिन्न भेद और उपभेद पढ़ाने की ज़रूरत नहीं है। 'सन्धि' के बारे में भी यही कहा जा सकता है।

(ई) व्यवहार में आनेवाले उपसर्ग तथा प्रत्यय और उनका कार्य। शब्द-साधना के अन्तर्गत यह बताया जाए कि संज्ञा से विशेषण, विशेषण से संज्ञा आदि शब्द कैसे बनाये जाते हैं।

(उ) मुहावरों का वाक्यों में प्रयोग। संज्ञा, विशेषण आदि की शास्त्रीय परिभाषा अगर विद्यार्थी न जानते हों, तो वह बड़ी भारी भूल नहीं मानी जाएगी; मगर उन्हें दिये हुए शब्दों में से संज्ञाएँ, विशेषण आदि छाँटने का ज्ञान होना चाहिए। क्रिया-विशेषण उपवाक्यों (clauses) की परिभाषा कण्ठस्थ करा लेने की अपेक्षा वाक्यों में उनका प्रयोग किस तरह किया जाता है, यह बताने की ओर अधिक ध्यान दिया जाए।

व्याकरण के साथ-साथ छन्द-शास्त्र और अलंकार-विचार को भी पाठ्य-क्रम में स्थान दिया जाता था। इसके ज्ञान की भी आवश्यकता है। फिर भी यहाँ व्यावहारिक दृष्टिकोण ही रखा जाए। अलंकारों के विभिन्न उपभेदों और प्रत्यक्ष पाठ्य-पुस्तक में भी न आनेवाले छन्दों का परिचय कर लेना विद्यार्थियों को बोझ-सा मालूम होगा।

(३) व्याकरण की शिक्षा – आज की परिस्थिति : व्याकरण के अध्ययन और अध्यापन की आज की अवस्था बड़ी दयनीय है। भाषा के अध्ययन-अध्यापन का यदि कोई अंग सबसे अधिक उपेक्षित हो, तो वह है व्याकरण। विद्यार्थियों को व्याकरण का अध्ययन बोझ-सा लगता है। उसे वे नीरस तथा अनावश्यक समझते हैं, उसे अनाकलनीय कहकर उसकी ओर ध्यान देना नहीं चाहते। अध्यापकों को भी व्याकरण की पढ़ाई में उतना रस नहीं आता। अगर वे उत्साह से पढ़ाने की कोशिश करें, तो विद्यार्थी उन्हें सहयोग नहीं देते। पाठशालाओं के पाठ्य-क्रम में उसका स्थान उतना महत्त्वपूर्ण नहीं है, जितना पहले रहा करता था। परीक्षा की प्रश्नपत्रिका में सौ अंकों में से दस-पंद्रह अंक व्याकरण के लिए नियत किये हु रहते हैं; उसमें भी मुहावरों, कहावतों, अलंकारों को इसी के अन्तर्गत स्थान दिया

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जाता है। इसका प्रभाव भी विद्यार्थियों के दृष्टिकोण पर हुए बिना नहीं रहता।

आम तौर पर व्याकरण के लिए स्वतंत्र पाठ्य-पुस्तक नहीं नियत की जाती। पाठ्य-पुस्तक के पाठों पर आधारित व्याकरण की जानकारी देने की सूचना अध्यापकों को दी जाती है। अध्यापकों को पाठ-पुस्तक के सबके सब पाठ पढ़ाने के लिए भी पर्याप्त अवधि नहीं मिलती। वे अगर व्याकरण की ओर ज्यादा ध्यान न दें, तो उसमें कोई अचरज नहीं है। नयी प्रणालियों के प्रकाश से जिन शिक्षकों की आँखें चकाचौंध हो गयी हैं, उनके मन में व्याकरण के बारे में कई गलत धारणाएँ घर किये बैठी हुई हैं। ये लोग भी व्याकरण को सिर पर चढ़ा लेना पसन्द नहीं करते।

कभी-कभी व्याकरण का जो पाठ्यक्रम विद्यार्थियों को अध्ययन के लिए दिया जाता है, वह सदोष भी होता है। उसमें उन्हीं बातों को बार-बार पढ़ाने को कहा जाता है। उसमें 'स्थूल से सूक्ष्म की ओर' जाने के लिए जो क्रमबद्धता (gradation) आवश्यक है, उसका प्रायः अभाव-सा दिखायी देता है। पाँचवीं कक्षा से लेकर ग्यारहवीं कक्षा तक सब को 'वाक्य-विश्लेषण' करना पड़ता है। इससे विद्यार्थियों को उसमें रुचि नहीं होती।

व्याकरण के अध्यापन का तरीका भी सदोष है – या हम यों कहें कि वह ठीक तरीके से नहीं पढ़ाया जाता। परिभाषाओं और सूत्रों को कण्ठस्थ करा लेने और परम्परागत चले आये हुए उदाहरणों को दोहराने से वह विषय दिलचस्प नहीं बनता। इसलिए उसकी ओर वे ध्यान नहीं देते। पाठ-पुस्तक से उसका सम्बन्ध उतना नहीं जोड़ा जाता, जितना आवश्यक है। इसलिए विद्यार्थी उसे 'बाहरी वस्तु' मानते हैं और टालमटोल करते हैं।

'कविता का अध्यापन' शीर्षक अध्याय में जो कहा है वह यहाँ भी सही है। व्याकरण की ओर देखने का यह दृष्टिकोण ही गलत है। स्वयं अध्यापक व्याकरण को अनावश्यक बोझ-सी और ग्रहण-शक्ति को चुनौती देनेवाली चीज़ समझने लगे हैं। अतः यदि बेचारे विद्यार्थी असमंजस में पड़ें, तो कोई अचरज की बात नहीं होगी। फलत: 'व्याकरण पढ़ाना चाहिए' इसलिए वे पढ़ाते हैं। वे स्वयं भाषा के अध्ययन में व्याकरण का क्या मूल्य है यह ठीक तौर पर नहीं जानते, अतः अपना विषय भी दिलचस्प नहीं बना सकते।

इस अवस्था में सुधार आवश्यक है। हिन्दी के अध्यापकों को चाहिए कि वे इस समस्या को ठीक-ठीक समझें और आवश्यक सुधार करें।

(४) **आवश्यक सूचनाएँ** — (अ) **क्रमबद्ध पाठ्य-क्रम :** हिन्दी व्याकरण का पाठ्यक्रम माध्यमिक पाठशालाओं की सातों कक्षाओं के लिए विशिष्ट दृष्टिकोण से नियत किया जाए। अध्यापक उसी के अनुसार पढ़ाएँ, तो उन्हें बार-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बार वही बातें पढ़ाने की नौबत नहीं आएगी और विद्यार्थियों को भी हर साल कुछ नयी बातें सीखने को मिलेगी। उदाहरण के लिए 'शब्द-विचार' का यों विभाजन किया जा सकता है : —

पाँचवीं कक्षा — संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया और अविकारी शब्द को पहचानना।

छठी कक्षा — संज्ञा : जातिवाचक और व्यक्तिवाचक

सर्वनाम : पुरुषवाचक

विशेषण : गुणवाचक और संख्यावाचक

क्रिया का काल-विचार : वर्तमानकाल, भूतकाल, भविष्यत्काल

सातवीं कक्षा – संज्ञा : भाववाचक

सर्वनाम : पुरुषवाचक के उपभेद, प्रश्नार्थक

विशेषण : पूर्णांक-सूचक

पाठ्य-पुस्तक में आये हुए शब्द : संज्ञा से विशेषण और विशेषण से भाववाचक संज्ञा बनाना।

क्रिया : अपूर्ण वर्तमानकाल, अपूर्ण भूतकाल, आज्ञार्थ

अविकारी शब्द : स्थल-वाचक और कालदर्शक क्रियाविशेषण

सातवीं कक्षा — संज्ञा : समूहवाचक

विशेषणों से संज्ञाएँ और विशेषण तथा क्रियाओं से संज्ञाएँ (पाठ-पुस्तक में आये हुए उदाहरण मात्र) बनाना।

सर्वनाम : प्रश्न-सूचक, सम्बन्ध-द्योतक

क्रिया : कुछ संयुक्त क्रियाएँ, पूर्ण वर्तमान काल, पूर्ण भूतकाल (present and past perfect)

क्रिया-विशेषण : कारण-सूचक, संकेत-सूचक, विकल्प-सूचक क्रियाविशेषण का प्रयोग। इस तरह की क्रमबद्धता से अध्यापकों और विद्यार्थियों को व्याकरण की पढ़ाई बोझ-सी नहीं प्रतीत होगी।

(ब) **मातृभाषा और हिन्दी के व्याकरण के अध्यापन में समन्वय- (co-ordination) स्थापित करने की नितान्त आवश्यकता है।** शिक्षा विभाग द्वारा नियत किये हुए पाठ्य-क्रम के अनुसार देखा जाता है कि मातृभाषा का व्याकरण पढ़ना पाँचवीं कक्षा में शुरू होता है। इसमें स्पष्ट रूप से बताया जा सकता है कि हिन्दी के व्याकरण की शिक्षा में अध्यापक मातृभाषा के व्याकरण के आगे नहीं बढ़ सकेंगे। विद्यार्थी जब मातृभाषा में संज्ञा, सर्वनाम आदि जानते लगते हैं, तभी हिन्दी का व्याकरण पढ़ाना उचित होगा। उस ज्ञान का उपयोग हिन्दी के लिए किया जा सकता है। प्रादेशिक भाषाओं के और हिन्दी के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

व्याकरण में अनेक बातों में समानता है, उसको स्पष्ट करते जाएँ तो विद्यार्थियों को भी वह विषय आसान प्रतीत होगा। वे वाक्य-विश्लेषण जैसे मराठी में या गुजराती में करते होंगे, वैसे ही हिन्दी में भी करना है, यह समझाने से अध्यापक का कार्य आसान होगा। जब इन बातों को हिन्दी में समझाया जाएगा, तब मातृभाषा के व्याकरण को पढ़ते समय अगर विद्यार्थियों के ध्यान में कोई बात न आयी हो, तो उसे वह अब ग्रहण कर सकेंगे। इस तरह मातृभाषा के व्याकरण के ज्ञान से हिन्दी के अध्यापक लाभ उठा सकेंगे।

(स) कोरी सैद्धान्तिक बातों की अपेक्षा व्यावहारिक दृष्टि से व्याकरण पर ध्यान दिया जाए। विशेषणों से बनायी हुई संज्ञाएँ उनके सामने रखें, उनका वर्गीकरण करें और वाक्यों में उनका प्रयोग करा लें। वाक्य-परिवर्तन करा लेने से उन शब्दों के प्रयोग करने में विद्यार्थी समर्थ होंगे।

(ड) अध्यापक स्वयं हिन्दी भाषा से उसके व्याकरण को विच्छिन्न करते हुए पढ़ाने की कोशिश न करे। पाठ्य-पुस्तक पढ़ाते-पढ़ाते पाठ के अन्त में व्याकरण पढ़ाया जाए और किसी एक दिन उन बातों को विद्यार्थियों के सामने संकलित रूप में रखने से उन्हें अधिक लाभ होगा।

(ई) व्याकरण पढ़ाने के तरीके में अध्यापक आवश्यकतानुसार परिवर्तन करे। व्याख्या-प्रणाली की अपेक्षा प्रयोग-प्रणाली को अपनाना उसे लाभकारी होगा।

(फ) सम्बन्धित विषय पर अधिक उदाहरण दिए जाएँ। पाठ्य-पुस्तक में से उदाहरण चुनने से विद्यार्थियों को लाभ पहुँचेगा। अन्त में पाठ्य-पुस्तक के बाहर के उदाहरण छाँट लिये जाएँ।

आम तौर पर देखा जाता है कि परिपाटी के अनुसार चले आये हुए उदाहरण ही दिये जाते हैं। अलंकार पढ़ाते वक्त इसका अनुभव होता है। अध्यापक को चाहिए कि वह विद्यार्थियों की पाठ्य-पुस्तक से तथा उनके अतिरिक्त अन्य दिलचस्प उदाहरण भी चुन ले।

वह निम्न कक्षाओं में शब्दों के भिन्न-भिन्न रूपों के प्रयोग विद्यार्थियों से करा ले। उनका व्याकरण की दृष्टि से स्थान और व्याकरण के नियम कण्ठस्थ करा लेने पर अधिक ज़ोर न दिया जाए। क्योंकि व्याकरण की विवेचनात्मक बातों को ग्रहण करने के लिए विशेष विकसित बुद्धि की आवश्यकता है। छोटे बालकों की वैसी अवस्था नहीं होती इसलिए उन्हें वह कठिन मालूम होगा।

(ग) विद्यार्थी परीक्षा को अधिक महत्त्व देते हैं। हिन्दी की प्रश्नपत्रिका में व्याकरण के लिए कितने अंक होते हैं, इसकी ओर ध्यान देते हुए वे व्याकरण का ध्ययन करते हैं। अध्यापक भी इसी दृष्टिकोण से पढ़ाते हैं, जो उचित नहीं

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कहा जा सकता है। मतलब इतना ही है कि परीक्षा में व्याकरण पर अधिक प्रश्न पूछें, जिससे विद्यार्थियों को अधिक प्रोत्साहन मिलेगा।

(५) **व्याकरण पढ़ाने की प्रणालियाँ** — व्याकरण पढ़ाने की दो प्रणालियाँ हैं — १. **अवगामी प्रणाली** (Deductive method) और २. **उद्गामी** (Inductive method)। यहाँ इन प्रणालियों के स्वरूप और गुणदोषों का विवेचन किया गया है।

१. अवगामी या व्याख्या प्रणाली —

इस प्रणाली को 'सूत्र-प्रणाली' या 'व्याख्या-प्रणाली' कहते हैं। इस पद्धति के अनुसार पाठ का स्वरूप नीचे लिखे अनुसार होता है—

अ — अध्यापक विद्यार्थियों के सामने सिद्धान्त या नियम प्रस्तुत करता है।

ब — आवश्यक उदाहरण देता है।

स — विद्यार्थी नियमों को ज़बानी याद करते हैं।

ड — विद्यार्थी अध्यापक के मार्गदर्शन में और उदाहरण देते हैं।

२. उद्गामी या प्रयोग-प्रणाली —

विज्ञान और गणित के अध्यापन में आजकल इस पद्धति को प्रस्तुत किया जाता है। बेकन ने पहले पहल इस प्रणाली को लोकप्रिय बना दिया। इस प्रणाली के अनुसार पाठ यों चलता है —

अ — अध्यापक विद्यार्थियों के सामने विविध उदाहरण प्रस्तुत करता है।

ब — उसके मार्गदर्शन के अनुसार विद्यार्थी उन उदाहरणों की विशेषताओं का निरीक्षण करते हैं।

स — समान गुणधर्म-वाले उदाहरणों को इकट्ठा करते हुए उनका वर्गीकरण (classification) किया जाता है।

ड — सामान्य सिद्धान्त (generalisation) स्थापित किया जाता है।

(६) **गुण-दोषों का विवेचन** — व्याख्या-प्रणाली के अनुसार विद्यार्थियों के सामने नियम या सिद्धान्त रखा जाता है तथा उसके स्पष्टीकरण के लिए उदाहरण दिये जाते हैं और अन्त में नये उदाहरण पेश किये जाते हैं। यह प्रणाली पुरानी है और प्राचीन युग में चारों ओर उसका बोलबाला अवश्य था। फिर भी बालकों के मनोविज्ञान पर आधारित नये शिक्षा-शास्त्र के अनुसार उनको पढ़ाने की दृष्टि से उसमें कई त्रुटियाँ दिखायी देती हैं।

व्याकरण विवेचनात्मक स्वरूप का अमूर्त (abstract) बातों का विज्ञान है। बालकों को प्रत्यक्ष वस्तुओं में जितनी दिलचस्पी होती है, उतनी अमूर्त बातों में नहीं होती। ऐसी बातों को ग्रहण करने की क्षमता वे ही रखते हैं, जिनकी बुद्धि का

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

एक खास स्तर तक विकास हुआ हो। बालकों में यह क्षमता कम दिखायी देती है। इसलिए व्याकरण के विवेचनात्मक पाठ में उन्हें दिलचस्पी नहीं होगी और उन नियमों को वे ग्रहण कर नहीं सकेंगे। हाँ, वे ज़बानी याद ज़रूर कर सकेंगे, जैसे कि आम तौर पर कराया जाता है। मगर किसी ने कोई बात ज़बानी याद की है, इसके मानी यह नहीं हैं कि उसने वह बात आत्मसात की है, उसके मर्म का ज्ञान उसने पाया है। अक्सर देखा जाता है कि विद्यार्थी ऐसी कई बातें कण्ठस्थ करते हैं, जिनका मूलभूत सिद्धान्त उनके ध्यान में नहीं आया है। कण्ठस्थ करने से ज्ञान को स्थायी बनाने में सहायता होती है अवश्य, फिर भी वह याद करना तोते की तरह न हो – तोता हमारा आदर्श न हो। आधुनिक शिक्षण-शास्त्र के अनुसार, जो बात पूर्णतः ध्यान में नहीं आयी है, उसे ज़बानी याद करना विद्यार्थियों के लिए विशेष लाभकारी नहीं होता। इससे मालूम होता है कि छोटे बालकों को पढ़ाने की दृष्टि से यह प्रणाली अ-मनोवैज्ञानिक है, तथा वह शिक्षा-शास्त्रीय भी नहीं है।

दूसरी बात यह है कि छोटे बालकों को भाषा पर उतनी प्रभुता नहीं होती, इसलिए उनके पास उदाहरण कम होते हैं; अपनी तरफ से उदाहरण पेश करने में उन्हें कठिनाई अनुभव होती है। जिनके पास भाषा की काफी सामग्री होती है, वे पढ़ाये हुए सिद्धान्त को आसानी से ग्रहण कर सकेंगे और उसके प्रकाश में उदाहरणों पर विचार कर सकेंगे। विद्यार्थियों का भाषा-ज्ञान देखकर यह असम्भव-सा दिखायी देता है। हिन्दी भाषा के सम्बन्ध में तो उन्हें ज़्यादा कठिनाई महसूस होगी। उच्च कक्षाओं के विद्यार्थियों को (जिन्हें भाषा में पर्याप्त योग्यता प्राप्त हुई होती है) पढ़ाने में यह प्रणाली उपयुक्त हो सकती है।

व्याकरण-अनुवाद प्रणाली के बारे में जो कहा गया है, वह यहाँ भी लागू होता है। नियम या सिद्धान्त बताना, उदाहरण और और स्पष्टीकरण देना आदि सब कार्य अध्यापक द्वारा ही किये जाते हैं। अध्यापक विद्यार्थियों के सामने बने-बनाये नियम और उदाहरण रखता है – इस हालत में विद्यार्थियों को केवल अध्यापक द्वारा कही गयी बातें सुनते रहने के सिवा और क्या करना है। इसमें विद्यार्थियों को अपने लिए सोचने का मौका कहाँ मिलता है? उनकी क्रियाशक्ति कहाँ काम में लायी जाती है? उनका अवधान और रुचि स्थिर कैसे रहेगी? सुप्रसिद्ध शिक्षा-शास्त्री और आधुनिक शिक्षा-शास्त्र के प्रणेता पेस्टालाजी का यह मत है कि बालकों से उनके अपने लिए आविष्कार करने के अधिकार को न छीन लीजिए। यहाँ आविष्कार करने की उनकी शक्ति और कामना को काम में लाने की कोई गुंजाइश नहीं है। इसलिए उनका जी ऐसी प्रणाली से ऊब जाए, तो कोई अचरज नहीं है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शिक्षा-शास्त्र के और भी सिद्धान्तों पर यहाँ अमल नहीं किया जाता। नियम या सिद्धान्त पहले देकर उदाहरण उसके बाद देने में हम साधारण (general) से विशेष (particular) की ओर जाते हैं, कठिन से सुगम की ओर बढ़ते जाते हैं, अमूर्त (abstract) से मूर्त (concrete) की ओर विद्यार्थियों को ले जाते हैं। अ-ज्ञात (unknown) से आरंभ करते हैं। असल में इसके उल्टे हमें चलना चाहिए। इसलिए इस दृष्टि से भी इस प्रणाली की नींव ठोस नहीं दिखायी देती।

यह प्रणाली तर्कशास्त्र (logic) के अनुसार अवश्य काम कर सकती है, फिर भी वह मनोवैज्ञानिक नहीं है। इसलिए छोटे बालकों को व्याकरण पढ़ाने के लिए उपयुक्त नहीं हो सकती।

इस प्रणाली की अपनी विशेषता यह है कि जिनके पास आवश्यक सामग्री पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है, उनकी प्रगति शीघ्रता से यह कर सकती है।

अब **प्रयोग-प्रणाली की विशेषताएँ** देखिए। — इस प्रणाली के अनुसार अध्यापक उदाहरणों से प्रारम्भ करते हुए सिद्धान्त की ओर जाता है। अध्यापक के मार्गदर्शन में विद्यार्थी उदाहरणों का निरीक्षण करते हैं, वर्गीकरण करते हैं और सिद्धान्त स्थापित करते हैं। यहाँ अध्यापक सिर्फ पथदर्शक है और विद्यार्थी स्वयं कार्य करते हैं। इससे विद्यार्थियों की क्रिया-शीलता काम में आती है; अपने लिए वे नियमों का 'आविष्कार' करते हैं, इससे उन्हें अजीब आनन्द आता है और उनका उत्साह बढ़ता है। इससे रुचि और अवधान की समस्या भी हल होती है। उदाहरण परिचित होते हैं, इससे 'ज्ञात' से 'अज्ञात' की ओर विद्यार्थी जाते हैं। वे 'स्थूल' से 'सूक्ष्म' की ओर, आसान से कठिन की ओर जाते हैं; और 'विशेष' का निरीक्षण करके 'सामान्य' नियम बना लेते हैं। इस तरह के विश्लेषण से व्याकरण की सूक्ष्म बातें भी समझ लेने में उनकी सहायता होती है। 'मूर्त से अमूर्त' तक जाने में उन्हें कठिनाई नहीं होती। इस तरह अध्यापक विद्यार्थियों को अपने साथ ले जाता है और वे भी आत्म-विश्वास के साथ आगे बढ़ते हैं।

इस तरह यह प्रणाली मनोवैज्ञानिक और शिक्षा-वैज्ञानिक है। छोटे बालकों के लिए वह पर्याप्त मात्रा में लाभदायी है।

इस प्रणाली में भी दो-एक त्रुटियाँ हैं। उदाहरण – निरीक्षण – वर्गीकरण – सिद्धान्त – इन सीढ़ियों से आगे बढ़ने के लिए काफी समय लगता है। इसलिए विद्यार्थियों की प्रगति मन्थर गति से ही होगी। दूसरी यह बात है कि नियम या सिद्धान्त स्थापित करने के बाद विद्यार्थियों का कार्य पूरा नहीं होता। अपनी ओर से उन्हें उदाहरण प्रस्तुत करने का अवसर कहाँ है? जो सामग्री उनके पास है, उसमें से उन्हें उदाहरण देने चाहिए। इससे प्राप्त ज्ञान स्थायी होगा। सिद्धान्त की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

स्थापना के बाद भी अगर हरएक तत्त्व उनके ध्यान में न आया हो, तो उससे क्या लाभ ?

(७) **प्रत्यक्ष व्यवहार में** – इस विवरण से मालूम होता है कि दोनों प्रणालियाँ शिक्षा के क्षेत्र में काम में लायी जाती हैं, दोनों की अपनी अपनी विशेषताएँ और त्रुटियाँ हैं। कार्य की दृष्टि से एक जहाँ प्रारम्भ करती है, वहीं दूसरी का कार्य पूर्ण होता है। व्याख्या-प्रणाली सिद्धान्त से प्रारम्भ करके उदाहरणों तक जाती है तो प्रयोग-प्रणाली उदाहरणों से आरम्भ करके सिद्धान्त तक पहुँचती है। छोटे बालकों के लिए प्रयोग-प्रणाली ही उपयुक्त है। इससे हम यह कह सकते हैं कि माध्यमिक पाठशालाओं में खासकर निम्न कक्षाओं में व्याकरण प्रयोग-प्रणाली से ही पढ़ाया जाए। उच्च कक्षाओं में भी वह निःसन्देह लाभदायी होगी।

फिर भी प्राप्त ज्ञान के उपयोजन और आत्मसात करने की दृष्टि से प्रत्यक्ष व्यवहार में अगर दोनों प्रणालियों का समन्वय किया जाए, तो उससे विद्यार्थियों को विशेष लाभ पहुँचेगा। यह समन्वय कैसे करें ?

पढ़ना लक्ष्य है तो प्रणाली साधन मात्र है। अध्यापन में सफलता पाने के लिए आश्यकतानुसार प्रणाली में परिवर्तन करना फायदेमन्द ही होता है। इस सिद्धान्त के प्रकाश में व्याकरण के अध्यापन में सफलता पाने के लिए दोनों में से किसी एक को अपनाने से अगर हमारा मकसद पूरा न होता हो, तो दोनों की विशेषताओं-का समन्वय करने में ही चतुराई है। भाषा की शिक्षा के दोनों तरीकों को — व्याकरण-अनुवाद-प्रणाली और सम्भाषणात्मक प्रणाली का हमने इसी तरह समन्वय किया है। यह समन्वय यों किया जा सकता है —

अ — पाठ का आरम्भ प्रयोग-प्रणाली के अनुसार करें, याने विद्यार्थीयों के सामने भिन्न-भिन्न उदाहरण प्रस्तुत करें। **आ** — अध्यापक के मार्गदर्शन में विद्यार्थी उनका निरीक्षण करेंगे। अध्यापक प्रश्नों के ज़रिये मार्गदर्शन करते हुए विद्यार्थियों को प्रोत्साहन देगा। **इ** — समानता – विषमता की दृष्टि से उदाहरणों का आवश्य-कतानुसार वर्गीकरण कर लिया जाए। **ई** — उसके बाद सामान्य सिद्धान्त स्थापित किया जाए। यह सिद्धान्त स्वयं विद्यार्थी बनाएँगे। अध्यापक उनका केवल मार्गदर्शन करेगा।

यहाँ तक जो कार्य होता है, वह प्रयोग-प्रणाली से ही किया जाएगा। अब विद्यार्थियों ने जो ज्ञान पाया है, उसकी परीक्षा करने के लिए अन्य उदाहरण विद्यार्थियों तथा अध्यापक द्वारा पेश किये जाएँगे। **उ** — (ई) में बताये अनुसार सिद्धान्त स्थापित किया जाए। **ऊ** — नये उदाहरण पेश किये जाएँ। **ए** — यह देखा जाए कि उन उदाहरणों में सिद्धान्त का अवलम्बन कैसे किया गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इस तरह सिद्धान्त स्थापित करने तक प्रयोग-प्रणाली से काम किया जाए। उसके बाद अध्यापक व्याख्या-प्रणाली को अपनाएगा। इससे विद्यार्थियों के प्राप्त किये हुए ज्ञान की जाँच करने का उसे मौका मिलेगा।

इस नयी प्रणाली में दोनों प्रणालियों की विशेषताओं का समन्वय किया गया है।

(८) **व्याकरण के ज्ञान को आत्मसात् कैसे कराएँ?** यह माना हुआ सिद्धान्त है कि किसी भी बात को अभ्यास द्वारा ही आत्मसात् किया जा सकता है। इसलिए विद्यार्थियों को उसका अधिक से अधिक अभ्यास करने का मौका दिया जाए। अध्यापक यह काम कई तरह से कर सकता है।

१. जब अध्यापक यह अनुभव करेगा कि विद्यार्थियों के ध्यान में सब बातें आयी हैं, तब वह उन्हें सिद्धान्त कण्ठस्थ करने को कहे। पाठ के अध्यापन में भी वह कुछ ऐसे सवाल तैयार करे, जिनके जवाब में विद्यार्थियों को नये ज्ञान का प्रयोग करने का मौका मिले।

२. कहानी आदि के लेखन में नये ज्ञान के लिए स्थान दिया जाए।

३. वह मातृभाषा के उसी व्याकरण-विभाग से तुलना करे या करवा ले और समानता-विभिन्नता स्पष्ट करे।

४. जहाँ कहीं व्याकरण के सिद्धान्त की ओर संकेत करने के लिए मौका मिले, वहाँ उससे लाभ उठाया जाए।

५. भाषण और लेखन में विद्यार्थी जो गलतियाँ करेंगे, उन्हें दुरुस्त करते समय व्याकरण के नियमों का भी उल्लेख किया जाए।

६. आवश्यकतानुसार व्याकरण की (विद्यार्थियों के उपयुक्त) पुस्तक से भी विद्यार्थी लाभ उठाएँ। अध्यापक स्वयं भी कई बातें लिखाए।

७. विभिन्न उदाहरण पर्याप्त मात्रा में दिये जाएँ। आरम्भ में जहाँ तक बन सके, पाठ्य-पुस्तक से ही उदाहरण चुने जाएँ।

८. विविध स्वरूप के स्वाध्याय पाठ तैयार करके विद्यार्थियों से उन्हें हल करवा लिया जाए। यहाँ कुछ स्वाध्याय पाठ सुझाये हैं।

१. शब्दों के रूप बनाना, २. भिन्न-भिन्न रूपों का वाक्यों में प्रयोग करना, ३. रिक्तपूर्ति करना, ४. भिन्न-भिन्न शब्दों से सुयोग्य शब्द का चयन करना, ५. सूचियाँ या तालिकाएँ तैयार करना, ६. वाक्य-परिवर्तन करना, ७. एक ही बात भिन्न-भिन्न ढंग से कहना।

(९) **व्याकरण का अध्यापन कब शुरू करें?** हमारे यहाँ अधिकांश राज्यों में सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा पाठशालाओं के लिए पाठ्य-क्रम नियत किया

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जाता है। यह कार्य सरकार द्वारा नियुक्त विद्वान् शिक्षा-शास्त्रियों की समिति द्वारा किया जाता है। अतः कोई विषय कब पढाएँ, कितना पढ़ाएँ, – इस सिलसिले में अध्यापकों को कोई विशेष स्वतंत्रता नहीं है। व्याकरण के अध्यापन के विषय में विद्वानों द्वारा स्वीकृत दृष्टिकोण नीचे लिखे अनुसार है —

व्याकरण का अध्यापन साधारणतः पाँचवीं कक्षा में आरम्भ किया जाता है; क्यों कि व्याकरण जैसे अमूर्त एवं विचार-प्रधान विषय को समझ लेने की योग्यता इस स्तर के पहले नहीं पायी जाती। दूसरे, प्रायोगिक व्याकरण पहले पढ़ाया जाए और आवश्यक सैद्धान्तिक व्याकरण उच्च कक्षाओं में ही पढ़ाया जाए। तीसरे, मातृभाषा और हिन्दी के व्याकरण के पाठ्य-क्रम में समन्वय होना चाहिए। किसी भी स्थिति में हिन्दी व्याकरण का पाठ्य-क्रम विद्यार्थियों की मातृभाषा के व्याकरण के पाठ्य-क्रम से प्रगत नहीं होगा चाहिए।

(१०) **पाठ की रूपरेखा – * प्रस्तावना :** पूर्वज्ञान के बारे में प्रश्न पूछकर प्रस्तावना करें। उदाहरण भिन्न-भिन्न विषयों पर तैयार किये हुए वाक्यों पर सुसंगति-पूर्ण परिच्छेद के रूप में हों। उनमें सन्दिग्धता न हो। ज्ञात से अज्ञात की ओर हमें जाना है। व्याकरण के पाठों में विशेष क्रमबद्धता होनी चाहिए।

पाठ का विषय	पूर्वज्ञान
विशेषण	संज्ञाएँ
सर्वनाम	संज्ञाएँ
क्रिया-विशेषण	विशेषण
वाच्य	कर्ता-कर्म-क्रिया का सम्बन्ध

* **हेतुकथन** – स्पष्ट रूप में कहा जाए कि वे क्या करने जा रहे हैं।

* **विषय-प्रतिपादन** : अ – अध्यापक विद्यार्थियों से उदाहरणों का निरीक्षण कराएगा और किसी विशेषता की ओर उनका ध्यान आकर्षित करेगा।

आ – विशेषता ध्यान में लेते हुए अध्यापक की सहायता से विद्यार्थी नियम या सिद्धान्त तैयार करेंगे।

इ – यह देखा जाए कि नये उदाहरणों पर स्थापित किये हुये सिद्धान्त कैसे चरितार्थ होते हैं।

* **संकलन** – सिद्धान्त और उसकी विशेषताएँ प्रश्नोत्तर द्वारा स्पष्ट करा लें।

* **उपयोजन** — व्याकरण के पाठ में उपयोजन महत्त्वपूर्ण है। यहाँ विभिन्न स्वाध्याय-पाठ दिये जाएँ। विद्यार्थी उन्हें कक्षा में हल करेंगे।

* **स्वाध्याय** — विविध स्वाध्याय-पाठ देना।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पाठ की टिप्पणी

छठी कक्षा : समय — पैंतीस मिनट

पूर्वज्ञान — विद्यार्थियों ने संज्ञाओं की जानकारी पायी है।

पाठ का उद्देश्य — 'विशेषण' की जानकारी प्राप्त करने में विद्यार्थियों की सहायता करना।

पाठ के उपकरण — रोल्-अप ब्लैकबोर्ड।

विषय	प्रणाली
* **प्रस्तावना**	इस फलक पर कुछ वाक्य लिखे हैं। तुम यह जानते हो कि 'संज्ञा' क्या है। इन वाक्यों में कौन कौन-सी संज्ञाएँ हैं, यह देखो।
	वाक्य -- **१.** प्रताप बहादुर योद्धा था। २. उसका घोड़ा चेतक उम्दा था। ३. वह घोड़ा सफेद था। ४. राणा के दो भाई थे।
प्रताप, योद्धा	पहले वाक्य में कौन-सी संज्ञाएं हैं ?
घोड़ा, चेतक	दूसरे में कौन-सी सँज्ञाएँ हैं ?
राणा, भाई	चौथे में कौन-सी सँज्ञाएँ हैं ?
ये शब्द वस्तु या प्राणी के नाम हैं, इसलिए ...।	इन शब्दों को संज्ञाएँ क्यों कहा है ?
* **हेतुकथन**	इन वाक्यों में से और कुछ शब्दों की जानकारी आज हम पाएँगे।
* **विषय-प्रतिपादन** **बहादुर**	पहला वाक्य पढ़ो। प्रताप कैसा योद्धा था ?
उम्दा	दूसरा वाक्य पढ़ो। उसका घोड़ा कैसा था ?
बहादुर -- राणा का गुण बतानेवाला शब्द है।	**बहादुर** शब्द से यह मालूम होता है कि राणा कैसा था। वह राणा का **गुण** बतलाता है।
'**उम्दा**' शब्द घोड़े का **गुण** बताता है।	**उम्दा** शब्द क्या बताता है ?
	बहादुर और उम्दा शब्द क्रमश: योद्धा और घोड़े के बारे में विशेष जानकारी बताते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तीसरे वाक्य में **घोड़े** के बारे में कुछ कहा है।

वह घोड़ा **सफेद** है।

सफेद शब्द घोड़े का रंग दिखाता है।

तीसरे वाक्य में किसके बारे में कुछ कहा है ?

उसमें क्या कहा है ?

सफेद शब्द क्या दिखाता है ? याने वह भी घोड़े के बारे में विशेष जानकारी देता है।

दो

दो — संख्या

राणा के कितने भाई थे ?

दो शब्द राणा के 'कितने' भाई थे, यह बताता है। वह उनकी **संख्या** दिखाता है। वह भी '**भाई**' शब्द के बारे में विशेष जानकारी देता है।

संज्ञाएँ

योद्धा, घोड़ा, भाई शब्दों को व्याकरण में क्या कहते हैं ? उन संज्ञाओं के बारे में विशेष जानकारी किन शब्दों ने दी ?

बहादुर, उम्दा, सफेद, दो

✦ **सिद्धान्त—**

ध्यान में रखो – संज्ञा के बारे में, उसके गुण, संख्या आदि कि विशेष जानकारी देनेवाले शब्दों को **विशेषण** कहते हैं।

—अब ये वाक्य पढ़ो।

१. अरुण लाल फूल ले आया। २. उसने एक सुन्दर गुलदस्ता बनाया। ३. वे फूल खुशबूदार थे। ४. उसने उसे एक फूलदान में रखा।

लाल

वह **फूल** संज्ञा के बारे में विशेष जानकारी देता है।

पहले वाक्य में कौन-सा विशेषण है ? उसे विशेषण क्यों कहते हैं ? वह क्या बताता है ? वह किस संज्ञा के बारे में बताता है ?

(इसी तरह हरएक वाक्य में आये हुए विशेषण के बारे में सवाल पूछे जाएँ।)

✦ **संकलन**

संज्ञा किस शब्द को कहते हैं ?

विशेषण शब्द क्या काम करता है ? किस शब्द को विशेषण कहते हैं ?

✦ **उपयोजन**

१. नीचे संज्ञाएँ दी हैं। उनमें से हर एक के लिए योग्य विशेषण बताओ —

कागज, तोता, मिर्च, आम, थाली, गाय, दूध, पेन्सिल, स्याही, पहाड़।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

२. विद्यार्थी जो **विशेषण** बताएँगे, उनके बारे में यह पूछा जाए कि उनमें से हरएक विशेषण क्या बताता है।

✦ स्वाध्याय

(पाठ्य-पुस्तक में से एक परिच्छेद बताकर) इसमें से पाँच विशेषण और पाँच संज्ञाएँ छाँटो।

फलक – लेखन

(उदाहरण के तौर पर जो वाक्य दिये हैं, वे वाक्य, उनमें से संज्ञाएँ तथा विशेषण शब्द लिखें। यहाँ पुनरुक्ति को टालने के लिए उन्हें नहीं लिखा है।)

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: १८ :

निबन्ध-लेखन का अध्यापन

(१) **आवश्यकता और उद्देश्य :** भाषण और लेखन द्वारा मनुष्य अपने विचारों या भावों को दूसरों पर प्रकट करता है; और वह श्रवण और पठन द्वारा दूसरों के व्यक्त किये हुये विचारों और भावों को ग्रहण करता है। भाषा की शिक्षा द्वारा अध्यापक भाषा पर प्रभुता प्राप्त करने में बालकों की मदद करता है। भाषा कला है, इसलिए अभ्यास और अनुकरण से ही वह अपनायी जा सकती है। इसलिए बालकों को भाषा में बोलने और लिखने की आदत डालनी चाहिए। हम चाहते हैं कि विद्यार्थी अपनी मातृभाषा की तरह हिन्दी में भी लिखकर अपने विचार सुचारु रूप से प्रकट कर सकें। इस लेखन कार्य में उन्हें प्रवीण बनाने के हेतु अध्यापक कई मार्गों का अवलम्ब करता है।

इन मार्गों में से महत्त्वपूर्ण मार्ग है – निबन्ध-लेखन। 'निबन्ध' की शास्त्रीय परिभाषा करने की यहाँ कोई ज़रूरत नहीं है। उसका स्थूल स्वरूप बताना पर्याप्त होगा। अंग्रेज़ी 'एसे' (Essay) शब्द का एक अर्थ 'प्रयत्न' है। यहाँ किसी विषय पर अपने विचारों को सूत्र-बद्ध, सुचारु और प्रभावकारी रूप में ग्रथित करने के यत्न की ओर संकेत है। हिन्दी 'निबन्ध' शब्द से भी यही भाव व्यक्त होता है — १. किसी वस्तु के बारे में विचार या भाव। (विचार-तत्त्व) २. उनको सुचारु और प्रभावकारी रूप में व्यक्त करना। (रचना-तत्त्व) ३. अच्छी और शुद्ध भाषा का प्रयोग करना (भाषा-तत्त्व)। इन तीनों तत्त्वों को मद्देनज़र करके विद्यार्थियों को निबन्ध-लेखन कला का अभ्यास करना चाहिए।

१. **विचार-तत्त्व :** वैसा देखा जाए तो किसी वस्तु या विषय के बारे में विद्यार्थी कुछ न कुछ जानते हैं। इन बिखरे हुए विचारों को एक स्थान पर लाना आवश्यक है। यह जान लेना आवश्यक है कि उनमें से क्या सही है, क्या गलत है। मामूली से मामूली विषय पर भी विद्यार्थी के मन में जो विचार हैं, उनको यथायोग्य रीति से लिपि-बद्ध करना कला है। इस दृष्टि से अध्यापक विद्यार्थियों की मदद करे और भिन्न-भिन्न विषयों पर उनके विचारों को सुचारु रूप में व्यक्त करने की आदत उनमें डाले। अगर किसी विषय के बारे में विद्यार्थियों के पास पर्याप्त मात्रा में विचार न हों, तो विद्यार्थी अच्छा निबन्ध नहीं लिख सकेंगे। इसलिए विचारों को जुटा लेने की दृष्टि से अध्यापक उनकी मदद करे। कुछ बातें

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वह स्वयं बताए या दूसरी पुस्तकों से सामग्री जुटा लेने में उनकी मदद करे। अर्जित ज्ञान को सुगठित रूप में रखने की आदत डालना भी निबन्ध-लेखन का एक उद्देश्य है।

२. रचना-तत्त्व : भिन्न-भिन्न विचारों को सूत्रबद्ध करना, उनमें एक तरह का सिलसिला रखना, कार्य-कारण – विचार की दृष्टि से उनको ग्रथित करना आदि बातें निबन्ध-लेखन की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। वर्णनात्मक निबन्ध में भी इस तरह के ढंग की आवश्यकता है ही। मगर विवेचनात्मक, चिन्तनात्मक निबन्धों में तो इसका विशेष स्थान है। उसमें विचार तर्क – संगत होने चाहिए। दूसरों के विचार पुष्टि के लिए लेने, विरोधी विचार-धारा का खण्डन करने, बेतुकी बातों को टालने और शिथिलता न लाने के लिए विशेष अभ्यास की जरूरत है। अतः अध्यापक का कर्तव्य है कि निबन्ध-लेखन द्वारा वह विद्यार्थियों का इस क्षेत्र में मार्गदर्शन करे।

३. भाषा-तत्त्व : हिन्दी निबन्ध-लेखन में विद्यार्थियों की दृष्टि से यह तत्त्व सबसे ज़्यादा महत्त्व रखता है। मातृभाषा में बालक बोल सकते हैं और लिख भी सकते हैं। मगर हिन्दी पर उन्हें प्रभुता प्राप्त नहीं हुई है, वे हिन्दी के नौसिखुए हैं। इसलिए उन्हें भाषा की दृष्टि से अधिकाधिक तैयारी करनी चाहिए। लेखन से उन्हें भाषा पर जल्द अधिकार प्राप्त होता है। ज्ञान शक्ति अवश्य है, मगर वह अच्छी शक्ति तभी बन सकता है, जब उसे विद्यार्थियों ने आत्मसात् किया हो, उसे काम में लाने की क्षमता उन्होंने पायी हो। विद्यार्थी हिन्दी के जो शब्द और रचना-तत्त्व सीखते हैं, उनका उन्हें प्रयोग करना चाहिए, नहीं तो वे उन्हें जल्द ही भूल जाएँगे। इसलिए लेखन के अभ्यास द्वारा अर्जित भाषा-ज्ञान को व्यवहार में लाकर स्थायी बनाने में विद्यार्थियों की मदद की जाए। इसमें अधिकाधिक अभ्यास कराना निबन्ध-लेखन का प्रधान उद्देश्य है। संक्षेप में, हम निबन्ध-लेखन के पाठ का उद्देश्य यों कह सकते हैं --

अ – भाषा के उपयोग और लेखन के अभ्यास द्वारा भाषा पर प्रभुता पाने में विद्यार्थियों की मदद करना।

आ – अपने विचारों को सुगठित और सूत्र-बद्ध, सुचारु रूप में लिपि-बद्ध करने का अभ्यास कराना।

इ – बालकों को उसके द्वारा अपने विचारों को अभिव्यक्त करने का मौका मिलता है। अपने विचार-विकारों को वे लिपि-बद्ध करने की कोशिश कर सकेंगे। आगे चलकर इन्हीं विद्यार्थियों में से कल के प्रेमचन्द, सुदर्शन निर्मित होंगे। उसकी बुनियाद अभी से डाली जाती है।

ई – अपने विचारों को लिपि-बद्ध करने के पहले लिखनेवाला सोचता है। इससे उसमें सोच-समझकर लिखने की आदत डाली जाती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

निम्न कक्षाओं में भाषा-तत्त्व को अधिक महत्त्व दिया जाता है, तो उच्च कक्षाओं में, जहाँ विद्यार्थी भाषा के अच्छे जानकार होते हैं, विचारों को सुचारु रूप में अभिव्यक्त करने के पहलू की ओर अधिक ध्यान दिया जाता है।

(३) **आज की अवस्था :** १. निबन्ध-लेखन की मातृभाषा में भी अवस्था बड़ी दयनीय है, तो हिन्दी जैसी भाषा में कैसी हो सकती है, इसकी कल्पना की जा सकती है। निबन्ध-लेखन की ओर विद्यार्थी उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं। हिन्दी को हर हफ्ते में तीन चार घण्टे दिये जाते हैं, पाठ्य-पुस्तक और व्याकरण के साथ निबन्ध, अनुवाद आदि की ओर भी अध्यापक को ध्यान देना पड़ता है। कहा जाता है कि विद्यार्थी हर महीने में एक निबन्ध लिखें। वास्तव में हर महीने में एक निबन्ध लिखना प्राय: न लिखने के समान ही है। जहाँ निबन्ध हर हफ्ते में कम से कम एक होना चाहिए, वहाँ महीने में एक होता है – फिर भी अध्यापक मजबूर है – नियत समय में इससे ज्यादा काम नहीं हो सकता – अध्यापक चाहे, तो भी समय के अभाव के कारण कुछ नहीं कर सकता। जो निबन्ध लिखने को दिये जाते हैं उनपर आवश्यक चर्चा नहीं की जाती, विषयों की उचितता नहीं देखी जाती। यद्यपि अध्यापक कुछ प्रयत्न करे, तो भी विद्यार्थियों की ओर से ज्यादा प्रयत्न नहीं किया जाता। अध्यापक द्वारा जाँच का काम अच्छी तरह से नहीं होता और ध्यान देकर उनकी की हुई सूचनाओं से वे लाभ नहीं उठाते। उन गलतियों को ध्यान में लेकर उन्हें अगले समय टालने की कोशिश नहीं की जा सकती। स्पष्ट शब्दों में कहा जाए तो आम तौर पर कुछ निबन्ध लिखने पड़ते हैं, इसलिए लिखे और लिखवाये जाते हैं। ऐसी हालत में अपेक्षित लाभ नहीं होता हो, तो कोई अचरज की बात नहीं।

२. ऊपर लिखे हुए निबन्ध के तीनों पहलुओं के बारे में यही दिखायी देता है। विषय के बारे में विचार अच्छी तरह से नहीं रखे जाते; अच्छे विचारों का अभाव-सा दिखायी देता है! रचना की दृष्टि से शिथिलता होती है। सूत्र-बद्धता का अभाव रहता है। विद्यार्थियों की भाषा में सैकड़ों गलतियाँ पायी जाती हैं।

इसका परिणाम जो होना चाहिए, वही होता है। हिन्दी में विद्यार्थियों की प्रगति हम जितनी चाहते हैं, उतनी नहीं हो पाती। आज पाठशालाओं की और एस्. एस्. सी. परीक्षा के विद्यार्थियों की हिन्दी भाषा की उत्तर-पत्रिकाओं को जाँचनेवाले परीक्षकों का कहना है कि विद्यार्थियों का हिन्दी का औसत स्तर सन्तोष-प्रद नहीं है।

३. इस दयनीय अवस्था के **कारणों की मीमांसा** करना कठिन नहीं है। ये सारे दोष अध्यापकों और विद्यार्थियों के उपेक्षा-भाव और परिस्थिति के कारण जड़ें जमाये हुए हैं। परिस्थिति और विद्यार्थियों के उपेक्षा-भाव से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अध्यापकों में उत्साह कम दीखता है। अध्यापन के काम के बोझ से दबे हुए अध्यापक चालीस-पैंतालीस विद्यार्थियों की कक्षा में हर हफ्ते में चालीस मिनटों के तीन घण्टों में व्यक्तिगत मार्गदर्शन कहाँ तक कर सकेंगे ? विद्यार्थीगण की अनवधानता, लापरवाही, उच्च ध्येयवाद का अभाव, और कम से कम प्रयास में अधिक से अधिक काम करने की इच्छा के कारण भारी गडबड़ मची हुई है। सामान्य ज्ञान की कमी से अच्छे विचारों का अभाव दिखायी देता है। लेखन का अभ्यास कम होता है, इसलिए लेखन में सूत्र-बद्धता की ओर विद्यार्थियों का ध्यान कम होता है। अनवधान और भाषा में योग्यता कम होने से अशुद्ध भाषा का प्रयोग किया जाता है। अनवधान और लापरवाही इसके लिए कम ज़िम्मेदार नहीं है। हम यों कहें कि उत्कृष्ट मार्गदर्शन में विद्यार्थियों को हिन्दी निबन्ध-लेखन का जितना अभ्यास करना आवश्यक है, उतना करने का अवसर नहीं मिलता और जो मिलता है उससे अधिक लाभ नहीं उठाया जाता। इसमें कोई अत्युक्ति नहीं है।

४. इसमें सुधार होना ज़रूरी है। राष्ट्रभाषा में अहिन्दी प्रान्तों के विद्यार्थी पिछड़े हुए रहेंगे, तो वह राष्ट्रीय हानि ही मानी जाएगी। जिन उद्देश्यों को मद्देनज़र रखते हुए हिन्दी का प्रचार किया जा रहा है, उनकी पूर्ति न होने से हम लोगों को भारी नुकसान पहुँचेगा। दूसरी बात यह है कि अब उच्च शिक्षा – विश्वविद्यालयीन शिक्षा में भी हिन्दी को ऐच्छिक रूप में स्थान दिया जा रहा है। सम्भव है कि कुछ विश्वविद्यालय हिन्दी को माध्यम के तौर पर स्वीकार करेंगे। इस हालत में हिन्दी पर प्रभुता न रखनेवाले हाईस्कूल के विद्यार्थी वहाँ भी पिछड़ जाएँगे।

निबन्ध-लेखन में सुधार करने के चन्द उपाय ये हैं — १. हिन्दी भाषा-के लिए पाठशाला में ज़्यादा घण्टे दिए जाएँ। २. लेखन अधिक कराया जाए। ३. अध्यापक गलतियों को दुरुस्त करते हुए विद्यार्थियों को लेखन के लिए प्रोत्साहित करें। ४. निबन्ध के विषय विद्यार्थियों का ज्ञान और भाषा में योग्यता को ध्यान में लेते हुए चुने जाएँ। ५. निबन्ध-लेखन की ओर हमारा जो दृष्टिकोण है, उसमें परिवर्तन होना चाहिए। ६. विद्यार्थियों को लेखन का महत्त्व समझाएँ और अवधानपूर्वक लिखवाएँ। ७. विद्यार्थियों के सामने नमूने रखें। पहले उनके अनुकरण में विद्यार्थी निबन्ध लिखने की चेष्टा करें। ८. विद्यार्थी और अध्यापक निबन्ध के विषय पर चर्चा करें। अध्यापक उनकी कठिनाइयाँ दूर करें। उन्हें कुछ विचार-तत्त्व देकर उनका विस्तार करा लें। ९. शुरू में भाषा के पहलू पर ज़ोर दिया जाए और उसके बाद भाषा के साथ-साथ रचना-तत्त्व पर। १०. मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा के निबन्ध-लेखन से लाभ उठाएँ। उन्हीं या उनसे मिलते-जुलते विषयों पर उच्च कक्षाओं में हिन्दी में निबन्ध लिखवाएँ। अब यह देखेंगे कि निबन्ध के लिए विषयों का चुनाव करते समय अध्यापक को कौन-सा दृष्टिकोण रखना चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(३) **निबन्ध के विषयों का चुनाव** — अक्सर देखा जाता है कि कई अध्यापक विद्यार्थियों के उपयुक्त निवन्ध के विषयों का चुनाव करने में बड़ी कठिनाई अनुभव करते हैं। एक तो वे इसके बारे में पढ़ाने के पहले सोचते नहीं और सोचते हों तो गलत रास्ते से। विद्यार्थियों को निबन्ध-लेखन के लिए विषय देते समय अध्यापकों को कई बातें ध्यान में रखनी चाहिए।

अ – अध्यापक विद्यार्थियों की उम्र, उनका सामान्य ज्ञान, उनकी हिन्दी में योग्यता आदि को ध्यान में लें। अछूतों का उद्धार, मद्यपान-निषेध, समाचार-पत्रों का राष्ट्रीय जागरण में स्थान, जैसे विषय आठवीं कक्षा के लिए उपयुक्त नहीं होंगे। एक तो ये विषय विवेचनात्मक हैं; उनके पास इनपर विचार करने की क्षमता नहीं है। अत: विषय के बारे में उनके पास विचार भी नहीं होंगे। विचार प्रकट करने के लिए जो भाषा चाहिए, वह भी उनके पास नहीं होगी। इसलिए उन्हें शब्द-सम्पत्ति की कमी अनुभव होगी।

आ – विषय आसान और परिचित हों।

इ – पाठ्य-पुस्तक के पाठों पर आधारित भी कुछ विषय हों।

ई – छोटे बालकों को वर्णनात्मक और कथनात्मक विषय दिये जाएँ। उच्च कथाओं में विवेचनात्मक विषय देने में कोई हानि नहीं है। किसी देखे हुए दृश्य का, किये हुए सफर का वर्णन बालक कर सकेंगे। वैसे विवेचनात्मक विषय उच्च कक्षाओं के लिए रखे जाएँ।

उ – विद्यार्थियों को अपने अनुभव तथा विचार व्यक्त करने का मौका दिया जाए।

ऊ – किसी विचार का विस्तार (Expansion of idea) भी करा लें।

ए – **निबन्ध का स्वरूप** क्या हो, यह तय करते समय भी सावधानी से काम लिया जाए।

(४) **निबन्ध की लम्बाई :** विद्यार्थियों का सामान्य ज्ञान, भाषा पर प्रभुता, लेखन-शक्ति और अभ्यास आदि को ध्यान में लेते हुए अध्यापक बताए कि वे निबन्ध कितनी पंक्तियों तक लिखें। वास्तव में इस तरह का पंक्तियों या शब्द-संख्या का बन्धन विद्यार्थियों की रचनात्मक शक्ति पर बुरी तरह से दबाव डालता है। विद्यार्थियों को इसके बारे में स्वतंत्रता देना लाभकारी होगा। फिर भी विद्यार्थी और अध्यापक जिस अस्वाभाविक अवस्था में और समय की पाबन्दी में काम करते हैं, उसे तथा विद्यार्थियों की रुचियों, प्रवृत्तियों, और भली बुरी आदतों को देखते हुए इस तरह का कोई बन्धन न हो, तो बड़ी गड़बड़ी मचेगी और लाभ की अपेक्षा हानि ही ज़्यादा होगी। अर्थात् ध्यान में रखना होगा कि पंक्तियों या शब्दों की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संख्या का शब्दश: पालन करना अनुचित होगा। इन बातों को ध्यान में लेते हुए अध्यापक आगे दिये अनुसार निबन्ध की लम्बाई तय कर लें --

पाँचवीं कक्षा	१० – १२	पंक्तियाँ	या करीब	६०	शब्द
छठी ,,	१५ – २०	,,	,,	१००	"
सातवीं ,,	२० – २२	,,	,,	१२०	,,
आठवीं और नौवीं कक्षा	२५	,,	,,	१५०	,,
दसवीं कक्षा	३०	,,	,,	१७५	,,
ग्यारहवीं कक्षा	३५ – ४०	,,	,,	२५०	,,

हमें निबन्ध-लेखन द्वारा विद्यार्थियों की लेखन-शक्ति का विकास कराना चाहिए, उन्हें आत्माभिव्यक्ति का अवसर देना चाहिए। इस दृष्टि से निबन्ध-रचना के भिन्न भिन्न प्रकारों को विद्यार्थियों के सामने रखा जाए। नमूने दिखाकर उनके अनुकरण में निबन्ध लिखवाये जाएँ। मार्गदर्शन के हेतु यहाँ कुछ प्रकार और उनके अन्तर्गत विविध विषय भी दिये हैं —

स्वरूप	**कक्षाएँ**	**विषय**
वर्णनात्मक	५ से ७	गाय, कुत्ता, घोड़ा, तोता आदि पशु-पंछी; पाठशाला, घर, बगीचा, डाकघर, क्रीडांगण, किसान, डाकिया, एक मित्र।
	८ से १०	बरसात का एक दृश्य, क्रीडा-स्पर्धा, यात्रा, सभा-समारोह, प्रदर्शनियाँ, आदि का वर्णन; पालतू और जंगली जानवर; शब्द-चित्र।
कल्पनात्मक	८ से १०	अगर मैं कक्षा-प्रतिनिधि होता – जैसे विषय।
आत्मकहानी	८ से १०	पुस्तक, मेज, कलम, पेड़ आदि।
विवेचनात्मक	११	अखबार, चुनाव, किसान का जीवन, शहरी और देहाती जीवन, हमारी राष्ट्रभाषा, (और अन्य वर्णनात्मक)।

कोई विषय पाँचवीं कक्षा के लिए दिया गया हो, तो वही विषय सातवीं कक्षा के लिए भी दिया जा सकता है। फिर भी महत्त्व की बात यह है जि उसपर लिखे जानेवाले निबन्ध में लम्बाई और स्वरूप की दृष्टि से फर्क होना आवश्यक है। इसलिए अध्यापक को चाहिए कि कक्षा के अनुसार निबन्धों के स्वरूप में वह विभिन्नता रखे। उदाहरण के लिए 'किसान' विषय पर निबन्ध लिखना हो, तो उसका स्वरूप भिन्न-भिन्न कक्षाओं में आगे दिये अनुसार होगा --

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पांचवीं कक्षा — दूसरे सत्र में ही यह विषय लेना उचित होगा। तब तक विद्यार्थियों की शब्द-सम्पत्ति इसके लिए पर्याप्त होगी। कुछ नये शब्द भी चित्र की सहायता से बताने होंगे।) १० – १२ पंक्तियों में वर्णन – हल, बैल, खेत और किसान पर ये पंक्तियाँ लिखी जाएँगी।

छठी कक्षा — ऊपर के वर्णन के साथ किसान के काम-काज का वर्णन (१५ पंक्तियों तक) किया जाए।

सातवीं कक्षा — किसान का काम, उसकी रहन-सहन, उसके साथी आदि के बारे में कुछ पंक्तियाँ लिखी जाएँ।

उच्च कक्षा में अगर 'किसान' पर निबन्ध लिख लेना हो तो किसान का महत्त्व, उसका समाज में स्थान, उसकी आज की दयनीय अवस्था आदि बातों पर विवेचन करना चाहिए।

इससे मालूम होगा कि विषय की अपेक्षा उसे विद्यार्थियों के सामने जिस दृष्टिकोण से रखा जाता है, वही अधिक महत्त्वपूर्ण है।

(५) निबन्ध-लेखन : प्रारम्भिक अवस्था : पाँचवीं कक्षा में निबन्ध-लेखन का क्या स्वरूप होता है,–इसके बारे में कुछ विचार प्रकट किये गये हैं। अब और दो-एक बातों पर प्रकाश डालना चाहते हैं।

कुछ विषय – कक्षा, हमारी पाठशाला, मेरा घर, बगीचा, गाय, कुत्ता, घोड़ा, बिल्ली, नारियल का पेड़, मेरे साथी, बाज़ार की सैर, सब्ज़ी-मंड़ी, क्रीडांगण आदि।

उद्देश्य – पाँचवीं कक्षा में जब विद्यार्थियों द्वारा अध्यापक निबन्ध लिखा लेते हैं, तो उसका क्या उद्देश्य होता है? वाक्य-रचना का अभ्यास कराना, कुछ नये शब्दों का परिचय कराना, एक विषय पर दस बारह वाक्य सिलसिले से लिखने की आदत डालना, लेखन का अभ्यास कराना – इन उद्देश्यों को मद्देनज़र रखकर अध्यापक निबन्ध-लेखन के पाठ पढ़ाता है।

प्रस्तावना – चित्र की सहायता से की जाए। आवश्यक नये शब्दों का परिचय कराएँ।

विषय-प्रतिपादन में अध्यापक प्रश्न पूछेगा और वाक्य-रचना कर लेने में विद्यार्थियों की मदद करेगा।

संकलन में एक तरह से उपर्युक्त विचारों की आवृत्ति की जाएगी।

उपयोजन में कुछ शब्दों का वाक्यों में प्रयोग करा लिया जाए और प्रतिपादन में बनाये हुए वाक्यों के आधार पर विद्यार्थी निबन्ध लिखना आरम्भ करेंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

स्वाध्याय — विद्यार्थी घर पर उसी विषय पर दस-बारह वाक्य लिखेंगे।

इस विवेचन से ध्यान में आया होगा कि इसमें बातचीत पर उतना ही ज़ोर दिया गया है। इससे बालकों को भाषण का अभ्यास होता है, वाक्य-रचना करने की शक्ति का विकास होता है। उन्हें हिन्दी बोलने और सुनने का ज्यादा मौका मिलता है; उच्चारण की ओर अध्यापक ध्यान दे सकेंगे। ऐसे पाठ नीरस नहीं होते, उसमें बालकों को दिलचस्पी होती है। इसे हम एक दृष्टि से मौखिक रचना (oral composition) कह सकते हैं। इतनी मौखिक रचना के बाद उन्हीं वाक्यों को लिपि-बद्ध करने को कहा जाता है। विद्यार्थियों के पास काफी सामग्री होने से उन्हें कोई कठिनाई अनुभव नहीं होती। इसमें चित्र-वर्णन (Picture composition) के भी कुछ तत्त्वों का समावेश होता है। विद्यार्थियों से अभ्यास कराने के बाद विषय से सम्बन्धित मगर सामने प्रत्यक्ष जो वस्तुएँ दिखायी नहीं गयी हैं, उनके बारे में भी अधिकाधिक वाक्य बना लें।

(६) **चित्रवर्णन** (picture composition)--विद्यार्थियों को निबन्ध लिखते समय कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। कभी उनको अपने विचारों को अभिव्यक्त करने में सुयोग्य शब्दों की कमी अनुभव होती है, तो कभी वे यह नहीं जानते कि वे क्या लिखें। उनकी इन कठिनाइयों को टालने का अध्यापक प्रयत्न करे। छोटे विद्यार्थियों के निबन्ध-लेखन में चित्र-वर्णन का स्थान महत्त्वपूर्ण है। इसके जो कई कारण हैं, उनमें से यह भी एक है। अध्यापक विद्यार्थियों के सामने किसी घटना का खींचा हुआ चित्र रखता है और उसका वर्णन करने को कहता है। चित्र में ही दिखायी हुई बातों का वर्णन करना है – इसके लिए सामग्री तैयार होती है। 'क्या लिखें' यह समस्या उनको अब नहीं सताएगी। शब्दों की अगर कमी हो, तो अध्यापक उन्हें आवश्यक शब्दों का परिचय करा दे। चित्र का वर्णन करते हुए अब विद्यार्थी निबन्ध लिख सकेंगे। इससे निम्न-लिखित लाभ होते हैं—

१. नये शब्दों का परिचय आसानी से कराया जाता है।

२. विद्यार्थियों के सामने निश्चित सामग्री होती है, इसलिए विचारों के लिए उन्हें अंधेरे में टटोलना नहीं होगा।

३. विद्यार्थियों को चित्र देखने में दिलचस्पी होती है, इसलिए अवधान की समस्या हल होती है।

४. सामने ठोस चीजें होती हैं, इसलिए उनके बारे में विद्यार्थियों के विचार स्पष्ट होंगे। कल्पना में सन्दिग्धता नहीं रहेगी और मनःपटल पर चित्र खड़ा करने की उन्हें जरूरत नहीं रहेगी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खास तौर पर निम्न कक्षाओं में ' चित्र-वर्णन ' की ज्यादा ज़रूरत होती है। अध्यापक अच्छे-अच्छे चित्रों का उपयोग करे। चित्र विद्यार्थियों के सामने रखकर अध्यापक विद्यार्थियों से प्रश्न पूछेगा। जब विद्यार्थी चित्र में दिखायी हुई बातों की जानकारी पाएँगे, तभी वे उसका वर्णन लिख सकेंगे। नये शब्दों और विचार-तत्त्वों को फलक पर लिखें और हर बात पर आवश्यकता के अनुसार सिलसिले से वाक्य बना लें। यहाँ विद्यार्थियों को भाषा का और शब्दों का प्रयोग करने का अभ्यास होगा, उनकी निरीक्षण शक्ति का भी विकास होगा।

पाठ की रूपरेखा --

प्रस्तावना -- चित्र दिखाकर स्थूल सवाल पूछें। आवश्यकता के अनुसार नये शब्दों का परिचय कराएँ।

हेतुकथन — आज हम इस चित्र में दिखायी हुई बातों का वर्णन करेंगे।

विषय-प्रतिपादन -- सवाल पूछकर वर्णन करने में विद्यार्थियों की मदद करना। कुछ नये शब्दों का परिचय कराना।

संकलन -- महत्त्व की बातों का वर्णन, शीर्षक देना।

उपयोजन -- दो-तीन विद्यार्थी चित्र का ज़बानी वर्णन करेंगे और वर्णन लिखना शुरू करेंगे।

स्वाध्याय -- घर पर विद्यार्थी निबन्ध लिखेंगे।

(७) **उच्च कक्षाओं में निबन्ध-लेखन** – उच्च कक्षाओं में वर्णनात्मक, आत्मवृत्तात्मक के साथ-साथ विचारात्मक (Reflective) निबन्ध भी दिये जाएँ। इनमें से कुछ विषय पाठ्य-पुस्तक के पाठों पर आधारित हों। अध्यापक स्वयं बता दे कि आवश्यक जानकारी विद्यार्थी कहाँ से प्राप्त कर सकते हैं। कक्षा में अध्यापक और विद्यार्थी विषय पर चर्चा करें और रूपरेखा बना लें। इसके बाद विद्यार्थी निबन्ध लिखेंगे। निम्न-लिखित बातों की ओर अध्यापक को ज़्यादा ध्यान देना चाहिए।

(अ) — निबन्ध की रचना विचारों में सूत्र-बद्धता हो। विचारों में निश्चितता (exactness) हो। असम्बद्ध बातें न लिखी जाएँ।

(ब) — हरएक विचार-तत्त्व के लिए स्वतंत्र परिच्छेद बना लेना चाहिए।

(क) -- विद्यार्थियों की भाषा की शुद्धता की ओर ध्यान दिया जाए।

(ड) -- यह बताया जाए कि अच्छा आरम्भ कैसे किया जा सकता है।

(ई) — विद्यार्थियों को स्वतंत्र रूप से सामग्री इकट्ठी करने में प्रोत्साहित किया जाए।

(फ) — अच्छे निबन्ध पढ़ने के लिए देकर उनकी विशेषताओं को समझाएँ। आवश्यकतानुसार अनुकरण करने में भी प्रोत्साहन दें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(ग) —— पाठ का उद्देश्य 'निबन्ध लिखने में विद्यार्थियों की सहायता करना' है।

पाठ की रूपरेखा —

प्रस्तावना — परिचित विषय पर बातचीत करते हुए विषय की ओर बढ़ना।

हेतुकथन —— आज इस विषय पर हम निबन्ध लिखने की तैयारी करेंगे।

प्रतिपादन — भिन्न-भिन्न प्रश्न उपस्थित करके विचार-तत्वों की रूपरेखा तयार करें और प्रश्नोत्तर द्वारा विद्यार्थियों को भिन्न-भिन्न विचार सामने रखने का मौका दें।

संकलन —— विचारों को संकलित रूप में प्रस्तुत करवाया जाए।

उपयोजन —— विद्यार्थी निबन्ध लिखना शुरू करेंगे। यह देखें कि वे प्रस्तावना कैसे करते हैं। यह स्पष्ट करें कि कौन-सी प्रस्तावना अच्छी है।

स्वाध्याय —— निबन्ध-लेखन।

(८) **और कुछ समस्याएँ** —— यहाँ और भी दो एक समस्याओं पर गौर करना ज़रूरी है।

(अ) क्या अध्यापक निबन्ध लिखाएँ?

अक्सर देखा जाता है कि कुछ अध्यापक विद्यार्थियों को निबन्ध लिखाते हैं और विद्यार्थी उन्हें ज़बानी याद करने की कोशिश करते हैं। यह तरीका उचित नहीं है। इससे निबन्ध-लेखन के बुनियादी उद्देश्यों पर ही कुठाराघात होता है। विद्यार्थियों को इससे बुरी आदत में फँसाया जाता है।

अध्यापकों को ऐसी ज़रूरत क्यों महसूस होती है? असल में विद्यार्थियों के सामने अध्यापक कोई नमूना रखना चाहते हैं। मगर नमूने एक या दो हो सकते हैं — सबके सब निबन्ध 'नमूने' नहीं बन सकते। बात यह है कि उस नमूने का अनुकरण करते हुए विद्यार्थियों को निबन्ध लिखना चाहिए। मगर वे वैसा नहीं करते और नये निबन्धों की माँग करते रहते हैं। तीसरी बात यह है कि विद्यार्थी जो कुछ लिखते हैं, उससे अध्यापक ऊब जाते हैं और उनमें सुधार करने की कोशिश करने की अपेक्षा उन्हें लिखा देते हैं। उनकी गलतियाँ टालने के हेतु यह बनी बनायी सामग्री ही उन्हें देकर ऊँची कक्षाओं में भी ऐसा खाना चम्मच से खिलाने को प्रवृत्त होते हैं। आजकल परीक्षा की दृष्टि से सम्भवनीय विषयों पर निबन्ध लिखाते हैं और विद्यार्थी उन्हें कण्ठस्थ करते हैं।

उससे विद्यार्थी परोपजीवी बनते हैं। अपने विचार लिपि-बद्ध करने का जो अभ्यास उन्हें करना चाहिए, वह वे नहीं करते। और हर वक्त वे अध्यापकों का मुँह ताकने लगते हैं। दूसरी बात यह है कि वे इतने निबन्ध ज़बानी याद भी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नहीं कर सकते। हमेशा उनकी वंचना ही होती है। अपनी ओर से प्रयत्न करन की आदत नष्ट होती है और उन्हें भाषा पर अपेक्षित प्रभुता नहीं प्राप्त होती।

हम यों कह सकते हैं कि विद्यार्थियों के सामने नमूने अवश्य रखें। कोई अच्छे वाक्य या अच्छी हिन्दी में लिखे छोटे परिच्छेद लिखाएँ और जबानी याद कराएँ। मगर यह अवश्य देखें कि उनके ध्यान में हर बात आयी है। पचीसों निबन्ध कण्ठस्थ करने की कोशिश करनेवालों के ध्यान में क्या हर बात आती होगी, इसमें भारी सन्देह है। इसलिए अपने प्रयत्न में उन्हें सफलता नहीं मिलती। अपनी ओर से प्रयत्न करने में उन्हें प्रोत्साहन देना चाहिए। उनकी गलतियाँ दिखाकर उन्हें वे दुरुस्त करा लें और भाषा पर प्रभुता प्राप्त करने में उनकी मदद करें। इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए अध्यापक सब निबन्ध विद्यार्थियों को न लिखाएँ। दूसरे के दिये हुए पचास वाक्य तोते की तरह रटकर लिखने की अपेक्षा अपनी बुद्धि से दस वाक्य लिखने में और गलतियाँ समझ लेकर दुरुस्त करने में ही विद्यार्थियों का अन्तिम हित है।

(ब) विद्यार्थियों के लेखन में किन-किन बातों का समावेश करें?

विद्यार्थियों को अधिक से अधिक लेखन का अभ्यास करना चाहिए। उनके लेखन में अध्यापक उनका मार्गदर्शन करता है। वह इस क्षेत्र में विविधता लाने की कोशिश करते हुए विद्यार्थियों के मन में उसके बारे में दिलचस्पी उत्पन्न करे। इसलिए वह सिर्फ निबन्ध ही लिखने को न बताए। बुनियादी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए वह विद्यार्थियों की व्यावहारिक दृष्टि से भी मदद कर सकता है। लेखन का अभ्यास कराने के हेतु वह विद्यार्थियों से नीचे लिखे अनुसार लेखनाभ्यास करा सकता है —

१. **निबन्ध-लेखन** — वर्णनात्मक, कथनात्मक, जीवनी, आत्मकहानी, (और उच्च कक्षाओं में विवेचनात्मक)। २ **बातचीत** या वार्तालाप (dialogue) ३. **कहानी-लेखन** इसमें भी वितिधता लायी जा सकती है। जैसे — रूपरेखा के आधार पर कहानी लिखना, पाठ्य-पुस्तक में दी हुई कहानी संक्षेप में लिखना, पाठ्य- पुस्तक में आये हुए वार्तालाप का कहानी में रूपान्तर करना, सुनायी हुई कहानी लिखना, किसी पात्र के शब्दों में कहानी लिखना। उच्च कक्षाओं में कहानी के अन्त में परिवर्तन करके या भिन्न ढंग से आरम्भ करके कहानी फिर से लिखना। ४. **पत्र-लेखन** ५. **विज्ञापन** तैयार करना। ६. **प्रतिवेदन-लेखन** (Report writing) ७. **विचार-विस्तार** (expansion of ideas)। ८. **अनुवाद**–प्रादेशिक भाषा से हिन्दी में और हिन्दी से प्रादेशिक भाषा में। ९. कविता **का भावार्थ-लेखन,** १०. **सार-लेखन** (precis-writing)। ११. **विचार-ग्रहण** (comprehension) १२. **कहावतों का प्रयोग करने की दृष्टि से उचित सन्दर्भ**

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तैयार करना। १३. इनके साथ पाठों पर विविध सवाल देकर विस्तार के साथ जवाब भी विद्यार्थी लिखेंगे। १४. किसी पाठ में अगर कोई (भाषा और विचार की दृष्टि से) कठिन परिच्छेद हो, तो उसको आसान भाषा में विद्यार्थियों से लिखा लिया जाए। इस विविधता से विद्यार्थियों को काफी लाभ पहुँचेगा।

(९) पाठ की टिप्पणी

सातवीं कक्षा : समय पैंतीस मिनट।

पाठ का उद्देश्य — 'हमारी पाठशाला का वार्षिकोत्सव' — विषय पर निबन्ध लिखने में विद्यार्थियों की मदद करना।

विषय	प्रणाली
✦ **प्रस्तावना** पिछले हफ्ते में पाठशाला का **वार्षिकोत्सव** मनाया गया।	अपनी पाठशाला में अभी-अभी कौन-सा समारोह मनाया गया? वह कब मनाया गया? तुम सब उस वक्त उपस्थित थे। यह भी जानते हो कि वहाँ क्या-क्या हुआ।
✦ **हेतुकथन**	आज हम अपनी पाठशाला के वार्षिकोत्सव का वर्णन करते हुए एक निबन्ध लिखेंगे।
✦ **विषय-प्रतिपादन** (यहाँ निबन्ध की रूपरेखा लिखी जाए) — समारोह-दिन, अध्यक्ष, तैयारी, प्रतिनिधियों का चुनाव, विविध समितियाँ प्रमुख कार्यकर्ता विविध प्रतियोगिताएँ	अपनी पाठशाला का वार्षिकोत्सव कब मनाया गया? इस समारोह के कौन अध्यक्ष थे? इसकी तैयारी कितने दिनों से चली थी? इसके लिए कुछ प्रतिनिधियों का चुनाव भी किया होगा। यह चुनाव कब हुआ? किनका चुनाव किया गया? प्रमुख कार्यवाह कौन थे? अध्यापकों में से कौन कार्याध्यक्ष हुए? **कौन-कौन-सी समितियाँ कायम की गयीं? कौन-कौन-सी प्रतियोगिताएँ रखी गयीं?** **करीब कितने विद्यार्थियों ने उनमें भाग लिया था?**

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

समारोह का वर्णन, अध्यक्ष का परिचय, कार्य-विवरण, पुरस्कार-वितरण, अध्यक्ष का भाषण	समारोह के आरम्भ में क्या किया गया ? पाठशाला के कार्य-विवरण में प्रधानाध्यापक ने क्या कहा ? पुरस्कार कैसे दिये गए ? अध्यक्ष-महोदय ने अपने भाषण में क्या कहा ?
मनोरंजन तथा अल्पाहार का कार्यक्रम	मनोरंजन के कार्यक्रम के बारे में संक्षेप में जानकारी बताओ। अल्पाहार के कार्यक्रम का वर्णन करो। (आवश्यकता के अनुसार और भी सवाल पूछे जाएँ।)
✦ **संकलन**	समारोह की तैयारियों का वर्णन करो। क्रीड़ा-प्रतियोगिता के बारे में तुम क्या जानते हो ? समारोह के दिन कौन कौन-से कार्यक्रम पेश किये गए ? मनोरंजन के कार्यक्रम के बारे में तुम क्या जानते हो ? अपने निबन्ध का आरम्भ तुम कैसे करोगे ? (दो-तीन विद्यार्थियों से यही पूछा जाए।)
✦ **उपयोजन**	विद्यार्थी निबन्ध लिखना आरम्भ करेंगे। कुछ विद्यार्थी अपनी लिखी हुई कुछ पंक्तियाँ पढ़ेंगे और अध्यापक मार्गदर्शन करेगा।
✦ **स्वाध्याय**	यह निबन्ध अपनी कापी में घर पर लिखो।

फलक-लेखन

निबन्ध की रूपरेखा

१. समारोह-तिथि, स्थान, अध्यक्ष
२. प्रतिनिधियों के चुनाव, समितियाँ, अन्य तैयारियाँ
३. क्रीड़ा-विषयक और अन्य प्रतियोगिताएँ
४. समारोह के कार्यक्रम का वर्णन
५. मनोरंजन और अल्पाहार का कार्यक्रम आदि।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: १९ :

(अ) पत्र-लेखन का पाठ

१. **आवश्यकता** —- पिछले अध्याय में यह कहा गया है कि विद्यार्थियों ने जो भाषा-ज्ञान पाया है, उसे काम में लाने का मौका उन्हें देना चाहिए। उन्हें भाषण तथा लेखन का अभ्यास करना चाहिए। इनमें से लेखन का काम दिलचस्प बना देने के हेतु, उसमें विविधता लानी चाहिए। उसे सिर्फ निबन्ध-लेखन तक ही सीमित नहीं करना चाहिए। यह विविधता जिन विविध व्यवसायों (exercises) द्वारा लायी जाती है, उनमें से एक पत्र-लेखन भी है। पत्र-लेखन का और भी एक व्यावहारिक पहलू है। विद्यार्थियों को आगे चलकर निबन्ध की अपेक्षा पत्र ही अधिक लिखने पड़ेंगे। अपने दोस्तों, भाई-बहनों, रिश्तेदारों को समय-समय पर मनुष्य पत्र लिखता रहता है। जब वह कर्मचारी या अफसर की हैसियत से कहीं काम करने लगेगा या उसे नौकरी पाने के हेतु अर्ज़ियाँ लिखनी पड़ेंगी तब पत्र-लेखन का महत्त्व उसके ध्यान में आएगा। पत्र-लेखन भी कला है; मित्र आदि को पत्र लिखना, अच्छे पत्र लिखना आसान काम नहीं है। अच्छी भाषा में सुयोग्य ढंग से अपनी बात स्पष्टता के साथ उसे लिखनी चाहिए। व्यावसायिक या व्यापारिक पत्र लिखना तो अत्यधिक कठिन होता है। अध्यापक को चाहिए कि वह अपने विद्यार्थियों को पत्र-लेखन-कला का महत्त्व समझा दे और उचित ढंग से पत्र-लेखन-कला का अभ्यास कराए।

२. **विषय-विभाजन**—पत्र जिस बात के बारे में लिखना हो, उसके बारे में अच्छी भाषा में अपने विचार प्रकट करना कठिन काम है। विद्यार्थियों को भाषा पर अगर प्रभुता प्राप्त नहीं हुई हो, तो वे अच्छे पत्र नहीं लिख सकेंगे। इसलिए निम्न कक्षाओं में पत्र-लेखन करा लेना हो, तो वे पत्र व्यक्तिगत (personal-- informal letters) ही होने चाहिए। दसवीं कक्षा तक भी ऐसे ही पत्र लिखने का अभ्यास कराया जाए। व्यावसायिक, व्यापारिक आदि पत्रों (oficial, formal letters) का परिचय ग्यारहवीं कक्षा में करा दें। आठवीं नौवीं, दसवीं कक्षा में विद्यार्थी ऐसे पत्र लिखने का भी अभ्यास करें कि जो एक दृष्टि से तो व्यक्तिगत होंगे, मगर साथ-साथ वे औपचारिक (formal) भी होंगे। इन बातों को ध्यान में लेकर पत्र-लेखन में भी यों विविधता लायी जा सकती है —

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

व्यक्तिगत — भाई-बहन (छोटे और बड़े), दोस्त, रिश्तेदार, माता-पिता के नाम।

व्यक्तिगत तथा औपचारिक — पाठशाला के प्रधानाध्यापक या अन्य अध्यापक, पड़ोसी आदि के नाम।

औपचारिक — अखबार के सम्पादक के नाम, नौकरी के लिए प्रार्थना-पत्र।

इन प्रार्थना-पत्रों को छोड़कर अन्य पत्रों के विषय जहाँ तक हो वर्णनात्मक या कथनात्मक ही हों। ऐसे विषय पत्र-लेखन के लिए देने से विद्यार्थियों को पत्र-लेखन में कोई कठिनाई नहीं अनुभव होगी। जो बातें उन्होंने की हैं, देखी हैं, अनुभव की हैं, उन्हीं का वर्णन करते हुए वे अपने भाई-बहन या दोस्त को पत्र लिखेंगे। उत्सव-समारोह, त्यौहार, क्रीडा-स्पर्धा, सफर, आदि का वर्णन पत्र में करने में विद्यार्थी उत्साह दिखलाएँगे। उत्सव-समारोह का महत्त्व, क्रीड़ा-प्रतियोगिता की आवश्यकता आदि बातें उन्हें उतनी पसन्द नहीं आएँगी।

३. पाठ-प्रणाली की रूपरेखा — पत्र-लेखन सिखलाने के लिए अध्यापक प्रयोग-प्रणाली को जरूर अपनाए। उसके अनुसार कोई नमूना उनके सामने अध्यापक रखेगा। इसका निरीक्षण कराएगा कि वह कैसे लिखा गया है और उससे यह स्पष्ट करेगा कि पत्र में कौन-से आवश्यक अंग हैं, उन्हें कैसे लिखा जाता है। उन्हें उस नमूने के अनुकरण में लिखने के लिए और एक विषय दिया जाएगा।

पाठ की रूपरेखा —

प्रस्तावना — अध्यापक विद्यार्थियों के सामने (फलक पर लिखा हुआ) एक पत्र रखे और कहे कि वे उसे पढ़े। (या यह पूछा जाए कि दूसरे स्थान में रहनेवाले अपने भाई को कोई बुलाना चाहता हो, तो वह उसे कैसे बुलाएगा: इससे पत्र-लेखन की आवश्यकता की ओर संकेत किया जाए।)

हेतुकथन — आज हम देखेंगे कि पत्र कैसे लिखा जाता है।

विषय-प्रतिपादन — पता, दिनांक, प्रशस्ति और अन्त आदि के बारे में अध्यापक सवाल पूछे। उनका निरीक्षण करते हुए उसे समझ लेने में विद्यार्थियों की मदद की जाए कि उनकी क्या आवश्यकता है तथा ये बात कैसे लिखी जाती हैं। (या दूसरे तरीके के अनुसार यहाँ पत्र का नमूना दिया जाए और विद्यार्थियों के मनोगत पठन के बाद उपर्युक्त कार्य किया जाए।)

संकलन — पत्रलेखन की आवश्यकता, पत्र का आरम्भ तथा अन्त आदि के बारे में वह सवाल पूछे।

उपयोजन — आरम्भ में दिये हुए नमूने का अनुकरण करते हुए लिखने के लिए वह कोई विषय दे। कुछ विद्यार्थी यह बताएँगे कि वह कैसे लिखा जाएगा।

स्वाध्याय — उपयोजन में बतलाया हुआ पत्र विद्यार्थी घर पर लिखेंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पाठ की टिप्पणी

सातवीं कक्षा समय : पैंतीस मिनट

पाठ का उद्देश्य –– पत्र कैसे लिखा जाता है, यह जान लेने में विद्यार्थियों की मदद करना।

पाठ के उपकरण –– रोल्-अप् ब्लॅक-बोर्ड (उसपर एक पत्र लिखें।)

विषय	प्रणाली
✦ **प्रस्तावना**	फलक पर एक पत्र लिखा हुआ है। वह मन में पढ़ो और यह देखो कि वह कैसे लिखा गया है। ––

विकास
दादर, बम्बई २८
१ जनवरी १९५७

प्रिय मित्र अरुण,

सस्नेह प्रणाम,

तुम्हारा पत्र अभी मिला। यह पढ़कर कि तुम परीक्षा में अव्वल आये हो और तुम्हें दो पुरस्कार भी मिले हैं, बड़ी खुशी हुई। मैं तुम्हें हार्दिक बधाई देता हूँ। मेरे माता-पिता भी तुम्हारी सराहना कर रहे हैं। मुझे विश्वास है, भविष्य में भी तुम ऐसी उज्ज्वल सफलता पाओगे।

माताजी आठ दिन बुखार से बीमार थीं, अभी उनकी तबियत ठीक है। हमारी पाठशाला का वार्षिक पुरस्कार-वितरण समारोह इस महीने के अन्तिम हफ्ते में मनाया जाएगा। मैं क्रीड़ा-स्पर्धा में सम्मिलित हो रहा हूँ। शेष कुशल।

अपने बड़े भाई से मेरा प्रणाम कहना।

तुम्हारा दोस्त,
अविनाश

(पत्र की दूसरी ओर पता लिखा हुआ है ––
श्री अरुणकुमार शाह
६५ रविवार पेठ
पूना २)

विषय	प्रणाली
✦ **प्रस्तावना**	
यह पत्र **अविनाश ने अरुण को** लिखा है। अविनाश बम्बई में रहता है और अरुण पूना में रहता है।	यह पत्र किसने लिखा है? उसने वह किसे लिखा है? वे दोनों कहाँ रहते हैं?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

✦ **हेतुकथन**	आज हम यह देखेंगे कि अविनाश ने अरुण को चिट्ठी कैसे लिखी है। उसने यह जान लेंगे कि चिट्ठी कैसे लिखी जाती है।
✦ **विषय-प्रतिपादन** — यह पत्र अविनाश ने बम्बई से लिखा है। उसके **हस्ताक्षर** और **पते से** यह मालूम हुआ।	यह पत्र किसने लिखा है? वह कहाँ रहता है? यह तुम्हें कैसे मालूम हुआ?
उसने आरम्भ में दाहिने कोने में **पता** लिखा है।	यानी यही अविनाश का पता है। यह पता उसने कहाँ लिखा है? तो चिट्ठी लिखनेवाले को अपना पता कहाँ लिखना चाहिए?
१ जनवरी १९५७ को अविनाश ने यह चिट्ठी लिखी। यह तारीख से मालूम हुआ। लिखनेवाले के पते के नीचे तारीख लिखी जाती है।	यह चिट्ठी अविनाश ने कब लिखी है? यह तुमने कैसे जान लिया? तारीख लिखने से क्या मालूम होता है? वह कहाँ लिखी जाती है?
'प्रिय मित्र अरुण' शब्दों से मालूम होता है कि यह चिट्ठी अविनाश ने अरुण को – अपने मित्र को लिखी है। 'सस्नेह प्रणाम'	अविनाश ने यह चिट्ठी किसको लिखी है? अरुण उसका कौन है? किन शब्दों से तुम्हें यह मालूम हुआ? इसके बाद कौन-से शब्द आये हैं? इन शब्दों को **प्रशस्ति** कहते हैं। समझो, तुम अपने दोस्त को पत्र लिख रहे हो। आरम्भ में प्रशस्ति कैसे लिखोगे? प्रशस्ति स्वतंत्र पंक्तियों में लिखी गयी है। वह पत्र लिखनेवाले और पानेवाले के सम्बन्ध के अनुसार होती है। (अब कुछ सवाल पत्र के मज़मून पर पूछे जाएँ।)
पत्र के अन्त में अविनाश ने लिखा है — तुम्हारा दोस्त, अविनाश।	अविनाश ने पत्र के अन्त में क्या लिखा है? यह तुमने कैसे जान लिया? यहाँ अविनाश ने दस्तखत (हस्ताक्षर) किये हैं।
हस्ताक्षर से यह मालूम होता है कि पत्र लिखनेवाला कौन है। वह हस्ताक्षर पत्र के अन्त में करता है।	उससे क्या मालूम होता है? उसने हस्ताक्षर कहाँ किये हैं?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पत्र लिखनेवाले को अपने हस्ताक्षर कहाँ करने चाहिए ?

अब पता देखो --

पूरा नाम, स्थान के विभाग का नाम और घर की क्रमसंख्या

पते के आरम्भ ने अविनाश में क्या लिखा है ? अरुण शहर के किस विभाग में रहता है ? किस शहर में वह रहता है ? तो पते में हमें क्या लिखना चाहिए ?

स्थान का नाम, जिला आदि

✦ संकलन

चिट्ठी लिखनेवाले को अपना पता और तारीख कहाँ लिखना चाहिए ?

उससे क्या मालूम होता है ?

पत्र के आरम्भ में और क्या होता है ? प्रशस्ति के बाद क्या लिखा जाता है ? पत्र के अन्त में पत्र लिखनेवाला क्या लिखता है ? पते में हमें क्या-क्या लिखना चाहिए ?

✦ उपयोजन

समझो, तुम अपने दोस्त को पत्र लिख रहे हो। अपना पता, तारीख, प्रशस्ति, पत्र का अन्त तथा पानेवाले का पता अपनी कापी में लिखो।

✦ स्वाध्याय

यह पत्र घर पर अपनी कापी में लिखो।

फलक-लेखन

[नमूने का पत्र, पता, तारीख, प्रशस्ति आदि महत्त्व के शब्द यहाँ लिखें।]

× × ×

(आ) अनुवाद का पाठ

१. **महत्त्व और आवश्यकता** – आजकल के विद्यार्थी अपनी प्रादेशिक या मातृभाषा के साथ-साथ राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा अंग्रेज़ी भाषा सीखते हैं। उन्हें ये भाषाएँ इस उद्देश्य से सिखायी जाती हैं कि वे इनमें से हरएक में पर्याप्त मात्रा में योग्यता प्राप्त करें, वे अपने विचार उनमें से हरएक भाषा में अच्छी तरह व्यक्त कर सकें तथा दूसरों के व्यक्त किये हुए विचारों को भली भाँति ग्रहण कर सकें। इससे हम यह भी चाहते हैं कि एक भाषा में व्यक्त किये हुए विचार वे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ग्रहण करें, उन्हें दूसरी भाषा में अच्छी तरह व्यक्त कर सकें। इसलिए अध्यापक हिन्दी से विद्यार्थियों की मातृभाषा में तथा मातृभाषा से हिन्दी में अनुवाद करने के लिए विद्यार्थियों को कुछ पंक्तियाँ समय-समय पर दिया करते हैं।

अनुवाद करना कला है। एक भाषा में व्यक्त किये हुए विचारों को दूसरी भाषा में व्यक्त करना आसान नहीं है। अनुवादकार को दोनों भाषाओं से भली भाँति परिचय रखना आवश्यक है। इस कला का परिचय कराना, उसका अभ्यास कराना अध्यापक का कर्तव्य है। अनुवाद का व्यावहारिक महत्त्व भी कम नहीं है। अपने जीवन में समय-समय पर उन्हें इस कला का ज्ञान लाभ पहुँचाएगा। किसी भाषा का अध्ययन करने में भी वह सहायक होता है। खास तौर पर शब्दों का चुनाव, वाक्य-रचना आदि करने में अनुवाद के व्यवसाय (exercises) विद्यार्थियों को लाभप्रद होते हैं। इससे भाषा में वे अधिक योग्यता पाएँगे। उनकी शब्द-सम्पत्ति का विकास होता जाता है और वे शब्दों का समुचित प्रयोग करने की ओर ध्यान देने लगते हैं।

२. अनुवाद के कुछ प्रकार – विद्यार्थियों की दृष्टि से अनुवाद के दो प्रकार माने जाएँ — १. शब्दशः अनुवाद और २. भावानुवाद। शब्दशः अनुवाद में मूल भाव को वैसे के वैसे रखा जाता है। लेकिन 'शब्दशः' का मतलब यह नहीं है कि शब्द को ही चिपके रहें, चाहे भाषा में कृत्रिमता क्यों न आ जाए। जहाँ अनुवाद की भाषा में कृत्रिमता, अस्वाभाविकता मालूम हो, वहाँ उसमें परिवर्तन करें। आवश्यकतानुसार एक वाक्य के अनेक तथा दो या अधिक का एक वाक्य भी बनाएँ। अन्तिम कसौटी यही है कि अनुवाद पढ़ने के बाद वह उस भाषा का मौलिक खण्ड-सा मालूम हो।

भावानुवाद के मानी हैं अनुवाद-खण्ड के सिर्फ विचारों या भावों को अनुवाद की भाषा में रखना। इसमें मूल विचार-प्रवाह को कायम रखते हुए हम आवश्यक मामूली परिवर्तन कर सकते हैं। स्पष्टता के लिए अपनी ओर से भी कुछ जोड़ दे सकते हैं या मूल में से अनावश्यक अंश छोड़ दे सकते हैं।

३. अनुवाद-खण्ड का चुनाव – पांचवीं कक्षा से ही विद्यार्थियों से हिन्दी से मातृभाषा में और मातृभाषा हिन्दी में अनुवाद करा लें। शुरू-शुरू में पाठ्य-पुस्तक से ही पंक्तियाँ चुन लें। शैली या विचार की दृष्टि से जो परिच्छेद महत्त्वपूर्ण होंगे, उसका अनुवाद कराएँ। निम्न कक्षाओं में पाँच-सात पंक्तियाँ काफी होंगी, मगर उच्च कक्षाओं में यह संख्या बढ़ा दें। वर्णनात्मक और कथनात्मक परिच्छेद आरम्भ में चुनें और अनुवाद का काफी अभ्यास होने के बाद भावनात्मक या विचारात्मक परिच्छेद दें। संवादात्मक परिच्छेदों का अनुवाद करने से बोलचाल की भाषा पर प्रभुता पाने में विद्यार्थियों की मदद होगी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

४. अनुवाद के पाठ की रूपरेखा :

✦ **प्रस्तावना** – अध्यापक हिन्दी या प्रादेशिक भाषा का परिच्छेद पढ़ेगा या विद्यार्थियों को पढ़ने के लिए देगा। उसके बाद दो-तीन स्थूल प्रश्न पूछकर यह देखेगा कि विद्यार्थियों के ध्यान में उसका भाव आया है या नहीं। कठिन शब्दों को स्पष्ट किया जाएगा।

✦ **हेतुकथन** – आज हम इस परिच्छेद का (अपनी प्रादेशिक भाषा या हिन्दी में) अनुवाद करेंगे।

✦ **विषय-प्रतिपादन** – विद्यार्थियों को हरएक वाक्य-रचना आदि के बारे में सूचनाएँ देना। अध्यापक आदर्श अनुवाद प्रस्तुत करेगा।

✦ **संकलन** – इसका इस पाठ में ज्यादा महत्त्व नहीं है। आवश्यकतानुसार किसी मुहावरे या रचना-विशेष को फिर से अनूदित करा लेना।

✦ **उपयोजन** – विद्यार्थी अनुवाद लिखना शुरू करेंगे। कुछ वाक्यों का अनुवाद पूरा होने के बाद अध्यापक कुछ विद्यार्थियों द्वारा किया हुआ अनुवाद पढ़ लेगा और आवश्यक परिवर्तन सुझाएगा या अन्य विद्यार्थियों द्वारा करा लेगा।

✦ **स्वाध्याय** — घर पर सम्पूर्ण गद्य-खण्ड का अनुवाद लिखना।

५. **कुछ सूचनाएँ** –– अध्यापक समय-समय पर विद्यार्थियों को अनुवाद करने के लिए कुछ पंक्तियाँ दिया करे। जहाँ तक हो, हमारी पाठशालाओं के विद्यार्थियों को शब्दशः अनुवाद करने दें, न कि भावनात्मक। भावानुवाद करने के लिए दिया जाए, तो शब्दों का चयन आदि की ओर वे अधिक ध्यान नहीं देंगे। मुहावरों तथा कहावतों का अनुवाद करते वक्त खास सावधानी रखनी चाहिए। एक भाषा के किसी मुहावरे या कहावत के लिए अनुवाद की भाषा का कोई समानार्थक मुहावरा या कहावत देना सम्भव हो, तो वैसी कोशिश की जाए। पद्य-खण्डों का अनुवाद न करा लिया जाए।

× × ×

(इ) सार-लेखन का पाठ

(१) **सार-लेखन क्या है ?** – किसी गद्य-खण्ड में जो विचार लेखक ने व्यक्त किये होंगे, उनको संक्षेप में, थोड़े में लिखने को ही 'सार-लेखन' कहते हैं। मूल गद्य-खण्ड का 'सार' थोड़े शब्दों में लिखना ही सार-लेखन है। आम तौर पर किसी गद्य-खण्ड के एक तिहाई हिस्से में उसका सारांश लिखने के लिए कहा जाता है। सारांश लिखनेवाले को चाहिए कि वह मूल में से एक भी महत्त्व का विचार न छोड़ दे, उसके लिखे 'सार, में अनावश्यक विस्तार न हो और दी हुई मर्यादा (आमतौर पर एक तिहाई अंश) के भीतर ही वह सार लिखे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(२) **महत्व** – सार-लेखन का शिक्षा के क्षेत्र में विशेष महत्त्व है। जैसे-जैसे विद्यार्थी उच्च कक्षाओं की ओर बढ़ते हैं, उनको कई किताबें पढ़नी पड़ती हैं। कॉलेज में तो इसकी व्याप्ति और ही बढ़ती है। विद्यार्थियों को अपने विषय के बारे में टिप्पणियाँ तैयार करनी पड़ती हैं। उनके बगैर विद्यार्थी अच्छी तरह से सफलता नहीं पा सकते। दूसरे की बनी बनायी टिप्पणियों की अपेक्षा अपनी लिखी टिप्पणियाँ उनके लिए अधिक लाभकारी सिद्ध होती हैं। ऐसी टिप्पणियाँ तैयार करना एक दृष्टि से पढ़ी हुई बातों का सार-लेखन ही है। सार-लेखन कला है और अभ्यास द्वारा ही वह अपनायी जाती है। विद्यार्थियों को इस कला से परिचित कराना और उसका अभ्यास कराना नितान्त आवश्यक है।

व्यवहारिक दृष्टि से भी सार-लेखन का महत्त्व कम नहीं है। कई बार हमें सुनी या पढ़ी हुई बातों का सार दूसरों को संक्षेप में बताना पड़ता है। यह काम जितना समझा जाता है, उतना आसान नहीं है। उसके लिए पर्याप्त मात्रा में अभ्यास करना ज़रूरी है। इस दृष्टि से विद्यार्थी-अवस्था से उनको तैयारी करनी चाहिए।

नीर-क्षीर-विवेक रखकर ही यह काम किया जा सकता है। विद्यार्थी को भाषा पर प्रभुता न हो, तो वह सार-लेखन सफलता से नहीं कर सकेगा। इसका अभ्यास इसीलिए उच्च कक्षाओं के विद्यार्थियों से कराया जाए।

(३) **कुछ सूचनाएँ** – १. अध्यापक सार-लेखन के लिए ऐसा गद्य-खण्ड चुने, जो भाषा और भाव की दृष्टि से अधिक कठिन न हो, तथा बहुत आसान भी न हो। अगर कोई कठिन शब्द हो, तो उसे वह पहले ही स्पष्ट करे। २. शुरू-शुरू में पाठ्य-पुस्तक से परिच्छेद चुने जाएँ और पर्याप्त अभ्यास होने के बाद अपठित गद्य-खण्ड दे। ३. शुरू में वर्णनात्मक और कथनात्मक मज़मून दे और बाद में चिन्तनात्मक। ४. वह पहले मुद्दों का ढाँचा बनाकर लिखवाए और उसके बाद फिर एक बार जाँच करके लिखने दे, जिससे कोई विचार छूट न जाए। ५. वह विद्यार्थियों को समझा दे कि कौन-सी बातें छोड़ दी जा सकती हैं और कौन-सी लेना आवश्यक है। ६. वह शब्द-संख्या की मर्यादा की याद दिलाए। ७. वह स्वयं दिये हुए गद्य-खण्ड का सार-लेखन कर रखे और विद्यार्थियों के सामने उसे नमूने के तौर पर पेश करे। ८. सार-लेखन का अधिक-से-अधिक अभ्यास करा ले। ९. वह विद्यार्थियों का लिखा हुआ 'सार' पढ़े और उसके दोष दिखाए। आम तौर पर विद्यार्थियों द्वारा किये हुए सार-लेखन में निम्न-लिखित दोष दिखायी देते हैं –

अनावश्यक विस्तार या काट-छांट करना।
महत्त्व के विचारों को छोड़ना और अनावश्यक बातें लिखना।
सार-लेखन में सूत्रबद्धता का अभाव।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बीच-बीच के वाक्य वैसे के वैसे लिख लेना।

लम्बाई की मर्यादा की ओर ध्यान न देना।

अध्यापक इन त्रुटियों को स्पष्ट करे और उन्हें दुरुस्त करते हुए विद्यार्थियों को लिखने को बता दे।

(४) **प्रणाली** – १. अध्यापक पहले विद्यार्थियों को मज़मून पढ़कर सुनाए।

२. विद्यार्थी मनोगत पठन करेंगे और हेतु-प्रश्न का जवाब ढूंढ़ लेंगे।

३. अध्यापक दो-चार स्थूल प्रश्न पूछकर यह देखेगा कि विद्यार्थियों के ध्यान में वह आया है या नहीं।

४. विद्यार्थी मद्दे तैयार करेंगे। अध्यापक फलक पर ये मद्दे लिखेगा। कौन-सा विचार-तत्त्व महत्त्वपूर्ण है, कौन-सा नहीं, इसके बारे में चर्चा होगी, अर्थात् यह काम विद्यार्थी अध्यापक की निगरानी में करेंगे।

५. विद्यार्थी उसके अनुसार सार-लेखन करेंगे। उसके बाद यह देखा जाए कि शब्द-संख्या की मर्यादा का पालन कहाँ तक हुआ है।

६. अध्यापक दो-चार विद्यार्थियों से उनका किया हुआ सार-लेखन पढ़वा लेगा और त्रुटियाँ दिखाएगा।

७. अध्यापक की सूचनाओं को ध्यान में लेते हुए विद्यार्थी फिर एक बार सार-लेखन करेंगे और देखेंगे कि दी हुई मर्यादा के भीतर उक्त मज़मून के सब विचार सूत्र-बद्ध रीति से उन्होंने लिखे हैं या नहीं।

८. अध्यापक अपना किया हुआ सार-लेखन पढ़कर सुनाएगा और विद्यार्थी उसके अनुसार आवश्यक सुधार करेंगे।

९. उचित शीर्षक दिलाया जाए।

× × × ×

(ई) विचार-ग्रहण का पाठ

(१) **आवश्यकता** – अध्यापक पाठ्य-पुस्तक में संकलित पाठ पढ़ाते हैं। मगर जैसे-जैसे विद्यार्थी उच्च कक्षाओं में कदम रखते जाएँगे, वैसे-वैसे सिर्फ अध्यापक द्वारा पढ़ाये गये पाठों से उनका काम पूरा नहीं होता। उन्हें पाठ्य-पुस्तकों के अतिरिक्त किताबें, पत्र-पत्रिकाएँ भी पढ़नी पड़ती हैं। उनको पढ़कर उनमें व्यक्त किये विचारों को उन्हें ग्रहण करना चाहिए। इसकी तैयारी विद्यार्थियों को माध्यमिक पाठशालाओं में करनी चाहिए। पढ़े हुए गद्यांश पर गौर करते हुए वे उसके विचारों को अपनाएँगे। अध्यापक उनको कुछ गद्य-खण्ड देते हुए चाहता है कि वे विचार-ग्रहण का अभ्यास करें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(२) **स्वरूप :** दिये हुए मज़मून पर कुछ प्रश्न दें और उनके जवाब ढूंढ़ लाने को विद्यार्थियों से कहें। ऐसे प्रश्न आम तौर पर उसमें व्यक्त किये हुए विचार और भाषा के बारे में होते हैं। अपेक्षा यह है कि विद्यार्थी अपनी हिन्दी में उन प्रश्नों के जवाब लिखें। विद्यार्थी उसी मज़मून के वाक्य-के-वाक्य जवाब में न लिखें।

(३) **कुछ सूचनाएँ (क)** – अपठित (unseen) गद्य-खण्ड पढ़कर उसपर दिये हुए सवालों के जवाब अपने आप लिखने के लिए विद्यार्थियों को भाषा में योग्यता रखना आवश्यक है। इसलिए यह व्यवसाय (exercise) उच्च कक्षाओं के लिए ही दिया जाए। (ख) – परिच्छेद भाषा और भाव की दृष्टि से न तो आसान हो, न कठिन। कोई अपरिचित शब्द या मुहावरा हो, तो शुरू में स्पष्ट करें। कुछ दिनों बाद विद्यार्थियों को ही सन्दर्भ से उसका अर्थ ग्रहण करने दें। (ग) – शुरू में वर्णनात्मक और कथनात्मक अंश दें और उसके बाद चिन्तनात्मक। (घ) – उसपर दिये हुए सवालों में विविधता हो; उनमें से कुछ विचारों पर हों और कुछ भाषा के बारे में हों। उचित शीर्षक भी दिला दें।

(४) **प्रणाली** — अध्यापक गद्य-खण्ड पढ़कर सुनाए। दो-तीन सवाल पूछकर वह यह देखे कि उसका भाव विद्यार्थियों के ध्यान में आया है या नहीं। इसके बाद विद्यार्थी मनोगत पठन करेंगे और अध्यापक द्वारा दिये गये हेतु-प्रश्नों का जवाब ढूंढ़ लेंगे। इसके बाद विचार-ग्रहण करने के लिए पूछे गये सवालों में से हरएक का जवाब विद्यार्थी देंगे। इस समय अध्यापक भाषा और जवाब के बारे में विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करेगा।

विद्यार्थियों से कहा जाए कि वे प्रश्नों के जवाब लिखें। अध्यापक कक्षा में कुछ विद्यार्थियों के लिखे हुए जवाब पढ़कर सुनाए और आवश्यक सुधार करे।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: २० :

शीघ्र-पठन

(Rapid Reading)

(१) सूक्ष्म और स्थूल अध्ययन — विद्यार्थियों के लिए हिन्दी की जो पुस्तकें नियत की जाती हैं, उनके दो प्रकार होते हैं —

(अ) सूक्ष्म अध्ययन के लिए नियत पाठ्य-पुस्तकें और (आ) शीघ्र-पठन या स्थूल अध्ययन के लिए पुस्तकें।

यद्यपि भाषा की शिक्षा पाकर उसपर प्रभुता प्राप्त करने के लिए दोनों तरह की पुस्तकें आवश्यक होती हैं, तथापि उन दोनों के प्रति अध्यापक का दृष्टि-कोण एक-सा नहीं होता।

पाठ्य-पुस्तकों का सूक्ष्म अध्ययन किया जाता है। उसके हर शब्द और हर रचना-विशेष को अध्यापक स्पष्ट करता है। विषय-ज्ञान की अपेक्षा भाषा-ज्ञान की ओर उनको पढ़ाते वक्त अध्यापक अधिक ध्यान देता रहता है। वह यही चाहता है कि इसके अध्ययन द्वारा विद्यार्थी भाषा को अच्छी तरह अपनाएँ, अपने विचारों को व्यक्त करने और दूसरों द्वारा व्यक्त किये हुए विचारों को ग्रहण करने की क्षमता पाएँ। इसलिए उन पुस्तकों की पढ़ाई के लिए ज्यादा वक्त दिया जाता है, हर बात पर बातचीत करके अध्यापक भाषा अपनाने में विद्यार्थियों की मदद करता है। पाठ्य-पुस्तक का अध्ययन जितना सूक्ष्म और गहराई में उतरकर विद्यार्थी करेंगे, उतना ही वह उस दृष्टि से लाभकारी सिद्ध होता है।

मगर ऐसी भी कोई पुस्तक हर कक्षा के लिए (खास तौर पर उच्च कक्षाओं के लिए) नियत की जाती है, जो ज़रा भिन्न दृष्टिकोण से पढ़ायी जाती है। इस स्थूल अध्ययन को अँग्रेज़ी में extensive reading भी कहा जाता है। इसपर यहाँ कुछ विचार व्यक्त किये जा रहे हैं।

(२) प्रयोजन (अ) भाषा का अभ्यास – शिक्षा एक तरह का संस्कार है। भाषा की शिक्षा में अध्यापक का यह उद्देश्य होता है कि अनुकूल वातावरण बना लेते हुए वह विद्यार्थियों पर भाषा का संस्कार करे, उन्हें भाषा अधिक सुनने, बोलने और पढ़ने का मौका दे, और उसके द्वारा भाषा को अपनाने में विद्यार्थियों की सहायता करे। इसलिए पाठ्य-पुस्तकों में स्थूल अध्ययन या शीघ्र-पठन के लिए भी पुस्तकें नियत की जाती हैं। उससे विद्यार्थियों से पठन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का अभ्यास कराया जाता है। उन्होंने पहले जो शब्द सीखे हैं, पहले वक्त से उनके सामने फिर एक बार आ जाएँगे। भिन्न-भिन्न पृष्ठभूमियों पर उनको प्रयोग में लाये हुए देखकर विद्यार्थी उन्हें अच्छी तरह से हज़म कर सकेंगे; उनके प्रयोग की विशेषताएँ उनके ध्यान में आएँगी। विद्यार्थी जो शब्द भूलते जा रहे हैं, उनका प्रयोग देखकर उन्हें वे फिर से ध्यान में रख सकेंगे। इस तरह जिस शब्द-सम्पत्ति से उनका परिचय मात्र हो चुका है उसे वे अच्छी तरह से अपना सकेंगे। वे जितना अधिक पढ़ेंगे, भाषा का उतना ही अधिक परिचय उन्हें प्राप्त होगा और उसमें वे पर्याप्त मात्रा में योग्यता पाएँगे। पठन की उपयोगिता अतिशयोक्ति से बयान करने की कोई ज़रूरत नहीं है।

(ब) साहित्यिक प्रयोजन – हम चाहते हैं कि हमारे विद्यार्थी न केवल पढ़ने-लिखने में, बोलने में क्षमता पाएँ, बल्कि वे हिन्दी के साहित्य के भी रसिक पाठक बन जाएँ। स्थूल अध्ययन की किताबों के ज़रिए विद्यार्थी हिन्दी साहित्य संसार में प्रवेश कर पाएँगे, अपनी साहित्यिक अभिरुचि को परिष्कृत करेंगे। हो सकता है कि उनमें से ही कुछ विद्यार्थी हिन्दी में लिखने की भी प्रेरणा पा लेंगे। साहित्य के प्रति उनके मन में रुचि पैदा होगी। यह भी स्थूल अध्ययन की पुस्तकें रखने का एक प्रयोजन है। भिन्न-भिन्न शैलियों का वे परिचय प्राप्त कर सकेंगे। इसके द्वारा उन में आलोचनात्मक प्रवृत्ति भी जाग उठेगी।

साहित्य को भिन्न-भिन्न अंगों, शैलियों और रचनाओं से परिचय होने के बाद विद्यार्थी उस कलाकृति के सौन्दर्य की अनुभूति करेंगे। यही सौन्दर्यानुभूति पाठक को अजीब आनन्द का अनुभव कराएगी। उसकी गुणग्राही-बुद्धि का विकास होगा। साहित्य की ओर देखने का एक विशिष्ट दृष्टिकोण तैयार होगा और वह भले-बुरे का निर्णय कर सकेगा। शैलियों की खूबियों को वह समझ सकेगा।

(स) ज्ञानार्जन – ऐसी पुस्तकों से विद्यार्थियों को नयी-नयी बातें मालूम होती हैं। नये विचारों, नयी कल्पनाओं से विद्यार्थियों का ज्ञान-भण्डार समृद्ध होता जाता है। 'पठन मनुष्य को चतुर बनाता है' – यह सूक्ति पाठशालाओं में भिन्न-भिन्न पुस्तकें पढ़नेवाले विद्यार्थियों के बारे में चरितार्थ होती है। सूक्ष्म अध्ययन के लिए नियत पाठ्य-पुस्तकों के अध्यापन में विद्यार्थी का भाषा-ज्ञान बढ़ाने की ओर ज़्यादा ध्यान रहता है, तो शीघ्र-पठन में ज्ञानार्जन की ओर अधिक ध्यान रहता है। पुस्तक-पठन एक ऐसा साधन है, जिससे पाठक अपना ज्ञान-भण्डार विकसित कर सकता है, मनबहलाव कर सकता है और अपनी योग्यता बढ़ा सकता है।

(ड) पठन की आदत डालना – पुस्तक पठन से मनुष्य सुसंस्कृत हो सकता है। पठन का महत्त्व कम मानना उचित नहीं होगा। अतः विद्यार्थियों में पठन की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आदत डालते हुए पढ़ने में रुचि की नींव डालना भी ऐसी पुस्तकें नियत करने का प्रयोजन है।

(३) हिन्दी शीघ्र-पठन की आज की अवस्था :—शीघ्र-पठन की आज की अवस्था प्रादेशिक भाषा के क्षेत्र में भी दयनीय है। वह पूर्णतः उपेक्षित है। कई पाठशालाओं में उसका प्रबन्ध नहीं है। सुयोग्य पुस्तकों की कमी भी विचारशील व्यक्ति को खटके बिना नहीं रहेगी। हिन्दी के बारे में सब से अधिक दयनीय अवस्था न हो तो ही आश्चर्य !

हिन्दी शीघ्र-पठन के लिए पाठशालाओं में महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं है। आज हिन्दी के लिए जो समय नियत है, वह बहुत कम है। हर हफ्ते चार घण्टों में पाठ्य-पुस्तक भी पढ़ाकर पूरी नहीं होती, तो शीघ्र-पठन की ओर ध्यान कैसे दिया जा सकेगा।

(४) शीघ्र-पठन अवश्य रखें—जो कुछ भी हो हमें शीघ्र-पठन का महत्त्व ध्यान में रखना चाहिए। जब तक ऐसी पाठ्य-पुस्तकें नियत नहीं की जातीं तब तक अध्यापक उनके अतिरिक्त पठन में विद्यार्थियों को प्रोत्साहन दे। वास्तव में एकाध छोटी पुस्तक ऐसे अतिरिक्त पठन के लिए नियत की जाए। विद्यार्थी अपने आप पुस्तकालय से पुस्तकें लेकर पढ़ना उतना पसन्द नहीं करते, इसलिए जब उन्हें मालूम होगा कि कोई पुस्तक परीक्षा के लिए भी आवश्यक है, तो वे उसे ज़रूर पढ़ेंगे। उनके भाषा-ज्ञान के विकास में यह पठन अवश्य सहायक होगा।

शीघ्र-पठन से होनेवाले लाभ उपेक्षणीय नहीं हैं। इसलिए हरएक प्रगतिशील अध्यापक ऐसी पुस्तकों का स्वागत ही करेगा।

हाँ, पाँचवीं कक्षा में हिन्दी की शिक्षा शुरू होती है, सातवीं कक्षा तक उक्त शिक्षा का स्वरूप प्रारम्भिक अवस्था तक ही सीमित है। उसमें हिन्दी पुस्तकों की ओर ज्ञानार्जन के साधन के तौर पर देखने की अपेक्षा भाषा-ज्ञान के साधन के तौर पर देखना अधिक उचित होगा; इसलिए इस प्रारम्भिक अवस्था के बाद आठवीं कक्षा से ही शीघ्र-पठन के लिए पुस्तकें नियत की जाएँ। आठवीं कक्षा के लिए ६० पन्नों की किताब पर्याप्त होगी और ग्यारहवीं कक्षा में यह पृष्ठसंख्या १५० तक होनी चाहिए।

(५) शीघ्र-पठन के लिए पुस्तकों का चयन—अक्सर देखा जाता है कि शीघ्र-पठन के लिए जो किताबें चुनी जाती हैं, वे उतनी दिलचस्प नहीं होतीं। ऐसी हालत में विद्यार्थी उन्हें पसन्द नहीं कर सकते। पुस्तकों का चयन कोई मामूली कार्य नहीं है। हिन्दी की पुस्तकें चुनने का काम हिन्दी के अध्यापकों पर भी सौंपा जा सकता है। इसलिए उनकी सुविधा के लिए कुछ विचार यहाँ पेश किये जा रहे हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(क) **पुस्तकों की भाषा** विद्यार्थियों को कठिन मालूम न हो। वह अत्यन्त आसान भी न हो। दोनों के कारण उन्हें पठन में दिलचस्पी नहीं होगी। जहाँ तक हो, एसी पुस्तक में विद्यार्थियों की दृष्टि से कम से कम कठिन शब्द हों। पढ़ते वक्त अगर उनके सामने ऐसे शब्द आ जाएँ, तो उनकी गति 'शीघ्र' नहीं होगी। पुस्तक सुबोध हो, उसकी शैली प्रसन्न हो। (ख) **विषय** भी दिलचस्प हो और विद्यार्थियों के सामान्य ज्ञान की मर्यादा के अनुरूप हो। **मुद्रण** और **अलंकरण** की दृष्टि से वह आकर्षक हो। (ग) शीघ्र-पठन के लिए **गद्य** ही चुनें। (घ) भाषा और विषय की दृष्टि से पुस्तकों में कक्षाओं के अनुसार क्रमबद्धता (gradation) हो। जहाँ तक हो, वह **कथात्मक** या **कथनात्मक** हो। वह भिन्न-भिन्न विषयों पर लिखे गम्भीर निबन्धों का संकलन न हो। एक ही बड़ी कहानी-संग्रह, या रोचक यात्रा-वर्णन विद्यार्थियों के लिए लाभकारी होगा। उच्च कक्षा के लिए छोटा उपन्यास भी रखा जा सकता है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि 'शीघ्र-पठन' की पुस्तक का स्वरूप (सूक्ष्म-पठन की) पाठ्य-पुस्तक से भिन्न होना चाहिए।

(६) **शीघ्र-पठन और अध्यापक** — अध्यापक विद्यार्थियों को पाठ्य-पुस्तक पढ़ाता है, तो शीघ्र-पठन की पुस्तक पढ़ने में अध्यापक विद्यार्थियों का मार्गदर्शन मात्र करता है। वह पाठ-पुस्तक की भाँति उसे कभी भी न पढ़ाए। समय के अभाव के कारण यदि विद्यार्थी भी वह किताब नहीं पढ़ सकें, तो उन्हें घर पर पढ़ने को कहा जाए। विद्यार्थी जब ऐसी पुस्तक पढ़ेंगे तब अध्यापक को नीचे लिखे अनुसार उनकी मदद करनी चाहिए।

अध्यापक स्वयं किताब पढ़कर विद्यार्थियों को न सुनाए। पाठ्य-पुस्तक के नियत पाठ की विशेषताओं को विद्यार्थियों के सामने रखकर उनका ध्यान पुस्तक की ओर आकर्षित किया जाए। उनकी उत्कण्ठा बढ़ाने से वे उसे अच्छी तरह से पढ़ सकेंगे। हर घण्टे में सहजता से पूरा किया जा सकता है, उतना ही विभाग पढ़ने के लिए दिया जाए। उसके बाद पाठ में कुछ कठिन शब्द हों, तो उनका अर्थ दिया जाए, आवश्यकतानुसार फलक पर लिखा जाए। हेतु-प्रश्न लिखते हुए विद्यार्थियों से कहा जाए कि मनोगत पठन द्वारा वे उन प्रश्नों के जवाब तैयार करें। 'शीघ्र-पठन' मनोगत ही हो। जब विद्यार्थी मनोगत पठन करते हों, तब अध्यापक यह देखे कि किसी को कोई कठिनाई तो नहीं है; अगर हो, तो उसके पास जाकर वह उसे समझाए। कोई विद्यार्थी उचित ढंग से मनोगत न पढ़ रहा हो, तो उसके बारे में भी उसका मार्गदर्शन किया जाए।

विद्यार्थियों के मनोगत पठन के बाद अध्यापक पढ़े हुए विभाग पर कतिपय स्थूल सवाल पूछे और देखे कि विद्यार्थियों ने उसे कहाँ तक ग्रहण किया है। किसी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रचना-विशेष की ओर अध्यापक विद्यार्थियों का ध्यान खींचना चाहता हो, तो वैसा इसी समय किया जाए।

कक्षा में शीघ्र-पठन के लिए समय न मिलता हो, तो विद्यार्थी घर पर और अध्यापक द्वारा दिये गये हेतु-प्रश्नों के जवाब ढूंढ़ लेंगे। कक्षा में अध्यापक सिर्फ प्रश्नोत्तर द्वारा देखेंगे कि कहे मुताबिक विद्यार्थियों ने पुस्तक पढ़ी है या नहीं।

साल भर में विद्यार्थी सम्पूर्ण पुस्तक पढ़ें। समय-समय पर विद्यार्थियों को प्रश्न दिये जाएँ। हर परीक्षा में अध्यापक प्रश्नपत्रिका के अंकों में से प्रतिशत २० अंक शीघ्र-पठन की पुस्तक के लिए नियत कर रखे। इससे विद्यार्थी उसे अवधान-पूर्वक पढ़ेंगे। अंक पाने की दृष्टि से पुस्तक की उपयोगिता उनकी प्रेरक शक्ति बनेगी।

विद्यार्थियों के अभिभावकों पर एक किताब के स्थान में दो को खरीदने से आर्थिक भार अवश्य बढ़ेगा। फिर भी यह समस्या पाठशालाओं के मुख्याध्यापकों और पालकों के सहयोग से हल की जा सकती है। पुस्तकालय में कई प्रतियाँ रख देने से विद्यार्थी उसे पढ़ सकेंगे। दो-दो या तीन-तीन विद्यार्थी एक ही किताब खरीदकर उसे पढ़ सकेंगे। इसके लिए कक्षा-पुस्तकालय (class-library) का प्रबन्ध काफी उपयुक्त सिद्ध होगा। अध्यापक उसमें पुस्तकों की अधिक प्रतियाँ रखवा दे और यह देखे कि हर विद्यार्थी सुविधा के अनुसार पुस्तक पढ़ता है या नहीं। परीक्षा में उत्तीर्ण होने के वाद विद्यार्थी अपनी ऐसी पुस्तकें पुस्तकालय को देन के रूप में दें, तो परस्पर सहयोग की भावना भी वृद्धिगत होगी और गरीब विद्यार्थियों को आर्थिक भार भी कम उठाना पड़ेगा।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: २१ :

उच्चारण

अब तक हमने यह देखा कि तरह-तरह के पाठ कैसे पढ़ाये जाएँ। इन पाठों के अध्यापन द्वारा अध्यापक हिन्दी भाषा को आत्मसात् कर लेने में विद्यार्थियों की मदद करते हैं। अध्यापकों द्वारा किये गये मार्गदर्शन से विद्यार्थियों की शब्द-सम्पत्ति का विकास होगा। वे शुद्ध भाषा में वाक्य-रचना कर सकेंगे और अपने विचारों को व्यक्त करने तथा आसान हिन्दी में व्यक्त किये गये विचारों को ग्रहण करने में उन्हें कोई कठिनाई नहीं होगी।

(१) **महत्त्व** – प्रत्येक भाषा की अपनी-अपनी उच्चारण-प्रणाली होती है। हाँ, यह सही है कि संस्कृत-परिवार की हिन्दी, मराठी, गुजराती आदि भाषाओं की उच्चारण-प्रणालियों में पर्याप्त मात्रा में समता दिखायी देती है, फिर भी उनमें जो फर्क है, वह कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। हिन्दी की उच्चारण-प्रणाली की अपनी विशेषताओं के कारण वह मराठी या गुजराती की उच्चारण-प्रणाली से भिन्न मानी जाती है। इन विशेषताओं को हमें गौर से देखना होगा। अगर हम हिन्दी की उच्चारण-प्रणाली को अच्छी तरह नहीं अपना सकें, तो हमारी हिन्दी की शिक्षा अधूरी ही मानी जाएगी।

हरएक पढ़े-लिखे आदमी को चाहिए कि वह शुद्ध भाषा में बोले और शुद्ध भाषा में लिखे। शुद्ध भाषा में भाषण-लेखन आदि व्यवहार करने में क्षमता पाना उसका कर्तव्य है। उच्चारण आदि में अगर वह गलतियाँ करता हो, तो वह उसकी कमजोरी मानी जाती है। इसी कमज़ोरी की वजह वह भाषण द्वारा दूसरों को प्रभावित नहीं कर सकता। पढ़े-लिखे लोग उसकी हँसी-दिल्लगी उड़ाएँगे। उन लोगों के बीच वह हमेशा अपनी यह कमज़ोरी अनुभव करता रहेगा और अगर उसको वह हटाने में असमर्थ हो जाए, तो वह हीन-भावना का भी शिकार बनता जाएगा। भाषण के सम्बन्ध में इसी तरह की हीन-भावना उसमें पैदा हो जाए, तो अपने विचारों और भावों को प्रभावशाली ढंग से वह व्यक्त नहीं कर सकेगा। इसी दुर्बलता और उससे निर्मित इन कमज़ोरियों से बालकों को बचाने के लिए शुद्ध उच्चारण का महत्त्व हमें ध्यान में लेना चाहिए।

आम तौर पर देखा जाता है कि जो बालक शुद्ध बोल नहीं सकते, वे शुद्ध भाषा में लिख भी नहीं सकते। गलत उच्चारण-प्रणाली को अपनाये जाने का यह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

परिणाम है। इसलिए पहले से अध्यापकों को सचेत होकर शुद्ध उच्चारण-प्रणाली को आत्मसात् कर लेने में बालकों का मार्गदर्शन करना चाहिए।

(२) **परिनिष्ठित (स्टॅण्डर्ड) उच्चारण-प्रणाली को अपनाने की आवश्यकता** — ऊपर बतलाया गया है कि हरएक भाषा की उच्चारण-प्रणाली निकटवर्तिनी भाषा की उच्चारण-प्रणाली से किसी-न-किसी मात्रा में भिन्न होती है। हम सिर्फ अपनी मातृभाषा में ही शुद्ध बोलना सीखें, सो बात पर्याप्त नहीं है। जब हम मातृभाषा के अतिरिक्त किसी दूसरी भाषा को अपनाते हैं, तो हमें चाहिए कि हम उसी भाषा के हर पहलू में अच्छा व्यवहार करना सीखें। जब हम हिन्दी सीखते हैं, तो हमें हिन्दी की उच्चारण-प्रणाली को भी अपनाना होगा। मतलब यह कि हम हिन्दी भाषा में उसी तरह बोलना सीख लें, जिस तरह हिन्दी भाषी लोग हिन्दी में बोलते हैं। तभी हमारी हिन्दी की शिक्षा सफल मानी जाएगी। इसलिए उच्चारण के बारे में अध्यापकों का यह लक्ष्य होना चाहिए कि वे बालकों का यत्नपूर्वक मार्गदर्शन करते हुए सही उच्चारण-प्रणाली को अपनाने में उनकी मदद करें।

अब समस्या यह है कि किस उच्चारण-प्रणाली को हम हिन्दी की आदर्श या परिनिष्ठित उच्चारण-प्रणाली मानें। यह समस्या इसलिए सामने आती है कि हिन्दी की राजस्थानी, बिहारी, खड़ी बोली, व्रजभाषा आदि कई बोलियाँ हैं। गौर से देखा जाए तो ऐसी उपभाषाओं या बोलियों की उच्चारण-प्रणालियों में आंशिक क्यों न हो मगर फर्क अवश्य रहा करता है। अच्छे पढ़े-लिखे लोगों और देहाती लोगों की उच्चारण-प्रणाली में फर्क नज़र आता है। इसलिए अहिन्दी भाषी विद्यार्थी को हिन्दी उच्चारण-प्रणाली को अनुकरण द्वारा अपनाते समय बहुत ही सचेत होना चाहिए।

हिन्दी की अनेकानेक बोलियों में से खड़ी बोली को आज साहित्यिक, परिनिष्ठित हिन्दी के रूप में स्वीकार किया गया है और समूचे हिन्दी-भाषी प्रदेश में आम तौर पर साहित्य, शिक्षा-दीक्षा आदि के क्षेत्र में उसी का सम्मान किया जाता है। राष्ट्रभाषा हिन्दी के तौर पर हम इसे ही सीखते-सिखाते हैं। इसलिए हम खड़ी बोली की उच्चारण-प्रणाली को परिनिष्ठित मानें और उसे ही अपनाने की चेष्टा करें। कहना न होगा कि पढ़े-लिखे, सुसभ्य लोगों की उच्चारण-प्रणाली को ही आदर्श माना जाए।

(३) **उच्चारण में गलतियाँ** – अब हम यह देखेंगे कि अहिन्दी भाषी विद्यार्थी उच्चारण की दृष्टि से हिन्दी भाषा के व्यवहार में कौन-सी गलतियाँ करते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.

उच्चारण-प्रणाली का विश्लेषण करने पर दिखायी देता है कि उसके तीन पहलू हैं — (अ) स्वतंत्र रूप में प्रत्येक ध्वनि या वर्ण का उच्चारण। (आ) ध्वनि-समुच्चय या शब्द के अन्तर्गत ध्वनियों का उच्चारण और (इ) बोलने का ढंग या लहजा (intonation)।

(अ) स्वतंत्र रूप में प्रत्येक ध्वनि या वर्ण का उच्चारण — इसके सम्बन्ध में नीचे मुताबिक गलतियाँ पायी जाती हैं —

१. 'इ' के स्थान में 'ई' और 'ई' के स्थान में 'इ'। जैसे —

सही — पीना, मिलन, बीच में, तारीख, नदियाँ

गलत — पिना, मीलन, बिच में, तारिख, नदीयाँ

२. 'उ' के स्थान में 'ऊ' और 'ऊ' के स्थान में 'उ'। जैसे —

सही — पूछना, रूखा, रुपया, लुटेरा

गलत — पुछना, रुखा, रूपया, लूटेरा

३. 'ऐ' का उच्चारण किंचित् 'अइ', और कहीं-कहीं 'अए' यानी 'ए' और 'ऐ' के बीच का होता है। वह मराठी या संस्कृत 'ऐ' से कुछ भिन्न है। इसके उच्चारण में विद्यार्थी गलती करते हैं, संस्कृत या मराठी की 'ऐ' की तरह उसका उच्चारण करते हैं। कुछ शब्द —

तैरना, बैठो, चैन, पैठ, सैर, कैंची, वैभव

४. 'औ' का उच्चारण कहीं 'अव्', और कहीं-कहीं 'अओ' – सा यानी ओ और औ के बीच का होता है, मगर विद्यार्थी उसका उच्चारण संस्कृत या मराठी के 'औ' की तरह करते हैं। कुछ शब्द —

और, तौर, नौकर, त्यौहार, औरत, लौकिक, लौकी

५. 'ण्' के स्थान में 'न्'।

जैसे — सही — कारण, स्मरण, प्रणाम, प्रमाण

गलत — कारन, स्मरन, प्रनाम, प्रमान

६. 'च्' ध्वनि। मराठी में 'च्' लिपि-चिह्न से दो ध्वनियाँ सूचित होती हैं —

एक – च् (वर्त्स्य ध्वनि) – मराठी शब्द – चमचा, आमचा, त्याचा

च् (= च्य्-सी तालव्य ध्वनि) – मराठी शब्द – चहा, आमची.

हिन्दी में संस्कृत की तरह एक ही 'च्' (तालव्य) ध्वनि है। कुछ विद्यार्थी कहीं-कहीं 'च्' का मराठी की तरह उच्चारण करते हैं।

७. श् और ष् के स्थान में स् तथा ष् के स्थान में श् या स्।

सही — नमस्ते, भाषा, प्रकाश, पुष्प

गलत — नमश्ते, भासा, प्रकास, पुश्प

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

८. क्ष् के स्थान में छ्।
सही — **क्ष**त्रिय, यक्ष
गलत — छत्रिय, यच्छ

९. 'ज्ञ्' लिपि-चिह्न द्वारा हिन्दी में मराठी या संस्कृत की 'ज्ञ्' ध्वनि सूचित नहीं की जाती। हिन्दी में 'ज्ञ' लिपि-चिह्न से 'ग्यं' ध्वनि का बोध होता है। मगर विद्यार्थी संस्कृत की तरह उसका उच्चारण करते हैं।

सही (उच्चारण) — आग्या, ग्यान यग्यं
सही (लेखन) — आज्ञा, ज्ञान, यज्ञ
गलत (उच्चारण) — आज्ञा, ज्ञान, यज्ञ
गलत (लेखन) — आग्या, ग्यान, यग्यें

१०. फारसी-अरबी से हिन्दी में निम्न-लिखित ध्वनियां आयी हैं। उन्हें हिन्दी की ध्वनियों से भिन्न दिखाने के लिए उनके नीचे नुक्ता दिया जाता है। आम तौर पर उनका उच्चारण उनसे मिलती-जुलती हिन्दी ध्वनियों की तरह किया जाता है।

क़्, ख़्, ग़्, ज़्, फ़्, ध्वनियाँ क्रमशः क्, ख्, ग्, ज्, फ् से भिन्न हैं। विद्यार्थी क़् के स्थान में क्; ख़् के स्थान में ख्, ग् के स्थान में ग़्, ज़् के स्थान के ज्, और फ़् के स्थान में फ्, उच्चारण करते हैं।

सही – क़द, ख़त, ग़रीब, ज़मीन, फ़रियाद
गलत — कद, खत, गरीब, जमीन, फरियाद

क़्, ख़्, ग़्, ध्वनियाँ जिह्वा-मूलीय हैं, तो क्, ख्, ग्, कण्ठ्य हैं। ज़्, वर्त्स्य है, तो ज् तालव्य है। फ़् दन्त्योष्ट्य है, तो फ् ओष्ट्य है।

११, अ के बाद जब ह़् ध्वनि आती है तो उनका उच्चारण अह़् नहीं होता, किंचित् एह़् (एह़् और अह़् के बीच) जैसा होता है। मगर विद्यार्थी जैसे लिखते हैं वैसा ही उच्चारण करते हैं।

सही लेखन -- पहला, पहचान, कहना
गलत लेखन -- पेहला, पेहचान, केहना
गलत उच्चारण – पहला, पहचान, कहना
सही उच्चारण – पेहला, पेहचान, केहना

१२. अंग्रेज़ी की अॅ और ऑ ध्वनियों को हिन्दी में उनके मूल रूप में नहीं अपनाया गया है। इसलिए उनका वैसा उच्चारण खटकता है। अॅ को ऐ में और ऑ को आ में परिवर्तित किया गया है। जैसे —

मॅनेजर – मैनेजर, मॅन – मैन, कॅनिंग – कैनिंग, कॅमेरा – कैमेरा, कॉपी – कापी कॉलिज – कालेज, हॉल – हाल आदि।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१३. संयुक्त ध्वनियों का विभक्तीकरण करना गलत है। जैसे — **यत्न – यतन, स्नान–सनान** ।

उसी तरह अगर संयुक्त ध्वनि शब्द के आरम्भ में हो, तो उसके पहले स्वर जोड़कर उसे सुगम बनाया जाता है। ऐसे स्वर जोड़ने को स्वरागम कहते हैं। ऐसे स्वरागम को कहाँ तक शिष्ट-सम्मत माना जाए ?

स्कूल – इस्कूल, स्त्री – इस्त्री, स्नान – अस्नान, स्थान – अस्थान, स्टेशन – इस्टेशन आदि।

१४. अनुनासिकों के उच्चारण में गलती पायी जाती है।

अर्ध अनुस्वार – [जो ँ चिह्न द्वारा (चन्द्र-बिन्दी द्वारा) बतलाया जाता है] का उच्चारण कुछ विद्यार्थी पूर्ण अनुस्वार के रूप में करते हैं, जो गलत है। निम्न-लिखित जैसे शब्दों के उच्चारण में विद्यार्थी गलती करते हैं —

हँसना, ऊँचा, **फाँदना**, हूँ, हैं, **खंडहर**

नीचे लिखे शब्दों के अनुनासिक के उच्चारण के प्रायः लगती पायी जाती है। इन शब्दों में स्थित अनुनासिक का सही उच्चारण दिखाते हुए वे शब्द कोष्ठक में दिये गये हैं। —

संस्था (सन्स्था), संस्कृत (सन्स्कृत), अंश (अन्श), हंस (हन्स), सिंह (सिन्ह), संज्ञा (सन्ग्या), संस्कार (सन्स्कार), मांस (मान्स), मीमांसा (मीमान्सा).

संस्कृत के अनुकरण में मराठी में इन शब्दों के अनुनासिक का उच्चारण 'अँव्' जैसा किया जाता हैं, (संस्कृत-सँव्स्कृत)। पर हिन्दी में वैसा नहीं होता।

१५. कई विद्यार्थी **ड्** और **ढ्**, **ट्** और **ठ्**, **त्** और **द्**, **ग्** और **घ्** के उच्चारण में गड़बड़ी कर देते हैं। अल्पप्रमाण और महाप्राण व्यंजनों में जो फर्क है, वह उनके ध्यान में नहीं आता।

(आ) ध्वनि-समुच्चय या शब्द के अन्तर्गत ध्वनियों के उच्चारण में विद्यार्थी कई तरह की गलतियाँ करते हैं। यहाँ कुछ उदाहरण दिखलाये गये हैं।

१. शब्द	—	वह	यह	बहुत
सही उच्चारण	—	वोह्	येह्	बहोत
गलत उच्चारण	—	वह	यह	बहुत

२. अ-कारान्त संयुक्त व्यंजन के इस 'अ' का उच्चारण उतना पूर्ण नहीं करना चाहिए जितना कि संस्कृत या मराठी में किया जाता है।

सही — **संयुक्त्, भिन्न्, संलग्न्** अभि**व्यक्त्**

गलत — **संयुक्त, भिन्न, संलग्न** **अभिव्यक्त**

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

३. शब्द के अन्तःस्थित और अन्त्य अ के अच्चारण के सम्बन्ध में हिन्दी में जो विशेषता है, उसकी ओर अहिन्दी भाषी लोग उतना ध्यान नहीं देते। खास तौर पर जो लोग पहले पहल नागरी लिपि सीखते हैं और हिन्दी पढ़ने लगते हैं, वे हरएक अ-कारान्त अक्षर का पूर्ण उच्चारण करते हैं, इसलिए वे कुछ गलतियाँ करते हैं। जैसे —

सही लेखन —	लगभग	सांगता	किताब	चलना
गलत उच्चारण —	लगभग	सांगता	किताब	चलना
सही उच्चारण —	लग्भग्	सांग्ता	किताब्	चल्ना
गलत लेखन —	लग्भग्	सांग्ता	किताब्	चल्ना

४. ह्रस्व अक्षर के बाद संयुक्त व्यंजन के आने से ह्रस्व अक्षर पर मराठी या संस्कृत में जितने स्पष्ट रूप में आघात (Stress) आता है, उतना हिन्दी में नहीं आता। विद्यार्थी वैसा आघात देकर गलती करते हैं।

(इ) **लहजा** — उपर्युक्त गलतियों तथा आम तौर पर दिखायी देनेवाली अन्य गलतियों को अगर हम टाल सकें, तो हिन्दी के 'टोनिंग' या लहजे को हम सहजता से अपना सकेंगे।

(४) **कारण-मीमांसा** — अब तक की पंक्तियों में यह दिखाने की कोशिश की गयी है कि आम तौर पर कई अहिन्दी भाषी लोगों की हिन्दी में उच्चारण की कौन-सी गलतियाँ पायी जाती हैं। अध्यापकों को चाहिए कि वे अपने विद्यार्थियों की गलतियाँ गौर से ध्यान में लें और उन्हें हटाने की चेष्टा करें। इसलिए अब हम देखें कि उन्हें कैसे दूर किया जा सकता है। मगर बीमारी का तभी इलाज किया जा सकता है, जब डॉक्टर उसके कारणों को जान लेगा। अतः पहले हम यह देखेंगे कि उपर्युक्त या अन्य गलतियाँ विद्यार्थी क्यों करते हैं। हमारे खयाल से इसका कारण निम्न-लिखित है —

१. **अभ्यास की कमी** – भाषा कला है और कला पर प्रभुता पाने का एकमेव मार्ग है – अनुकरण और अभ्यास। भाषा को अपनाना भी भाषा में व्यवहार करने की आदत डाली जाना है। अगर विद्यार्थी शब्द के सही उच्चारण का अनुकरण करते हुए उसका अभ्यास न करे, तो वह वैसी गलती करता ही रहेगा।

२. **अधूरा अनुकरण** – सही उच्चारणसु नकर पूर्णरूपेण उसका अनुकरण न किये जाने से उच्चारण में गलतियाँ होती हैं।

३. **गलत उच्चारण की आदत** डाली जाने से विद्यार्थी वैसे ही गलत उच्चारण करते हैं।

४. **आदर्श उच्चारण का अभाव** – जो विद्यार्थी घर पर हिन्दी की तैयारी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

करते हैं या जिनके अध्यापकों ने सही उच्चारण-प्रणाली को न अपनाया हो, उनके उच्चारण में गलतियाँ अवश्य दिखायी देंगी।

५. **उचित मार्गदर्शन का अभाव** हो, तो विद्यार्थी अपनी गलतियों को स्वयं नहीं जान लेंगे और इसीलिए उन्हें दुरुस्त भी नहीं कर सकेंगे।

६. **अनवधान** — यद्यपि विद्यार्थी सही उच्चारण जानते हों, तो भी अनवधान के कारण किसी अक्षर या शब्द के उच्चारण में गलती करते हैं।

७. **जल्दबाज़ी** जैसे अन्य व्यवहारों में हानि पहुँचाती है, वैसे ही वह शब्दों के उच्चारण में गलतियाँ पैदा कर देती है।

८. **विद्यार्थी का जिह्वा-दोष** — कुछ विद्यार्थी अपनी जिह्वा के किसी दोष के कारण र् आदि वर्णों का ठीक उच्चारण नहीं कर सकते।

ऊपर दिये हुए कारणों का विश्लेषण करने से साफ दिखायी देता है कि उनमें से अधिकतर सही उच्चारण के अनुकरण और अभ्यास से सम्बन्धित हैं। भाषा अनुकरण से अपनायी जाती है और अभ्यास से उसके संस्कार को स्थायी बना दिया जाता है। किसी भाषा में अधिक से अधिक बोलने, लिखने या पढ़ने का अवधान-पूर्वक अभ्यास कीजिए, आपको भाषा में अधिक से अधिक योग्यता प्राप्त होगी। इसलिए उच्चारण आदि की कई गलतियों का बीज सदोष अनुकरण और अपर्याप्त अभ्यास में ही बोया जाता है।

९. **विद्यार्थी की मातृभाषा की उच्चारण-प्रणाली का प्रभाव** -- यह एक ऐसी वजह है जिससे विद्यार्थी हिन्दी की उच्चारण-प्रणाली को ठीक-ठीक अपना नहीं सकता। बचपन से लेकर चौबीसों घण्टे अपनी मातृभाषा के वातावरण में रहने के कारण उसकी उच्चारण-प्रणाली उसके जीवन का अविभाज्य अंग-सी बनी हुई होती है। जब वह किसी और भाषा को अपनाता जाता है, तब वह नयी भाषा की उच्चारण-प्रणाली को भी अपनी मातृभाषा की उच्चारण-प्रणाली के साँचे में अनजान में ही ढाल देता जाता है। और अगर यत्न-पूर्वक उसमें सुधार न किया जाए, तो उसमें वैसी ही भाषा-विषयक आदतें डाली जाती हैं। हर हफ्ते में दो-चार घण्टों तक ही हिन्दी सुनने-बोलने या पढ़ने-लिखने का मौका जिन बालकों को मिलता है उन्हें मातृभाषा के प्रभाव से बचाये रखना असम्भव न हो, तो कठिन अवश्य है।

(५) उच्चारण में सुधार — उपर्युक्त कारण-मीमांसा से हम यह कह सकते हैं कि मरीज़ की चिकित्सा ठीक की गयी है, अब बीमारी की जड़ें उखाड़ देने के लिए नुसखा लिख देना कठिन नहीं है। बीमारी के कीटाणु जिसमें पैदा होकर पलते हैं, उसी को हम सुधार दें और फिर नयी आबादी के बसने के लिए योग्य वायुमण्डल तैयार होने दें, तभी इष्ट सुधार करने में हम सफल हो जाएँगे। यह कार्य यों किया जा सकता है —

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१. अध्यापक स्वयं शुद्ध उच्चारण-प्रणाली को अपनाए और बालकों को शुद्ध उच्चारण सुनने का मौका दिला दे। बाहरी सुयोग्य वक्ताओं के भाषण आदि सुनवाए। इससे विद्यार्थियों के सामने पर्याप्त मात्रा में आत्मसात् करने योग्य सामग्री होगी। इसमें **श्रवण** क्रिया का महत्त्व न भुला दिया जाए। २. वह विद्यार्थियों से सावधानी से **अनुकरण** करा ले। यहाँ **भाषण** क्रिया का महत्त्व ध्यान में रखते हुए उन्हें अधिक से अधिक हिन्दी बोलने में प्रोत्साहन दिया जाए। **प्रश्नोत्तर, पठन और अभ्यास** (drilling) प्रणालियों से लाभ उठाया जाए। कठिन उच्चारणवाले शब्दों का अभ्यास बहुत ही लाभदायी प्रतीत होता है। ३. अध्यापक यह गौर से देख ले कि विद्यार्थी कौन-सी गलतियाँ करता है। ये गलतियाँ उसे फौरन दिखायी जाएँ और सही उच्चारण आत्मसात् करने का यत्न किया जाए। क्या पठन, क्या भाषण, किसी भी व्यवहार में गलतियों की जड़ें न जमनी चाहिए। अध्यापक का अनवधान या लापरवाही, विद्यार्थियों का किया हुआ गलत अनुकरण आदि से उस गलती के स्थायी होने में सहायता मिलती है। इसे तत्क्षण रोक दिया जाए। ४. सही उच्चारण का अभ्यास करा लिया जाए—पहले व्यक्तिगत और बाद में सामूहिक। ५. जब यह दिखायी देता है कि कोई विद्यार्थी सही उच्चारण को नहीं अपना रहा है, तो पहले उसको स्वतंत्र ध्वनि का (जैसे क़, ख़, फ़, ज़,) उच्चारण सिखाकर दुहरा लिया जाए और बाद में पूरे शब्द-के उच्चारण का अभ्यास कराया जाए। ६. आवश्यकता हो तो उच्चारण-स्थान दिखाकर स्पष्ट किया जाए कि उस वर्ण का उच्चारण कैसे किया जाता है। ७. सही ध्वनि और उसके स्थान में विद्यार्थी जिस गलत ध्वनि को अपना लेता है—दोनों का फर्क स्पष्ट कर देने से लाभ होगा। जैसे—क – क़ ग – ग़, ज – ज़, संस्कृत ऐ और हिन्दी ऐ आदि। ८. जिन शब्दों के उच्चारण में विद्यार्थियों द्वारा गलतियाँ की जाने की सम्भावना दिखायी देती है, उनकी सूची बनाकर विद्यार्थियों के सामने रखवा दी जाए। – उदा०

क़—क़द, क़रीब, वक़्त, तक़दीर आदि

ख़—ख़त, ख़ामी, ख़रीदना आदि

ग़—ग़ौर. ग़रीब, ग़ैर, बाग़

ज़—जहाज़, इजाज़त, इज्ज़त, ज़मीन, ज़रा

फ़—फ़रियाद, वज़ीफ़ा, फ़र्क़ आदि

९. **शब्द**—संज्ञा, संस्कृत, संस्कार, संस्था, मांस, हंस, अंश आदि। यहाँ भी पहले ऐसे शब्द दें, जिनमें एक ही विशेषता हो और उसके बाद ऐसे शब्द दें जिनमें से हरएक से एक से अधिक विशेषताएँ हों। १०. कक्षा में हिन्दी की पढ़ाई के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

समय हिन्दी का वातावरण यत्नपूर्वक बना लेने से विद्यार्थियों को हिन्दी को अपनाने में सुविधा प्रतीत होगी। कहना न होगा कि सुधार करा लेते समय अध्यापक को सहानुभूति से इस कार्य में विद्यार्थियों का उत्साह बढ़ा देना चाहिए।

इससे स्पष्ट होता है कि अध्यापक को इसके बारे में अधिक से अधिक मेहनत उठानी होगी, विद्यार्थियों से अभ्यास करा लेना होगा, तभी शुद्ध उच्चारण-प्रणाली की नींव डाली जाएगी। अंग्रेज़ी में फोनेटिक-रेकार्ड प्राप्य हैं, वैसी अब तक हिन्दी में नहीं हैं। यदि वैसी ध्वनि-मुद्रिकाएँ सरकार बना दे, तो अध्यापक का काम आसान बन जाएगा।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: २२ :

पठन

(१) **प्रस्तावना** – पठन ज्ञानार्जन का सर्वश्रेष्ठ साधन है। इसमें कोई शक नहीं कि प्रत्यक्ष अनुभवों द्वारा पर्याप्त ज्ञान पाया जाता है और वही सबसे अधिक प्रभावकारी होता है। फिर भी इन अनुभवों का क्षेत्र सीमित होता है। देश-विदेश के बारे में प्रत्यक्ष ज्ञान वहाँ जाकर पाना कितनों को सम्भव होगा? अतीत की और शारीरिक शक्ति की पहुँच के बाहर की बातों का ज्ञान प्रत्यक्ष अनुभव द्वारा कैसे पाया जा सकता है? इस हालत में, अन्त में हमें पठन की शरण लेनी पड़ती है। मुद्रणकला के विकास के कारण चारों तरफ हर विषय पर लिखी हुई हजारों किताबें आज उपलब्ध हैं। कमी है तो केवल पढ़नेवालों की।

भाषा के अध्यापक पठन-कला आत्मसात् करने में बालकों की मदद करते हैं – पठन-कला सिखाकर वे विद्यार्थियों को पुस्तकों की दुनिया में छोड़ देते हैं और मानो कहते हैं, चाहे जितना पढ़ो – ज्ञानी बनो।

प्रत्यक्ष कक्षा में अध्यापक पठन के बारे में विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करते हैं। उनका उद्देश्य है कि विद्यार्थी इस कला में योग्यता पाएँ, दूसरों के लिपि-बद्ध विचार ठीक तौर पर ग्रहण करें, लिखित विचारों की बारीकियों को समझ लें। पुस्तक-पठन वह साधन है, जिसके द्वारा पढ़नेवाला लेखक के विचारों से सम्बन्ध स्थापित कर सकता है।

(२) **पाठ में पुस्तक-पठन :** पाठ के अध्यापन में पठन की आवश्यकता कहाँ होती है? मुद्रित पाठ जब कक्षा में पढ़ाया जाता है, तब उसे पढ़ना आवश्यक होता है। वैसे ही बातचीत के पाठ में भी फलक पर अध्यापक द्वारा लिखे गये शब्दों, वाक्यों को पढ़ना विद्यार्थियों को आवश्यक होता है।

(अ) गद्य-पाठ में अध्यापक कुछ पंक्तियाँ पढ़कर सुनाते हैं। (ब) इसके बाद विद्यार्थी उन्हीं पंक्तियों को मनोगत (sielently) पढ़ते हैं और (क) उप-योजन में वही अंश विद्यार्थी पढ़ते हैं। इनके बारे में विवेचन करना जरूरी है, तभी पाठ-पद्धति की जानकारी पूर्ण होगी। अन्त में विद्यार्थी कक्षा की चहारदीवारी के बाहर जो पढ़ते हैं, उसके बारे में 'पठन' की दृष्टि से कुछ सूचनाएँ दी गयी हैं। पठन कला है। इसमें योग्यता चाहनेवाले विद्यार्थी कतिपय गलतियाँ करते हैं। अध्यापकों का कर्तव्य है कि वे उनका उचित मार्गदर्शन करते हुए उन गलतियों को दुरुस्त करें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(३) **अध्यापक द्वारा आदर्श (मॉडेल) पठन:** (छपे हुए) गद्य पाठ में प्रस्तावना और हेतुकथन के बाद विषय-प्रतिपादन के शुरू में अध्यापक पाठ पढ़कर विद्यार्थियों को सुनाता है। **आवश्यकता** — हिन्दी के पाठ में इसकी खास ज़रूरत होती है। निम्न कक्षाओं के विद्यार्थी हिन्दी के उच्चारण-प्रणाली को ठीक तौर पर आत्मसात् नहीं कर पाते हैं और पठन कला में भी वे प्रवीण नहीं होते। हिन्दी भाषा में व्यक्त किये विचारों को ग्रहण करने में भी उन्हें खास ध्यान देना पड़ता है। इसलिए उनको जिन कठिनाइयों का मुकाबला करना पड़ता है, उनको अध्यापक स्वयं पठन द्वारा हटा दे सकता है। उसके पठन से 'उच्चारण' की दृष्टि से बालकों पर संस्कार होता है। वे जान सकते हैं कि अच्छी तरह से कैसे पढ़ना चाहिए, कहाँ रुकें, कहाँ ज़ोर से पढ़ें, कहाँ गति को कम करें। साथ-साथ उन पंक्तियों में व्यक्त किये विचारों को भी वे ग्रहण करते जाते हैं। इस तरह उनकी बहुतेरी कठिनाइयों के कम होने से वे स्वयं आसानी से पाठ ग्रहण कर सकेंगे और अच्छी तरह से पढ़ने में कोई कठिनाई नहीं अनुभव करेंगे।

उच्च कक्षाओं में, अगर पाठ आसान हो और विद्यार्थी भाषा पर काफी प्रभुत्व पा चुके हों, तो अध्यापक द्वारा पाठ-पठन की कोई खास ज़रूरत नहीं होती। मगर विद्यार्थियों को भाषा पर उतना अधिकार प्राप्त न हुआ हो और पाठ भाव, विचार या भाषा और शैली की दृष्टि से कठिन या वैशिष्ट्य-पूर्ण हो, तो पढ़कर सुनाना ही लाभकारी होगा। अध्यापक जैसा उचित समझे वैसा करे।

निम्न कक्षाओं में आवश्यकतानुसार अध्यापक को पाठ दो बार भी पढ़ना चाहिए। इस दृष्टि से विद्यार्थियों के भाषा-ज्ञान को मद्देनज़र रखकर वह यह तय करे कि उसे कितनी बार पढ़कर सुनाना चाहिए।

(४) **अध्यापक कैसे पढ़े?** — पाठ के पठन से अध्यापक विद्यार्थियों के सामने 'आदर्श' प्रस्तुत करना चाहता है। इससे उनकी कई कठिनाइयाँ हल की जाती हैं और उनके लिए पाठ सुगम बन जाता है। यहाँ अध्यापक के लिए कुछ ज़रूरी सूचनाएँ पेश की गयी हैं।

(क) अध्यापक सुस्पष्ट रूप से पढ़े, जिससे हरएक शब्द का उच्चारण विद्यार्थियों के ध्यान में आ जाएगा। मगर इसका मतलब यह नहीं कि वह अत्यधिक धीमी गति से पढ़े।

(ख) आवश्यकतानुसार रुक-रुककर पढ़े, याने विराम-चिह्नों की ओर ध्यान देकर पढ़े। जहाँ अल्पविराम दिया हो, वहाँ आधा क्षण ठहरे। वाक्य पूर्ण होने के बाद अधिक ठहरे। प्रश्नार्थक या विस्मयादि-बोधक वाक्यों में अनुकूल आवाज़ या बोलने के ढंग में परिवर्तन करे, जिससे विचार या भाव सुननेवालों की सम में आ जाएँगे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(ग) अध्यापक इतने ही ज़ोर से पढ़े कि कक्षा के सब विद्यार्थी उसकी आवाज़ को अच्छी तरह सुन सकें। अधिक ज़ोर से बोलना अनावश्यक है; अध्यापक को भी उससे तकलीफ होगी और विद्यार्थियों के कानों पर भी ठीक असर नहीं होगा।

(घ) अध्यापक पढ़ने का ढंग भावानुकूल रखे। विचारों की कुछ झलक उसके मुख पर भी दिखायी दे; इससे सुननेवालों पर काफी प्रभाव होता है। क्रोध से कहे गये शब्द और शांति से बोले हुए शब्द एक-से ढंग से अगर पढ़ जाएँ, तो वह पठन प्रभावकारी नहीं होगा।

(ङ) पठन के जिन दोषों से अध्यापक विद्यार्थियों को मुक्त रखना चाहता है, वे दोष उसके अपने पठन में न दिखायी दें।

(च) अच्छे बोलने की भाँति 'अच्छा पढ़ना' भी एक कला है। प्रयत्न से उसपर प्रभुता प्राप्त की जाए।

(छ) विद्यार्थी-शिक्षक जो पाठ कक्षा में पढ़ना चाहता है, उसे पहले घर पर दो-चार बार पढ़े, जिससे प्रत्यक्ष कक्षा में उसका पठन दोषरहित रहेगा।

(ज) पाठ बड़ा हो तो वह उसके दो या अधिक हिस्से करके पढ़े। एक समय प्रायः एक ही पृष्ठ पढ़ा जाए।

(झ) वह आवश्यकतानुसार पाठ दो बार पढ़े।

(ञ) पठन के बाद अध्यापक कोई एकाध सवाल पूछकर देखे कि विद्यार्थियों ने उस मज़मून के विचारों को कहाँ तक ग्रहण किया है।

(ट) जब अध्यापक स्वयं पढ़ता होगा, तब विद्यार्थियों को सूचना दी जाए कि वे अपनी किताब की ओर भी ध्यान दें।

(ठ) किसी पाठ का गद्य-खण्ड या पद्य-खण्ड अध्यापक छपवाकर लाया हो, तो वह विद्यार्थियों में उसकी प्रतियाँ हेतुकथन के बाद ही बाँट दे और तभी सूचना देकर पठन शुरू करे। कक्षा में आते ही प्रतियों को बाँटने से विद्यार्थी प्रस्तावना आदि की ओर ध्यान नहीं देंगे।

अर्थात् ये सूचनाएँ मोटे तौर पर दी गयी हैं। यदि उनका उपयोग समयोचित किया जाए, तो ही उनसे लाभ होगा।

अपने पठन के बाद वह विद्यार्थियों से कहे, कि 'अभी जो पंक्तियाँ मैंने पढ़ी हैं, उन्हें वे मन में पढ़ें और बताये हुए सवालों के जवाब ढूंढ़ लें।'

(५) **मनोगत पठन** (silent reading) **(अ) – आवश्यकता और महत्त्व** — ज्ञानार्जन के क्षेत्र में 'पठन' का विशेष महत्त्व है और 'पठन' के क्षेत्र में 'मनोगत' पठन अधिक महत्त्वपूर्ण होता है। उच्च कक्षाओं में इसका अवलम्बन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

किया जाता है ही। फिर भी उच्च शिक्षा में उसका स्थान सर्वोपरि है। पुस्तकालय-में पढ़नेवालों का पठन 'मनोगत' ही होता है। रोज़ के अखबार प्राय: मनोगत ही पढ़े जाते हैं। जिस 'मनोगत पठन' को जीवन में इतना महत्त्वपूर्ण स्थान है, उसकी बुनियाद पाँचवीं कक्षा से डाली जाती है। अध्यापक का यह कर्तव्य होता है कि वह अपने विद्यार्थियों का इसके बारे में मार्गदर्शन करे, छोटे बालकों को मनोगत-पठन का तरीका दिखाए और इस कला में उनका विकास करे। शुरू-शुरू में बालक मनोगत पढ़ ही नहीं सकते, इसलिए खास यत्न द्वारा उनका मार्गदर्शन करे। जो विद्यार्थी इस तरह पढ़ नहीं सकते, उनकी शिक्षा-दीक्षा में कमी रह जाती है।

(आ) मनोगत पठन क्या है? – 'मनोगत पठन' को 'मूक पठन' भी कहा जाता है। यह 'मौखिक पठन (oral reading)' से भिन्न है। मनोगत पठन करनेवाला ज़ोर से नहीं पढ़ता। यह पठन कोई सुन नहीं सकता – वह पठन शान्त है, मौन, नीरव (silent) होता है। पढ़नेवाला किताब की ओर देखता रहता है, और मन में पढ़ता जाता है। अच्छा 'मनोगत पठन' वही माना जाता है, जिसमें पढ़नेवाला न गुनगुनाता है, न अपने होठों को हिलाता है। यहाँ पढ़नेवाला दृष्टि द्वारा लिपि-बद्ध मज़मून में से विचार ग्रहण करता जाता है।

(इ) मनोगत पठन की विशेषताएँ — १. मनोगत पठन करनेवाले को तकलीफ कम होती है। जब मौखिक या ज़ोर से पठन होता है, तब पढ़नेवाले को काफी तकलीफ होती है। एकाध घण्टे से ज़्यादा वक्त वह ज़ोर से नहीं पढ़ सकेगा, मगर मनोगत पढ़नेवाला अधिक देर तक आसानी से पढ़ सकता है। उच्चारण में से उसकी जो शक्ति खर्च होती है, वह मनोगत पठन में नहीं होती। २. वैसे ही मनोगत पढ़नेवाले के पास बैठे हुए अन्य व्यक्तियों को भी कुछ सुनायी नहीं देता, इसलिए उन्हें भी कोई तकलीफ नहीं होती। एक ही कमरे में बैठकर पचीसों पाठक आसानी से कई घण्टों तक पढ़ सकते हैं। ३. मनोगत पठन मौखिक पठन से अधिक शीघ्र होता है। मौखिक पठन में हरएक अक्षर का उच्चारण करना पड़ता है, इससे समय ज़्यादा लगता है; मगर मनोगत पठन में सिर्फ मनोगत व्यवहार होने से जल्द पढ़ा जा सकता है; यहाँ केवल ग्रहण करते जाने की ही क्रिया है, तो मौखिक पठन में ग्रहण के साथ-साथ उच्चारण की भी क्रिया होती है। आम तौर-पर प्रौढ़ विद्यार्थी को किसी पाठ के मौखिक पठन के लिए दस मिनिट लगते हों, तो उसके मनोगत पठन को तीन-चार मिनिटों से ज़्यादा समय नहीं लगेगा। ४. इतना होते हुए भी कुछ पाठ ऐसे होते हैं कि मौखिक पठन से उनका पाठक पर प्रभाव अधिक हो सकेगा, पाठक रसानुभूति अच्छी तरह कर सकेगा, भाषा की प्रभाव-कारिता को पढ़नेवाला अनुभव कर सकेगा। रसमय गद्य या नाटक या रसमय पद्य-खण्ड ज़ोर से पढ़ने से ही ज़्यादा असरकार मालूम होंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विद्यार्थी और मनोगत पठन : बालकों की शिक्षा में मौखिक पठन के बाद मनोगत पठन आता है। पहले वे मौखिक पठन स्वाभाविक ढंग से करने लगें। उसके बाद 'मनोगत पठन' की ओर उन्हें लाया जाए। ज़ोर से पढ़ने के आदी होने के कारण प्राथमिक अवस्था में मनोगत पढ़ने का प्रयत्न करते वक्त वे गुनगुनाएँगे; उसके बाद सिर्फ होठों का हिलाएँगे। पठन की गति भी शीघ्र नहीं होगी। शुरू में इस तरह पढ़ते हुए विचारों को ग्रहण करने में भी उन्हें कठिनाई महसूस होगी। इससे उन्हें पठन में कोई दिलचस्पी नहीं होगी और अवधान की समस्या जटिल हो जाएगी। इसलिए बड़ी सावधानी से अध्यापक को उनका पथदर्शन करना चाहिए। यथासमय वे इसके अभ्यस्त बन जाएँगे।

विद्यार्थी कक्षा में जब मनोगत पठन करनेवाले हों, तब अध्यापक निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखे —

(क) मनोगत पठन के पहले विद्यार्थी को वह पाठ अध्यापक पढ़कर सुनाए, जिससे उच्चारण आदि के बारे में उन्हें कोई कठिनाई अनुभव नहीं होगी। उच्च कक्षाओं के विद्यार्थी भाषा में काफी योग्यता रखते हैं। इसलिए उन्हें पाठ ज़बानी सुनाने की कोई खास ज़रूरत नहीं है।

(ख) जहाँ तक हो उस परिच्छेद के कठिन शब्दों को पहले ही स्पष्ट किया जाए। यदि ऐसे कठिन शब्द अधिक हों, जिनका अर्थ विद्यार्थियों के ध्यान में नहीं आता हो, तो लिखित विचारों को वे ग्रहण नहीं कर सकेंगे।

(ग) विद्यार्थियों को पठन का उद्देश्य मालूम होना चाहिए, इसलिए मनोगत पठन शुरू होने के पहले उन्हें एक या दो 'हेतु-प्रश्न' दिये जाएँ। हिन्दी के ये सवाल निम्न कक्षाओं में फलक पर लिखे जाएँ। विद्यार्थी जब चाहें तब उन्हें देख सकते हैं। मजमून पढ़ते समय वे उन्हीं प्रश्नों के जवाब ढूँढ निकालने की कोशिश करेंगे।

(घ) मनोगत पठन के लिए उनको काफी समय दें। साधारणतः अध्यापक को जितना समय लगता है, उसके दुगुना समय विद्यार्थियों को दिया जाए।

(ङ) विद्यार्थी जब पढ़ेंगे तब अध्यापक उनके बीच में से घूमता रहे और किसी विद्यार्थी को कोई शंका हो, तो उसका समाधान करे।

(च) अध्यापक मनोगत पठन के बारे में भी उनका मार्गदर्शन करे। कोई विद्यार्थी गुनगुनाता हो या होठों को हिलाता हो, तो वह उसके पास जाकर समझा दे कि ऐसे पठन का क्या सही तरीका है।

(६) **विद्यार्थी और मौखिक पठन** (oral reading) – गद्य पाठ के 'उपयोजन' में आम तौर पर विद्यार्थियों को, पढ़ाया हुआ पाठ ही पढ़ने को कहा जाता है। एक दृष्टि से पाठ की यह आवृत्ति ही होती है – यह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पाठ का और एक संस्कार है, जिससे पढ़ा हुआ पाठ आत्मसात् करने में विद्यार्थियों की सहायता भी होती है और दूसरी दृष्टि से यह एक ऐसा प्रयोग है, जिससे अध्यापक यह जान सकता है कि पाठ को विद्यार्थियों ने कहाँ तक हज़म किया है। संकलन के बाद उपयोजन के इस 'पठन' की ओर अध्यापक को यों खास ध्यान देना चाहिए —

१. भिन्न-भिन्न विद्यार्थियों से पाठ पढ़वा लिया जाए। इससे ज़्यादा विद्यार्थियों को पठन के लिए मौका मिलता है। २. पठन में कोई गलती या दोष हो, तो उसे तुरन्त दुरुस्त करा ले। ३. विद्यार्थी को मेज़ के पास बुलाकर उसे पढ़ने दे। इससे सब विद्यार्थी उसे देख सकेंगे। ४. कोई विद्यार्थी जब पढ़ेगा, तब अन्य विद्यार्थी किताब की ओर ध्यान दें। ५. जो भाषाएँ लिपि और शब्द-सम्पत्ति और उच्चारण-प्रणाली की दृष्टि से अत्यधिक भिन्न हैं, उन भाषाओं के विद्यार्थियों के प्रति अध्यापक का कर्तव्य सबसे महत्त्वपूर्ण है। उन्हें हिन्दी पर प्रभुता पाने में कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। अध्यापक उन्हें पढ़कर सुनाए और अपने साथ पढ़ने को भी कहे। परिच्छेद उनसे दोहरा लिये जाएं।

(७) **पठन में दोष : अ** — एक कक्षा के भिन्न-भिन्न बालकों को पढ़ने को कोई पाठ देकर अध्यापक उनका पठन गौर से सुने। उसे मालूम होगा कि उनके पठन में कई तरह के दोष हैं। इन दोषों को देखकर उन्हें दुरुस्त करने की कोशिश करना अध्यापक का कर्तव्य होता है। इसलिए इन दोषों का यहाँ विवेचन किया है।

पठन में दोषों का होना स्वाभाविक है। इन दोषों को शुरू-शुरू में ही हटा देना चाहिए, नहीं तो वैसे ही सदोष पठन की आदत डाली जाएगी, जिसका निर्मूलन करना आगे चलकर मुश्किल होगा।

ये दोष दो तरह के होते हैं — एक तो उच्चारण के हैं और दूसरे पठन-क्रिया के हैं। उच्चारण में कौन-सी गलतियाँ होती हैं और उन्हें कैसे दुरुस्त करना चाहिए, यह पहले ही दिखाया गया है। अब यहाँ पठन-क्रिया के कतिपय दोष दिखाये हैं, जो बालकों में प्रायः पाये जाते हैं। उनकी कारण-मीमांसा करके यह सूचित किया है कि उन्हें कैसे हटा दिया जा सकता है।

आ — पठन में दोष — १. रुक-रुककर पढ़ना, गति में अनावश्यक रुकावट होना : इस दोष के कारण पठन में एक-सी गति नहीं रहती। इससे पठन अस्वाभाविक-सा लगता है। ठीक चलना न जाननेवाला जैसे लड़खड़ाते हुए चलता है उसी तरह यहाँ पढ़नेवाला लड़खड़ाते हुए, शब्द-शब्द पर दुविधा में पड़े हुए आगे बढ़ता है। इसका परिणाम यह होता कि पढ़नेवाला और सुननेवाला दोनों भी ठीक तरह से विचारों को ग्रहण नहीं कर सकते। यह पठन प्रभावकारी कभी नहीं हो सकता।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

२. **अनावश्यक शीघ्रता या जल्दबाजी** – कुछ लोग पठन इतनी शीघ्रता से करते हैं कि उससे हरएक शब्द स्पष्ट रूप में सुनायी नहीं देता। पढ़ने-वाला अक्षरों को तो जल्द पहचानता है और शीघ्रता से उच्चारण कर सकता है फिर भी इस शीघ्रता का परिणाम यह होता है कि सुननेवालों को सब विचार ध्यान में लाने में कठिनाई होती है। अपढ़ लोगों को तो भारी कठिनाई उठानी पड़ेगी और सन्देह है कि पढ़नेवाला भी विचारों को उनकी हर बारीकी को साथ कहाँ तक ग्रहण कर पाता है। पढ़नेवाला यह न भूले कि उसका पठन सुननेवाला भी कोई है।

३. **मन्थर गति** –– कुछ विद्यार्थी अत्यधिक धीमी गति से पढ़ते हैं, एक-एक शब्द के बाद विराम लेते हुए आगे बढ़ते हैं। इससे सुननेवाले ऊब जाते हैं; वे शब्दों का परस्पर सम्बन्ध जिस गति से जोड़ने के आदी होते हैं, उतनी गति न होने के कारण उनकी मानसिक शक्ति पर एक तरह का बोझ-सा आ पड़ता है।

४. **विराम-चिह्नों का उपयोग न करना** –– विराम-चिह्न पढ़नेवाले की काफी सहायता करते हैं। कहाँ रुकना चाहिए कितने समय रुकना चाहिए, आदि की सूचना उससे मिलती है। कुछ विद्यार्थी इन बातों को ध्यान में नहीं लेते, इसलिए उनका पठन एक प्रवाह की तरह चलता है और सुननेवाले भी असमंजस में पड़ते हैं।

५. **शब्दों को छोड़ना** –– कुछ विद्यार्थी पढ़ते समय वाक्य का एकाध शब्द या शब्द में से एकाध अक्षर छोड़ देते हैं।

६. **शब्दों का पुनरुच्चार** –– कुछ विद्यार्थी किसी शब्द को एक बार पढ़ने के बाद फिर से पढ़ते हैं। संयुक्त व्यंजन से शुरू होनेवाले शब्द के पहले शब्द की इस तरह पुनरुक्ति पायी जाती है। पढ़नेवाला मानो उससे टकराकर वापस आता है और फिर आगे बढ़ता है।

७. **कुछ-का-कुछ पढ़ना** – शब्द ठीक न देखते हुए आगे बढ़ने से कुछ विद्यार्थी एक शब्द के स्थान पर दूसरा ही शब्द पढ़ते हैं। ऐसे शब्दों का लिखित और पठित आरम्भ एक-सा रहता है, मगर अन्त के अक्षर अन्दाज से पढ़े जाते हैं, इसलिए यह गलती होती है। 'इन्तज़ाम' के बदले 'इन्तज़ार' 'तरकीब' के बदले 'तरतीब' पढ़नेवालों की कमी नहीं है।

८. **अपनी ओर से जोड़ना** – जल्द पढ़ते समय कुछ विद्यार्थी अपनी ओर से भी शब्द जोड़ते हैं।

९. **अक्षर की पहचान न होने से भी पठन में स्वाभाविकता नहीं आती।**

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१०. शब्दों के हिज्जे ठीक न तोड़ना या प्रत्येक हिज्जा स्वतंत्र रूप में पढ़ना। कुछ विद्यार्थी यों पढ़ते हैं -- आबा - लवृद्ध, अस - हकार, गिर - हकट। यह तरीका गलत है।

११. पढ़ने का ढंग गलत होना - पढ़नेवाले की आवाज़ में भाव के अनुकूल परिवर्तन आवश्यक है। प्रश्नार्थक वाक्य ऐसा ही पढ़ना चाहिए, जिससे प्रश्न पूछने का आभास अनुभव हो। विषय के अनुसार गति धीमी हो। आवाज़ में आरोह-अवरोह हो।

१२. पढ़ा हुआ ध्यान में न रखना - कुछ विद्यार्थी अक्षर या शब्द तो पढ़ते जाते हैं, मगर स्वयं क्या पढ़ते हैं, यह वे ध्यान में नहीं रखते या विचारों को ग्रहण नहीं करते जाते।

इ - दोषों की कारण-मीमांसा - 'भाषा' कला है और कला को अपनाने का सर्वश्रेष्ठ मार्ग है - अनुकरण और अभ्यास। पाये हुए ज्ञान को अभ्यास द्वारा हज़म किया जाता है और आदत डाली जाती है। पठन, लेखन आदि भाषा के व्यवहार के अंग हैं। इसलिए उन्हें अपनाने का भी वही मार्ग है। इसलिए पठन के बहुतेरे दोष 'कच्ची नींव' के कारण पैदा होते हैं। 'अनुकरण' अच्छी तरह से न किया गया हो, तो बुनियाद ही कच्ची रहेगी। 'अभ्यास' पर्याप्त न हो, तो पठन-कला को अच्छी तरह से अपनाया नहीं जा सकता। इस बात को मद्देनज़र रखकर सदोष पठन के कारण यों बतलाये जा सकते हैं -- १. अध्यापक के पठन का विद्यार्थी अच्छी तरह से अनुकरण नहीं करते। २. पठन का पर्याप्त मात्रा में वे अभ्यास नहीं करते। ३. अच्छे मार्गदर्शन का अभाव होता है। 'कैसे पढ़ना चाहिए' इसके सम्बन्ध में विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करना चाहिए। उनकी **गलतियाँ** दिखाकर अध्यापक उन्हें वहीं-के-वहीं दुरुस्त करे और अभ्यास करा ले। ४. **अनवधान** - जितने अवधान से पढ़ना चाहिए, उतने से विद्यार्थी नहीं पढ़ते। इससे बहुत गलतियाँ होती हैं। ५. कुछ विद्यार्थियों की **मानसिक शक्ति में कुछ न्यूनता** रहा करती है। इसलिए अक्षरों की पहचान, उनका उच्चारण, अर्थ-ग्रहण और पहले विचार से उनका सम्बन्ध जोड़ना आदि बहुत सारे काम करने में उनका अवधान विभाजित होता है, इसलिए कार्य को हानि पहुँचती है। सब बातों की ओर अवधान रखने की चेष्टा में किसी एक या अधिक पर पर्याप्त मात्रा में ध्यान नहीं दिया जा सकेगा। ६. **बाह्य दोष** : पुस्तकों का **मुद्रण** अगर बहुत छोटे टाइप में हो, तो छोटे बालकों को अक्षरों की पहचान में कठिनाई अनुभव होगी। **विषय और भाषा की जटिलता** भी छोटे बालकों की पठन-शक्ति पर बुरा असर डालती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्राय: पठन के सारे दोषों के मूल में इनमें से कोई एक या अनेक कारण होते हैं। अध्यापकों का यह फर्ज है कि बालकों के पठन की ओर ध्यान देते हुए वे दोषों का निरीक्षण करें, उनकी कारण-मीमांसा करें और उनका निर्मूलन करने में विद्यार्थियों की मदद करें।

ई –– उपाय-योजना – विद्यार्थियों के पठन में जो दोष दिखलायी देते हैं, उनको अध्यापक दुरुस्त करने की कोशिश करें। जिन विद्यार्थियों में ये दोष पाये जाते हैं, उनकी ओर वे खास ध्यान दें। दोषों के निरीक्षण के बाद वे निम्न-लिखित उपायों का अवलम्बन करें ––

१. विद्यार्थी शब्दों, अक्षरों का उच्चारण कैसे करते हैं, यह देखकर सही उच्चारण करने में उनकी सहायता करें। विद्यार्थियों को अच्छी हिन्दी सुनने का मौका दें। उच्चारण का काफी अभ्यास करा लें। २. दो-दो चार-चार सम्बद्ध शब्द-समूहों और उसके बाद वाक्यों के पठन का काफी अभ्यास करा लें। ३. अध्यापक स्वयं आदर्श पठन करके दिखाए। अच्छे पढ़नेवालों को भी अन्य विद्यार्थियों के सामने पुस्तक पठन का मौका दिया जाए। ४. अध्यापक सहानुभूतिपूर्वक विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करें, गलतियों को समझा दें और बताएँ कि उन्हें कैसे टाला जाएँ। ५. हम पठन का अभ्यास कराएँ। गलती करनेवालों की ओर व्यक्तिगत ध्यान दें। ६. अध्यापक चाहे कितनी ही कोशिश करे, मगर जब तक विद्यार्थी स्वयं इसकी ओर अग्रसर न हों तब तक उनके दोष दुरुस्त होना मुश्किल है। विद्यार्थियों को वह अच्छे पठन का महत्त्व समझा दे और पठन में उन्हें प्रोत्साहन दे। दिलचस्पी, अवधान और प्रयत्न से पठन-कला में विद्यार्थी प्रवीण हो सकेंगे। ७. छोटे विद्यार्थियों के लिए पाठ्य-पुस्तकों का चुनाव करते वक्त अध्यापक पुस्तक का मुद्रण, टाइप आदि को भी विचार में ले।

इन बातों से अध्यापकों पर एक बड़ी ज़िम्मेवारी आ पड़ती है। अध्यापक ही अगर पठन-कला में प्रवीण न हों, तो वे बालकों के दोष कैसे दुरुस्त करेंगे? अन्धा अन्धों का मार्गदर्शन कहाँ तक कर सकेगा? इसलिए अध्यापक आत्म-निरीक्षण करके देखें और अपने दोषों को पहले दुरुस्त करें जिससे वे सुयोग्य पथदर्शक हो सकेंगे।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: 23 :

लेखन

(१) भाषा को अपनाना एक दृष्टि से उसके अभ्यास द्वारा उसकी आदत डालना है। दुनिया में अच्छी आदतों का ही सम्मान होता आया है, चाहे, वे व्यक्तिगत या समाजगत व्यवहार की हों या भाषण-लेखन के सम्बन्ध में हों। इसलिए शुद्ध भाषण और शुद्ध लेखन को ही महत्त्व दिया जाता है। शुद्ध भाषा का व्यवहार करने की क्षमता व्यक्ति की सुशिक्षा का प्रधान लक्षण है। दक्षता-पूर्वक अभ्यास करने से ही यह क्षमता प्राप्त की जा सकती है।

शिक्षा भी एक तरह का 'संस्कार' है, इसके द्वारा जो बातें आत्मसात् की जाती हैं, वे 'करो और सीखो' और 'प्रयत्न करते हुए, गलतियों को दुरुस्त करते हुए सीखो' प्रणाली से ही होती हैं। विद्यार्थी जो गलतियाँ करेंगे, उन्हें दुरुस्त करना और सही रास्ता बताना अध्यापक का फर्ज़ है। भाषा की शिक्षा देते वक्त अध्यापक भाषण, लेखन और पठन में विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करता है।

भाषण और पठन में आम तौर पर विद्यार्थी कौन-सी गलतियाँ करते हैं और ये गलतियाँ क्यों होती हैं, इसके बारे में चर्चा करते हुए, यह भी दिखाया गया है कि उनका निर्मूलन कैसे किया जा सकता है। अब रही बात लेखन की। इस अध्याय में यह दिखाने की कोशिश करने जा रहे हैं कि लेखन में विद्यार्थी कौन-सी गलतियाँ करते हैं, उसके क्या कारण हैं और उन्हें किस तरह दुरुस्त किया जा सकता है।

(२) **लेखन में दोष** — विद्यार्थी जो कुछ लिखते हैं, उसमें भिन्न-भिन्न तरह की गलतियाँ होती हैं, दोष दिखायी देते हैं। लेखन की ओर अध्यापक को हस्तलिपि, लेखन की शुद्धता, व्याकरण की दृष्टि से शुद्धता और रचना-तत्त्व आदि की दृष्टि से देखना चाहिए। इस तत्त्व के अनुसार लेखन-दोषों का विभाजन यों किया जा सकता है। —

अ — हस्तलिपि या लिखाई (hand-writing) की दृष्टि से होनेवाले दोष।

ब — व्याकरण की दृष्टि से होनेवाली गलतियाँ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

स — रचना सम्बन्धी दोष और

ड — भाषा के लेखन-तत्त्व की दृष्टि से होनेवाले दोष।

× × ×

(अ) **हस्तलिपि या लिखाई** १. विद्यार्थियों की लिखाई की **आज की अवस्था बड़ी शोचनीय** है। पन्द्रह-बीस वर्षों के पूर्व पुरानी प्रणाली के अनुसार जिन्होंने शिक्षा पायी और जो खुद उसी प्रणाली से पढ़ाते थे, वे अध्यापक विद्यार्थियों की लिखाई की ओर खास ध्यान देते थे और उसे सुन्दर और सुपाठ्य बनाने के लिए काफी मेहनत उठाते थे। पाठशालाओं में सातवीं कक्षा तक के समय-पत्रक में लिखाई के लिए रोज़ एक घण्टा नियत होता था और विद्यार्थी कलम से लिखाई का अभ्यास अध्यापक की निगरानी में करते थे। मगर आज हमारी पाठशालाओं में लिखाई के लिए उतना समय नहीं दिया जाता। प्राथमिक पाठशाला के पहले चार दर्जों तक भी इसके सम्बन्ध में विशेष कोशिश नहीं की जाती और माध्यमिक पाठशालाओं में नागरी लिपि की लिखाई के अभ्यास के लिए एक भी घण्टा नहीं खर्च किया जाता। इसका असर और क्या हो सकता है? विद्यार्थी भी स्वयंप्रेरणा से कोई कष्ट नहीं उठाते। विद्यार्थियों का अनवधान और जल्दबाज़ी भी इसका कारण है। विद्यार्थी लेखन कम करते हैं, करते हैं तो अवधान-पूर्वक नहीं करते और अध्यापक भी हस्तलिपि की दृष्टि से उनका उचित मार्गदर्शन नहीं कर सकता। निबन्ध की कापी पर यत्रतत्र 'हस्तलिपि में सुधार करो' जैसी सूचनाएँ दी जाती हैं अवश्य, मगर विद्यार्थी सुधार कैसे करें और कहाँ तक करते हैं, यह देखने के लिए अध्यापक को फ़ुरसत कहाँ? इसलिए आज के बहुतेरे विद्यार्थियों की लिखाई सुपाठ्य नहीं होती। अक्षरों में प्रमाण-बद्धता कम होती है। लेखन की शुद्धता कम होती है। लेखन में शुद्धता की दृष्टि से सैकड़ों की संख्या में गलतियाँ होती हैं। इसलिए पढ़नेवालों को काफी तकलीफ उठानी पड़ती है।

२. **सुंदर हस्तलिपि की क्या विशेषता** है? यह जाने बगैर अध्यापक और विद्यार्थी लिखाई में सुधार नहीं कर सकेंगे। उसका अनिवार्य लक्षण है **सुपाठ्यता** (legibility)— लिखा हुआ सहजता से पढ़ा जा सके। नागरी लिपि को अपनाना उतना कठिन नहीं है और अक्षरों को भी सहजता से सुपाठ्य लिखा जा सकता है। लिखाई स्पष्ट हो, दो लिपि-चिह्नों के बीच कुछ अन्तर छोड़ दें, फिर भी एक शब्द के अक्षरों में ज़्यादा अन्तर न हो। दो शब्दों के बीच अधिक अन्तर हो – हरएक शब्द एक-एक स्वतंत्र अक्षर-समूह मालूम हो। दो-दो शब्दों में जो अन्तर छोड़ दिया जाता है, वह सब जगह समान हो। हिज्जों की लम्बाई, ऊँचाई, चौड़ाई में प्रमाण-बद्धता हो। निम्न-लिखित मात्राएँ ठीक ढंग से जोड़ी जाएँ —

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ा, ि, ी, ु, ू, े, ै, ो, ौ, ं, ँ। नागरी लिपि को नये सिरे से सीखनेवाले विद्यार्थी इनमें कई गलतियाँ करते हैं। अनुस्वार ऐसा ही दें— ं, िं, ें, ैं,— । िं, ें के शुरू में नहीं; जैसा कि कुछ लोग अक्सर दिया करते हैं।

संयुक्त व्यंजनों की जोड़ करते वक्त अधिक ध्यान दें।

लिखाई के बारे में मुद्रित अक्षर आदर्श मानकर उसके अनुसार हस्तलिपि बनाने की कोशिश करें।

३. सुधार कैसे करें? हस्तलिपि में सुधार करना कोई मुश्किल बात नहीं। उसमें बुद्धिमानी की अपेक्षा प्रयत्नशीलता की ही ज़्यादा ज़रूरत है। सुपाठ्य लिखाई कला है। इसलिए लिखाई में सुधार करने के लिए अच्छी लिखाई का अनुकरण और अभ्यास करने की नितान्त आवश्यकता है।

विद्यार्थियों में खराब लिखाई की आदत डाली जाने के पहले से ही अध्यापक को सावधानी रखनी चाहिए। बुरी आदत की जड़ें उखाड़ देने की अपेक्षा बुरी आदत डाली जाने न देना ही लाभकारी होता है। इसलिए शुरू में ही अध्यापक विद्यार्थियों के सामने आदर्श लिखाई रखे और उसका अनुकरण कराये। आवश्यकतानुसार लिखाई-पुस्तकों (copy-books) को भी काम में लाया जाए। दो-दो रेखाओं के बीच लिखने की आदत शुरू में डाली जाए। शुरू में एक-एक अक्षर और उसके बाद शब्द को लिखवाया जाए। विद्यार्थी हरएक अक्षर की लेखन-पद्धति का निरीक्षण करें और अध्यापक की निगरानी में सुपाठ्य लिखाई का अभ्यास करें।

नागरी लिपिवाले विद्यार्थियों को इसमें काफी कठिनाई उठानी नहीं पड़ती। उनकी लिखाई की ओर प्राथमिक पाठशालाओं के अध्यापक ध्यान देते हैं। अन्य विद्यार्थियों का पाँचवीं कक्षा में नागरी लिपि से परिचय होता है तब तक अपनी प्रादेशिक भाषा की लिपि के वे काफी अभ्यस्त हो जाते हैं। उसी तरह सिर्फ हिन्दी के लिए ही वे नागरी का उपयोग करते हैं—जब कि मराठी भाषा-भाषी विद्यार्थी सब विषयों के लिए नागरी का उपयोग करते हैं। इसलिए उन विद्यार्थियों को मराठी भाषा-भाषियों से अधिक मेहनत उठानी पड़ेगी। फिर भी वे उससे ऊब न जाएँ। सुपाठ्य लिखाई सुशिक्षा का प्रधान लक्षण है, इसलिए उनको लिखाई में पर्याप्त मात्रा में अभ्यास करना चाहिए।

इससे यह स्पष्ट होता है कि अध्यापक द्वारा किये जानेवाले मार्गदर्शन, विद्यार्थियों द्वारा किये जानेवाले अनुकरण और अभ्यास पर हस्तलिपि का सुधार निर्भर है।

× × ×

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(ब) **व्याकरण की दृष्टि से** भी विद्यार्थियों के लिखे हुए निबन्धों, प्रश्नों के जवाबों में सैकड़ों गलतियाँ दिखायी देती हैं। और ये दोष हर कदम पर हो सकते हैं – उनकी सूची बनाना आसान नहीं है। फिर भी यहाँ कुछ विशेष दोषों का ज़िक्र किया जा रहा है। कुछ दोष ––

१. उद्देश्य – कर्म – क्रिया में उचित अन्वय का अभाव। २. गलत कारक-चिह्न का प्रयोग। ३. शब्द का गलत रूप बना लेना। ४. संज्ञा या सर्वनाम आदि का लिंग के अनुसार रूप और वाक्य में उसका गलत प्रयोग करना। ५. मिश्र या संयुक्त वाक्यों के उपवाक्यों में समुचित सम्बन्ध न रखना। ६. संयुक्त और सहायक क्रियाओं का समुचित प्रयोग न करना। ७. मुहावरे का सही प्रयोग न करना, आदि।

इसके अतिरिक्त छोटे-बड़े कई दोष विद्यार्थियों के लेखन में दिखायी देते हैं। इसका कारण यही है कि वे यह नहीं जानते कि कौन-सा प्रयोग या रूप सही है। जो रूप वे जानते हैं, उनको वाक्यों में प्रयोग करते वक्त ध्यान में नहीं रखते। असल में व्याकरण के नियम कण्ठस्थ करना एक बात है और उनपर अमल करना दूसरी बात है। विद्यार्थियों का अनवधान और लापरवाही भी इसके मूल में है। यह भी एक कारण है कि सही प्रयोग करने का अभ्यास उचित ढंग से नहीं किया जाता। संक्षेप में हम यों बता सकते हैं, कि अनवधान, सही ज्ञान का अभाव, उचित मार्गदर्शन का और उसके अनुसार सुधार करने की इच्छा का अभाव आदि कारणों से ये दोष दृढ़मूल होते जाते हैं। परीक्षकों को ऐसी उत्तर-पत्रिकाओं को जाँचना सज़ा मालूम न हो, तो ही आश्चर्य ! यह अन्त में बताया जाएगा कि इन दोषों को कैसे दूर किया जाए।

× × ×

(स) **रचना-तत्त्व की दृष्टि से दोष :** विद्यार्थियों द्वारा लिखे गये प्रश्नों के उत्तरों, निबन्धों के लेखन और व्याकरण की दृष्टि से ही गलतियाँ होती हों, सो बात नहीं; रचना-तत्त्व की दृष्टि से उनमें कम दोष नहीं दिखायी देते। शुद्ध भाषा का जितना महत्त्व है, रचना की दृष्टि से उसकी अपेक्षा लेखन का महत्त्व कम नहीं है। आम तौर पर निम्न-लिखित दोषों से लेखन का मूल्य घटता है —

अ — अनावश्यक विस्तार या काट-छाँट : अक्सर देखा जाता है कि विद्यार्थी निबन्धों या प्रश्नों के उत्तरों में पहले दो-एक या किसी विशेष विचार-तत्त्व का आवश्यकता से ज्यादा विस्तार करते हैं और अन्त में पंक्तियों की संख्या या समय की मर्यादा की ओर ध्यान आते ही अन्तिम बातों की काट-छाँट करते हैं; इससे विचार संदिग्ध रह जाते हैं। प्रमाण-बद्धता के इस अभाव के कारण पढ़नेवाले पर उसका प्रभाव अच्छा नहीं होता।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आ—कुछ आवश्यक **बातों को छोड़ दिया** जाता है और कम महत्त्व की बातों पर ज़ोर दिया जाता है।

इ — विषय-ज्ञान की दृष्टि से विद्यार्थियों की तैयारी कभी-कभी अपर्याप्त दिखायी देती है।

ई — अनावश्यक बातों से पंक्तियों की संख्या बढ़ायी जाती है।

उ — मद्दों या विचारों के अनुसार उत्तर या निबन्ध को परिच्छेदों में विभाजित नहीं किया जाता।

ऊ— मद्दों में सुसूत्रता और सुसंगति का अभाव दिखायी देता है।

ए — मद्दों को आकर्षक रूप में नहीं रखा जाता। वैसे ही आरम्भ और अन्त भी आकर्षक नहीं होता।

ऐ — अस्तव्यस्तता, हाशिया न बनाना। परिच्छेद की आरम्भ की पंक्ति के पहले थोड़ी-सी खाली जगह रखना आदि बातों की ओर ध्यान नहीं दिया जाता।

ओ — विषय को मद्देनज़र रखकर न लिखना। प्रश्न या विषय को ध्यान में लेते हुए विद्यार्थियों को लिखना चाहिए, मगर उच्च कक्षाओं के विद्यार्थी भी कभी-कभी वैसा नहीं करते।

इन दोषों का सबसे महत्त्व का कारण यह है कि विषय की दृष्टि से विद्यार्थी पूर्ण तैयारी नहीं करते। अगर कुछ बातें उन्हें मालूम हों, तो भी उन्हें आकर्षक और प्रभावकारी रूप में कैसे पेश किया जाए, इसकी तैयारी वे पहले नहीं करते। इसलिए उन्हें कुछ लिखना हो, तो बिना सोचे-विचारे वे वैसा ही लिखना आरम्भ करते हैं। लेखन की धुन में वे प्रमाद कर बैठते हैं। अध्यापकों की ओर से भी जितना मार्गदर्शन होना आवश्यक है, उतना नहीं होता; दी हुई सूचनाओं के अनुसार विद्यार्थी कहाँ तक तैयारी करते हैं, यह अच्छी तरह से नहीं देखा जाता। निबन्धों को जाँचते समय रचना-तत्त्व की अपेक्षा लेखन-शुद्धि की ओर ही ज़्यादा ध्यान दिया जाता है ओर वैसे सूचनाएँ दी जाती हैं। असल में कई विद्यार्थी यह भी नहीं जानते कि क्या बुरा या अनुचित है तथा क्या अच्छा और उचित है। इन कारणों से ऊपर लिखे अनुसार दोष विद्यार्थियों के लेखन में दिखायी देते हैं।

× × ×

(ड) लेखन की शुद्धि की दृष्टि से दोष : आजकल विद्यार्थियों का लेखन शुद्धि की दृष्टि से अत्यन्त असन्तोषकारी होता है। अध्यापक भी उससे ऊब जाते हैं और किंकर्तव्यमूढ़ हो जाते हैं। बार-बार उन्हीं गलतियों को देखकर अध्यापक अगर परेशान हो जाएँ, तो कोई अचरज नहीं। इनमें से कुछ गलतियाँ यों बतायी जा सकती हैं —

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१. ह्रस्व-दीर्घ की गलतियाँ : विद्यार्थी 'इ' और 'ई,' 'उ' और 'ऊ' की मात्राओं में गड़बड़ी कर देते हैं।

२. अनुस्वार : आवश्यक अनुस्वारों को छोड़ना और अनावश्यक देना।

३. ए, ऐ, ओ, औ की मात्राओं में गलतियाँ। कई विद्यार्थी ऐ के स्थान में 'ऍ' लिखते हैं।

४. उच्चारण से गलत धारणा करते हुए शब्द लिखना।

५. संयुक्त व्यंजनों की जोड़ उचित रूप में न करना।

६. शब्दों के अक्षर अनुचित ढंग से तोड़ना, जैसे – 'हिन्दुस्तान' के स्थान में 'हिन्दुस्तान'।

७. गलत अक्षर (हिज्जे) लिखना : जैसे – पसंद (पसंत), कागज़ (कागद)।

८. एकाध अक्षर (हिज्जा) छोड़ना।

९. लिखते वक्त पूरा-का-पूरा शब्द छोड़ना।

१०. कोई हिज्जा या शब्द दुबारा लिखना।

११. शब्द के हिज्जों में और दो शब्दों के बीच उचित खाली जगह न छोड़ना।

१२. नुक्ता आवश्यक होते हुए भी न देना और अनावश्यक होते हुए भी देना।

१३. प्रादेशिक भाषा के शब्दों का प्रयोग करना।

१४. प्रादेशिक लिपि-चिह्नों का प्रयोग करना।

१५. शिरोरेखा न लगाना।

१६. कुछ शब्द उच्चारण के अनुसार लिखना — वह (वो), बहुत (बहोत), यह (ये)।

१७. अन्त्य या बीच में भी किसी अ-कारान्त अक्षर के 'अ' का उच्चारण न होता हो, तो वहीं सिर्फ व्यंजन लिखना। जैसे — किताब (किताब्)।

१८. व्यंजन के स्थान पर 'अ' स्वर के साथ उस व्यंजन को लिखना – जैसे – जब्त (ज़बत), फर्ज़ (फरज़)।

१९. एक ही तरह के लिपि-चिह्नों का प्रयोग न करना। एक बार एक ढंग और दूसरी बार दूसरे ढंग से लिखना, जैसे :— इन्तज़ार – अिन्तज़ार, संबंध – सम्बन्ध।

२०. विराम-चिह्नों का उचित प्रयोग न करना।

२१. लिपि-चिह्नों की लम्बाई में प्रमाण-बद्धता या समानता का अभाव।

२२. आवश्यकता से बड़े या छोटे अक्षरों में लिखना।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

× × ×

(३) **कारण-मीमांसा** – गलत लिखने के आदी होने के कारण विद्यार्थी बार-बार गलतियाँ करते हैं। बुरी आदत में फँसे हुओं का सुधार करना असम्भव-सा लगता है। यहाँ जो गलतियाँ बतायी गयी हैं, इनके अतिरिक्त और कितनी ही विद्यार्थियों के लेखन में दिखायी देती हैं। मगर ऐसी बुरी आदत में विद्यार्थी क्यों फँसते हैं ?

विद्यार्थी जब लिखना सीखते हैं, तब पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता। अध्यापक या अभिभावक इसकी ओर ध्यान नहीं देते या उचित मार्गदर्शन नहीं करते। लेखन का अभ्यास कम किया जाता है। विद्यार्थियों को गलतियाँ दिखाकर तुरन्त उन्हें दुरुस्त करा लेना चाहिए, मगर वैसा नहीं किया जाता।

विद्यार्थियों का अनवधान और लापरवाही भी इसके लिए उत्तरदायी है। अक्सर देखा जाता है कि जब विद्यार्थी विचारपूर्वक लिखते हैं, तब गलतियाँ कम होती हैं। कुछ विद्यार्थी जब शीघ्र गति से लिखते जाते हैं, तब उनके लिखने में काफी अशुद्धियाँ होती हैं। कुछ गलतियाँ अज्ञान के कारण होती हैं, तो कुछ लिखने का अभ्यास अपर्याप्त होने के कारण।

विद्यार्थी जो अखबार और मासिक-पत्रिकाएँ नित्य पढ़ते हैं, उनमें भी सैकड़ों गलतियाँ दिखायी देती हैं। इसका असर यह होता है कि विद्यार्थी असमंजस में पड़ते हैं और मनचाहा लिखने लगते हैं। असल में शब्दों के वैकल्पिक रूपोंमें से किसी एक को अपनाना चाहिए। मगर विद्यार्थी सभी रूपों को ध्यान में रखते हैं और उनका प्रयोग गौर से नहीं करते। भोंगना (भोगना), लिए (लिये), जाएँगे (जाएँगे, जाएँगे) आदि में गड़बड़ी मचती है।

विद्यार्थी जैसा बोलते हैं, वैसा ही वे लिखते हैं। उनकी बोली भाषा का प्रभाव उनके लेखन पर होता है।

इस विवेचन से साफ-साफ दिखायी देगा कि लेखन में गलतियाँ क्यों होती हैं।

(४) **लेखन-सुधार :** किसी बात के दोषों का निर्मूलन करना हो, तो हमें यह देखना ज़रूरी होता है कि ये दोष क्यों पैदा होते हैं ? डॉक्टर बीमारी से स्वरूप और कारणों की चिकित्सा किये बगैर, कभी दवाइयों का प्रबन्ध नहीं कर सकता। इन कारणों को दूर करने से ही आवश्यक सुधार होने की सम्भावना ज्यादा होती है। बीमारी के निर्माण और विकास के लिए अनुकूल बनी परिस्थिति ही बदलनी होगी। यहाँ कुछ उपाय सुझाने की चेष्टा की जा रही है—

क : अंग्रेज़ी में एक कहावत है, 'prevention is better than cure' इसका मतलब है कि बीमारी का इलाज करके उसे हटा देने की कोशिश करने से उसका उद्भव ही न होने देने में सयानापन है। शुद्ध न लिख सकना भी बीमारी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

से कम नहीं है। इसलिए अध्यापकों को हम यह कहना चाहते हैं कि वे शुरू से ही विद्यार्थियों के लेखन के बारे में विशेष सतर्क रहें और उनको इस बुरी आदत से फँसने ही न दें; उनकी गलती ध्यान में आते ही उसे दुरुस्त करा लें।

ख : विद्यार्थियों को यह समझा दें कि क्या गलत है और क्या सही है। इसकी सैद्धान्तिक चर्चा की अपेक्षा प्रत्यक्ष शब्दों के उदाहरण देकर समझाना अच्छा होगा। प्रत्यक्ष उदाहरण कोरे सिद्धान्त की अपेक्षा ज़्यादा असरकार होता है।

ग : कदम-कदम पर मार्गदर्शन करें और शब्दों को शुद्ध रूप में कई बार लिखा लें।

घ : श्रुत-लेखन (dictation) और प्रति-लेखन (transcription) के अभ्यास द्वारा गलतियों को दिखाकर दुरुस्त करा लें।

ङ : अन्य विषयों के अध्यापक भी भाषा की शुद्धि की ओर ध्यान दें और भाषा के अध्यापक को सहयोग दें।

च : निबन्ध आदि के अच्छे-अच्छे नमूने विद्यार्थियों को दिखाएँ। उनके अनुकरण में निबन्ध लिखवाकर रचना-तत्त्व के सिद्धान्त समझा दें। दोष दिखाने के साथ-साथ उन्हें दुरुस्त करने का भी तरीका दिखाएँ।

छ : जिन शब्दों को लिखने में विद्यार्थी ज़्यादा गलतियाँ करते हैं, उनकी फेहरिस्त बनाएँ और हर हफ्ते में कुछ विशेष शब्दों का अभ्यास करा लें।

ज : मातृभाषा के प्रभाव के कारण विद्यार्थी जो गलतियाँ करते हैं, उनको दूर करने के लिए वैसे शब्दों की फेहरिस्त बना दें और यह समझा दें कि मातृभाषा के शब्दों से वे किस प्रकार भिन्न हैं, जैसे —

मराठी	हिन्दी	मराठी	हिन्दी
तूं	तू	जादा	ज़्यादा
मीलन	मिलन	कागद	कागज़
पसंत	पसंद	नोकर	नौकर
पत्ता	पता	मजूर	मज़दूर
हात	हाथ	हत्ती	हाथी

वैसे ही समान रूप में लिखे जानेवाले या मामूली फर्क से लिखे जानेवाले मगर अर्थ से भिन्न होनेवाले शब्दों की भी सूची बना लें और उनका फर्क समझाएँ। जैसे—

कि — की	किला — कीला	बाग — बाग़
आदि — आदी	राज़ — राज	मिल — मील
देहान्त — देहात	बिकना — बेचना	वगैरह।

ऐसी तालिकाओं को विद्यार्थियों को काफी लाभ पहुंचेगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ञ : अनवधान और लापरवाही तथा जल्दबाजी की वजह से कई दोषों का निर्माण होता है। विद्यार्थियों को शुरू से ही अवधानपूर्वक लिखने की आदत डालने की कोशिश करनी चाहिए। जो लिखा हुआ है, उसे फिर एक बार पढ़कर दुरुस्त करने का मौका उन्हें दिया जाए। उससे वे अपने आप कई गलतियों को दुरुस्त कर सकेंगे।

ञ : शुद्ध उच्चारण की ओर ध्यान दें। विद्यार्थियों का गलत उच्चारण दुरुस्त करें; नहीं तो वे वैसे ही लिखेंगे। लेखन-शुद्धि के लिए कुछ अंक नियत रखें, जिससे विद्यार्थी उन अंकों को पाने की कामना से गौर से लिखेंगे। ज्यादा गलतियाँ करनेवालों के अंक कम कर दें।

कारण-मीमांसा और सुधार के उपायों के विवेचन से मालूम होगा कि लेखन-शुद्धि जितनी बुद्धिमानी की बात है, उससे ज़्यादा अवधानपूर्वक लिखने के अभ्यास की है। अध्यापक विद्यार्थियों से कहें कि पढ़ते समय भी वे निरीक्षण करें कि कोई शब्द कैसे लिखा जाता है। अध्यापक अनुभव करेंगे कि कुछ दिनों के प्रयत्न से ही आवश्यक सुधार होना असम्भव नहीं है।

× × ×

(५) **निबन्ध आदि की जाँच** — निबन्धों और प्रश्नों को उत्तरों को जाँचते समय अध्यापकों को निम्न-लिखित बातों की ओर ध्यान देना चाहिए।

हस्तलिपि, रचना-तत्त्व, व्याकरण की दृष्टि से भाषा की शुद्धि और लेखन-शुद्धि।

ऊपर विश्लेषण किये हुए दोषों में से अगर कोई दिखायी देता हो, तो उसे विद्यार्थियों को दिखा दें और दुरुस्त करा लें। अर्थात् हर निबन्ध इतनी सूक्ष्मता से जाँचना असम्भव है, मगर अध्यापकों को यथा-सम्भव सूक्ष्मता से काम करना चाहिए।

हस्तलिपि के बारे में सूचना देना कठिन नहीं है। लिखावट को देखते ही अध्यापक बता सकेंगे कि उसमें क्या दोष है। विद्यार्थियों को वे व्यक्तिशः सुधार सुझाएँ। हर दिन किताब से दो-चार पंक्तियों की अवधानपूर्वक प्रतिलिपि अगर विद्यार्थी कर ले, तो वह सुपाठ्य लिखने में सफल हो सकेगा। अगर कोई विद्यार्थी गलत ढंग से कोई हिज्जा लिखता हो, तो सही ढंग बतलाएँ। वही हिज्जा पहले स्वतंत्र रूप में और बाद में शब्दों के रूप में कई बार लिखवाया जाए।

रचना-तत्त्व की दृष्टि से जब अध्यापक कक्षा में निबन्ध की चर्चा करते हैं, तभी आवश्यक सूचनाएँ दे सकते हैं। फलक पर मद्दे लिखें और उसके अनुसार परिच्छेद बनाकर विद्यार्थियों से लिखने को कह दें। हाशिया आदि के बारे में प्रत्यक्ष लिखते समय विद्यार्थियों को सूचना दें। विद्यार्थियों के सामने नमूनों के तौर पर कुछ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

निबन्ध पढ़ें, विद्यार्थियों के लिखे हुए भी निबन्ध पढ़ें। गलत ढंग को स्पष्ट करते हुए यह भी बतला दें कि क्या सही है। निबन्ध की तैयारी करा लेने के बाद ही विद्यार्थी अच्छी तरह से लिख सकेंगे। एकदम निबन्ध लिखने की अपेक्षा किसी विषय के एक पहलू पर शुरू में दस-बारह पंक्तियों का परिच्छेद लिखने या विचार-विस्तार करने से विद्यार्थियों को ज्यादा लाभ पहुँचेगा।

लेखन-शुद्धि की ओर ध्यान देते हुए अध्यापक गलतियों को दिखाएँ और तुरन्त दुरुस्त करा लें। प्रतिलेखन और श्रुतलेखन का अधिक-से-अधिक अभ्यास कराया जाए। समय-समय पर विशेष शब्द भी लिखवाएँ। लिखने के बाद विद्यार्थियों को फिर एक बार पढ़ने की सूचना दें, जिससे उनकी गलतियाँ कम होंगी। नीचे लिखे अनुसार संकेत-चिह्नों का उपयोग करके अध्यापक विद्यार्थियों की गलतियाँ उन्हें दिखा दें—

× गलत विचार
□ परिच्छेद बनाओ
| शब्द या अक्षर छूट गया है
ि – इ-की मात्रा, ी – ई-की मात्रा
ु – उ-की और ू – ऊ-की मात्रा
+ अनावश्यक विस्तार आदि

ऐसे संकेत-चिह्नों को विद्यार्थी अपनी कापी में लिख लें और उनके अनुसार आवश्यक सुधार करें।

विद्यार्थियों के लेखन में जो गलतियाँ विशेष रूप में दिखायी देती हों, उनके बारे में कक्षा में चर्चा करते हुए अध्यापक यह भी दिखा दें कि उन्हें कैसे टाला जा सकता है। दो-दो चार-चार विशेष गलतियों को सामने रखते हुए, उनका निर्मूलन करें। इस तरह एक ही समय सब बातों में सुधार करने की चेष्टा करने-की अपेक्षा क्रमशः प्रगति करा लेना उचित होगा।

अध्यापक यह भी ध्यान में रखें कि वे केवल गलतियों को दिखाने का काम न करें, दोषान्वेषी दृष्टि की अपेक्षा गुण-ग्राहिता को अपनाएँ और विद्यार्थियों के लेखन में जो विशेष गुण दिखायी देते हों, उनको भी कक्षा में स्पष्ट करें। इससे विद्यार्थियों को लिखने में प्रोत्साहन मिलेगा। हर निबन्ध जाँचने के बाद उसे अंक दें, जिससे विद्यार्थी यह जान सकेंगे कि वे कितने पानी में हैं।

विद्यार्थी जब लेखन का महत्त्व समझ लेंगे और अध्यापक की निगरानी में अवधान-पूर्वक लिखने लगेंगे, तब जल्द सुधार हो जाएगा।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: २४ :

हिन्दी पाठ्य-पुस्तकें

(१) **प्रस्तावना :** पाठशालाओं में जो हिन्दी की पाठ्य-पुस्तकें नियत की जाती हैं, उनके दो प्रकार होते हैं। आम तौर पर हर एक प्रदेश के सरकारी शिक्षा-विभाग की ओर से पाठ्य-क्रम नियत करके पेश किया जाता है और उसके अनुसार लेखक और सम्पादक पुस्तकें तैयार करते हैं। निम्न कक्षाओं (पाँचवीं, छठीं और सातवीं) के लिए पाठ्य-पुस्तकें खास तौर पर तैयार करनी पड़ती हैं। उनके लिए लेखक विशेष दृष्टि से पाठ लिखते हैं और कुछ पाठ (७ वीं कक्षा के लिए) भिन्न-भिन्न लेखकों के साहित्य से संकलित भी किये जाते हैं। उच्च कक्षाओं की पाठ्य-पुस्तकों का स्वरूप संकलनात्मक होता है और भिन्न-भिन्न हिन्दी लेखकों तथा कवियों की रचनाओं को उनमें स्थान दिया जाता है। चन्द लेख प्रादेशिक भाषा के साहित्यकारों की रचनाओं के अनुवाद भी होते हैं।

सरकार के शिक्षा-विभाग द्वारा नियत पाठ्य-क्रम के अनुसार तैयार की गयी पाठ्य-पुस्तकें सरकारी शिक्षा-विभाग में भेज दी जाती हैं। वहाँ सरकार-नियुक्त समिति के सदस्य उनका 'मूल्यांकन' करके अपनी सूचनाएँ शिक्षा-विभाग के अफसर के पास भेज देते हैं। उनके अनुसार सुयोग्य पुस्तकों को 'सरकारी स्वीकृति' दी जाती है। आम तौर पर सरकारी शिक्षा विभाग का यह नियम भी होता है कि सरकार-मान्य पाठशालाओं में 'स्वीकृत' पाठ्य-पुस्तकें ही नियत की जाएँ। इस तरह सरकार ही हिन्दी के अध्यापकों की एक कठिनाई दूर करती है। अब जो भिन्न-भिन्न पुस्तक-मालाएँ प्रकाशित की जाती हैं, उनमें से एक अपनी पाठशाला के लिए अध्यापक चुनते हैं। अब सरकार द्वारा ही अधिकतर पाठ्य-पुस्तकों का प्रकाशन किया जा रहा है। इस स्थिति में अध्यापकों को उन्हीं पुस्तकों को अध्यापन के लिए स्वीकार करना पड़ता है।

हिन्दी के अध्यापक भिन्न-भिन्न 'मालाएँ' मँगवाएँ, उन्हें बारीकी से पढ़ लें और सुयोग्य 'माला' को नियत करके विद्यार्थियों के हाथों में रखें। ऐसी पुस्तक-माला का चुनाव करते समय अध्यापकों को निम्नलिखित सूचनाएँ ज़रूर सहायक होंगी —

(२) पुस्तक-माला की परीक्षा करते समय उन्हें कई बातों को ध्यान में रखना चाहिए। उनमें से महत्त्व की ये हैं—(अ) वे पाठ्य-क्रम के अनुसार हैं या

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नहीं ? (ब) पाठ्य-विषय, (क) भाषा, (ड) बहिरंग : मुद्रण, अलंकरण आदि (ई) हिन्दी शिक्षा के उद्देश्य की पूर्ति में वे कहाँ तक सहायक होंगी ?

(अ) यह देखने का उत्तरदायित्व सरकारी शिक्षा-विभाग का है कि नियत पाठ्यक्रम के अनुसार पुस्तकें तैयार की गयी हैं या नहीं। इस बातों को मद्देनज़र रखकर ही पाठ्य-पुस्तकें 'मंज़ूर' की जाती हैं।

(ब) **पाठ्य-विषय :** जिन विषयों पर पाठ लिखे या चुने जाते हैं, वे विद्यार्थियों की दृष्टि से उचित होने चाहिए। ऐसे पाठ उसमें न हों, जिन्हें समझ लेने में विद्यार्थियों को कठिनाई उठानी पड़ेगी। विद्यार्थियों की उम्र, सामान्य ज्ञान, रुचियाँ, ग्रहण-शक्ति आदि को ध्यान में लेते हुए पाठों को चुनना चाहिए। पाठ्य-विषय की रचना भी विद्यार्थियों को दिलचस्प मालूम हो। 'भूदान' का आन्दोलन कितना भी अच्छा क्यों न हो, उसके सम्बन्ध में सैद्धान्तिक विवेचन का पाठ आठवीं कक्षा के लिए भी योग्य नहीं होगा।

पाठों में विविधता हो। उसमें कहानी, निबन्ध, ललित निबन्ध, वार्तालाप आदि साहित्य के सब अंगों का समावेश हो। उच्च कक्षाओं में उपन्यास, नाटक आदि के अंश भी रखें। फिर भी प्रत्येक पाठ स्वतंत्र विभाग हो। पाठ्य-पुस्तकों में कुछ कविताओं को भी स्थान दिया जाए। उच्च कक्षाओं के लिए प्राचीन कविताएँ रखी जा सकती हैं।

पाठ की लम्बाई — निम्न कक्षाओं के लिए प्रत्येक पाठ इतना छोटा हो कि उसे एक या दो घण्टों में अध्यापन पढ़ा सके। इससे बड़े पाठों से विद्यार्थी भी ऊब जाते हैं।

पाठों की संख्या — पृष्ठ-संख्या और पाठों की संख्या पाठ्य-क्रम में दी जाती है। फिर भी उससे ज्यादा पाठ पुस्तक में हों। इससे अध्यापक अपनी रुचि के अनुसार पढ़ाने के लिए पाठ आसानी से चुन सकेंगे। कविताओं की जितनी पंक्तियाँ आवश्यक हैं, उससे ज्यादा दी जाएँ।

हिन्दी की पहली पुस्तक — पाँचवीं कक्षा के लिए (जहाँ से हिन्दी की शिक्षा का आरम्भ होता है,) पाठ्य-पुस्तक तैयार करना सबसे कठिन दिखायी देता है। सम्भाषणात्मक प्रणाली से उसके पाठ पढ़ाये जाने चाहिए। इस दृष्टि से पाठों की रचना करनी चाहिए। इस पुस्तक में आरम्भ में बातचीत के पाठ देने चाहिए। चित्रों की सहायता से ऐसे पाठ पढ़ाये जाएँगे। इसलिए उक्त पुस्तक में चित्रों की संख्या भी अधिक होनी चाहिए। इन पाठों की रचना करते समय जिन सिद्धान्तों को ध्यान में रखना चाहिए, उनके सम्बन्ध में ९ वें अध्याय में जानकारी दी गयी है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पाठों का सम्पादन — निम्न कक्षाओं में पाठ विशेष दृष्टि से लिखे जाते हैं, इसलिए प्रस्तावना आदि की कम आवश्यकता रहती है, मगर उच्च कक्षाओं में जो पाठ्य-पुस्तकें होती हैं, उसके पाठों का सम्पादन करना पड़ता है। लेखक का परिचय उसके साहित्य और शैली तथा पाठ की कुछ विशेषताएँ, लेखक का पाठ्य-वस्तु के प्रति दृष्टिकोण, सन्दर्भों का आवश्यक स्पष्टीकरण आदि बातों के बारे में जानकारी पाठ के आरम्भ में संक्षेप में देना ज़रूरी है; क्योंकि अब उस पाठ के द्वारा विद्यार्थी लेखक से परिचय प्राप्त करना चाहते हैं। यथासम्भव लेखकों के फोटो भी दिये जाएँ। स्पष्टीकरणार्थ संक्षिप्त टिप्पणियों द्वारा स्वावलम्बी बनने में विद्यार्थियों की मदद की जाती है। कठिन शब्दों का कोश अन्तिम पृष्ठों में ज़ोड़ा जाए; अथवा प्रत्येक पाठ के अन्त में कठिन शब्दों, मुहावरों के अर्थ दिये जा सकते हैं। सम्पादकों को अन्त में उनपर प्रश्न, स्वाध्याय के लिए व्यवसाय आदि बातें देनी चाहिए। परीक्षा की दृष्टि से अध्ययन करते समय विद्यार्थी उस सामग्री से लाभ उठाएँगे। अगर पाठ्य-पुस्तक के अनुसार व्याकरण को भाषा की पाठ्य-पुस्तक के अन्तर्गत स्थान दिया गया हो, तो हरएक पाठ पर जो 'स्वाध्याय' दिया जाता है, उसमें व्याकरण के प्रश्न रखे जाएँ। यह व्याकरण भी क्रम-बद्ध दिया जाना चाहिए।

(क) भाषा : हिन्दी भाषा की पाठ्य-पुस्तकों की मदद से विद्यार्थी हिन्दी भाषा को अपनाएँगे। इसलिए ये पुस्तकें चलती, मुहावरेदार और व्याकरण-शुद्ध हिन्दी में लिखी हुई हों। उसकी भाषा में रोजमर्रा के सब शब्दों के प्रयोग हों। एक बार पढ़े शब्दों की उनके व्यवहार के द्वारा ही विद्यार्थी हज़म कर सकते हैं। भाषा में सुलभता से कठिनता की ओर जाने का प्रयास किया जाए। व्यवहार के लिए ज़रूरी वाक्य-रचना के सब प्रकारों का उसमें प्रयोग किया हुआ हो। हरएक पाठ में कुछ नये शब्द हों। एक पन्ने में छः-सात नये शब्द हों, तो विद्यार्थी उन्हें आसानी से हज़म कर सकते हैं। भाषा की दृष्टि से भी उसमें क्रम-बद्धता होनी चाहिए।

(ड) बहिरंग : छोटे बालकों के लिए जो पाठ्य-पुस्तकें तैयार की जाती हैं उसकी छपाई मोटे टाइप में करनी चाहिए। हिन्दी जैसी भाषा की पहली पुस्तक 'ग्रेट ब्लॅक' टाइप में छापी जाए। दूसरी, तीसरी, चौथी किताब 'ग्रेट' में छपी हुई हो। इससे विद्यार्थियों को अक्षरों की पहचान में कठिनाई नहीं महसूस होगी। शुरू-शुरू में नये शब्द पाठ के आरम्भ में छपवा दें। छोटे बालकों को चित्र में रुचि होती है। चित्रों के आधार पर नये शब्दों का भी परिचय कराया जाता है। इसलिए प्रारम्भिक पुस्तकों में चित्र काफी तादाद में हों। उच्च कक्षाओं की किताबों में चित्रों की उतनी ज़रूरत नहीं है। पुस्तक का मुद्रण आकर्षक हो। उसके लिए सफेद कागज़ का उपयोग करें। आकर्षक मुद्रण से बालकों को पुस्तकें पसंद आती हैं और अपने आप उनकी ओर वे आकर्षित होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(ई) अन्त में यह देखें कि ये पाठ्य-पुस्तकें भाषा-शिक्षा के उद्देश्य की पूर्ति में कहाँ तक सहायक हो सकती हैं। हिन्दी पढ़ाने का उद्देश्य यही है कि विद्यार्थी (भारत के होनहार नागरिक) राष्ट्रभाषा में अच्छी तरह से बोल और लिख सकें, अपने विचार दूसरों पर उसमें प्रकट कर सकें और दूसरों द्वारा प्रकट किये हुए विचारों को ग्रहण करने में समर्थ हो जाएँ। वे भारत की सम्पृक्त संस्कृति (Composite culture) का परिचय पा लें और समूचे राष्ट्र को एक बन्धन में आबद्ध करने का, एक दूसरे को समझने का साधन अपना लें।

पाठ्य-पुस्तकों को विद्यार्थी बार-बार पढ़ेंगे और उनके द्वारा ही अध्यापकों के मार्गदर्शन में भाषा को अपनाएँगे। उनके सामने भाषा के ये नमूने हैं। ये नमूने ऐसे हों जिससे हिन्दी से विद्यार्थियों का सम्यक् परिचय हो सके।

अच्छी पाठ्य-पुस्तकों की कतिपय विशेषताओं को समझा देने का अल्प-सा प्रयत्न यहाँ किया है। इनको मद्देनज़र रखते हुए अध्यापक अपनी पाठशाला के लिए पाठ्य-पुस्तकें नियत करें। पूर्णतः दोष-रहित पुस्तक-माला मिलना असम्भव है। फिर भी जो अधिक-से-अधिक दोष-रहित हो, उसे स्वीकार करने में ही औचित्य है।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: २५ :

डाल्टन-योजना और हिन्दी की शिक्षा

(१) **शिक्षा के क्षेत्र में बालक का स्थान** — आधुनिक युग मनोविज्ञान का युग कहलाता है। बालकों की शिक्षा-दीक्षा की ओर अब मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखा जाता है। अगर हम कहें कि आधुनिक शिक्षाशास्त्र की बुनियाद ही मनोविज्ञान पर डाली गयी है, शिक्षा-शास्त्र ही मनोविज्ञानात्मक बना हुआ है, तो उसमें अत्युक्ति नहीं होगी। बालक का सर्वांगीण विकास, उसकी प्रवृत्तियों के उदात्तीकरण के द्वारा उसका चरित्र-गठन, शील-संवर्धन करना शिक्षा का उद्देश्य है। इसलिए **शिक्षा-विधि का केंद्र-बिन्दु बालक** बन गया है। समाज में स्थित बालक के व्यक्तित्व का विकास करने का उत्तरदायित्व उसके अध्यापकों पर है।

(२) **समूह-गत शिक्षा और बालक** — मगर क्या आज की शिक्षा-विधि का केन्द्र-बिन्दु सच्चे अर्थों में बालक है? क्या बालक के व्यक्तित्व का विकास पूरे तौर पर होता है? क्या अध्यापक हर बालक पर ध्यान दे सकता है? साफ-साफ शब्दों में इसका जवाब 'नहीं' होगा। इसका यह कारण है कि आज की पाठशाला में दी जानेवाली शिक्षा समूह-गत (class-wise) है, व्यक्तिगत (individul) नहीं है। आज के युग में भारत में यह प्रणाली अपरिहार्य बनी हुई है। हाँ, इंग्लैंड, अमरीका जैसे सम्पन्न राष्ट्र में उसकी बुराइयों को दूर करने की कोशिश अवश्य की जा रही है, मगर भारत जैसे ज़्यादा जनसंख्यावाले और गरीब राष्ट्र में निकट भविष्य में भी इससे छुटकारा पाने की सम्भावना नहीं दिखायी दे रही है। दिन-ब-दिन हर कक्षा में एक साथ शिक्षा पानेवाले विद्यार्थियों की संख्या बढ़ायी जा रही है। ऐसी हालत में समूह-गत शिक्षा के बुरे परिणाम ही अधिक दिखायी दे रहे हैं। इससे व्यक्तिगत ध्यान देना और व्यक्तित्व का विकास होना असम्भव-सा हो गया है।

(३) **कक्षा-गत शिक्षा की दुर्बलताएँ** — **अ – आज की एक कक्षा में,** जो विद्यार्थी एक साथ शिक्षा पाते हैं, उनका बौद्धिक स्तर समान नहीं होता। उनकी ग्रहण-शक्ति और सामान्य-ज्ञान में विभिन्नता होती है। सब बालक एक-से घरेलू और सामाजिक प्रतिवेश (environment) में नहीं पलते। अतः उन सबकी प्राकृतिक प्रवृत्तियों पर एक-से संस्कार नहीं हुए होते। उनकी रुचियाँ भी भिन्न-भिन्न होती हैं। कहीं-कहीं यह भी पाया जाता है कि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उम्र की दृष्टि से कक्षा के सब बालक भिन्नता रखते हैं। हरएक की सुविधाएँ जुदा जुदा हैं और हरएक की कठिनाइयाँ वैसी ही भिन्न-भिन्न होंगी। इसलिए बालकों का यह समूह एक होते हुए भी समप्राकृतिक (homogeneous) नहीं होता, विषम-प्राकृतिक (heterogeneous) होता है। समप्राकृतिक समूह को एक ही प्रणाली से पढ़ाकर उनसे सब बालकों का विकास एक-सा किया जा सकता है।

आ : परिणाम – इस हालत में सब विद्यार्थियों की प्रगति समान गति से नहीं हो सकती। अध्यापक कितने ही कुशल क्यों न हों, वे कक्षा में हर विद्यार्थी की ओर ज्यादा ध्यान नहीं दे सकते। इसलिए हरएक के गुण का विकास और कमज़ोरी का निर्मूलन कैसे हो सकेगा ? आज की प्रणाली के अनुसार हर तीन या छः महीनों के बाद और वर्ष के अन्त में परीक्षाएँ होती हैं; उन्हें हर सत्र और हर वर्ष के भीतर नियत पाठ्यक्रम पूरा करना चाहिए और वह भी नियत घण्टों में। हरएक अध्यापक का कक्षा से सम्बन्ध विषयगत प्रणाली के कारण हर हफ्ते में कुछ घण्टों तक ही सीमित होता है। इस हालत में व्यक्तिगत अवधान देना असम्भव हुआ है। विद्यार्थियों की रुचि, ग्रहणशक्ति, बुद्धि आदि भिन्न होने के कारण कक्षा-में जो पढ़ाया जाता है, उसे वे समान रूप से ग्रहण नहीं कर सकते। मन्द बुद्धिवाले बालकों को किसी विषय को पूरा करने के लिए अगर छः महीने लगेंगे, तो बुद्धिमान् विद्यार्थी उसे दो महीनों की अवधि में पूरा कर सकते हैं। फिर भी बुद्धिमान् विद्यार्थियों को मन्द बुद्धिवाले विद्यार्थियों के साथ पढ़ना पड़ता है। उससे उनको ज्यादा समय खर्च करना पड़ता है। मन्द बुद्धिवालों को बुद्धिमान् विद्यार्थियों की गति से चलने में कठिनाई होती है। अध्यापक नियत अवधि में नियत पाठ्य-क्रम पूरा करने की कोशिश करते हैं, इसलिए वे अधिक देर तक ठहर नहीं सकते। सबकी कठिनाइयों को दूर करने के लिए आवश्यक समय भी उन्हें नहीं मिलता। परीक्षा में पाये हुए अंक आदि में अन्तर देखकर मामूली विद्यार्थियों के मन में हीनभावना (inferiority complex) जड़ें जमाने लगती है। सारांश, सामूहिक शिक्षा-पद्धति के कारण अध्यापक विद्यार्थियों की ओर व्यक्तिगत अवधान दे नहीं सकते। इस हालत में शिक्षा के उद्देश्य की पूर्ति शायद ही हो सकेगी।

(४) **नयी प्रणाली का आविष्कार** – बालक के व्यक्तिगत विकास की दृष्टि से डॉ. मॉन्टेसरी ने काफी मेहनत उठायी। पाठशाला में किये जानेवाले प्रयोगों को देखने के लिए आनेवालों में **मिस् हेलन पार्कहर्स्ट** नामक अमरीका की एक अध्यापिका थीं। उन्होंने उस वक्त (ई. १९१५) की शिक्षा-प्रणालियों की खामियों को स्पष्ट करते हुए उन्हें दूर करने की चेष्टा की और फलतः **माध्यमिक पाठशाला की कक्षाओं के लिए 'डाल्टन प्लॅन'** नामक एक योजना तैयार की। उनकी इस योजना का प्रथम प्रयोग अमरीका के 'डाल्टन' नगर में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१९२० में किया गया, जिसे देखने के लिए सैकड़ों शिक्षा-शास्त्री भी आये थे। मिस् पार्कहर्स्ट अपनी पाठशाला को '**प्रयोगशाला**' (laboratory) मानती हैं। उसमें विद्यार्थी अपने लिए 'प्रयोग' (experiments) करते हैं। हमारी पाठशालाओं की भाँति इस 'प्रयोगशाला' की कक्षाएँ 'व्याख्यान-स्थान' नहीं होतीं। उसके अनुसार विद्यार्थियों को नियत अवधि में किसी भी विषय को अध्ययन के लिए चुनने की स्वतंत्रता रहती है। दैनिक समय-पत्रक (time-table), वार्षिक परीक्षा आदि बातों से विद्यार्थियों की गति और रुचि में रुकावट नहीं डाली जाती।

(५) **संक्षेप में सिद्धान्त** — (अ) विद्यार्थियों को एक महीने का काम दिया जाता है और अपनी रुचि के अनुसार अध्ययन करते हुए वे उसे नियत अवधि के भीतर पूर्ण करेंगे। अध्यापक उनपर निगरानी रखते हुए उनका मार्गदर्शन करेंगे। (ब) व्यक्तिगत प्रयत्न के लिए पाठशाला की आधी अवधि दी जाती है और सामूहिक शिक्षा के लिए शेष समय दिया जाता है। भाषा, इतिहास, गणित आदि विषयों के लिए डाल्टन प्लॅन का प्रबन्ध होता है, तो गायन, शारीरिक-शिक्षा आदि में अन्य प्रणाली का अवलम्ब किया जाता है। (स) पाठशाला में हर विषय के लिए आवश्यक उपकरणों और साहित्य से सुसज्ज कमरा रहता है। यही प्रयोगशाला या लॅबोरेटरी है। विद्यार्थी अपनी रुचि के अनुसार उस विषय के कमरे में जाकर अध्ययन करेंगे। (ड) हरएक विषय की पाठ्य-वस्तु में कुछ ऐसा विभाग रहता है, जो हरएक विद्यार्थी को पूरा करना पड़ता है और बुद्धिमान् विद्यार्थियों को इसके अतिरिक्त ज़्यादा काम दिया जाता है। हर विषय का आवश्यक कार्य पूर्ण किये जाने के बाद ही विद्यार्थी को उत्तीर्ण समझा जाता है। कोई विद्यार्थी अगर वर्ष की अवधि के पहले भी नियत कार्य को सन्तोषकारी रीति से पूर्ण करे तो, उसे ऊँची कक्षा में भेज दिया जाता है। 'एक साल-एक कक्षा' वाले सिद्धान्त को यहाँ कोई स्थान नहीं है (इ) अध्यापक विद्यार्थियों पर निगरानी रखते हुए उनका मार्गदर्शन करते हैं और हर विद्यार्थी के कार्य का आलेख (graph) तैयार करते हैं।

(६) **संक्षेप में आलोचना** — 'डाल्टन' योजना कोई मूलतः नयी प्रणाली नहीं है; हाँ, विद्यार्थी के व्यक्तिगत विकास के लिए किया हुआ अभिनव प्रबन्ध मात्र है। प्राचीन युग में गुरुकुलों में इसी तरह से शिक्षा दी जाती थी; पिछली सदी तक ही नहीं, आज भी संस्कृत पाठशालाओं में इसी सिद्धान्त को अपनाया जाता है। इस पद्धति में जितनी अच्छाइयाँ हैं, उतनी ही वह महँगी है। हरएक विषय के लिए बड़े पैमाने पर प्रयोगशाला का प्रबन्ध करना आसान नहीं है, भारत जैसे गरीब राष्ट्र के लिए वह आज नितान्त असम्भव है। दूसरी बात यह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है कि कई एक विद्यार्थी एक साथ रहकर पढ़ें, तो ही उनमें संगठन, एकता परस्पर सहयोग, भ्रातृभाव, मिलनसारी और खिलाड़ीपन आदि जीवन की नितान्त महत्त्वपूर्ण वृत्तियों का निर्माण तथा विकास होगा, जिसके बिना मनुष्य का सामाजिक जीवन बेकार हो जाएगा। व्यक्तिगत शक्ति के अनुसार विद्यार्थी चाहे जितनी प्रगति कर ले, फिर भी उसमें 'अहं' भाव की वृद्धि होगी। एक-दूसरे से मिलते-जुलते रहने से इसी 'अहंभाव' का कँटीला स्वरूप घिस-घिसकर नष्ट होगा।

हमारा कर्तव्य यही है कि दूसरे में जो-जो अच्छाई हो, उसे हम अपनाते जाएँ।

(७) **हिन्दी की शिक्षा और डाल्टन योजना** — हमारे यहाँ की पाठशालाओं में अनेक विषय पढ़ाये जाते हैं, उनमें हिन्दी भी एक है। अगर अन्य विषयों के लिए 'डाल्टन प्लॅन' स्वीकार किया जाए, तो ही हिन्दी के लिए उसको अपनाना सम्भव है। केवल हिन्दी के हर हफ्ते में तीन-चार घण्टे के लिए उसे अपनाने की चेष्टा करना अनुचित होगा।

फिर भी उसमें जो अंश व्यवहार्य है, उसे हम स्वीकार कर सकते हैं।

हिन्दी के लिए स्वतंत्र प्रयोगशाला-स्वरूप कमरा क्यों न हो, पुस्तकालय का अच्छा प्रबन्ध किया जा सकता है। पुस्तकालय के हिन्दी विभाग में शब्दकोश, पाठ्य-पुस्तकें, शीघ्र (extensive) पठन की पुस्तकें और विद्यार्थियों के उपयुक्त अन्य पुस्तकें आदि सामग्री रखी जाए। ऊँची कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए हर महीने के हिसाब से पठन (चाहे शीघ्र-पठन की किताबों का क्यों न हो,), लेखन आदि का कार्यक्रम अध्यापक नियत कर दें और विद्यार्थियों को सौंप दें। विद्यार्थी उन्हें अपनी सुविधा और रुचि के अनुसार पूर्ण कर लें और अध्यापक उनका मार्गदर्शन करें। अध्यापक जाँच करते हुए आलेख तैयार करें। यह काम एक दृष्टि से 'स्वाध्याय' ही है।

हिन्दी भाषी प्रदेश में इस कार्य से लिए काफी गुंजाइश है, मगर अहिन्दी भाषी प्रदेशों में समय का अभाव, पाठ्य-क्रम में हिन्दी का स्थान, हिन्दी की शिक्षा का उद्देश्य और पाठशालाओं में साधन-सामग्री की कमी आदि की वजह डाल्टन योजना को पूर्णरूपेण अपनाना असम्भव दिखायी देता है।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: २६ :

पाठ-निरीक्षण

(१) **पाठ-निरीक्षण की आवश्यकता** — अध्यापन-विद्यालयों के विद्यार्थी अध्यापकों को सूचना दी जाती है कि वे दूसरे सहाध्यायियों द्वारा पढ़ाये पाठों का निरीक्षण करें। भिन्न-भिन्न परीक्षाओं के लिए परीक्षार्थी विद्यार्थियों को जो प्रत्यक्ष काम करना आवश्यक किया गया है, उसमें यह भी है कि वे स्वयं कुछ पाठ पढ़ायें और दूसरों के पाठ देखें। हिन्दी शिक्षक सनद, एस्. टी. सी., डिप्. एड्.- तथा बी. एड्, के विद्यार्थियों को कई पाठ देखने पड़ते हैं। प्राथमिक अध्यापन, विद्यालयों में भी यही नियम है। इसका महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि कोई भी अध्यापक अपने आप में परिपूर्ण नहीं होता। अध्यापन कला है और कला अभ्यास द्वारा अपनायी जाती है। इसलिए विद्यार्थी-अध्यापकों को प्रत्यक्ष पाठ पढ़ाने का अभ्यास करना पड़ता है। पाठ-निरीक्षक उनकी त्रुटियाँ दिखाकर उनको दुरुस्त करने की सूचना देते हैं और विद्यार्थी-अध्यापक इन्हीं गलतियों को दुरुस्त करते हुए (trial and error method द्वारा) अध्यापन कला में प्रगति करते हैं।

आम तौर पर शुरू में अध्यापन-विद्यालयों के प्राध्यापक एक आदर्श पाठ (model lesson) द्वारा यह दिखाते हैं कि 'पाठ कैसे पढ़ाया जाए, अध्यापन शास्त्र के सिद्धान्तों को प्रत्यक्ष काम में कैसे लाया जाए।' उनके अनुकरण में प्राप्त ज्ञान का समुचित प्रयोग करते हुए विद्यार्थी-अध्यापक पढ़ाना शुरू करते हैं।

मनुष्य गलतियाँ करता है। फिर भी उन गलतियों को जानकर उन्हें दुरुस्त करने में उसकी भलाई है। मनुष्य मात्र में यह बात दिखायी देती है कि वह अपनी त्रुटियों, कमज़ोरियों को आसानी से नहीं समझ लेता। दूसरे के दोषों को जैसे जल्द और स्पष्ट वह देख सकता है, वैसे जल्द उसके अपने दोष उसके ध्यान में नहीं आते। दूसरे की छोटी-सी-छोटी भूल भी उसकी नज़र से नहीं छूट सकती, मगर अपनी बड़ी भारी भूल को वह देख नहीं पाता। अपनी त्रुटियाँ उसके ध्यान में नहीं आतीं, इसलिए वह उन्हें दुरुस्त भी नहीं कर पाता।

हम सब एक ही साँचे में ढले होने के कारण हममें से एक दूसरे में प्रकार-गत भेद नहीं है, अंश-गत भेद है। सबमें त्रुटियाँ होती हैं, कमज़ोरियाँ होती हैं; किसी में एक होगी, तो किसी में चार। इसलिए हमेशा हम दूसरों को अपना 'दर्पण' मानें

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और दूसरों की त्रुटियों में हम अपनी त्रुटियों का ही प्रतिबिम्ब देखें। उन त्रुटियों को दुरुस्त करने में ही सयानापन है, बुद्धिमानी है।

इसलिए अपने सहपाठियों के अधिक-से-अधिक पाठों का विद्यार्थी-अध्यापक निरीक्षण करें। उनके गुणदोषों की चर्चा करें और देखें कि उन दोषों को कैसे कम कर दिया जा सकता है। यह न भूलें कि हमारे पाठों के और भी कोई निरीक्षक हैं, आलोचक हैं। दूसरों के जो गुण हैं, उनकी स्वयं सराहना करें, उनको अनुकरण द्वारा अपना लें और अच्छे अध्यापक बनें। केवल छिद्रान्वेषी दृष्टि हानिप्रद बने बिना न रहेगी। हम दूसरों के गुण अपनाएँ और उनकी जैसी कमज़ोरियाँ अपने में हों, तो उन्हें हटा देने की कोशिश करें।

पाठ के 'तंत्र और मंत्र' का विवरण पहले दिया गया है। उसके सिद्धान्तों को ध्यान में रखते हुए पाठ-निरीक्षण करनेवाले विद्यार्थी देख लें कि पाठ पढ़ानेवाला उनको कहाँ तक अमल में ला सका है। यहाँ प्रश्नों के रूप में कुछ मार्गदर्शन करने का प्रयास किया गया है। निरीक्षक उनको मद्देनजर रखकर पाठ की आलोचना करें—

(२) **पाठ-निरीक्षण कसे करें ?** १. **प्रस्तावना** पाठ के स्वरूप की दृष्टि से कहाँ तक उचित है ? [पाठ्य-विषय की भूमिका तैयार करने में कहाँ तक वह उपयुक्त है ? 'ज्ञात' का उपयोग कहाँ तक और कैसे किया गया ? वह आकर्षक हुई या नहीं ?]

हेतुकथन स्पष्ट रूप में कहाँ तक किया गया ? क्या प्रस्तावना के विषय का पाठ्य विषय से सम्बन्ध उचित रूप में जोड़ा गया है ?

२. **विषय-प्रतिपादन** — क्या अध्यापक हर बात ग्रहण करने में विद्यार्थियों की मदद कर सका ?

अध्यापक का पठन कैसे हुआ ? क्या हेतु-प्रश्न उचित थे ? क्या शब्दों का परिचय ठीक ढंग से कराया गया ? क्या अध्यापक द्वारा दिये गये उदाहरण उचित थे ? क्या नयी जानकारी ठीक ढंग से दी गयी ? विद्यार्थियों ने चर्चा में कहाँ तक भाग लिया ?

प्रश्न—क्या अध्यापक के प्रश्न 'अच्छे' थे ? (सूत्रबद्धता, रचना आदि की दृष्टि से) क्या प्रश्न अच्छी तरह और पूरी कक्षा में पूछे गये ? (प्रश्नों की विशेषताओं को ध्यान में लेकर आलोचना करें।)

संकलन — कैसे हुआ ?

उपयोजन -- पाठ के अनुरूप था या नहीं ?

स्वाध्याय — क्या वह पाठ से सम्बन्धित और सुयोग्य है ?

सामान्य -- क्या पाठ के उद्देश्य की पूर्ति में सफलता मिली है ? क्या अध्यापक ने पाठ में चित्र आदि उपकरणों का उचित ढंग से उपयोग किया है ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

क्या अध्यापक की भाषा शुद्ध थी ? फलक पर लिखी हुई बातें क्या सुव्यवस्थित, सुपाठ्य और भाषा की दृष्टि से शुद्ध थीं ? क्या अध्यापक कक्षा पर कब्जा रखने में सफल हुआ है ? क्या वह नियत समय के भीतर पाठ पूरा कर सका ? क्या उसके बोलने का ढंग तथा उच्चारण दोष-रहित था ? क्या अध्यापक में कोई बुरी आदत (mannerism) दिखायी दी ?

पाठ-प्रणाली का अवलम्ब अध्यापक ने कहाँ तक किया है ? क्या अध्यापक ने आवश्यक तैयारी की थी ?

इन बातों को मद्देनज़र रखकर पाठों का निरीक्षण करते हुए विद्यार्थी अपनी राय संक्षेप में लिखें। हर बात पर अपनी राय लिखने की कोई जरूरत नहीं। कुछ ठोस विशेषताओं और त्रुटियों के बारे में अपनी कापी में लिखें। पाठ के बाद निरीक्षक-अध्यापक के साथ चर्चा करें और उसकी राय से अपनी राय की तुलना करें। पाठ की त्रुटियों को कैसे टाला जा सकता है, इसपर भी चर्चा करें।

(३) विद्यार्थी-अध्यापकों को चन्द सूचनाएँ – पाठ-निरीक्षण करनेवाले विद्यार्थी-अध्यापक को भी पाठ के बारे में जानकारी रखना जरूरी है। तभी वह अच्छी तरह से 'निरीक्षण' कर सकेगा और पढ़ानेवाले के कार्य का उचित मूल्यांकन कर सकेगा। जहाँ तक हो उसे अपने विषय के पाठ ही निरीक्षण करने चाहिए। हिन्दी लेनेवाले विद्यार्थी अधिक-से-अधिक हिन्दी के पाठ निरीक्षण करें। अक्सर देखने में आता है कि अध्यापन-विद्यालयों के विद्यार्थी-अध्यापक निरीक्षण की नियत संख्या पूरी करने की ओर ही अधिक ध्यान देते हैं। पाठ-निरीक्षण करने के मूल में जो सिद्धान्त है, उसका महत्त्व वे नहीं जानते। वास्तव में उनको नियत संख्या से भी अधिक पाठ देखने चाहिए, तभी वे अपनी प्रगति कर सकेंगे। वे पूरा पाठ देखकर ही आलोचना करें। पक्षपात-रहित दृष्टिकोण से ही उनका निरीक्षण निर्दोष होगा। वे स्वयं छिद्रान्वेषी बनने की अपेक्षा अधिक गुणग्राही बन जाएँ। जो उनके लिए सीखने योग्य हो उसे वे जल्द से अपनाएँ।

(४) मार्गदर्शक अध्यापकों को कुछ सूचनाएँ – मार्गदर्शक अध्यापक स्वयं शुरू में और अन्तिम महीने में 'आदर्श पाठ' पढ़ाएँ और विद्यार्थियों को उस पाठ के गुण-दोषों पर चर्चा करने दें। पाठ पढ़ाने और निरीक्षण करने में वे उनकी सहायता करें। वे देखें कि विद्यार्थी उचित ढंग से पाठ देखते हैं या नहीं। जिस विद्यार्थी के पाठ अच्छे नहीं होते, उसे ज़्यादा पाठ निरीक्षण करने को कहें। अन्तिम महीने में जो विद्यार्थी-अध्यापक पाठ अच्छी तरह से पढ़ाते हों, उनके 'आलोच्य पाठों' (criticism lessons) का प्रबन्ध करें।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

: २७ :

भाषा-शिक्षा में सहायता

(१) **प्रस्तावना**—प्राचीन युग से हमारे यहाँ पाठशालाओं में भाषा-सम्बन्धी विविध व्यवसाय (exercises) विद्यार्थियों से कराये जाते हैं। इनके द्वारा भाषा पर प्रभुता पाने में विद्यार्थियों की खास मदद की जाती है। सम्भाषणात्मक प्रणाली का यहाँ बोलबाला शुरू हुआ, तब से उसके मोहजाल में फँसकर जान-बूझकर या अनजान में कुछ अध्यापकों ने इन व्यवसायों की ओर विशेष ध्यान देना छोड़ दिया। फलतः सम्भाषणात्मक प्रणाली की कमजोरियों के प्रभाव को जिनसे कम असरकार कर दिया जा सकता है, उनका भी महत्त्व न रहा और भाषा की शिक्षा के क्षेत्र में काफी अन्धाधुन्ध मची। नयी प्रणाली की ओर अब अध्यापक नयी दृष्टि से देखने लगे हैं, अन्ध-श्रद्धा का प्रभाव कम होता जा रहा है और साथ-साथ इन पूरक व्यवसायों का मूल्य अब लोगों के ध्यान में आने लगा है। इनके साथ कुछ व्यवसाय नये ज़माने की माँग के अनुसार कराये जाने लगे हैं। इन व्यवसायों (exercises) में से प्रमुख नीचे लिखे अनुसार हैं —

१. प्रतिलिपि कराना : अ – श्रुत-लेखन (Dictation)
आ – प्रतिलेखन (Transcription)
२. कण्ठस्थ या ज़बानी याद करना (Recitation)
३. अनुवाद (Translation)
४. वक्तृत्वोत्तेजक सभा (Debating Society)
५. हस्तलिखित-पत्रिकाएँ (Manuscript Magazines) और मुद्रित सामयिक-पत्रिकाएँ (Printed periodicals)
६. विविध व्यवसाय
७. पुस्तकालय और वाचनालय (Library and Reading room)
८. हिन्दी भाषा की विविध परीक्षाएँ
९. नाटक खेलना, नाट्यीकरण (dramatization)

इन व्यवसायों के महत्त्व और प्रयोग की जानकारी यहाँ दी जा रही है। अध्यापक इनके मूल्य को स्वयं समझ लें और विद्यार्थियों की शिक्षा में उनका समुचित उपयोग करें।

× × ×

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(१) प्रतिलिपि करना

इस व्यवसाय के दो प्रकार हैं—(अ) श्रुत-लेखन और (आ) पुस्तक की पंक्तियों की नकल : प्रतिलेखन।

(अ) श्रुत-लेखन

१. स्वरूप — अंग्रेज़ी में इसे 'डिक्टेशन' (Dictation) कहते हैं। अध्यापक स्वयं कुछ पंक्तियाँ चुनते हैं और एक-एक या दो-दो शब्द बताते जाते हैं और विद्यार्थी उन शब्दों को सुनते हुए लिखते जाते हैं।

२. महत्त्व और लाभ — भाषा पर प्रभुता पाने की दृष्टि से इस व्यवसाय का मूल्य बहुत बड़ा है। इसमें विद्यार्थियों को भिन्न-भिन्न काम करने पड़ते हैं और हरएक काम से खास आदत डालने में सहायता होती है। अध्यापक के बताये शब्दों को सुनना, उनको वैसे-के-वैसे ध्यान में रखना और लिखना, – ये वे काम हैं। इससे गौर से सुनने की और उनको ध्यान में रखकर वैसे-के-वैसे लिखने की आदत डाली जाती है। एक बार सुनकर हूबहू लिखना आसान नहीं हैं, उसके लिए विशेष मानसिक शक्ति और अभ्यास की ज़रूरत है। प्रत्यक्ष व्यवहार में सुनकर लिखने का काम मनुष्य को कई बार करना पड़ता है, उसकी बुनियाद इस व्यवसाय द्वारा डाली जा सकती है। लेखन की शुद्धता की दृष्टि से भी यह व्यवसाय महत्त्वपूर्ण है। लिखते वक्त विद्यार्थी जो गलतियाँ करते हैं, उन्हें अध्यापक दुरुस्त करता है। एक-एक शब्द का इस तरह लेखन किया जाए, तो शुद्धता की समस्या आसानी से सुलझायी जा सकती है। अगर इस व्यवसाय का समुचित प्रयोग किया जाए, तो विद्यार्थियों को लेखन में काफी लाभ पहुँचेगा।

३. प्रणाली — (क) शुरू-शुरू में अध्यापक केवल शब्दों को चुने और आगे चलकर छोटे-छोटे वाक्यांश और आखिर में बड़े-बड़े वाक्य बताएँ। उसी तरह निम्न कक्षाओं में ये पंक्तियाँ अधिकतर पढ़े हुए पाठ से ही चुन लें। उच्च कक्षाओं के विद्यार्थी भाषा में काफी योग्यता रखते हैं, उनके लिए अपठित (unseen) पंक्तियाँ चुन लें। इस तरह सुगमता से जटिलता की ओर जाने से लाभ ही होगा। उच्च कक्षा में बीच-बीच में शब्द भी लिखाने में कोई हानि नहीं है।

(ख) एक बार वे शब्द या पंक्तियाँ विद्यार्थियों को पढ़कर सुनाएँ और विद्यार्थी गौर से सुनें, इससे लेखन के समय वे विशेष कठिनाई नहीं अनुभव करेंगे। उच्च कक्षा में पहले पढ़ने की खास ज़रूरत नहीं होती।

(ग) लेखन के लिए जो पंक्तियाँ चुनी हैं, वे विद्यार्थियों की दृष्टि से न बहुत आसान हों और न अतीव कठिन।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(घ) पंक्तियों की संख्या इतनी न हो कि विद्यार्थी उनको लिखने से ऊब जाएँ, उनको वह 'सज़ा' न मालूम हो। निम्न कक्षाओं में पाँच-छः पंक्तियाँ काफी होंगी, तो उच्च कक्षाओं में आठ-दस तक।

(ङ) हिन्दी के लिए हर हफ्ते में चार घण्टे (Periods) दिये जाते हैं। इसलिए हफ्ते में एक बार यह व्यवसाय दिया जाए। उच्च कक्षाओं में महीने में दो बार देने से लाभ होगा।

(च) पठन के बाद विद्यार्थियों को दो-एक शब्द बताये जाएँ। उच्च कक्षाओं में पूरा वाक्यांश या दो-चार शब्दों का समूह भी दिया जाए, क्योंकि विद्यार्थियों की शक्तियाँ काफी विकसित हुई होती हैं। शब्द एक ही बार कहें। बार बार कहने से विद्यार्थी एक बार कहा हुआ शब्द सुनने की ओर ध्यान न देंगे; वे शब्द भूल-से जाते हैं।अध्यापक दुबारा बताते जाते हैं – इससे जो पहले ही लिखते जाते हैं, वे असमंजस में पड़ जाते हैं। अतः अनवधान को टाल देने के लिए अध्यापक शब्द एक ही बार बता दें।

(छ) विद्यार्थियों को सूचना दें कि पहले वे शब्द सुन लें और उसके बाद लिखें। उन्हें लिखने के लिए पर्याप्त समय दिया जाए।

(ज) सब पंक्तियों को लिखने के बाद अध्यापक फिर एक बार विद्यार्थियों को पढ़कर सुनाए और उस वक्त विद्यार्थी अपना लिखा हुआ जांच लेंगे और उन्हें कोई गलती दिखायी दे, तो उसे दुरुस्त करने की उन्हें सहूलियत दी जाए।

४. अध्यापक का उत्तरदायित्व – केवल प्रतिलिपि करा लेने से अध्यापक का उत्तरदायित्त्व पूरा नहीं होता। लेखन के बाद उसकी जाँच करना ज़रूरी है। अध्यापक स्वयं तो सबकी कापियाँ जाँच नहीं सकता। इसलिए विद्यार्थियों की कापियाँ आपस में बदलवाकर उनसे ही जाँच करायी जाए और वह स्वयं देख ले कि विद्यार्थी जाँच ठीक ढंग से कर रहे हैं या नहीं। पुस्तक देखकर विद्यार्थी उत्साह के साथ यह काम कर लेते हैं। वह गलतियों की संख्या देखे और दुरुस्त करा ले। लेखनशुद्धि-सम्बन्धी कुछ सूचनाएँ देकर गलत शब्दों को दुरुस्त करते हुए वह पाँच-पाँच बार लिखने को कह दे। इसी वक्त सुन्दर और सुपाठ्य अक्षरों की लिखावट की दृष्टि से वह सूचनाएँ दे।

(आ) प्रतिलेखन (Transcription)

१. स्वरूप — श्रुत-लेखन में अध्यापक जैसे बताते हैं, वैसे ही अक्षरशः विद्यार्थी लिख लेते हैं, तो इस तरह की प्रतिलिपि में अध्यापक सिर्फ यह बताते हैं कि कौन-सी पंक्तियाँ विद्यार्थी नकल करें और उसके बाद वे किताब में देखकर मज़मून लिखते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

२. महत्त्व और लाभ — ऐसी नकल करना भी कला है। विद्यार्थी यहाँ जो काम करते हैं, उसका विश्लेषण यों है — पढ़ना, ध्यान में रखना और लिखना। हरएक काम उन्हें दक्षता से ही करना चाहिए। इस दृष्टि से इसमें विशेष शिक्षा मिलती है। इसका व्यावहारिक लाभ भी नगण्य नहीं है। पाठशाला या कॉलेज में टिप्पणियाँ तैयार करते वक्त भी इस कला का उपयोग होता है। असल में अध्यापक फलक पर जो लिखते हैं, उसको ही लिख लेने से इस प्रतिलेखन का आरम्भ होता है। डिक्टेशन के पहले इस प्रतिलेखन का स्थान है। देखकर लिखना, सुनकर लिखने से आसान है। इस प्रतिलेखन का प्रथम अभ्यास कराया जाए और उसके बाद श्रुत-लेखन का।

३. प्रणाली — श्रुत-लेखन में जिन सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर शब्द या वाक्य चुने जाते हैं, उसका अवलम्ब यहाँ भी करें। पहले शब्द या वाक्य पढ़कर सुनाए। विद्यार्थी जब लिखते हैं, तब वे कैसे लिख रहे हैं, यह अध्यापक स्वयं उनके पास जाकर देखे और उन्हें आवश्यक सूचना दे। अनन्तर जाँच का काम 'श्रुत-लेखन' में बतलाये अनुसार किया जाए।

× × ×

इन दोनों तरह के लेखन का अध्यापक दुरुपयोग न करे। अगर बार-बार ऐसा काम दिया जाए, तो विद्यार्थियों को वह बोझ-सा मालूम होगा; उसमें विद्यार्थियों को अगर दिलचस्पी हो, तो ही उससे उन्हें लाभ होगा। वैसे ही अध्यापक अगर समय बिताने की दृष्टि से ही इसका अवलम्ब करे और लेखन की जाँच न करे, तो उससे कोई लाभ नहीं होगा। अतः वह अपनी ज़िम्मेवारी को पहचान कर इन व्यवसायों को अपनाए।

× × ×

(२) कण्ठस्थ या ज़बानी याद करना (Recitation)

१. आवश्यकता — प्राचीन युग से कण्ठस्थ करने की प्रणाली ने भारतीयों का बडा उपकार किया है। मुद्रण-कला का जब आविष्कार नहीं हुआ था, तब हमारे यहाँ पुस्तकों को कण्ठस्थ कराया जाता था। इससे ही एक पीढ़ी से दूसरी तक, दूसरी से तीसरी तक परम्परा से यहाँ कई ग्रन्थ जीवित रहे हैं। आज मुद्रण-कला का इतना विकास और प्रचार हो चुका है कि इस तरह ग्रथों को कण्ठस्थ करने की कोई ज़रूरत नहीं रही है। हम जब चाहें तब पुस्तक देख सकते हैं और अपना काम कर सकते हैं।

फिर भी शिक्षा के क्षेत्र में कण्ठस्थ करने की कला का महत्त्व कम नहीं है। मातृभाषा के अध्ययन में भी इसका अवलम्ब करने से लाभ ही होता है। भाषा के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उत्तमोत्तम नमूने ज़बानी याद करने से भाषा पर प्रभुता प्राप्त होती है। हिन्दी जैसी भाषा के अध्ययन में इसकी खास ज़रूरत महसूस होती है। हिन्दी के शब्द हमें कण्ठस्थ करने तो पड़ेंगे ही। इससे भाषा की शब्द-सम्पत्ति अपनायी जाएगी। विद्यार्थी जितना ज़्यादा ज़बानी याद करेंगे, उतना ही भाषा पर उन्हें अधिक ध्यान दिया था।

२. कण्ठस्थ क्या कराएँ? १. अर्थ समझा देने के बाद हिन्दी शब्द। २. पाठ्य-पुस्तक में से पढ़ायी हुई कविता की पंक्तियाँ। ३. पाठ्य-पुस्तक में से कुछ सूक्तियाँ या सु-विचार। ४ पाठ्य-पुस्तक के अतिरिक्त-कुछ कविताएँ। ५. पाठ्य-पुस्तक में से और उसके अतिरिक्त कुछ गद्य-खण्ड – जो शैली भाव या विचार की दृष्टि से कुछ विशेषता रखते हों। ६. कुछ अच्छे सम्भाषण (dialogues संवाद) भी अभिनीत करने की दृष्टि से कण्ठस्थ कराये जाएँ।

अध्यापक चाहें जो विद्यार्थियों से मुखोद्गत कराएँ, वे एक बात ध्यान में रखें — 'कुछ न कुछ कण्ठस्थ कराना चाहिए' – इसलिए वे विद्यार्थियों के मत्थे न मढ़ें। वे यह देखें कि कण्ठस्थ करने का मज़मून उनके उपयुक्त है। छात्र व्यवहार में जब उसकी उपयोगिता अनुभव करेंगे, तभी वे उसकी ओर अधिक ध्यान देंगे।

३. कुछ सूचनाएँ — १. अध्यापक पहले यह देख लें कि कण्ठस्थ करा लेने का हर शब्द या गद्य-पद्य-खण्ड विद्यार्थियों के ध्यान में आया है या नहीं। अगर उसके अर्थ को उन्होंने ग्रहण किया हो, तो वे उसे आसानी से ज़बानी याद कर सकेंगे। २. छोटे बालकों के लिए पाठ्य-पुस्तक के शब्द और अन्य उपयुक्त जानकारी देनेवाली बातें चुनी जाएँ। पाठ्य-पुस्तक की कविताएँ अवश्य कण्ठस्थ कराएँ। ३. हर वक्त दो-दो चार-चार पंक्तियाँ ही दें, जिससे याद करने में उन्हें कठिनाई नहीं मालूम होगी। ४. कविताएँ गेय हों। ५. कविताएँ या गद्य-खण्ड दिलचस्प हों, नीरस होने से विद्यार्थी ऊब जाएँगे। ६. कक्षा में पहले-पहल उनको अच्छी तरह दोहराएँ। ७. उच्चारण और शुद्धता की ओर खास ध्यान दें। ८. हफ्ते में कम से कम एक बार, जो कुछ विद्यार्थियों ने कण्ठस्थ किया है, उसे कक्षा में दोहरा लें। अध्यापक यह देखें कि हर विद्यार्थी ने उसे कहाँ तक याद किया है। ९. लिखित या मौखिक परीक्षा में, याद की हुई बातें लिखने या ज़बानी सुनाने के लिए कुछ अंक महफ़ूज़ रखें। इससे विद्यार्थियों के ध्यान में उसकी उपयोगिता आएगी। १०. वार्षिकोत्सव आदि के अवसर पर इसके सम्बन्ध में प्रतियोगिता और पुरस्कार रखें। ११. कण्ठस्थ की हुई पंक्तियों या सुभाषितों का प्रत्यक्ष व्यवहार में, निबन्ध आदि में कैसे उपयोग करें, यह भी समझा दें। १२. कण्ठस्थ करने की आदत बालकों में शुरू में ही डाली जाए। बार-बार पढ़कर वे सहजता से कण्ठस्थ कर सकते हैं — अनजान में ही वे यह काम कर लेते हैं — उन्हें सिर्फ प्रोत्साहन की ज़रूरत महसूस होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दिन-ब-दिन ज़बानी याद करने की ओर विद्यार्थियों की प्रवृत्ति कम होती जा रही है। अध्यापक भी इसमें विशेष ध्यान नहीं देते – उनके सामने इसके बारे में कोई खास कार्यक्रम भी नहीं होता। विद्यार्थियों और अध्यापकों के इस अनुत्साह से इस क्षेत्र में भारी गड़बड़ी दिखायी देती है; फलतः भाषा में विद्यार्थियों की योग्यता कम होती जा रही है। लिखते वक्त उनको शब्दों की कमी महसूस होती है और वे गलत या मातृभाषा के शब्द का प्रयोग करते हैं। इसमें सुधार करना चाहिए। इसलिए ज़बानी याद करने का महत्त्व अध्यापक स्वयं पहचानें और विद्यार्थियों को शब्द आदि कण्ठस्थ करने में प्रोत्साहन दें।

× × ×

(३) अनुवाद (Translation)

[अध्याय १९ वाँ (आ) देखिए।]

× × ×

(४) वक्तृत्वोत्तेजक सभा (Debating society)

१. **आवश्यकता** – भाषा प्रधानतः बोली जाती है। अच्छी भाषा में अपने विचारों को दूसरों पर प्रकट करने में अध्यापक बालकों की सहायता करते हैं। बालकों को केवल सवाल-जवाब में ही योग्यता नहीं प्राप्त करनी है। उनको किसी विषय पर अपने विचारों को सुचारु रूप में रख सकने में भी सफल होना चाहिए। इसलिए अध्यापक उन्हें हिन्दी में बोलने का ज़्यादा-से-ज़्यादा मौका दें। तब उनमें सभा में बोलने की आदत डाली जाएगी।

जनतंत्रात्मक राज्यप्रणाली में वक्तृत्व-कला को अत्यधिक महत्त्व प्राप्त हो चुका है। आधुनिक शिक्षा का उद्देश्य है – विद्यार्थियों को आदर्श नागरिक बनाना। इसलिए उनको पाठशाला से ही इस कला के सबक सिखाने चाहिए। अतः छोटे-छोटे विद्यार्थियों के लिए वक्तृत्व-सभाएँ स्थापित की जाएँ। उनमें वे बोलने का अभ्यास करेंगे। भाषा पर प्रभुता प्राप्त करने का यह एक महत्त्वपूर्ण साधन है। पाठशाला के बहिःशाल कार्यों (extra-curricular activities) में इसे महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाए।

२. **कार्य-प्रणाली** — १. हिन्दी वस्तृत्व सभा को पाठशाला में स्वतंत्र स्थान हो या वक्तृत्व-सभा का वह एक विभाग हो। पाँचवीं, छठी और सातवीं कक्षाओं के लिए एक विभाग हो, दूसरा आठवीं और नौवीं कक्षाओं के लिए और दसवीं और ग्यारहवीं के लिए तीसरा विभाग हो। सुविधा के अनुसार हर कक्षा की भी स्वतंत्र

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सभा चलायी जाए। ये सभाएँ कक्षा के हिन्दी के अध्यापक की निगरानी में चलें। उनके मार्गदर्शन का उत्तरदायित्व सम्बन्धित अध्यापक पर रहेगा। २. आरम्भ में कथा-कथन का अभ्यास कराया जाए। उसके बाद किसी घटना का वर्णन कराया जाए। उच्च कक्षाओं में विवेचनात्मक विषय दें। ३. शुरू में अध्यापक विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करें। मद्दे देकर उनसे तैयारी करा लें। शुरू-शुरू में विद्यार्थियों को लिखा हुआ मजमून पढ़ने की सहूलियत दें। आहिस्ता-आहिस्ता, पठन से कथन की ओर आ जाएँ। ४. अध्यापक विद्यार्थियों की भाषा की शुद्धता, स्पष्टता, विचार-शृंखला, तर्कसंगति आदि की दृष्टि से मार्गदर्शन करें। गलतियों को ध्यान में रखकर उन्हें सूचना दें। ५. वक्तृत्व-सभा में विद्यार्थी जबानी याद किये हुए गद्य-खण्डों, कविताओं को भी सुना सकते हैं। ६. अधिक-से-अधिक विद्यार्थियों को कक्षा में बोलने में प्रोत्साहन दें। ७. अध्यापक भी आवश्यकतानुसार इस कक्षा में भाषण दें। ८. पाठशाला के अन्य अध्यापकों और बाहर के अच्छे वक्ताओं को भी कक्षा में व्याख्यान के लिए बुलाया जाए। अच्छी हिन्दी बोलनेवाले वक्ताओं के व्याख्यानों से विद्यार्थी अच्छा उच्चारण, बोलने का ढंग अनुकरण द्वारा अपना सकेंगे। इसके अतिरिक्त उन्हें ज्ञान प्राप्त होगा, वह अलग। ऐसे व्याख्यान पर आधारित विषयों पर निबन्ध भी लिखने को दें।

× × ×

(५) हस्त-लिखित पत्रिकाएँ और मुद्रित सामयिक पत्रिकाएँ

(Manuscript Magazines and Printed Periodicals)

आजकल की पाठशालाओं के बहिःशाल कार्यों में विद्यार्थियों द्वारा प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान है। हम चाहते हैं कि विद्यार्थी हिन्दी में अच्छी तरह बोल सकें और अच्छी हिन्दी लिख सकें। बोलने का अधिक अभ्यास करने की दृष्टि से वक्तृत्व-सभा की स्थापना की जाती है। लेखन-कला में योग्यता बढ़ाने की दृष्टि से हरएक पाठशाला में हिन्दी की स्वतंत्र हस्त-लिखित पत्रिका प्रकाशित की जाए। विद्यार्थियों में रचनात्मक शक्ति होती है। साहित्य पढ़कर वे स्वयं रचना करने की ओर प्रवृत्त होते हैं। कोई विद्यार्थी आँखों देखी घटना अनूठे ढंग से वर्णन कर सकता है, तो कोई दूसरा कहानी लिख सकता है। यह कृतित्व सिर्फ मातृभाषा तक ही सीमित न हो। राष्ट्रभाषा हिन्दी में भी उसका उपयोग किया जाना चाहिए। आज के छोटे विद्यार्थियों में से ही कल के प्रेमचन्द, सुदर्शन, प्रसाद सामने आनेवाले हैं। इन होनहार कवि-लेखकों को अपनी कलम की ताकत आजमाने और विकसित करने का मौका न मिले, तो वह नष्ट होगी। अध्यापकों का कर्तव्य है क वे विद्यार्थियों को स्वतंत्र रूप में लेखन करने में प्रोत्साहन दें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कुछ विद्यार्थी निबन्ध, कहानियाँ, कविताएँ लिखते हैं, अच्छे-अच्छे चित्र खींचते हैं, मगर उनकी इन रचनाओं को सामयिक पत्रिकाओं में स्थान मिलना असम्भव होता है। उनकी इस कला को मुरझाने देना हानिकर होगा। इसलिए पाठशाला में ही पत्रिकाएँ प्रकाशित करें। मुद्रित पत्रिका में मर्यादित प्रमाण में ही लेख प्रकाशित किये जा सकते हैं, इसलिए विद्यार्थियों के लिए एक स्वतंत्र हिन्दी पत्रिका होनी चाहिए। इसमें ये लेख लिखे जाएँगे। उन्हें लेखन, चित्र-कला, अलंकरण आदि में प्रोत्साहन मिलेगा, उनकी रचनात्मक शक्ति का विकास होगा और उन्हें स्वतंत्र रूप में पत्रिकाएँ चलाने की शिक्षा मिलेगी। हिन्दी के अध्यापक उनका जो मार्गदर्शन करेंगे उससे उनकी भाषा में सुधार होगा। उसमें अगर संकलनात्मक विभाग रखा जाए, तो हिन्दी पत्रिकाओं को पढ़ने की प्रवृत्ति बढ़ेगी। इस प्रोत्साहन से वे पठन-लेखन में काफी प्रगति कर पाएँगे।

अध्यापक क्या करें? १. पाठशाला में हिन्दी की स्वतंत्र हस्त-लिखित (पाक्षिक व मासिक) पत्रिका प्रकाशित करें। मुद्रित सामयिक पत्रिका में हिन्दी के लिए कुछ पन्ने महफ़ूज़ रखें। कोई स्वतंत्र कक्षा-गत पत्रिका प्रसिद्ध की जाती हो, तो उसमें हिन्दी विभाग भी रखा जाए। २. हस्त-लिखित हिन्दी पत्रिकाओं का सम्पादन स्वयं विद्यार्थी करें और अध्यापक उनका मार्गदर्शन करें। मुद्रित पत्रिका के सम्पादक-मण्डल में एक हिन्दी अध्यापक की भी नियुक्ति की जाए। ३. अध्यापक विद्यार्थियों को हिन्दी में लिखने में प्रोत्साहन दें। उनके लिखे हुए लेख जाँच कर दुरुस्त करें या नये रूप में लिखवा लें। उनको विषय या मद्दे देकर लेख तैयार करा लें। ४. छोटी-छोटी कहानियाँ, निबन्ध, मातृभाषा की कुछ पंक्तियों का अनुवाद प्रकाशित किया जाए। ५. भिन्न-भिन्न कामों का विद्यार्थी बँटवारा करें। हस्त-लिखित पत्रिका में से कुछ लेखों को मुद्रित पत्रिका में स्थान दें। ७. सुपाठ्य और सुन्दर लिखावट, भाषा की शुद्धता और नियमितता की ओर विशेष ध्यान दें। ८. **पत्रिकाओं की लेखन-सामग्री** : इन पत्रिकाओं में नीचे लिखे अनुसार मज़मून प्रकाशित करें — ज़रूरत और सुविधा के मुताबिक इसमें परिवर्तन करें।

(अ) विद्यार्थियों का लिखा साहित्य : निबन्ध, कहानियाँ आदि। (आ) अध्यापकों के लेख। (इ) हिन्दी साहित्यिकों (जिनके लेख पाठ्य-पुस्तक में संग्रहित हैं) के जीवन की दिलचस्प घटनाएँ या संक्षेप में जीवनियाँ। (ई) कक्षा में लिखे हुए हिन्दी निबन्धों या पत्रों में से सर्वोत्कृष्ट रचना। (उ) हिन्दी की पाठ्य-पुस्तक के किसी पाठ के बारे में आवश्यक सन्दर्भ, स्पष्टीकरण आदि जानकारी। (ऊ) मातृभाषा से अनुवाद। (ए) सब कक्षाओं की दृष्टि से उपयुक्त भाषा-सम्बन्धी मार्गदर्शनात्मक लेख : लेखन की गलतियाँ और उन्हें कैसे दुरुस्त करें या विद्यार्थी कैसे टाल सकते हैं। वाक्य-रचना के विशेष प्रयोगों का स्पष्टीकरण। (ऐ) व्याख्यानों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

या वक्तृत्व-सभा के कार्य का विवरण। (ओ) पाठ्य-पुस्तक की कठिन गद्य-पंक्तियों और पद्य-खण्डों का विस्तृत अर्थ-स्पष्टीकरण। (औ) विद्यार्थियों की हिन्दी की दृष्टि से कठिनाइयाँ और उनका निराकरण। (क) व्यावहारिक शब्द-कोश: जैसे-घर के बर्तन, साग-तरकारी, फल, लेखन-साहित्य आदि। इससे नये सिरे से हिन्दी सीखनेवालों को भी लाभ होगा। (ख) हिन्दी परीक्षाओं में शामिल होनेवाले विद्यार्थियों के लिए उपयुक्त सामग्री आदि।

संक्षेप में यों कहा जा सकता है कि हिन्दी भाषा में विद्यार्थियों को जिससे अधिक योग्यता प्राप्त हो सकेगी, उस दृष्टि से पत्रिकाओं द्वारा उनके सामने सामग्री रखी जाए।

× × ×

(६) विविध व्यवसाय (Exercises)

अध्यापक हिन्दी भाषा अपनाने में विद्यार्थियों की हर तरह से मदद करें। आम तौर पर देखा जाता है कि विद्यार्थियों की हिन्दी शब्द-सम्पत्ति बहुत ही कम रहा करती है। व्याकरण की दृष्टि से तो वे अनगिनत गलतियाँ करते हैं। इनको दुरुस्त करने का एकमेव उपाय है — विद्यार्थियों पर भाषा का अधिक-से-अधिक संस्कार करना। अध्यापक ऐसे उपायों का आयोजन करें, जिससे हिन्दी शब्द उनके सामने हमेशा रहेंगे, उनको याद करने में उन्हें प्रोत्साहन मिलेगा और यह काम सहज तया हो सकता है। विद्यार्थियों की क्रीड़ासक्ति, क्रियाशीलता और रचनात्मक प्रवृत्ति आदि शक्तियाँ कहाँ काम में लायी जा सकती हैं, उनका उदात्तीकरण करके उनसे लाभ उठाया जा सकता है। उन भिन्न उपायों में से यहाँ कतिपय पेश किये हैं —

१. भिन्न-भिन्न सूचियाँ — अ — निम्न कक्षाओं में गिनती, दिन, महीने, मौसम आदि के नाम; फलों, तरकारियों, पेशेवरों, धातुओं के नाम।

आ — भाषा की शुद्धता की दृष्टि से आवश्यक जानकारी, कारकों के रूप, संज्ञाओं के रूप, लेखन की दृष्टि से कुछ शब्द।

इ — कुछ सूक्तियों और कहावतों का संग्रह।

ई — हिन्दी के कुछ साहित्यिकों और समाचार-पत्रों, मासिक पत्रिकाओं की सूची।

इनसे विद्यार्थियों का हिन्दी सम्बन्धी सामान्य ज्ञान और शब्द-भण्डार बढ़ेगा। जिस कक्षा के लिए जो उपयुक्त होगा, उसे उस कक्षा में रखा जाए। एक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बार अगर यह सामग्री तैयार की जाए, तो कई साल तक वह पाठशाला में रह सकती है। इसकी तैयारी स्वयं विद्यार्थी अध्यापकों की निगरानी में कर सकते हैं।

२. **विविध प्रतियोगिताएँ** — 'शिक्षा में क्रीड़ासक्ति के प्रयोग' (Playway in education) के सिद्धान्त के अनुसार हिन्दी के क्षेत्र में भी बालकों की क्रीड़ासक्ति का उदात्तीकरण करके उपयोग किया जा सकता है। ये व्यवसाय विविध तरह के होंगे — सिर्फ विवेकशील संयोजक की कमी है। (अ) विद्यार्थी शब्दों और कविताओं को कण्ठस्थ करते हैं। कक्षा में दो दल बनाकर कविताओं के **पठन की प्रतियोगिता** रखी जा सकती है। एक दल का कोई खिलाड़ी कोई कविता सुनाएगा। उस कविता के अन्त्य अक्षर से प्रारम्भ होनेवाली कोई कविता दूसरे दल की ओर से सुनायी जाएगी। इसी तरह यह सिलसिला जारी रहेगा। (आ) **शब्द-स्पर्धा** भी रखी जा सकती है। एक ही अक्षर से शुरू होनेवाले शब्दों को लिखना या दिये हुए शब्द के अन्त्य अक्षर से आरम्भ होनेवाले शब्द लिखना। (इ) शब्दों की **पहेलियाँ** तैयार करना। (ई) किसी शब्द का प्रयोग करते हुए भिन्न-भिन्न मुहावरे तैयार करना; जैसे — **नाक** से – नाक कटना, नाक रखना, नाकों दम होना आदि। (उ) भिन्न-भिन्न शब्दों को देकर उनमें उचित अन्वय प्रस्थापित करते हुए एक वाक्य बनाना। (ऊ) एक ही शब्द का भिन्न-भिन्न अर्थों से वाक्यों में प्रयोग करना : जैसे — **कल** : मैं **कल** पुस्तक पढ़ता था। वह **कल** बम्बई जाएगा। आज का ज़माना **कल**-कारखानों का है। आदि। (ए) एक शब्द से अनेक शब्द बनाना, जैसे — ज़मीन, जमींदार, ज़मींदारी। (ऐ) दो या तीन व्यंजनों से स्वरों की सहायता से भिन्न-भिन्न (सार्थ) शब्द तैयार करना : जैसे — बाग, बागी, बाँग, बैग आदि। चलना, चलन, चाल आदि।

इस तरह विविध व्यवसायों को तैयार किया जा सकता है। फुरसत के अनुसार इनका उपयोग किया जाए। अध्यापक ध्यान में रखें कि उनको इन व्यवसायों का प्रयोग पूर्व-नियोजन के साथ करना चाहिए। वे इसका महत्त्व देखें और इसे हँसी-मज़ाक का विषय न बनाएँ। निम्न कक्षाओं में ये व्यवसाय ज़्यादा उपयुक्त मालूम होंगे। विद्यार्थी भी इसमें उत्साह से शरीक होंगे और पहले सूचित किया जाए, तो वे तैयारी करके कक्षा में आएँगे। वे शब्दों और कविताओं को ज़बानी याद करने की कोशिश करेंगे।

३. विद्यार्थी छोटे-छोटे नाटक भी खेल सकते हैं। सभा-समारोह की दृष्टि से वे उपयुक्त होंगे। पाठ्य-पुस्तक में से या अन्य पुस्तक से कोई दो-एक संवाद चुनें और उनका अभिनय करा लें। नाट्य-छटा (dramatic monologue), स्वगत भाषण (soliloquy) को भी दोहराया जा सकता है।

× × ×

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(७) पुस्तकालय और वाचनालय

१ आवश्यकता — Reading makes a man wise. पठन से मनुष्य चतुर बनता है। विद्यार्थी के जीवन में अध्यापक उसे जो ज्ञान प्रत्यक्ष देते हैं, वह जीवन भर के लिए काफी नहीं होता; उससे कई गुना ज्यादा ज्ञान उसे स्वावलम्बी होकर प्राप्त करना पड़ता है। यह ज्ञान उसे ग्रन्थों से मिलता है। ग्रन्थ ही मनुष्य के सच्चे पथदर्शक हैं, सच्चे मित्र हैं, सच्चे गुरु हैं। उनके आधार पर ही वह ज्ञान के आलोक में जीवन की कठिनाइयों का मुकाबला कर सकता है। जीवन-पथ के पथिक को ग्रन्थ ही सम्बल देते हैं, जिसके आधार पर वह आत्मविश्वास-पूर्वक कदम-कदम आगे बढ़ सकता है। ऐसे मार्गदर्शकों से विद्यार्थियों का परिचय पाठशाला में ही होना आवश्यक है।

ज्ञानार्जन के साथ-साथ विद्यार्थियों को पुस्तकें पढ़कर अद्‌भुत आनन्द प्राप्त होता है, पुस्तकों के साथ वह एक अज़ीब दुनिया में प्रवेश करता है। साहित्य का आनन्द ब्रह्मानन्द सहोदर माना गया है। ऐसे साहित्य से परिचय कराकर उस आनन्द का आस्वाद करने में बालकों को समर्थ बनने में अध्यापक उनकी सहायता कर सकते हैं। इससे ध्यान में आएगा कि पाठशाला में पुस्तकालय की नितान्त आवश्यकता होती है।

इसके अतिरिक्त पठन से पाठक का मन सुसंस्कृत बनता है, उसकी अभिरुचि परिमार्जित होती है। जीवन की ओर वह एक खास दृष्टिकोण से देखने लगता है। ग्रन्थ उसे दुःख में सान्त्वना देते हैं, उसको प्रयत्न में दृढ़ता प्रदान करते हैं। पुस्तकों के पठन से जो लाभ होते हैं, उसका वर्णन अधिक करने की कोई ज़रूरत नहीं।

सिर्फ एक बात की ओर संकेत किये बिना नहीं रहा जाता। पठन से विद्यार्थियों का भाषा-ज्ञान भी बढ़ता है, वे भाषा पर अधिकार प्राप्त कर सकते हैं। हिन्दी पुस्तकों के पठन से विद्यार्थी हिन्दी की भिन्न-भिन्न शैलियों से परिचय पाएगा, उसका शब्द-भण्डार समृद्ध होगा, उसकी भाषा भी परिमार्जित बनेगी। वह हिन्दी में सफलता से व्यवहार कर सकेगा। इन बातों को मद्देनज़र रखते हुए पाठशाला में अध्यापक पुस्तकालय की नींव डालें। बहिःशाल कार्य में पुस्तकालय का स्थान ऊँचा है।

२ पुस्तकालय में हिन्दी विभाग — पाठशाला के पुस्तकालय के अन्तर्गत हिन्दी विभाग का निर्माण किया जाए। बदकिस्मती से हमारी कई पाठशालाओं के पुस्तकालयों की हालत दयनीय है, हिन्दी विभाग की दुरवस्था शब्दातीत है। फिर भी अध्यापकों को इसके बारे में कोशिश करनी चाहिए।

हिन्दी विभाग में कौन-सी पुस्तकें हों? यह भी महत्त्वपूर्ण सवाल है। विद्यार्थियों के भाषाज्ञान की दृष्टि से पुस्तकों का चुनाव किया जाए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(अ) विद्यार्थियों की रुचि को ध्यान में लेते हुए अध्यापक पर्याप्त मात्रा में बाल-साहित्य पुस्तकालय में रखें। पाँचवीं, छठी और सातवीं कक्षाओं के विद्यार्थी इससे लाभ उठा सकते हैं। ये विद्यार्थी मातृभाषा की पुस्तकें भी अभी-अभी पढ़ना शुरू करते हैं। इसलिए दिलचस्प कहानियों की आसान से आसान हिन्दी में लिखी हुई किताबें इकट्ठा करें। हिन्दी भाषा-भाषी बालक जिन किताबों को पढ़ सकते हैं, उन किताबों को अहिन्दी भाषा-भाषी बालक शायद ही पढ सकेंगे। जब वे ये किताबें पढ़ सकने की योग्यता पाते हैं – आठवीं कक्षा में आने के बाद, तब उनको कौए-चिड़ियों की कहानियों में कोई दिलचस्पी नहीं होती। इसलिए अहिन्दी प्रदेशों के बालकों के लिए सुयोग्य पुस्तकें चुनना कठिन होता है। ऐसी किताबों की कमी हमारी पहली कठिनाई है। अतः अध्यापक प्राप्य पुस्तकों में से कुछ-न-कुछ अवश्य चुन लें।

(आ) उच्च कक्षाओं के लिए आसान हिन्दी में लिखी हुई पुस्तकें चुन लें। उनका पठन विद्यार्थी अपनी रुचि और फ़ुरसत के अनुसार करेंगे। इसलिए अगर भाषा की कठिनाई वे महसूस करने लगें तो उनको पढ़ने में उन्हें कोई उत्साह नहीं होगा।

(इ) कथा-साहित्य के साथ छोटे-छोटे निबन्ध-संग्रह, विद्यार्थियों की दृष्टि से उपयुक्त नाटक या एकांकी-संग्रह, राष्ट्र-निर्माताओं की (बालकों के लिए लिखी हुई) जीवनियाँ आदि पुस्तकें चुनी जाएँ।

(ई) प्रादेशिक भाषा की कोई पुस्तक हिन्दी में अनुवादित हुई हो, तो उसे और उस प्रादेशिक भाषा की पुस्तक को रखें – सम्भव है कि कोई उत्साही विद्यार्थी उन दोनों को साथ-साथ पढ़ लेगा।

(उ) हिन्दी की पाठच-पुस्तकें उसमें रखें। इससे गरीब विद्यार्थी लाभ उठा सकेंगे।

(ऊ) पाठशालाओं के लिए मंजूर की हुई अन्य पुस्तक-मालाओं को भी पुस्तकालय में स्थान दें। उनका संकलन और सम्पादन विशेष दृष्टि से किया जाता है, इसलिए उनके पठन से विद्यार्थियों को लाभ होगा।

(ए) छोटे-बड़े शब्दकोश रखें, जैसे – हिन्दी शब्द-सागर या संक्षित हिन्दी शब्द-सागर, भाषा शब्दकोश, हिन्दी-मराठी (या अन्य प्रादेशिक भाषा) शब्दकोश, उर्दू-हिन्दी शब्दकोश, मुहावरों और कहावतों का कोश, प्रादेशिक भाषा-हिन्दी कोश (जैसे मराठी-हिन्दी शब्दकोश)

३ पुस्तकालय का व्यावहारिक उपयोग — वास्तव में स्थूल या शीघ्र पठन की पुस्तकें कक्षा में ही विद्यार्थियों को पढ़नी चाहिए। इससे अध्यापक उनपर निगरानी रखते हुए उनका मार्गदर्शन कर सकते हैं। पुस्तकालय से ऐसी पुस्तकें

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लेकर वे पढ़ सकेंगे। हिन्दी या अन्य भाषा की पढ़ाई को जो घण्टे दिये जाते हैं – उनमें से एक घण्टा पुस्तक-पठन के लिए देना चाहिए। हिन्दी के लिए जितने घण्टे आवश्यक हैं, उतने नहीं मिलते। इसलिए आदर्श के तौर पर 'ग्रन्थालय-समय' की कल्पना यद्यपि ठीक हो, फिर भी व्यवहार्य नहीं दिखायी देती। हर हफ्ते में एक घण्टा देने की अपेक्षा पंद्रह दिनों में या महीने में दिया जा सकता है।

और एक सुझाव है – अगर हिन्दी के या अन्य अध्यापक अनुपस्थित हो तो वह समय तो बेकार कट जाता है। ऐसे घण्टे हर कक्षा को महीने में (हिन्दी और अन्य विषयों को लेकर) दो-तीन अवश्य मिलते हैं। उनका उपयोग पुस्तकालय की किताबें पढ़ने के लिए अवश्य किया जा सकता है। ये ही उस कक्षा के पुस्तकालय के लिए घण्टे (लायब्ररी पिरियड्स) होंगे।

ऐसे काम भी पूर्वनियोजित होने चाहिए। याने ऐसे समय कौन-सी पुस्तकें विद्यार्थियों को पढ़ने दी जाएँ, यह शुरू में ही तय किया जाए। ये किताबें शीघ्र पठन के लिए हों या विद्यार्थियों के उपयुक्त अन्य भी हों। जहाँ तक हो पढ़े हुए हिस्से का सार लिखने को कहा जाए, जिससे विद्यार्थी अवधानपूर्वक पढ़ेंगे और उन्हें पठन और लेखन का भी अभ्यास होगा। कई पाठशालाओं में 'बुलेटिन बॅग्ज' रखी जाती हैं और उनमें से हरएक में एक ही किताब की २० से ४० प्रतियाँ होती हैं और ऐसे समय विद्यार्थियों को दी जाती हैं। इस उपक्रम का अनुकरण करने से विद्यार्थियों को काफी लाभ पहुँचता है। इससे अन्यथा बेकार जानेवाले समय का सदुपयोग भी होता है और विद्यार्थियों को पठन का अभ्यास और ज्ञान-प्राप्ति भी होगी।

४ **वाचनालय में हिन्दी-विभाग** — वाचनालय पुस्तकालय के अन्तर्गत होता है। प्रादेशिक भाषा के अखबारों और सामयिक पत्रिकाओं के साथ-साथ हिन्दी का कोई-न-कोई समाचार-पत्र और कुछ विद्यार्थियों के उपयुक्त सामयिक पत्रिकाएँ मँगवाएँ। इससे चलती हिन्दी से, रोज़मर्रा की उपयुक्त शब्द-सम्पत्ति से विद्यार्थियों का परिचय होगा।

अध्यापक स्वयं हिन्दी समाचार-पत्र पढ़ें और उनमें से कुछ विभाग पढ़ने की सिफारिश विद्यार्थियों से करें। उनमें से कुछ विभाग काटकर पुस्तकालय के काँच-फलक पर भी चिपका दें, जिससे सब छात्रों का ध्यान उसकी ओर आकृष्ट हो जाएगा। किसी समारोह या विशेष घटना का इतिवृत्त अखबार में छपा हो, तो उसे विद्यार्थियों के सामने रखें –– इससे निबन्ध आदि लिखने में उनकी सहायता होगी।

हिन्दी पुस्तकालय और वाचनालय का उपयोग सिर्फ ज्ञानार्जन की अपेक्षा हिन्दी-भाषा-ज्ञान बढ़ाने की दृष्टि से ही पाठशालाओं में अधिक किया जाए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(८) हिन्दी की विविध परीक्षाएँ

उन्नीसवीं सदी के अन्तिम चरण में ही भारत के नेताओं ने महसूस करना शुरू किया कि बगैर एक भाषा के राष्ट्रीय एकता का निर्माण असम्भव है। आचार्य केशवचन्द्र सेन, लो. टिलक आदि नेताओं ने हिन्दी को आन्तरप्रान्तीय भाषा बनाने की ओर संकेत किया और राष्ट्रपिता महात्मा गांधी और श्रद्धेय टंडनजी के अविश्रान्त प्रयत्न से समूचे भारत में राष्ट्रभाषा के प्रचार का कार्य शुरू हुआ। इस प्रचार का महत्त्वपूर्ण साधन था परीक्षाओं का संचालन। अहिन्दी प्रान्तों में भिन्न-भिन्न संस्थाओं की स्थापना की गयी और उनकी परीक्षाओं में हजारों की तादाद में परीक्षार्थी शामिल होने लगे। दिन-ब-दिन उनकी संख्या बढ़ती ही जा रही है।

राष्ट्रभाषा की परीक्षाओं की तैयारी करके विद्यार्थी हिन्दी पर जल्दी अधिकार पाते हैं। संयोग से पाठशालाओं में हिन्दी पढ़नेवाले बहुतेरे अध्यापक किसी न किसी राष्ट्रभाषा-प्रचार संस्था के प्रचारक हैं। आम तौर पर सभी अध्यापकों का यह अनुभव है कि पाठशालाओं में पाँच-छः साल तक हिन्दी की पढ़ाई जिन विद्यार्थियों ने की है, उनकी हिन्दी में योग्यता, दो प्रचार परीक्षाओं को उत्तीर्ण किये हुए विद्यार्थियों से ज्यादा नहीं होती। आठवीं, नौवीं कक्षा का कोई भी विद्यार्थी छः महीनों में दो परीक्षाओं की तैयारी कर सकता है। यह यहाँ देखने की जरूरत नहीं है कि इस दयनीय अवस्था का क्या कारण है। हम सिर्फ इतना ही देख लें कि राष्ट्रभाषा-प्रचार-संस्थाओं की हिन्दी परीक्षाओं में विद्यार्थियों को शामिल कराया जाए — उससे हिन्दी में वे अपनी योग्यता जल्दी बढ़ा सकेंगे।

कई एक प्रचार-संस्थाओं की पाठ्य-पुस्तकें और पाठशालाओं की पाठ्य-पुस्तकें एक ही हैं। ये परीक्षाएँ हर साल दो बार होती हैं और उनके लिए खर्चा भी कम आता है। परीक्षा के केन्द्र प्रायः छोटे-बड़े सभी गाँवों में होते हैं। पढ़नेवाले भी मौजूद हैं। इसलिए अध्यापक इन परीक्षाओं में शामिल होने में विद्यार्थियों को प्रोत्साहन दें। अगर विद्यार्थी दसवीं कक्षा तक तीसरी परीक्षा उत्तीर्ण करें, तो उनको अपेक्षा से ज्यादा लाभ होता हुआ दिखायी देगा।

पुस्तकालय में इन परीक्षाओं की पाठ्य-पुस्तकों की प्रतियाँ रखी जाएँ। हर हफ्ते में दो बार उनकी विशेष पढ़ाई हो, तो विद्यार्थियों को काफी मदद हो सकती है। ऐसे परीक्षार्थियों को चार-चार पाँच-पाँच पुस्तकें पढ़नी पड़ती हैं। कविता, निबन्ध, कहानी, नाटक, उपन्यास आदि साहित्य उनको पढ़ना पड़ता है। विद्यार्थी भी इनमें काफी दिलचस्पी लेते हैं। दो-दो तीन-तीन प्रश्न-पत्रिकाओं के लिए तैयारी होने से विद्यार्थी हिन्दी में काफी योग्यता पाते हैं। इसके अतिरिक्त उन्हें मौखिक परीक्षा में भी उत्तीर्ण होना आवश्यक है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हम यों कह सकते हैं कि इन परीक्षाओं से विद्यार्थियों को काफी लाभ पहुँचता है, ये परीक्षाएँ पाठशालाओं के हिन्दी अध्ययन की पूरक हो सकती हैं। इनकी पाठ्य-पुस्तकें पढ़ाते वक्त अध्यापक बहुतेरी बात शुरू से बताते हैं, इसलिए कक्षा में जो बातें विद्यार्थियों के ध्यान में नहीं आयी हों, उनको फिर से वे पढ़ते हैं और अपनी भाषा में सुधार करते हैं। इसके अतिरिक्त विद्यार्थियों में यह भावना कायम होती है कि हम विशेष परीक्षा में शामिल हो रहे हैं और उन्हें उसमें उत्तीर्ण होना चाहिए। उत्तीर्ण न होना उन्हें शर्म की बात मालूम होती है। फिर परीक्षक भी अपरिचित होते हैं, न विद्यार्थी उन तक पहुँच सकते हैं, न उन्हें विद्यार्थियों के प्रति हमदर्दी होने का कोई कारण है। इसलिए आम तौर पर विद्यार्थी इन परीक्षाओं के लिए खास तैयारी करते हैं जिसका असर उनके भाषाज्ञान पर हुए बिना नहीं रहता। एक परीक्षा में उत्तीर्ण होने से उन्हें बढ़ावा मिलता है और आगे की परीक्षा में वे दुगुने उत्साह से शामिल होते हैं। पाठशाला के हिन्दी अध्ययन में वे उतनी दिलचस्पी कभी नहीं लेते, जितनी वे इन परीक्षाओं के लिए तैयारी करने में लेते हैं। अध्यापक इस मनोवैज्ञानिक भूमिका को समझ लें और उससे लाभ उठाएँ।

(९) नाटक खेलना, नाटचीकरण

(Dramatization)

(१) **आवश्यकता और महत्त्व** — नाटक दृश्य काव्य कहलाता है। शायद ही कोई ऐसा आदमी दिखायी देगा कि जिसे नाटक देखने में दिलचस्पी न हो। छोटे-छोटे बालकों में सिर्फ नाटक देखने में ही रुचि नहीं होती, वे नाटक खेलने में भी दिलचस्पी लेते हैं। अध्यापक को चाहिए कि उनकी इस स्वाभाविक रुचि से लाभ उठाए और उनका भाषा-ज्ञान बढ़ाने में उनकी मदद करे। बालकों की अभिनय-प्रियता का यह एक दृष्टि से उदात्तीकरण ही है। एक दूसरे की नकल करके हँसी-दिल्लगी उड़ाने में उन्हें अपनी शक्ति खर्च नहीं करनी चाहिए। इस प्रवृत्ति का रुख अच्छे काम की ओर बढ़ाना होगा। अगर अध्यापक अभिनय करने में विद्यार्थियों का उचित मार्गदर्शन करे, तो नीचे लिखे अनुसार उन दोनों को इससे लाभ पहुँचेगा —

(अ) विद्यार्थियों की स्वाभाविक रुचि से लाभ उठाकर अवधान की समस्या हल की जाएगी तथा वे स्वयं पढ़ाई करने लगेंगे। (आ) अभिनय-कला आत्मसात् करने में विद्यार्थियों को प्रोत्साहन मिलेगा। इससे जिन विद्यार्थियों को उसमें विशेष दिलचस्पी हो, उन्हें अपनी इस प्रवृत्ति का विकास करने का मौका मिलेगा। इस बुनियादी शिक्षा के आधार पर वह इसमें आगे बढ़ने लगेगा। (इ) साधारण हैसियत के विद्यार्थी भी अपनी बात दूसरों पर प्रभावकारी ढंग से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रकट करने की कला अपनाएँगे। उनके रोज़ के जीवन में यह बात बड़ी उपयुक्त साबित होगी। (ई) विद्यार्थियों को अन्य लोगों के सामने बोलने का अभ्यास होगा। वक्तृत्व-कला में वे आगे कदम बढ़ाएँगे, उनमें निर्भयता का विकास होगा, जो सभा आदि में भाषण देते वक्त उन्हें लाभकारी होगा। (उ) नाटक खेलने के लिए वे कुछ पंक्तियाँ कण्ठस्थ करेंगे। इससे भाषा में उनकी योग्यता बढ़ेगी। (ऊ) समारोह आदि के अवसर पर ये ही विद्यार्थी नाटक या मनोरंजन के कार्यक्रम में भाग लेंगे। आदि।

(२) **उपयुक्त सामग्री** — बालकों की पाठ्य-पुस्तकों में कई छोटे-बड़े संवादों को भी स्थान दिया जाता है। आवश्यकतानुसार उन्हें खेला जा सकता है। बालकों के लिए भी कई छोटे-छोटे नाटक लिखे गये हैं, उनमें से भी कुछ चुने जाएँ। अध्यापक किसी पद्य-खण्ड या कहानी के आधार पर संवाद तैयार कर लें। वह कुछ ऐसे गद्य या पद्य-खण्ड चुन लें कि जिन्हें बालक अभिनय के साथ प्रस्तुत कर सकें।

इससे विद्यार्थियों को काफी लाभ पहुँचेगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

परिशिष्ट १

(अ) हिन्दी भाषा

नाम — संस्कृत की 'स्' ध्वनि फारसी में 'ह्' बनती है। इसलिए संस्कृत 'सिन्धु' और 'सिन्ध' शब्दों से फारसी 'हिन्दु' और 'हिन्द' शब्द बने। उससे फारसी शब्द 'हिन्दी' बन गया। आज हम 'हिन्दी' शब्द को उसके वाच्यार्थ (हिन्द के रहनेवाले या हिन्दी में बोली जानेवाली भाषा) में नहीं ग्रहण करते। आज 'हिन्दी' शब्द का व्यवहार उत्तर भारत के अधिकांश लोगों की 'वर्तमान साहित्यक भाषा के अर्थ में मुख्यतया तथा साथ ही इसी भूमि-भाग की बोलियों और उनसे सम्बन्ध रखनेवाले प्राचीन साहित्यिक रूपों के अर्थ में साधारणतया होता है।'✦

हिन्दी-भाषी प्रदेश की सीमाएँ — पश्चिम में जैसलमीर, उत्तर-पश्चिम में अम्बाला, उत्तर में सिमला से लेकर नेपाल के पूर्वी छोर तक के पहाड़ी प्रदेश का दक्षिणी भाग एवं भागलपुर, दक्षिण-पूर्व में रायपुर, दक्षिण-पश्चिम में खण्डवा। इस प्रदेश को प्राचीन काल में 'मध्यदेश' कहा जाता था।

इस प्रदेश के साहिन्य, पत्र-पत्रिकाओं, शिष्ट बोलचाल तथा शिक्षा की भाषा साहित्यिक खड़ी बोली हिन्दी है।

इसकी जनसंख्या करीब १४ करोड़ है।

उत्पत्ति : जननी-भाषा और जन्म-काल : ईसा की पाँचवीं सदी तक मागधी, शौरसेनी आदि प्राकृत भाषाओं का बोलबाला रहा। उसके बाद इन प्राकृतों के जनसाधारण की भाषा में जो विकसित रूप थे, उन्हें 'अपभ्रंश' कहा जाता था। इन अपभ्रंशों का प्रचलन दसवीं सदी तक रहा था। इन्हीं 'अपभ्रंशों' से आधुनिक भारतीय भाषाओं का निर्माण हुआ है। ऊपर कहे हुए मध्यदेश के पूर्वी विभाग में अर्धमागधी प्राकृत और तदनन्तर अर्धमागधी अपभ्रंश बोली जाती थी। अर्धमागधी अपभ्रंश से पूर्वी हिन्दी (अवधी आदि) का और शौरसेनी अपभ्रंश से पश्चिमी हिन्दी (खड़ी बोली, ब्रजभाषा आदि) का निर्माण हुआ।

सातवीं-आठवीं शताब्दी में अपभ्रंश ने भिन्न रूप ग्रहण करना शुरू किया। उसे उसकी 'उत्तरकालीन अवस्था' कहा जा सकता है। लगभग इसी समय इस प्रदेश में हिन्दी का जन्म बोलचाल के रूप में हुआ होगा। विकास होते होते ग्यारहवीं शताब्दी में वह अपभ्रंश से एकदम भिन्न बनते हुए, बारहवीं शताब्दी में वह साहित्य-निर्माण के योग्य बन गयी।

✦ हिन्दी भाषा का विकास : डॉ. धीरेन्द्र वर्मा (१९६२), पृ. ५२

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हिन्दी का विकास — १००० से १४०० ई. तक हिन्दी भाषा के इतिहास का '**आदिकाल**' माना जाता है। इस काल में उसपर अपभ्रंश का काफी प्रभाव रहा है। वह पूर्णतः अपने पैरों पर यद्यपि खड़ी नहीं रह सकती थी, फिर भी वह किसी भी विदेशी भाषा के प्रभाव से मुक्त थी। उसकी बोलियाँ स्पष्ट रूप में भिन्न नहीं बनी थीं। इसी काल में चन्द बरदाई, अमीर खुसरो, विद्यापति आदि ने हिन्दी को अपनी रचनाओं से विभूषित किया। वीरगाथाओं ने उसमें वीरश्री का संचार कराया। अमीर खुसरो की पहेलियों और मुकरियों में वह अल्हड़ बालिका की तरह उछलती-कूदती है, तो मैथिल-कोकिल विद्यापति ने उसे शृंगार-रस से परिप्लावित किया। उत्तरोत्तर अपभ्रंश के प्रभाव से मुक्त होते-होते वह पद्रंहवीं सदी में पूर्ण स्वतंत्र हुई। **१४०० से १८०० तक उसके विकास का मध्यकाल** है। यह युग हिन्दी का स्वर्णयुग कहलाता है। मुसलमानों के ज़माने में उसे फारसी के सम्पर्क में आना पड़ा, तो सैकड़ों फारसी शब्द हिन्दी में आ गये। फिर भी राजाश्रय का अभाव होते हुए उसने जो वैभव प्राप्त किया है, वह सराहनीय है। उसके संरक्षण और विकास के बीज उसकी आत्मिक शक्ति में ही हैं। इस वक्त भिन्न-भिन्न बोलियाँ विकसित होने लगीं। सूरदास आदि कृष्णभक्तों ने व्रजभाषा को अपनाया, तुलसीदास ने (विश्ववंद्य रामायण के लिए) और सूफी कवियों ने अवधी को अपनाया। कबीर जैसे मस्तमौला ने भाषा को एक नये साँचे में ढालकर उसे अपने भाव-प्रकटन के लिए अपने योग्य बनाया। १८०० के बाद हिन्दी के विकास का **आधुनिक काल** शुरू होता है। यह भारी उथल-पुथल और संघर्ष का काल है। १८०० के लगभग हिन्दी गद्य-साहित्य की नींव **इन्शा अल्ला खाँ, सदल मिश्र, लल्लूलाल और सदासुखलाल** द्वारा डाली गयी। गद्य के लिए खड़ी बोली अपनायी गयी। उन्नीसवीं सदी में गद्य खड़ी बोली में, तो काव्य व्रजभाषा में लिखा जाता था। ईसाई मिशनरियों ने भी आम जनता में धर्म-प्रचार के लिए इसी खड़ी बोली को अपनाया। मुसलमान सल्तनत के पतन के बाद अंग्रेजों के ज़माने में पहले उर्दू ने ज़ोर पकड़ा और हिन्दी को अंग्रेज़ी और उर्दू दोनों का मुकाबला करना पड़ा। उर्दू और फारसी लिपि को तरज़ीह दी गयी। अंग्रेज़ सरकार भी हिन्दी की ओर आँखें मूंदकर रह गयी। **राजा शिवप्रसाद 'सितारे-हिन्द'** ने आखिर 'खास पसंद और आमफहम' उर्दू की ओर झुकती हुई शैली को अपनाया, तो **राजा लक्ष्मणसिंह** उसकी संस्कृत-निष्ठता के अभिमानी थे। **भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने** आम जनता की बोलचाल की भाषा को स्वीकार किया। भारतेन्दु के बाद भाषा में जिस गड़बड़ी और शिथिलता का निर्माण हुआ, उसे श्री **महावीरप्रसाद द्विवेदी ने** नष्ट किया और हिन्दी भाषा का गौरव बढ़ाया। १८९२ में **नागरी**

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रचारिणी सभा की प्रस्थापना करके **बाबू श्यामसुन्दरदास** आदि ने एक भारी आन्दोलन शुरू किया और उसे सरकार-दरबार में सम्मान का स्थान दिलाया। जनता में भी उसका काफी सम्मान होने लगा। बीसवीं सदी के शुरू में ही काव्य के क्षेत्र में भी खड़ी बोली ने व्रजभाषा को परास्त किया।

अंग्रेज़ी से प्रेरणा लेकर हिन्दी साहित्य ने अपना विकास करना शुरू किया। **भारतेन्दु, प्रेमचन्द, जयशंकरप्रसाद, महावीरप्रसाद द्विवेदी, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', निराला, बाबू मैथिलीशरण गुप्त,** आदि दिवंगत तथा **सुमित्रानन्दन पन्त, दिनकर, बच्चन** आदि विद्यमान साहित्यकारों ने हिन्दी साहित्य को इतना ऊपर उठाया है कि अब विश्व-साहित्य में उसे आदर के साथ बिठाया जाता है।

हिन्दी की उपभाषाएँ — राजस्थानी, पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी, बिहारी और पहाड़ी हिन्दी की उपभाषाएँ हैं। खड़ी बोली, व्रजभाषा, अवधी, भोजपुरी, मैथिली आदि उसकी प्रधान बोलियाँ हैं।

इसी हिन्दी भाषा को आज हमने राष्ट्रभाषा का पद दिया है। अब उसका सर्वतोमुखी विकास हो रहा है।

हिन्दी पर अन्य भाषाओं का प्रभाव — जब भिन्न-भिन्न भाषाएँ एक दूसरी के सम्पर्क में आती हैं, तब वे एक दूसरी से अवश्यमेव प्रभावित होती हैं, उनमें शब्दों का आदान-प्रदान होता है। जेताओं की भाषा जित लोगों की भाषा-पर भारी असर करती है। मुसलमानों के ज़माने में राजभाषा फारसी रही, उसके सम्पर्क में आते ही राजकाज, फौज आदि के सम्बन्ध में हज़ारों शब्द और मुहावरे हिन्दी ने उससे अपनाये। फारसी काव्य का हिन्दी साहित्य पर बिलकुल प्रभाव हुआ ही नहीं, सो बात नहीं है।

मुसलमानी सल्तनत के गिरने के बाद हिन्दी भाषा अंग्रेज़ी के सम्पर्क में आयी और सैकड़ों अंग्रेज़ी शब्द हिन्दी में आये। अंग्रेज़ी साहित्य से मानो हिन्दी साहित्य ने एक नयी जीवन-शक्ति पायी और मुसलमानों के छः सौ साल के ज़माने में जो चमत्कार नहीं हो पाया था, वही अंग्रेज़ी के सम्पर्क से साठ सालों की अवधि में हो गया। इसमें हिन्दी भाषा और साहित्य ने अभूतपूर्व उन्नति की है।

अब हिन्दी राष्ट्रभाषा बनी है। इससे पहले वह अधिकतर बंगाली के सम्पर्क में आयी थी, मगर अब उसका भिन्न-भिन्न भारतीय भाषाओं से घनिष्ट सम्बन्ध प्रस्थापित होगा। ये भाषा-भगिनियाँ हिन्दी को प्रभावित किये बिना नहीं रहेंगी। उनका साहित्य हिन्दी के साहित्य जैसा ही उच्च है। ये भाषाएँ भी प्रौढ़, विकसनशील हैं। भविष्य में हिन्दी पर उनका प्रभाव स्पष्ट दिखायी देगा। वे भी अपने कुछ शब्द उपहार के रूप में हिन्दी को देंगी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हिन्दी की शब्द-सम्पत्ति — आज की हिन्दी की शब्द-सम्पत्ति का विश्लेषण करने से मालूम होगा कि उसमें प्रतिशत साठ से ज्यादा शब्द संस्कृत से आये हुए हैं। विद्या, सम्पत्ति, काव्य जैसे शब्द **तत्सम** संस्कृत हैं; घर, आग जैसे **तद्भव** हैं; तो किरिष्ण, किरपा जैसे **अर्धतत्सम** हैं। तेंदुआ जैसे कुछ शब्द **देश्य** हैं। कोड़ी (मुंडा से), पिल्ला (तेलुगु से), लागू, चालू (मराठी से) जैसे शब्द अन्य भारतीय भाषाओं के हैं। अरबी-फारसी के सैकड़ों शब्द हिन्दी में आये हैं। अरबी शब्द फारसी से होकर आये हैं। उनके भी तत्सम और तद्भव रूप पाये जाते हैं।

तुर्की — उर्दू, काबू, बहादुर, गलीचा, लाश, सौगात आदि।

अरबी — वक्त, तरफ, तरक्की, तरह, बुर्ज, गुबार, फतह आदि।

फारसी — बगल, आस्तीन, चूंकि, ज़मीन, आसमान, तख्त आदि।

क़, ख़, ग़, ज़, झ़, फ़ ये नयी ध्वनियाँ फारसी से आयी हैं। अंग्रेज़ों के ज़माने में अंग्रेज़ी शब्द हिन्दी में आये। उनमें से अधिकांश राजकाज, कोर्ट-दरबार, शिक्षा, भिन्न-भिन्न नयी वस्तुओं से सम्बन्धित हैं। इने-गिने फ्रेंच और पुर्तगीज़ शब्द जो हिन्दी में हैं, वे अंग्रेज़ी में हैं, वे अंग्रेजी से होकर आये हैं।

अंग्रेज़ी — टेबल, रेल्वे, मोटर (तत्सम)
अस्पताल, मैनेजर, कापी (तद्भव)

✦ ✦ ✦

(आ) हिन्दी-हिन्दुस्तानी-उर्दू

स्वातंत्र्य-पूर्व काल में राष्ट्रभाषा के स्वरूप के बारे में काफी गर्मागर्म बहस मुबाहसा होता रहा। हिन्दी की किसी एक शैली को महत्त्वपूर्ण मानकर लोग संघर्ष उठाया करते थे। कोई हिन्दी की संस्कृताभिमुख शैली को अपनाना चाहता था, तो कोई अरबी-फारसी की शैली से प्रभावित उर्दू को। दोनों में समझौता करने के लिए कुछ लोग 'हिन्दुस्तानी' शैली को पसन्द करते थे। डॉ. धीरेन्द्र वर्मा ने लिखा है — 'आधुनिक खड़ी बोली हिन्दी के उस दूसरे साहित्यिक रूप का नाम उर्दू है, जिसका व्यवहार पाकिस्तान तथा उत्तर-भारत के पढ़े-लिखे मुसलमानों तथा उनके अधिक सम्पर्क में आनेवाले कुछ हिन्दुओं-जैसे पंजाबी, कश्मिरी तथा पुरानी पीढ़ी के कायस्थों आदि में पाया जाता है। व्याकरण के रूपों की दृष्टि से इन दोनों साहित्यिक भाषाओं में विशेष अन्तर नहीं है, वास्तव में दोनों का मूलाधार एक ही है। किन्तु साहित्यिक वातावरण, शब्द-समूह तथा लिपि में दोनों में आकाश-पाताल का भेद है। साहित्यिक खड़ी बोली हिन्दी इन सब बातों के लिए भारत की प्राचीन संस्कृत तथा उसके वर्तमान रूप की ओर देखती

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है। उर्दू भारत के वातावरण में उत्पन्न होने और बढ़ने पर भी ईरान और अरब सभ्यता और साहित्य से जीवन-श्वास ग्रहण करती है।' *

'उर्दू' शब्द तुर्की भाषा का है जिसके मानी हैं — बाजार, लश्कर का बाजार। भारत में शुरू में आनेवाले फारसी भाषा-भाषी मुसलमान यहाँ के लोगों-की बोली में अपनी भाषा के शब्दों का प्रयोग करके जिस मिश्रित रूप में बोलने लगे वही भाषा 'उर्दू-ए-मुअल्ला' बनी। बाद में 'उर्दू हिन्दी' शब्द से 'उर्दू' शब्द बाकी रह गया। उर्दू का मूलाधार दिल्ली के निकट की खड़ी बोली है। उद्गम की दृष्टि से यद्यपि उर्दू और साहित्यिक हिन्दी सगी बहनें हैं, तो भी डॉ. धीरेन्द्र वर्मा के शब्दों में, 'एक तो हिन्दुस्तानी बनी रही और दूसरी ने मुसलमान धर्म ग्रहण किया।' +

'हिन्दुस्तानी' नाम यूरोपीय लोगों ने दिया है। यह खड़ी बोली हिन्दी का वह रूप है, जिसमें फारसी-अरबी के कठिन शब्दों की भरमार नहीं रहती, वैसे ही संस्कृत के कठिन शब्दों की बहुलता नहीं है। वह अरबी फारसी-निष्ठ उर्दू और संस्कृताभिमुख (खड़ी बोली) हिन्दी के बीच की अवस्था है। 'हिन्दुस्तानी हिन्दी की वह शैली है कि जिसमें उत्तर भारत की आम जनता बोलती है, जिसमें अरबी फारसी और संस्कृत के आसान से आसान और रूढ़ शब्द हैं, जो दोनों लिपियों (नागरी और फारसी) में लिखी जा सकती है।'

शुरू में हिन्दी और उर्दू में उतना फर्क नहीं था, जितना आज है। पर जैसे जैसे फारसी शिक्षा पाये हुए अपनी सुशिक्षितता का प्रदर्शन करने के लिए उसमें फारसी शब्दों को कूट-कूटकर भरने लगे और वाक्य-रचना भी उसके ढंग पर करने लगे, वैसे-वैसे उर्दू हिन्दी से दूर हटती गयी। हिन्दू-मुसलमानों के जातीय संघर्ष का भी इसमें काफी हाथ है।

पन्द्रह-बीस साल पहले राजनैतिक समस्या को सुलझाने के लिए महात्मा गांधी ने हिन्दू-मुसलमानों के बीच समझौता प्रस्थापित करने की सख्त जरूरत महसूस की। वे आम जनता की भाषा को अपनाकर सबकी सुविधा देखना चाहते थे। इसलिए उन्होंने हिन्दुस्तानी का पक्ष लिया। उन्होंने राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी के लिए दोनों – फारसी आर नागरी – लिपियों की आवश्यकता मानी और वैसा प्रचार शुरू किया।

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद संविधान-समिति ने यह समस्या सदा के लिए हल की है। उनके अनुसार राष्ट्रभाषा हिन्दी का स्वरूप बहुत कुछ 'हिन्दुस्तानी' के स्वरूप से मिलता-जुलता है, जो इन शब्दों में स्पष्ट उद्घोषित है –

It shall be the duty of the uinon to promote the spread of Hindi..........................and to secure its

---

* हिन्दी भाषा का इतिहास : डॉ धीरेन्द्र वर्मा (१९६२) पृ. ६०

\+ वही : पृ. ६१

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

enrichment by assimilating without interfering with its genius, the forms, style and expression used in Hindustani..."

✦ ✦ ✦

(ई) राष्ट्रभाषा के आन्दोलन की एक झलक

मध्यकाल में काशी से रामेश्वर तक और सोमनाथ से कलकत्ते तक घूमनेवाले लोग कम नहीं थे। बहुत सम्भव है कि ये लोग आपस के व्यवहार के लिए तत्कालीन हिन्दी का प्रयोग करते होंगे। नामदेव, रामदास, तुकाराम आदि महाराष्ट्र के सन्तों ने भी हिन्दी में कुछ रचना की है, इससे यह निःसन्देह कहा जा सकता है कि उस वक्त अहिन्दी प्रदेशों में हिन्दी का, आंशिक रूप में क्यों न हो, प्रचलन अवश्य रहा था।

(१) अंग्रेजों के जमाने में समूचा भारत देश एकछत्र सत्ता के अधीन हुआ। १८५७ के स्वतंत्रता-समर के बाद भारतीय मनीषी अनुभव करने लगे कि संगठन और एकता के अभाव के कारण ही हमारी हार हुई है। 'संगठन के बिना एकता असम्भव, संगठन-एकता के बिना स्वतंत्रता असम्भव और एक भाषा के बिना संगठन और एकता भी तथा स्वतंत्रता सभी असम्भव हैं।' कुछ द्रष्टाओं ने राष्ट्रभाषा – भारत के लिए एक **भाषा – के आन्दोलन की ओर संकेत** किया।

(२) बंगाल के विख्यात विचारक **आचार्य केशवचन्द्र सेन** ने भारत की राष्ट्रीय कांग्रेस के जन्म से दस वर्ष पूर्व १८७५ में बता दिया था कि एक भाषा के बिना भारतवर्ष की एकता असम्भव है। उनकी प्रेरणा से स्वामी **दयानन्द** ने अपने आर्य-समाज का प्रचार हिन्दी में शुरू करके 'सत्यार्थ-प्रकाश' का हिन्दी संस्करण निकाला। हिन्दी के प्रचार में उनके आन्दोलन का स्थान महत्त्वपूर्ण रहा है। **भारतेन्दु हरिचन्द्र** ने नागरी लिपि और हिन्दी की मुक्ति के लिए काफी परिश्रम उठाये। वे अपना यह मंत्र हमेशा सुनाते रहे —

> निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति कौ मूल ॥
> बिनु निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय कौ सूल ॥

बंगाल के ख्यातनाम साहित्यिक और 'वन्दे मातरम्' के गायक **श्री बंकिमचन्द्र ने** हिन्दी के महत्त्व का उल्लेख करते हुए कहा कि हिन्दी भाषा की मदद से भारतवर्ष के विभिन्न प्रदेशों के बीच एकता स्थापित कर सकने-वाले ही 'सच्चे भारत-बन्धु' नाम से पुकारने योग्य हैं। **लोकमान्य तिलक ने** राष्ट्रभाषा-सम्मेलन के अध्यक्ष-पद से घोषित किया था — 'हिन्दी भाषा ही राष्ट्र-भाषा बन सकती है।' उन्होंने आगे जाकर सब भारतीय भाषाओं के लिए एक लिपि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(नागरी) की आवश्यकता का ज़ोर से प्रतिपादन किया था। **महात्मा गांधी** के नाम के बिना राष्ट्रभाषा – आन्दोलन के इतिहास का एक पृष्ठ भी पूरा नहीं किया जा सकता।

इसके पहले १९ – ७ – १८९२ को काशी में स्व. श्यामसुन्दरदास और उनके मित्रों के प्रयत्न से **'नागरी प्रचारिणी सभा'** की नींव डाली गयी। 'हिन्दी और नागरी को सारे देश में व्यापक बनाकर उन्हें राष्ट्रभाषा और राष्ट्रलिपि के पद पर प्रतिष्ठित करना' उसका उद्देश्य था। इसी समय **हिन्दी साहित्य सम्मेलन** (प्रयाग) की नींव भी डाली गयी। उसके मंत्रित्व की धुरा **बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन** के हाथ में थी। १० – १० – १९१० को 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' का प्रथम अधिवेशन हुआ। १९१८ के इन्दौर अधिवेशन में सभापति महात्मा गांधी की प्रेरणा से सम्मेलन के इतिहास में एक 'जीवित अध्याय' प्रारम्भ हुआ और सच्चे अर्थ में राष्ट्रभाषा आन्दोलन को देशव्यापी बनाने का प्रयत्न वहीं से शुरू हुआ। १९१८ में मद्रास प्रान्त में स्व. ऐनी बेझेंट की अध्यक्षता में सर सी. पी. रामस्वामी अय्यर ने हिन्दी कक्षा का उद्घाटन किया। उस तरफ प्रचार के लिए महात्मा गांधी ने अपने पुत्र श्री **देवदास गांधी** और **स्वामी सत्यदेव परिव्राजक** को भेज दिया। वहाँ जो कार्यकर्ता तैयार हो गये उनके द्वारा १९२७ में 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' नामक स्वतंत्र संस्था का संगठन किया गया। राजमहेन्द्री, इरोड़ और वेल्लोर के प्रचारक-विद्यार्थियों ने सारे सूबे में ज़ोरों से प्रचार-कार्य शुरू किया।

गांधी-युग में राष्ट्रीय आन्दोलन आम जनता तक फैला और एक राष्ट्रभाषा का महत्त्व आम जनता को समझाया गया। राष्ट्रभाषा-प्रचार के लिए स्थान-स्थान पर स्थानीय कार्यकर्ताओं ने संस्थाएँ प्रस्थापित की थीं। गुजरात विद्यापीठ (अहमदाबाद), दक्षिणामूर्ति विद्या-मंदिर (भावनगर), हिन्दी प्रचार संघ (पुणे), पूर्व भारत हिन्दी प्रचार सभा (कलकत्ता) आदि संस्थाएँ काम करने लगीं। १९३६ के अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के नागपुर अधिवेशन में **डॉ. राजेन्द्रप्रसादजी** की अध्यक्षता में तय किये गये अनुसार देश के समस्त अहिन्दी-भाषी प्रान्तों में राष्ट्रभाषा के लिए हिन्दी साहित्य सम्मेलन (प्रयाग) के अन्तर्गत **वर्धा** में एक 'हिन्दी प्रचार समिति' का निर्माण किया गया, जो आगे चलकर **'राष्ट्रभाषा प्रचार समिति'** कहलाने लगी। इस प्रचार-समिति में डॉ. राजेन्द्रप्रसाद, महात्मा गांधी, पं. नेहरू, बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन, आचार्य नरेन्द्र देव, आचार्य काका कालेलकर आदि प्रथम श्रेणी के नेता और विद्वान् थे। इसका कार्य-क्षेत्र असम से लेकर सिन्ध तक व्यापक था। दक्षिण भारत में 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' काम करती थी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संघर्ष काल — (अ) अंग्रेज़ी के अभिमानी कुछ सज्जन **अंग्रेज़ी** को ही **आन्तरप्रान्तीय भाषा** बनाने की राय पेश करते थे। मगर यद्यपि अंग्रेज़ी विदेशी राजसत्ता के कारण उच्च शिक्षा का माध्यम और सरकार-दरबार की भाषा बनी रही थी, तो भी वह विदेशी होने के कारण भारत की राष्ट्रभाषा का स्थान नहीं पा सकती थी, वह तो हमारी गुलामी का प्रतीक बनकर रह सकती थी। जातीय संघर्ष के प्रभाव में आकर कुछ उर्दू के अभिमानी (ब) **उर्दू को राष्ट्रभाषा और फारसी को राष्ट्रलिपि** बनाने का दावा करने लगे। उनका कहना था कि मुसलमानों के साथ-साथ उर्दू का प्रचार भी देश के कोने-कोने में हुआ है और उर्दू की बुनियाद तो आन्तरजातीय व्यवहार के लिए शुरू में डाली गयी है। इस राय का भी काफी विरोध हुआ। (क) संस्कृतनिष्ठ **हिन्दी** तथा **नागरी लिपि** के अभिमानियों की आवाज़ भी ज़ोर से उठने लगी और कुछ लोगों ने अरबी-फारसी शब्दों के बहिष्कार की भी बात उठायी। (ड) महात्माजी समझौतावादी थे। उन्होंने उर्दू-हिन्दी में समझौता करने की दृष्टि से आम जनता में प्रचलित भाषा के अरबी-फारसी और संस्कृत शब्दोंवाले संमिश्र स्वरूप को – **हिन्दुस्तानी को और फारसी व नागरी दोनों लिपियों** को अपनाया। (ई) बीच के ज़माने में **रोमन हिन्दी या उर्दू को** (रोमन लिपि में लिखी जानेवाली हिन्दी या उर्दू को) **नेताजी सुभाषचन्द्र बोस** ने अपनी 'आज़ाद हिन्द सेना' के लिए अपनाया।

नेताओं और हिन्दी के प्रचारकों में राष्ट्रभाषा के नाम और स्वरूप के बारे में मतभेद हो उठा और वह ज़ोर पकड़ने लगा। महात्मा गांधी और अन्य राजनैतिक नेता हिन्दुस्तानी के पक्ष में थे और दूसरी ओर महर्षि टण्डन आदि सज्जन हिन्दी के पक्ष में थे। १९४० में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की बैठक में '**कामचलाऊ समझौता**' किया गया। फिर भी संघर्ष बढ़ता गया और अन्त में **हिन्दुस्तानी प्रचार सभा** का निर्माण हुआ। १९४० के प्रस्ताव के अनुसार कोई भी सदस्य 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की नीति का पालन करते हुए भी 'हिन्दुस्तानी प्रचार सभा' का सदस्य बन सकता था। १९४२ के आन्दोलन के शुरू होते ही सब नेताओं को कारागृह में रहना पड़ा। १९४४ में मुक्त होते ही सभी सज्जन अपने-अपने मत के प्रचार में लगे। हिन्दी-हिन्दुस्तानी के संघर्ष ने राष्ट्रभाषा की समस्या जटिल बना दी। अब भिन्न उद्देश्यवाली दो संस्थाओं का एक साथ सदस्य रहना महात्माजी को अव्यावहारिक, असंगत और बुद्धिभेदक' लग रहा था। महात्मा गांधी और महर्षि टण्डनजी में लम्बा-चौड़ा पत्रव्यवहार हुआ। आखिर महात्मा गांधी 'राष्ट्रभाषा-प्रचार समिति' के सदस्य के नाते इस्तीफा देकर 'हिन्दुस्तानी प्रचार सभा' के कार्य में दत्तचित्त हुए।

'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' ने नयी घटनाओं को देखकर अपने नाम में 'हिन्दी' के स्थान पर 'हिन्दुस्तानी' शब्द रखा। पहले **महाराष्ट्र**

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

राष्ट्रभाषा समिति (पुणे) वर्धा समिति से सम्बद्ध रहकर महाराष्ट्र में राष्ट्रभाषा प्रचार का काम करती थी। १९४० से १९४३ तक यह संस्था **तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ (पुणे)** द्वारा संचलित थी। **महामहोपाध्याय द. वा. पोतदारजी** की अध्यक्षता में अब वह कार्य करने लगी। श्री **गो. प. नेने** पहले की तरह मंत्री और संचालक रहे। समिति के अध्यक्ष म. म. पोतदारजी और श्री शंकररावजी देव के मार्गदर्शन में इस समिति के नये संगठन पर ज़ोर दिया जाने लगा। नये संगठन का उद्देश्य यह था — 'भारतवर्ष में आन्तरप्रान्तीय व्यवहार के लिए जिस एक भाषा का उपयोग सदियों से आम तौर पर चलता आ रहा है, वह हमारी राष्ट्रभाषा है। इसके लिए हिन्दी, हिन्दुस्तानी और उर्दू-ये तीनों नाम रूढ़ हैं। इस भाषा का महाराष्ट्र में प्रचार करना।' १९४५ में बेलापुर (ज़िला अहमदनगर) के अधिवेशन में महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा समिति (पुणे) ने अपना स्वतंत्र संगठन घोषित किया और अपनी परीक्षाएँ स्वतंत्र रूप में चलाना तय किया। 'महाराष्ट्र राष्ट्र-भाषा सभा (पुणे)' नामक यह स्वतंत्र संस्था बनी और उसके द्वारा आज मराठी-भाषी प्रदेश में राष्ट्रभाषा का प्रचार शुरू है।

१५ अगस्त १९४७ को भारत स्वतंत्र हुआ और संविधान सभा ने राष्ट्रभाषा की समस्या हल की। (आगे के पृष्ठों में इसके बारे में पढ़िए।) अब राष्ट्रभाषा और राजभाषा एक ही बनी। उसके प्रचार और संगोपन का उत्तर-दायित्व हमारी सरकार पर है। अहिन्दी प्रदेशों की पाठशालाओं में राष्ट्रभाषा की शिक्षा देने का प्रबन्ध प्रथम काँग्रेस मंत्रि-मण्डल ने ही किया था। अब इस दिशा में हरएक राज्य-सरकार अपने प्रदेश में शीघ्रता से कदम उठा रही है।

केन्द्रीय सरकार के मार्गदर्शन में **अखिल भारतीय हिन्दी परिषद** (आग्रा) का संगठन किया गया और उसकी परीक्षाएँ समूचे भारत में चल रही हैं। **भारतीय साहित्य अकादमी** की नींव डाली गयी है। यह संस्था भारत की तमाम भाषाओं के विकास की ओर ध्यान देती है। हर भाषा के कुछ अनूठे ग्रन्थों का सभी भारतीय भाषाओं में अनुवाद करवाने का कार्य भी साहित्य अकादमी द्वारा हो रहा है।

✦ ✦ ✦

(ई) हिन्दी और भारतीय संविधान

१५ अगस्ट १९४७ को भारत स्वतंत्र हुआ। एक स्वतंत्र राष्ट्र के लिए अपनी परिस्थिति और आदर्श के अनुरूप संविधान (constitution) की आवश्यकता है। भारत की संविधान-समिति के निर्माण के बाद उसने भिन्न-भिन्न बातों पर धाराएँ बनायीं। भारत की राजभाषा (official language) के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बारे में जो निर्णय किया गया, वह संविधान की ३४३ ते ३५१ तक की धाराओं के रूप में रखा गया है।

हिन्दी का स्वीकार करते हुए संविधान समिति ने यह तय किया कि **भारत की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी** होगी। संघ (union) के राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होनेवाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का आंतर-राष्ट्रीय रूप (1, 2, 3...) होगा। संविधान के प्रारम्भ (२६ जनवरी १९५०) से पन्द्रह वर्षों की कालावधि के लिए संघ के उन सब राजकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेज़ी भाषा प्रयोग की जाती रहेगी, जिनके लिए वह पहले से की जाती है। फिर भी पन्द्रह वर्षों की कालावधि में राष्ट्रपति संघ के राजकीय प्रयोजनों में से किसी एक या अनेक के लिए अंग्रेज़ी के साथ-साथ हिन्दी का तथा भारतीय अंकों के आन्तर-राष्ट्रीय रूप के साथ-साथ देवनागरी रूप का प्रयोग करने का आदेश दे सकेंगे। उक्त कालावधि के बाद संसद (parliament) विधि द्वारा अंग्रेज़ी भाषा-का अथवा अंकों के देवनागरी रूप का ऐसे प्रयोजनों के लिए प्रयोग करने का आदेश कर सकेगी जैसे कि ऐसी विधि में उल्लिखित हों।

संविधान के आरम्भ से पाँच वर्ष की समाप्ति पर राष्ट्रपति एक आयोग (Commission) गठित करेंगे और वह आयोग हिन्दी के राजकीय प्रयोजनों में अधिकाधिक प्रयोग और उच्च न्यायालयों (High Courts) और उच्चतम (Supreme) न्यायालय की भाषा और अंकों आदि के बारे में राष्ट्रपति के पास सिफारिशें पेश करेगा। भारत की औद्योगिक, सांस्कृतिक और वैज्ञानिक प्रगति का समुचित ध्यान यह आयोग रखेगा। राज्य सरकार अपने प्रदेश की भाषाओं में से एक या अनेकों या हिन्दी को विधि द्वारा (by law) अपनी राज्य-भाषा (state-languag-) घोषित कर सकती है। एक राज्य के दूसरे राज्य से राजकीय प्रयोजनों के लिए हिन्दी को ही प्रयोग में लाया जाए।

राजभाषा हिन्दी के सम्बन्ध में ३५१ **वीं धारा में** महत्त्वपूर्ण विचार व्यक्त किये हैं। उसमें लिखा है —

"It shall be the duty of the Union to promote the spread of Hindi Language,to develop it so that it may serve as a medium of expression for all the elements of the composite culture of India and to secure its enrichment by assimilating without interefering with its genius, the forms, style and expression, used in Hindustani and in the other languages of India specified in the Eighth Schedule and by drawing wherever necessary or desirable, for its vocabulary, primarly on Sanskrit and secondarily on other languages'

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अर्थात् : हिन्दी भाषा की प्रसार-वृद्धि करना, उसका विकास करना ताकि वह भारत की संपृक्त संस्कृति के सब तत्त्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो सके तथा उसके स्वत्त्व में हस्तक्षेप किये बिना हिन्दुस्तानी और अष्टम अनुसूची में उल्लिखित अन्य भारतीय भाषाओं के रूप, शैली और पदावली को आत्मसात करते हुए तथा जहाँ आवश्यक हो या अभीष्ट हो वहाँ उसके शब्द-भण्डार के लिए प्रधानत: संस्कृत से और गौणत: वैसी उल्लिखित भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करना 'संघ' का कर्तव्य होगा।

अष्टम अनुसूची में उल्लिखित भाषाएँ :

१ असमी, २ बंगला, ३ उड़िया, ४ हिन्दी, ५ कश्मीरी, ६ पंजाबी, ७ गुजराती, ८ मराठी, ९ कन्तड़, १०, तमिल, ११ तेलुगु, १२ मलयालम, १३ उर्दू, १४ संस्कृत, १५ सिन्धी

यद्यापि पहले इस अनुसूची में केवल शुरू की १४ भाषाओं का उल्लेख था' तथापि कुछ वर्ष पूर्व सिन्धी भाषी लोगों की माँग को स्वीकार कर, संसद ने संविधान में सुधार किया और इस अनुसूची में सिन्धी को स्थान दिया।

राजभाषा (official language of the union government) और **राष्ट्रभाषा** (national language) दोनों शब्द व्यावहारिक दृष्टि से यद्यपि भिन्न हैं, तो भी जब आम लोग हिन्दी को आपस के आन्तरप्रान्तीय व्यवहार के लिए काम में लाएँगे, तब वह राष्ट्रभाषा कहलाएगी। मगर जब सरकारी प्रयोजनों के लिए वह प्रयोग की जाएगी तब कानून की दृष्टि से वह 'राजभाषा' कहलाएगी।

राजभाषा-आयोग (official language commission)

संविधान की ३४४ वीं धारा के अनुसार राष्ट्रपति ने ७ जून १९५५ को 'राजभाषा-आयोग' की नियुक्ति की। इस आयोग के अध्यक्ष श्री बा. गं. खेर (भूतपूर्व मुख्य मंत्री, बम्बई राज्य) थे और सदस्यों के रूप में विभिन्न राज्यों और प्रदेशों के कुल २० प्रतिनिधि थे। इस आयोग की पहली बैठक में एक प्रश्नावली तैयार की गयी। तत्पश्चात् आयोग के सदस्यों ने भारत के सभी प्रदेशों में दौरा किया और उक्त प्रश्नावली के सन्दर्भ में विभिन्न राज्यों के मुख्य मंत्री, शासकीय अधिकारी, शिक्षण तज्ज्ञ, पत्रकार, साहित्यकार, विभिन्न क्षेत्रों के कार्यकर्ता आदि से मिलकर उनके मतों और विचारों की जानकारी प्राप्त की।

उपर्युक्त जानकारी के आधार पर आयोग ने अपना प्रतिवेदन १९५६ में तैयार किया और उसे अगस्त १९५७ में संसद के सम्मुख प्रस्तुत किया। इसपर विचार-विनिमय करके इस विषय में (संसद को) सिफारिश करने के लिए संसद ने लोकसभा के बीस और राज्यसभा के दस सदस्यों की 'राजभाषा-समिति' नियुक्त की।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रतिक्रिया -- राजभाषा के प्रतिवेदन के प्रकाशित होते ही दक्षिण भारत में बड़े-बड़े नेताओं के नेतृत्व में हिन्दी को राजभाषा बनाने के विरोध में मत प्रचार शरू किया गया। इन विरोधियों के अनुसार, हिन्दी को राजभाषा बनाने से अहिन्दी भाषियों के साथ अन्याय होगा, उन्हें हिन्दी में प्रावीण्य प्राप्त नहीं होने पर भारी नुकसान पहुँचेगा और वे सरकारी क्षेत्रों में पिछड़ जाएँगे। इन लोगों ने हिन्दी के विरोध के साथ ही अंग्रेज़ी का समर्थन करना शुरू किया। इस सम्बन्ध में एक भारी आन्दोलन ही शुरू हो गया। जान पड़ता है कि इसके फलस्वरूप राष्ट्रपति ने १९६० में द्वितीय राजभाषा-आयोग की नियुक्ति नहीं की, जो संविधान के अनुसार होनी चाहिए थी।

'राजभाषा-समिति' ने 'राजभाषा-आयोग' की सिफारिशों के लगभग ९० प्रतिशत अंशों को स्वीकार करने की सिफारिश की। 'समिति' के प्रतिवेदन में से प्रमुख बातें निम्न-लिखित हैं। *

१. सरकारी कर्मचारियों को हिन्दी में प्रावीण्य सम्पादित करना साधारण रूप में आवश्यक माना जाए। फिर भी अधिक अवस्थावाले कर्मचारियों के लिए हिन्दी का ज्ञान अनिवार्य न माना जाए।

२. जब तक आवश्यक प्रतीत हो, तब तक शासकीय विभागों में अंग्रेज़ी के पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग जारी रखा जाए।

३. सरकार अपने कारोबार में हिन्दी के प्रयोग के लिए समय-सारिणि तथा कार्य-योजना तैयार करे।

४. संसद का कामकाज हिन्दी या अंग्रेज़ी में चलाया जा सकता है। १९५६ या उसके बाद जब अंग्रेज़ी का स्थान हिन्दी लेगी, तब तक संसद में अधिनियम आदि बनाने का काम अंग्रेज़ी द्वारा जारी रहे और साथ में उसका प्रामाणिक हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया जाए।

५. उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश राज्यभाषा और हिन्दी का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त करें।

इत्यादि।

'समिति' के प्रतिवेदन पर सात सदस्यों ने टिप्पणियाँ जोड़ कर कई बातों में अपना मतभेद प्रकट कर लिया है।

समिति की यह सिफारिश है कि सन् १९६५ तक अंग्रेज़ी भारत सरकार के कामकाज की प्रधान भाषा रहे और इस अवधि में हिन्दी गौण रूप में रहे। १९६५ के बाद हिन्दी प्रधान राजभाषा रहे और अंग्रेजी को गौण भाषा का स्थान दिया जाए।

---

* अधिक जानकारी के लिए देखिए — '**राष्ट्रभाषा का आन्दोलन** —
— श्री गो. प. नेने (१९६३)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१९६४ – ६५ में संसद में राजभाषा का प्रश्न प्रस्तुत हुआ और यह निर्णय हुआ कि १९६५ के बाद भी राजभाषा के रूप में अंग्रेज़ी और हिन्दी दोनों भाषाएँ जारी रहें।

✦ ✦ ✦

(उ) पोतदार–समिति रिपोर्ट

स्वतंत्र भारत के प्रत्येक अहिन्दी-भाषी राज्य सरकार का अपने राज्य में राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रचार और शिक्षा का प्रबन्ध करना कर्तव्य है। बम्बई राज्य -सरकार ने इस क्षेत्र में शीघ्र ही कदम उठाया। इस राज्य की समस्या उसकी बहुभाषिकता के कारण बड़ी पेचीदी बनी थी। उसने अपने एक प्रस्ताव द्वारा (Government of Bombay, Resolution-Education Department No. 7436 – 17 th May, 1950) पूना विश्वविद्यालय के तत्कालीन उपकुलपति महामहोपाध्याय **प्रो. द. वा. पोतदार** की अध्यक्षता में एक समिति कायम की जो **पोतदार – समिति** ' नाम से मशहूर हुई। उसके सदस्य निम्न-लिखित ,सज्जन थे —

१. महामहोपाध्याय द. वा. पोतदार (अध्यक्ष), २. श्री मगनभाई देसाई ३. श्री गो. प. नेने, ४. श्रीमती पेरिनबेन कॅप्टन, ५. श्री सिद्धनाथ पन्त। बम्बई-विभाग के एज्युकेशनल इन्स्पेक्टर इस समिति के कार्यवाह (सेक्रेटरी) नियुक्त हुए थे।

समिति को भिन्न-भिन्न बातों के बारे में सूचनाएँ पेश करने का काम सौंप दिया गया था, जैसे — (अ) माध्यमिक पाठशालाओं की पाँचवीं से ग्यारहवीं कक्षाओं में हिन्दी की शिक्षा अनिवार्य रूप में जारी करना, (आ) तीसरी, चौथी कक्षाओं में सम्भाषणात्मक प्रणाली से हिन्दी की शिक्षा दें या न दें, इसका निर्णय करना। (इ) माध्यमिक पाठशालाओं के लिए हिन्दी का पाठचक्रम् तैयार करना, (ई) **हिन्दी के अध्यापकों** की शिक्षा का प्रबन्ध और उनके लिए पाठ्य-क्रम तैयार करना, (उ) पाठ्य-पुस्तकों का चुनाव आदि।

इस समिति की पहली सभा १५ जून १९५० को और दसवीं और आखिरी बैठक १० मार्च १९५१ को हुई। समिति की सूचनाएँ और कामकाज का प्रतिवेदन ' पोतदार-समिति रिपोर्ट ' कहलाता है। बम्बई सरकार ने इस ' रिपोर्ट ' की सूचनाओं को स्वीकार किया।

शुरू में समिति ने ऊपर लिखे प्रश्नों पर लोगों से सूचनाएँ मँगवायी थीं।

समिति का कार्य और निर्णय : संविधान की राजभाषा सम्बन्धी ३४३ से ३५१ तक की धाराओं की व्याख्या करना समिति ने आवश्यक महसूस किया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और उसके अनुसार स्पष्टीकरण करते हुए कहा 'राजभाषा हिन्दी' और उत्तर प्रदेश की हिन्दी दोनों पूर्णतः एक नहीं हो सकतीं। राजभाषा हिन्दी का विकास हो रहा है और भिन्न-भिन्न भाषा-भाषी लोगों के सहयोग से उसका विकास होगा।

(अ) माध्यमिक पाठशालाओं की पाँचवीं कक्षा से लेकर ग्यारहवीं तक के लिए हिन्दी का पाठ्यक्रम नियत किया गया। पाठ-पुस्तकों का स्वरूप, व्याकरण, लेखन आदि के बारे में सूचनाएँ पेश की गयीं। (आ) तीसरी और चौथी कक्षाओं में हिन्दी न पढ़ायी जाए, इसलिए कि उसका असर बालकों की प्रादेशिक भाषा की शिक्षा पर बुरा होगा। सिर्फ लिपि की शिक्षा देने से कोई हानि नहीं पहुँचेगी। इसलिए इन कक्षाओं में नागरी लिपि पढ़ायी जा सकती है। The committee, however wants to suggest that the teaching of the Nagari Alphabet could and should be advantageously introduced in the aforesaid standards III and IV-But such regular teaching must be confined to the mastery of the Nagari alphabet only. (...Report, page 23, clause IV) (इ) नागरी लिपि का व्यवहार में जो रूप रूढ़ है, उसे स्वीकार किया गया। यद्यपि कुछ वर्ण भिन्न-भिन्न ढंग से लिखे जाते हैं (इ – अि, उ – अु आदि) तथापि जब तक केन्द्रीय सरकार एक विविष्ट प्रणाली को नहीं स्वीकार करती, तब तक बम्बई सरकार भी प्रचलित प्रणालियों का प्रयोग करने की सहूलियत दे। (ई) अध्यापकों के लिए शिक्षा के प्रबन्ध और पाठ्य-क्रम के बारे में सूचनाएँ पेश की गयीं।—पाँचवीं, छठी और सातवीं कक्षाओं को पढ़ानेवाले हिन्दी के अध्यापकों के लिए '**लोअर या प्राथमिक हिन्दी शिक्षक सनद**' और उच्च कक्षाओं के अध्यापकों के लिए '**हायर या माध्यमिक हिन्दी शिक्षक सनद**' परीक्षाएँ स्थापित करें। उनके लिए पाठ्य-क्रम तैयार किया गया। वैसे ही **नॉन-बेसिक ट्रेनिंग कॉलेजों** और **बेसिक ट्रेनिंग कॉलेजों के** लिए भी पाठ्य-क्रम नियत किया गया।

उ — लोकल बोर्डों की पाठशालाओं की पाँचवीं से सातवीं कक्षाओं में जब तक हिन्दी की शिक्षा अनिवार्य नहीं होगी, तब तक माध्यमिक पाठशालाओं की कक्षाओं में हिन्दी की शिक्षा की समस्या कठिन होगी। उसे कैसे हल करें, इसके बारे में भी सूचनाएँ पेश की गयीं।

पोतदार समिति की रिपोर्ट ६६ पृष्ठों की है। समिति की नियुक्ति हुई तब कुछ लोगों ने सरकारी नीति और सदस्यों के चुनाव के बारे में विरोधी राय प्रदर्शित की, वैसे ही रिपोर्ट के ज़ाहिर होने के बाद भी उसमें व्यक्त किये 'हिन्दी' सम्बन्धी विचारों के खिलाफ आवाज उठायी थी, जो काल-प्रवाह में दब गयी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

समिति की रिपोर्ट के अनुसार बम्बई राज्य में जून १९५१ से हिन्दी की शिक्षा का प्रबन्ध किया गया। इस प्रदेश की हिन्दी की शिक्षा के इतिहास में इस समिति का कार्य विशेष उल्लेख के योग्य समझा जाता है।

✦ ✦ ✦

(ऊ) नागरी लिपि

(१) **उत्पत्ति और विकास** : अभी तक लिपि-वैज्ञानिकों ने जो खोज की है, उससे मालूम होता है कि भारत में लेखन-कला का प्रचार ईसा के पूर्व चौथी सदी के बहुत पहले से होता आया है। प्राचीन काल में भारत में **खरोष्ट्री** और **ब्राह्मी** नामक दो लिपियाँ प्रचलित थीं। ब्राह्मी लिपि भारत की अपनी खोज है। इस लिपि के विकास की दूसरी अवस्था '**गुप्त लिपि**' कहलाती थी जो तीसरी-चौथी सदी में प्रचार में थी। उसकी तीसरी अवस्था '**कुटिल लिपि**' कहलाती थी, जो सातवीं-आठवीं शताब्दी में व्यवहृत होती थी। आज की नागरी लिपि का उद्गम करीब दसवीं शताब्दी में हुआ है। बंगला, मैथिली, गुरुमुखी, महाजनी, गुजराती, शारदा आदि ही नहीं, बल्कि कन्नड, तमिल आदि लिपियों का मूल प्राचीन ब्राह्मी ही है। यह ब्राह्मी लिपि उस वक्त पश्चिमोत्तर भारत को छोडकर समूचे भारत में प्रचलित थी।

'नागरी' या 'देवनागरी' नाम क्यों पड़ा यह प्रश्न विवाद्य है। कोई उसका सम्बन्ध 'नगर' से जोड़ते हैं, तो कोई 'देवता, से।

(१) **नागरी लिपि की कतिपय विशेषताएँ** — (अ) : यह लिपि अपनी विशेषताओं के करण दुनिया की सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक लिपि कहलाती है। इसकी जिस विशेषता ने उसे यह श्रेष्ठ पद दिलाया है, वह है उसका **उच्चारणानुसारित्व**। यह एक ही लिपि ऐसी है कि जिसमें हरएक ध्वनि स्वतंत्र लिपि-चिह्न से अंकित की जाती है। दुनिया की किसी भी भाषा को इस लिपि में लिखा जा सकता है। इसमें 'स्पेलिंग' नहीं करना पड़ता। एक लिपि चिह्न से एक ही ध्वनि का बोध होता है। अंग्रेज़ी (रोमन लिपि) के A का उच्चारण mat में अॅ, mate में ए, castमें आ, scholar में अ होता है; और भी कई वर्णों द्वारा अ, ए आदि ध्वनियाँ व्यक्त होती हैं, जैसे — cut, motor, differ, firm आदि में क्रमशः u, o, e, i से अ ध्वनि व्यक्त होती है। फारसी लिपि में भी इस तरह स्पेलिंग (हिज्जे) करके लिखना पड़ता है। वैसे इस लिपि में नहीं। (यहाँ यह ध्यान में रखें कि यद्यपि नागरी लिपि उच्चारणानुसारी कहलाती है, फिर भी आजकल शब्द के बीच में या अन्त में आये हुए अक्षर के अनुच्चारित अ को ध्यान में न लेकर उसके स्थान में पूर्ण आ-कारान्त अक्षर ही लिखते हैं। जैसे **लगभग, करीब, लेटना,**

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

स्वस्थ। बड़े टाइपवाले अक्षरों में स्थित अ स्वर का उच्चारण नहीं होता, तो भी उनके स्थान में ग्, व, ट् आदि शुद्ध व्यंजन – हलन्त – नहीं लिखते।)

(आ) यह लिपि दीखने में **सुन्दर और आकर्षक** है।

(इ) मुद्रण-कला की दृष्टि से इसमें टाइप ज्यादा तादाद में बनाने पड़ते हैं और टंकलेखन (type-writing) की दृष्टि से उसके यंत्र की रचना जटिल अवश्य होती है। फिर भी उसकी पहली विशेषता की तुलना में यह असुविधा नगण्य है।

(ई) वह आसानी से आत्मसात की जा सकती है।

यह लिपि भारत की अपनी खोज ब्राह्मी लिपि से विकसित हुई है, यह प्राचीन है, वह भारतीय है और यह भारत में अन्य किसी भी लिपि से अधिक लोगों में प्रचलित है। (समूचे हिन्दी भाषी प्रदेश ओर मराठी-भाषी प्रदेश की यह अपनी लिपि है तथा संस्कृत जैसी प्राचीन भाषा के लिए उसका भारत के कोने-कोने में प्रचार हुआ है। अब यह लिपि भारत की राष्ट्र-लिपि बनने का सौभाग्य प्राप्त कर सकी है।)

(३) **नागरी लिपि के प्रचलित रूप और सुधार :** अ –– नागरी लिपि के कुछ लिपि-चिह्न उत्तर-भारत में जैसे लिखे जाते हैं, वैसे मराठी भाषी लोगों द्वारा नहीं लिखे जाते।

आ : कुल संयुक्त व्यंजनों को भी भिन्न-भिन्न ढंग से लिखा जाता है। जैसे –क्त = क्त, क्ष = क्ष, ल्ल = ल्ल, श्च = श्च, प्र = प्र आदि।

इ : कई लोग इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, –– जुदा ढंग से लिखते हैं। जैसे –– क्रमश: अि, अी, अु, अू, अृ, अे, अै। राष्ट्रभाषा की प्रचार संस्थाओं ने अि, अी, अु, अृ आदि चिह्नों को अपनाया है।

ई : क़्, ख़्, ग़्, ज़्, फ़् ध्वनियाँ फारसी से हिन्दी में आयी हैं।

क्, ख्, ग्, ज्, फ् से उन्हें अलग करने के लिए उनके नीचे नुक्ता दिया जाता है। आजकल नुक्ता न देने की प्रवृत्ति बढ़ रही है, जो वास्तव में उचित नहीं है। जब तक उक्त लिपि-चिह्नों के उच्चारण में भिन्नता है, तब तक उन्हें अलग ढंग से लिखना ही समुचित होगा।

उ : कुछ लोग कारक-चिह्नों को संज्ञा आदि शब्दों से पृथक लिखते हैं, तो कुछ लोग उन्हें सटकर लिखते हैं।

(४) **लखनऊ-लिपि-परिषद** द्वारा की गयी सूचनाएँ — १९५३ में लखनौ में जो लिपि-परिषद सम्पन्न हुई, उसने नागरी-लिपि में कुछ सुधार सुझाये हैं। आज भारत के विभिन्न प्रदेशों में कुछ अक्षरों के भिन्न-भिन्न रूप प्रचलित हैं। उस विभिन्नता को हटाते हुए चारों तरफ एक-सी लिपि को स्वीकार किया जाए – इस

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दृष्टि से नागरी लिपि का परिनिष्ठित रूप इस परिषद ने पेश किया है। तत्कालीन बम्बई तथा उत्तर प्रदेश की सरकार ने उक्त परिषद की सूचनाओं को स्वीकार किया था। केन्द्रीय सरकार ने भी इसी दिशा में कदम उठाया है। इस परिषद द्वारा सुझायी गयी परिनिष्ठित नागरी वर्णमाला —

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ
ए ऐ ओ औ अं अः
क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ
ण त थ द ध न प फ ब भ म य र ल
व श ष स ह ळ क्ष ज्ञ
१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, ०.

(१) शिरोरेखा का प्रयोग प्रचलित रहे। (२) ह्रस्व इ की मात्रा को छोड़कर शेष मात्राओं के वर्तमान स्वरूप यथावत् रहें। (३) ह्रस्व 'इ' की मात्रा अक्षर की बायीं ओर न लिखकर दाहिनी ओर लिखी जाए। वह वैसी ही होनी चाहिए जैसी दीर्घ 'ई' की है, अन्तर दोनों में यह रहेगा कि ह्रस्व की मात्रा ऊपर से नीचे आती हुई शिरोरेखा पार करते ही समाप्त हो जाए। जैसे —

क् + इ = क् + ी = की। खी, गी, घी,

कीताब, चीड़ीया, लीपी, चाहीए,

(४) फुलस्टाप और कोलन को छोड़कर शेष विरामादि चिह्न वही ग्रहण कर लिये जाएँ जो अंग्रेज़ी में प्रचलित हैं। जैसे –, —, , ; ! ? (५) पूर्ण विराम के लिए खड़ी पाई (।) का प्रयोग किया जाए।

[इस लिपि का प्रयोग हिन्दी की पाठ्य-पुस्तकों में अनिवार्य रूप में कराया गया। नतीजा यह हुआ कि नयी लिपि को अपनाये जाने से खास तौर पर मराठी-भाषी विद्यार्थियों को कठिनाई का सामना करना पड़ा। मातृभाषा और संस्कृत के लिए पुरानी-लेखन-प्रणाली और हिन्दी के लिए नयी प्रणाली! सरकार के सामने इस समस्या को पेश किया गया और प्रार्थना की गयी कि लखनऊ-लिपि-परिषद की सूचनाओं को कार्यान्वित न किया जाए। जनमत तथा शिक्षार्थियों की कठिनाई का

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खयाल करते हुए बम्बई सरकार के शिक्षा-विभाग ने यह प्रार्थना स्वीकार की और फिर से पुरानी लेखन-प्रणाली को अपनाने की अनुमति दी।]

(५) एक लिपि की आवश्यकता — पचास साल पहले स्व. लोकमान्य तिलक ने यह क्रान्तिकारी विचार प्रकट किया कि समूची भारतीय भाषाओं के लिए। एक नागरी लिपि को स्वीकार करना चाहिए। उस वक्त ऐसी मनोभूमिका नहीं तैयारी हो पायी थी कि जिसमें इस क्रान्तिकारी विचार के बीज बोये जा सकें। आज विचारकों को इस बात पर गौर करना चाहिए। नागरी लिपि उच्चारणानुसारी होने के कारण उसे स्वीकार करना कठिन नहीं होगा। हाँ, यहाँ भाषाभिमान को ज़बरदस्त धक्का पहुँचेगा अवश्य। फिर भी यह विचारणीय जरूर है। कम से कम अपने प्रादेशिक लिपि के साथ नागरी को भी स्वीकार करने में कोई हानि नहीं होगी। रूस ने क्रान्ति के बाद इस दृष्टि से कदम उठाया था, जिसमें उसे सफलता मिली है। इससे कुछ भाषाओं में एकसूत्रता आएगी और भिन्न-भिन्न भाषाओं के लिखनेवालों की भाषाओं को समझने में सुविधा होगी। हरएक नागरिक को नागरी लिपि राष्ट्रलिपि के तौर पर सीखनी आवश्यक है। इसलिए नागरी लिपि को अपनी-अपनी भाषा के लिए अपनाने में उन लोगों को कठिनाई अनुभव नहीं होगी।

✦ ✦ ✦

(ए) मानक देवनागरी वर्णमाला

देवनागरी लिपि के वर्णों का मानक (Standard) स्वरूप निर्धारित करने और टंकलेखन (Typing) तथा मुद्रण की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के उद्देश्य से १९५३ में उत्तर प्रदेश सरकार ने लखनऊ में एक परिषद का आयोजन किया। उसमें विद्वानों द्वारा अनेक सुझाव पेश किये गये। लेकिन बहुत-सी राज्य-सरकारों ने 'लखनऊ परिषद' की सिफारिशों को अस्वीकार किया। फलस्वरूप उत्तर प्रदेश सरकार ने १९५७ में दूसरी परिषद आयोजित की। इसमें प्रथम परिषद में किये गये निर्णयों के विषय में पुनर्विचार कर उनमें कुछ परिवर्तन-संशोधन किये और उन्हें परिवर्तित रूप में स्वीकार किया। तत्पश्चात् भारत सरकार के शिक्षा-मंत्रालय ने विशेषज्ञों का एक सम्मेलन आयोजित कर इस विषय में उनका मत जानना चाहा। ९ अगस्त १९५९ को भारत सरकार के राज्यों के शिक्षा-मंत्रियों के सम्मेलन में यह विषय प्रस्तुत किया गया। इस सम्मेलन में १९५३ की लखनऊ परिषद की सिफारिशों को १९५७ के लखनऊ परिषद द्वारा किये गये परिवर्तन-संशोधन के साथ कुछ स्पष्टीकरण सहित स्वीकार किया गया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अब भारत सरकार द्वारा अनुमोदित मानक देवनागरी वर्णमाला नीचे लिखे अनुसार है :—

स्वर : अ आ इ ई उ ऊ ॠ ए ऐ ओ औ अं अः

मात्राएँ : ा ि ी ु ू े ै ो ौ ं :

व्यंजन : क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ;

ट ठ ड ढ ण; त थ द ध न;

प फ ब भ म; य र ल व;

श ष स ह; ड़ ढ़ ळ; क्ष ज्ञ श्र

अंक १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ ०

1 2 3 4 5 6 7 8 9 0

स्पष्टीकरण :

संयुक्ताक्षर – (अ) **खड़ी पाई-वाले व्यंजनों** (ख ग घ च ज झ ञ ण त थ ध न प फ ब भ म य ल व श ष ज्ञ

का संयुक्त रूप खड़ी पाई को हटाकर ही बनाया जाए।

जैसे : ख्य (ख्याल), ख्व (ख्वाब), ज्व (ज्वाला) क्ष्य (लक्ष्य), ग्य (ग्यारह), ग्न (भग्न) प्न (स्वप्न) त्न (यत्न) इत्यादि।

(आ) **अन्य व्यंजन :** (१) क, और फ के संयुक्ताक्षर बनाने की वर्तमान पद्धति कायम रहेगी।

जैसे : क्व (क्वचित्), क्क (पक्का) फ्त (हफ्ता)। (२) ङ, छ, ट, ठ, ड, ढ, द के संयुक्ताक्षर हल् (्) चिह्न लगाकर ही बनाये जाएँ। जैसे ङ्म (वाङ्मय), ट्ट (पट्टा), ट्ठ (पुट्ठा), छ्व (उच्छ्वास), द्य (विद्या। इत्यादि। (३) संयुक्त अक्षर के र के पुराने तीनों रूप स्वीकृत हैं। जैसे :– ्र, र्, ्र प्रभा, धर्म, राष्ट्र। (४) श्र का पुराना रूप कायम रहे। जैसे श्र (श्रम, श्रीमान, श्रीधर, आश्रय)। (५) त्र और त्र दोनों रूप प्रचलित रहें। जैसे :– त्राता, त्राता। (६) ह का संयुक्त रूप वर्तमान प्रणाली के साथ ही हल (्) लगाकर भी किया जा सकेगा। जैसे : ह्न (चिह्न, चिह्‌न)। (७) संस्कृत में संयुक्ताक्षर पुरानी शैली से भी लिखे जा सकेंगे।

अन्य : (अ) हिन्दी में ॠ (दीर्घ ॠ) का प्रयोग नहीं होता, इसलिए उसे हिन्दी वर्णमाला में स्थान नहीं दिया जाए। (आ) शिरोरेखा प्रयोग चलता रहेगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(इ) पूर्ण विराम के रूप में खड़ी पाई (।) का प्रयोग किया जाए। अन्य विराम-चिह्न वही रहें जो अंग्रेज़ी में प्रयुक्त होते हैं। (ई) अनुस्वार और अनुनासिक दोनों प्रचलित रहें। (उ) कुछ विशेष प्रयोजनों को छोड़कर सभी सरकारी हिन्दी प्रकाशनों में अन्तर्राष्ट्रीय अंकों (1, 2, 3, 4 ...) का प्रयोग किया जाए।

✦ ✦ ✦

(ऐ) मानक हिन्दी वर्तनी

शब्दों के अन्तर्गत वर्ण वा वर्णों तथा वाक्य या वाक्यांश के अन्तर्गत शब्दों के लेखन की पद्धति को वर्तनी कहते हैं। आज नागरी का प्रयोग करनेवाले लोग मनमाना प्रयोग करते दिखायी देते हैं। इसलिए एक ही अक्षर के वा शब्द के विभिन्न रूप प्रचलित हैं। जैसे : जाय, जाये, जाए, जावे। गाएँगे, गायँगे, गावेंगे, गायेंगे। नयी-नई। लिए-लिये। पायी-पाई। चाहिये-चाहिए। अबतक-अब तक। रामसे-राम से। तुमसा-तुम-सा। गये-गए। भय्या-भैया। फांस-फाँस इत्यादि।

इस अस्तव्यस्थता को दूर करना आवश्यक है। इस दृष्टि से भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय ने हिन्दी वर्तनी की मानक पद्धति निर्धारित करने के लिए विशेषज्ञों की एक समिति १९६१ में नियुक्त की। इस समिति ने अपनी नियमावली १९६२ में प्रस्तुत की। सरकार ने इस नियमावली को स्वीकार किया।

मानक हिन्दी वर्तनी की नियमावली नीचे लिखे अनुसार है :—

(१) हिन्दी के कारक-चिह्न (विभक्तियाँ) सर्वनामों को छोड़कर सभी प्रसंगों में प्रतिपादिक से अलग लिखे जाएँ। जैसे :— मनुष्य ने, मनुष्यों ने, नदियों में इ.

(२) सर्वनाम में कारक-चिह्न मिलाकर लिखा जाए। जैसे :— मैंने, मुझको, मुझसे, मुझमें, मुझपर; हमने, हममें, तुझपर, तुमपर, उसका, इसमें, किसमें जिसका, जिनका इत्यादि।

लेकिन (३) यदि सर्वनाम के साथ यदि दो विभक्ति-चिह्न प्रयुक्त किये जा रहे हों, तो उनमें से पहला मिलाकर और दूसरा अलग लिखा जाए। जैसे :— हममें से, उसपर का, इत्यादि। और

सर्वनाम और कारक-चिह्न के बीच **ही, तक** आदि का प्रयोग किया जानेवाला हो, तो कारक-चिह्न को अलग लिखा जाए जैसे :—आप ही से, मुझ तक पर इत्यादि। उसी प्रकार :— उसी का, इसी में, किसी पर, किन्हीं का, मुझी पर, तुम्हीं ने इत्यादि।

(४) संयुक्त क्रिया के अंगभूत शब्द अलग-अलग लिखे जाएँ। जैसे :— कर रहा है; करता रहा होगा; इत्यादि।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(५) धातु से 'कर' (के) प्रत्यय मिलाकर लिखा जाए। जैसे :– जाकर, लिखकर, करके

(६) तक, भी, ही, आदि अव्यय शब्द से अलग लिखे जाएँ। जैसे :– शहर तक, तुम भी, साथ ही।

(७) द्वंद्व समास के पदों के बीच छोटी रेखा अंकित की जाए। जैसे :– राधा-कृष्ण, राम-सीता।

(८) सा, (सी, से) जैसा (जैसी, जैसे) के पूर्व छोटी रेखा अंकित की जाए। जैसे :– तुम-सा, नदी-सी, पेड़ों-से, राम-जैसा, नदी-जैसी, उनका-सा इत्यादि।

(९) तत्पुरुष समास के पदों में छोटी रेखा का प्रयोग केवल वहीं किया जाए, जहाँ उसके नहीं होने पर भ्रम उत्पन्न होने की सम्भावना हो – अन्यथा नहीं। जैसे :– भू-तत्त्व (**भूतत्व** नहीं), आ-कार, ई-कारान्त

(१०) कुछ शब्दों में श्रुति-मूलक **य, व** का प्रयोग विकल्प से होता है। जैसे :– जाएगा, जायगा, जायेगा, जावेगा; होएगा – होवेगा; गये-गए, नये-नए इत्यादि। ऐसे स्थान पर स्वरों का ही प्रयोग किया जाए। जैसे :– गए, किए, लिए, पिए, दिए; हुआ, हुई, हुए, नए, नई इत्यादि। जाएगा, पिएगा, पिएँगे इत्यादि।

(११) ऐ, औ का प्रयोग दो प्रकार की ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए होता है। जैसे :–(क) है, हैं, कैं, मैं – जैसे शब्दों में और (ख) गवैया, कौआ जैसे शब्दों में। दोनों प्रकार की ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए ै, ौ चिह्नों को ही प्रयुक्त किया जाए। इस प्रकार न लिखें – नय्या (नैया), भय्या (भैया), गवय्या (गवैया), कव्वा (कौआ)।

(१२) संस्कृत-मूलक तत्सम शब्दों की वर्तनी में सामान्यत: संस्कृत रूप ही रखे जाएँ।

परन्तु जिन शब्दों के प्रयोग में हलन्त चिह्न (्) का लोप चुका है, उनमें उसको फिर से लगाने का यत्न न किया जाए। जैसे :– महान, विद्वान, गुणवान, अर्थात, यथावत इत्यादि।

(१३) जहाँ पंचमाक्षर (ङ, ञ, ण, न, म) के बाद उसी के वर्ग के शेष चारों में से कोई वर्ण हो, वहाँ अनुस्वार का ही प्रयोग किया जाए। जैसे :– अंत ('अन्त' नहीं), परंतु, लंबा, कंठ, ठंड पसंद इत्यादि।

लेकिन – वाङ्मय, साम्य, काम्य, कन्या, पुण्य इत्यादि।

(१४) चंद्रबिंदु (ँ) और अनुस्वार (ं) चिह्नों से उच्चारण की भिन्नता सूचित होती है। जैसे :– हँस ('हँसना' में) और **हंस**। इन चिह्नों का उचित रूप में प्रयोग न करने पर अर्थ की दृष्टि से भ्रम की गुंजाइश रहती है। ऐसे भ्रम को दूर करने के लिए इनका प्रयोग यथास्थान किया जाए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लेकिन जहाँ चंद्रबिंदु के प्रयोग से छपाई आदि में कठिनाई हो और अनुस्वार का प्रयोग भ्रम उत्पन्न न करता हो वहाँ चंद्रबिन्दु के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग किया जाए। जैसे :– मैं, हैं।

(१५) अरबी-फारसी-मूलक वे शब्द जो हिन्दी का अंग बन चुके हैं और जिनकी विदेशी ध्वनियों का हिन्दी ध्वनियों में रूपान्तर हो चुका है, उन्हें हिन्दी रूप में ही स्वीकार करें। जैसे :– करीब, खरीदना, गरीब, ज़रूर, फकीर

लेकिन जहाँ पर उनका शुद्ध विदेशी रूप में प्रयोग अभीष्ट हो, वहाँ उनके हिन्दी के प्रचलित रूपों में यथास्थान नुक्ते लगाये जाएँ, जिनसे उनका विदेशीपन स्पष्ट रहे। जैसे :–राज़, ज़रा, नाज़।

(१६) अंग्रेज़ी के जिन शब्दों में अर्ध विवृत 'औ' ध्वनि का प्रयोग होता है उनके शुद्ध रूप का हिंदी में प्रयोग अभीष्ट होने पर आ की मात्रा के ऊपर अर्धचंद्र का प्रयोग किया जाए। जैसे–डॉक्टर, ऑनररी।

(१७) संस्कृत के जिन शब्दों में विसर्ग का प्रयोग होता है वे यदि तत्सम रूप में प्रयुक्त हों तो विसर्ग का प्रयोग अवश्य किया जाए। जैसे– दुःखानुभूति। परंतु यदि उस शब्द के तद्‌भव रूप में विसर्ग का लोप हो चुका हो तो उस रूप में विसर्ग के बिना भी काम चल जाएगा। उदा. सुख-दुख के साथी।

*[इस पुस्तक के मुद्रण में उपर्युक्त नियमावली का पूर्णतः नहीं, अंशतः ही निर्वाह किया गया है।]

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

परिशिष्ट -२

(क) हिन्दी : परीक्षा की प्रश्न-पत्रिका

परीक्षा वह साधन है, जिससे यह देखा जाता है कि छात्रों ने पढ़ाई अथवा अध्ययन में कहाँ तक प्रगति की है। प्रत्येक कक्षा के लिए प्रत्येक विषय का पाठ्य-क्रम नियत होता है। वर्ष की अवधि के खण्ड बनाकर सत्रों (terms) की योजना की जाती है और नियत पाठ्यक्रम को भी उसी विचार से विभाजित किया जाता है। अध्यापक का यह कर्तव्य है कि वह सत्रानुसार नियत पाठ्यक्रम को पूर्ण करे। प्रायः प्रत्येक सत्र के अन्त में परीक्षा आयोजित की जाती है।

१. अब हिन्दी उपेक्षित विषय नहीं है, इसलिए हिन्दी के अध्यापक यह ध्यान रखें कि गणित, विज्ञान जैसे अन्य विषयों की भाँति हिन्दी को भी परीक्षा में अनिवार्य स्थान प्राप्त हो।

२. अन्य विषयों के लिए उत्तीर्णांक जितने नियत हैं, उतने ही हिन्दी के लिए भी हों।

३. हिन्दी की परीक्षा के दो विभाग हों — (अ) लिखित और (आ) मौखिक।

४. लिखित और मौखिक परीक्षा के लिए अंक क्रमशः ८० तथा २० अथवा १०० तथा २५ नियत हों।

५. दोनों विभागों में स्वतंत्र रूप से उत्तीर्ण होना आवश्यक माना जाए।

६. लिखित परीक्षा : अंक-विभाजन—

४० अंक : पाठ्य-पुस्तक के लिए।

शेष अंक : सामान्य प्रश्नों के लिए।

७. पाठ्य-पुस्तक पर प्रश्न : (अ) पाठ्य-पुस्तक के गद्य और पद्य पाठों पर छोटे-छोटे प्रश्न दिये जाएँ। (आ) कण्ठस्थ की हुई कविता की कुछ पंक्तियों का लेखन। (इ) वाक्यों का अथवा पद्य-पंक्तियों का सरल हिन्दी में अर्थ लिखना वा स्पष्टीकरण। उच्च कक्षाओं में ससन्दर्भ स्पष्टीकरण अपेक्षित है। (ई) कविता का भावार्थ-लेखन, (उ) कविता का केन्द्रीय विचार लिखना। (ऊ) पाठों पर आधारित कुछ वस्तुनिष्ठ प्रश्न। *

८. **व्याकरण** : (अ) व्याकरण प्रायोगिक तथा प्रश्न पाठ्य-पुस्तक पर आधारित ही हो। ये प्रश्न जहाँ तक बन सके वस्तुनिष्ठ हों।

---

* इस संबंध में स्वतंत्र रूप में चर्चा की जा रही है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

९. **मुहावरे और कहावतें** : पाठ्य-पुस्तक से ही मुहावरों और कहावतों को चुना जाए। अपेक्षित बातें --

-- मुहावरों का अर्थ लिखना और उनका उचित वाक्यों में प्रयोग करना।

-- मुहावरों का प्रयोग जिन वाक्यों में प्रयोग किया गया है, ऐसे वाक्यों का सरल हिन्दी में (मुहावरों को हटाकर) अर्थ लिखना।

-- कहावतों का अर्थ लिखना

-- कहावतों के लिए उचित सन्दर्भ तैयार करना।

१०. **पत्र-लेखन** : पत्र व्यक्तिगत स्वरूप के हों। पता, तारीख, प्रशस्ति, उपसंहार के लिए अंक नियत करें।

११. **अनुवाद** : हिन्दी से प्रादेशिक भाषा में ओर प्रादेशिक भाषा से हिन्दी में।

१२. **निबन्ध-लेखन**

१३. **सार-लेखन** : उच्च कक्षाओं में

१४. **विचार-ग्रहण** : उच्च कक्षाओं में

१५. **कहानी-लेखन** : कथा-रचना के लिए रूपरेखा दी जाए।

१६. **विस्तार-लेखन** : किसी कहावत या सूक्ति का अर्थ विस्तारपूर्वक समझाना। यह उच्च कक्षाओं के लिए नियत हो।

१७. **रसास्वादन** : उच्च कक्षाओं में।

उपर्युक्त प्रश्नों में से सभी का समावेश प्रश्नपत्रिका में करना असम्भव है। अतः या तो इनमें से कुछ प्रश्न एक परीक्षा में दें तो शेष दूसरी में। अथवा इन प्रश्नों को एक दूसरे के विकल्प में भी दिया जा सकता है। वैकल्पिक प्रश्नों का अपरिवर्तनशील रूप रहने पर विद्यार्थियों में उनमें से किसी एक का ही ध्यान रखने की प्रवृत्ति बढ़ती है। इसलिए वैकल्पिक रूप बदलता रहे, ताकि किसी प्रश्नविशेष की उपेक्षा करने की प्रवृत्ति छात्रों में विकसित न हो जाए।

१८. विराम-चिह्नों का उचित प्रयोग कराना।

१९. उत्तर पुस्तिका जाँचते समय लेखन शुद्धि का विशेष ध्यान रखा जाए। लेखन, व्याकरण आदि की दृष्टि से अधिक गलतियाँ करनेवाले छात्रों को अधिक अंक नहीं दिये जाएँ।

२०. लिखित परीक्षा में उत्तीर्ण होना आनिवार्य माना जाए।

२१. निबन्ध, कहानी, विस्तार-लेखन आदि के लिए दिये जानेवाले विषयों में से कुछ पाठ्य-पुस्तक के पाठों पर आधारित हों।

२२. मौखिक परीक्षा अनिवार्य हो।

(इसके सम्बन्ध में स्वतंत्र रूप में चर्चा की जा रही है।)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

निर्भर है। जो उचित मार्ग-दर्शन में हिन्दी में बोलने का अभ्यास अधिक करता हो, जिसे अच्छी हिन्दी सुनने का मौका भी अधिक मिलता हो, वह प्रायः अच्छी हिन्दी बोल सकता है। मौखिक परीक्षा एक दृष्टि से उसकी भाषणादि शक्तियों की परीक्षा करना है, तो दूसरी दृष्टि से बोलने का अभ्यास करने के लिए प्रेरित करने का साधन भी है।

इसलिए हिन्दी की लिखित परीक्षा के साथ ही छात्रों के लिए मौखिक परीक्षा का भी आयोजन किया जाए। ऐसी परीक्षा के लिए प्रतिशत बीस अथवा स्वतंत्र रूप में पचीस अंक नियत हों और मौखिक परीक्षा में उत्तीर्ण होना पूरी परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिए आवश्यक समझा जाए।

मौखिक परीक्षा के विषय में निम्न-लिखित बातें ध्यान में रखी जाएँ :—

१ **पठन** : आठ-दस पंक्तियों का एक परिच्छेद पठन के लिए दिया जाए। यह परिच्छेद पाठ्य-पुस्तक में से न हो अर्थात पूर्व-पठित न हो। परीक्षार्थी की पठन-कला की परीक्षा की जाए। अर्थात स्पष्ट उच्चारण, उचित आरोह-अवरोह का प्रयोग, विराम-चिह्नों के अनुसार पठन आदि का विचार किया जाए।

२ **अर्थग्रहण** : पठन का उद्देश्य है लिपिबद्ध विचारों को ग्रहण करना। इसलिए पठित गद्य-खण्ड पर दो-चार प्रश्न पूछ कर यह देखा जाए कि छात्र ने उसे कहाँ तक ग्रहण किया है। उक्त पंक्तियों का भावार्थ वा सारांश कहने को भी बताया जा सकता है। किसी शब्द का वा मुहावरे का अर्थ भी पूछें।

३ कुछ सामान्य प्रश्न।

४ उच्च कक्षाओं के छात्रों को कोई विषय देखकर उसपर आठ-दस वाक्यों में अपने विचार व्यक्त करने को कहा जाए।

इनसे छात्रों की भाषण शक्ति तथा भाषण कला की परीक्षा होगी।

५ कण्ठस्थ की हुई कविता से कुछ पंक्तियाँ सुनाना। उन पंक्तियों का भावार्थ बताने को कहना।

६ श्रुत-लेखन के लिए वाक्य तथा शब्द देना। यह सामूहिक रूप में किया जाए।

उपर्युक्त सब बातों से छात्रों के भाषण कला-प्रावीण्य की परीक्षा की जाए। इन सब बातों के लिए प्रति छात्र लगभग दस मिनट की अवधि लगेगी।

आजकल मौखिक परीक्षा ली तो जाती है, लेकिन वह कैसे ली जाती है, इसकी चर्चा न करना ही अच्छा है। कहना इतना ही है, कि परीक्षकों को इसके प्रति ठोस स्वस्थ दृष्टिकोण अपनाना चाहिए, तभी परीक्षार्थी भी गम्भीरतापूर्वक उसे देखने लगेंगे और अभीष्ट फल की प्राप्ति होगी।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(घ) प्रश्न-संग्रह

१. भाषा क्या है ? उसकी विशेषताओं को समझाते हुए शिक्षा के क्षेत्र में उसका महत्त्व स्पष्ट कीजिए।

२. 'भाषा की शिक्षा' का क्या अभिप्राय है ? उसकी क्या आवश्यकता है।

३. अहिन्दी भाषी प्रदेशों की माध्यमिक पाठशालाओं के पाठ्य-क्रम में कौन-कौन-सी भाषाएँ रखी गयी हैं ? उनमें हिन्दी का स्थान निर्धारित कीजिए ?

४. राष्ट्रभाषा की तथा उसकी शिक्षा की आवश्यकता स्पष्ट करते हुए यह समझाइए कि अहिन्दी भाषी प्रदेश में उसकी शिक्षा का क्या प्रयोजन है।

५. 'अहिन्दी भाषी प्रदेशों की पाठशालाओं में हिन्दी की शिक्षा की समस्या और हिन्दी-भाषी प्रदेश की शिक्षा की समस्या एक नहीं हो सकती।' इस उक्ति का कारण देते हुए स्पष्टीकरण कीजिए।

६. अहिन्दी भाषी प्रदेश में आप हिन्दी की शिक्षा का आरम्भ किस कक्षा से करेंगे ? क्यों ? आपके प्रारम्भिक पाठों का क्या स्वरूप रहेगा ?

७. अहिन्दी भाषी प्रदेश की पाठशालाओं की निम्न कक्षाओं में हिन्दी पढ़ाने के लिए आप किस प्रणाली को अपनाएँगे ? क्यों ?

८. व्याकरण-अनुवाद प्रणाली के गुणदोषों के बारे में विवेचनात्मक निबन्ध लिखिए।

९. सम्भाषणात्मक प्रणाली के सिद्धान्त स्पष्ट करते हुए उसकी सफलता-असफलता के बारे में अपने विचार प्रकट कीजिए।

१०. व्याकरण पढ़ाने की सूत्र-प्रणाली और प्रयोग-प्रणाली के गुण-दोषों का विवेचन कीजिए। आप व्यवहार में किसको अपनाएँगे ? क्यों ?

११. व्याकरण के अध्यापन की क्या आवश्यकता है ? माध्यमिक पाठशाला में हिन्दी के व्याकरण की पढ़ाई आप किस कक्षा से शुरू करेंगे ? और क्यों ? आपकी दृष्टि से उसमें कौन-सा व्याकरण पढ़ाना उचित होगा ?

१२. कविता पढ़ाने की क्या आवश्यकता है ? माध्यमिक पाठशालाओं की निम्न कक्षाओं के लिए कविताओं का चयन करते समय आप किन बातों का ख्याल रखेंगे ?

१३. गद्य और पद्य पढ़ाने के उद्देश्यों में क्या फर्क है ? उनकी पाठ-प्रणालियों में क्या फर्क होना चाहिए ?

१४. शिक्षा के क्षेत्र में कहानी का स्थान निर्धारित करते हुए यह समझाइए कि कहानी के पाठ में अध्यापक को किन बातों का ख्याल रखना चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१५. मौखिक–रचना (oral composition) की पढ़ाई तथा चित्र-वर्णन द्वारा रचना (picture-composition) की पढ़ाई का महत्त्व समझाइए।

१६. पाँचवीं कक्षा के हिन्दी के आरम्भिक पाठों की रचना आप किन सिद्धान्तों के आधार पर करेंगे ? क्यों ?

१७. निम्न-लिखित पाठों की रूपरेखा तैयार कीजिए ?

(अ) किसान—५ वीं कक्षा, (आ) एकवचन संज्ञाओं से बहुवचन संज्ञाएँ बनाना—७ वीं कक्षा।

१८. टिप्पणियाँ लिखिए :—

(अ) कविता पढ़ाने का प्रयोजन, (आ) पाठशालाओं में हिन्दी का वातावरण, (इ) 'बातचीत' के पाठ, (ई) हिन्दी के पाठ में प्रादेशिक भाषा का प्रयोग, (उ) निबन्ध-लेखन के पाठ का उद्देश्य, (ऊ) हिन्दी और अन्य भाषाओं के अध्यापकों का परस्पर सहयोग-दान, (ए) डाल्टन योजना और हिन्दी की शिक्षा।

१९. अहिन्दी भाषी बालक हिन्दी में बोलते समय उच्चारण की कौन-कौन-सी गलतियाँ करते हैं ? क्यों ? आप उन्हें कैसे दुरुस्त करेंगे ?

२०. विद्यार्थी पढ़ते समय कौन-सी गलतियाँ करते हैं ? उनकी कारण-मीमांसा करते हुए समझाइए कि आप उन्हें कैसे दुरुस्त करेंगे।

२१. विद्यार्थियों के लेखन में आम तौर पर कौन-कौन-सी गलतियाँ दिखायी देती हैं ? क्यों ? आप उनका निर्मूलन कैसे करेंगे ?

२२. 'हरबार्ट की पंचपदी' की शिक्षा-शास्त्र की दृष्टि से आलोचना कीजिए।

२३. पाठ का चुनाव करते समय अध्यापक को किन बातों का ख्याल रखना चाहिए ? क्यों ?

२४. अध्यापक द्वारा पूछे जानेवाले सवाल कैसे हों ? वह ये सवाल कैसे पूछे ? इन सवालों की आवश्यकता तथा शिक्षा-शास्त्रीय महत्त्व समझाइए।

२५. टिप्पणियाँ लिखिए :—

अ — प्रस्तावना आ — संकलन

इ — उपयोजन ई — स्वाध्याय

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

२६. टिप्पणियाँ लिखिए :—

१. मौखिक पठन (oral.reading)
२. मनोगत पठन (silent reading)
३. दोहराबट (drilling)
४. शब्दकोश का उपयोग
५. पाठ के उपकरण और उनका उपयोग
६. मौखिक परीक्षा

२७. निम्न कक्षाओं में आप हिन्दी के शब्दों का परिचय कैसे कराएँगे ?

२८. श्रुतलेखन (dictation), प्रतिलेखन (transcription), कण्ठस्थ करना (recitation) का भाषा की शिक्षा में क्या महत्त्व है ?

२९. राष्ट्रभाषा के स्वरूप की समस्या को लेकर जो संघर्ष हुआ था, उसका ज़िक्र करते हुए बताइए कि भारत की संविधान-सभा ने इस समस्या को कैसे हल किया है ?

३०. राष्ट्र-लिपि देवनागरी की विशेषताओं को स्पष्ट करते हुए लिखिए कि आपकी दृष्टि में उसमें सुधार की क्या आवश्यकता है। लखनौ लिपि-परिषद के सुझावों की रूपरेखा दीजिए।

३१ टिप्पणियाँ लिखिए :—

१. हिन्दी–हिन्दुस्तानी–उर्दू २. राष्ट्रभाषा का स्वरूप,
३. पोतदार समिति रिपोर्ट ४. मानक नागरी वर्णमाला।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सत्रान्त परीक्षा की उत्तर पुस्तकों को जाँच लेते समय परीक्षक-अध्यापक छात्रों की सामान्य त्रुटियों को इकट्ठा करे और उन्हें लौटा देने पर इस सम्बन्ध में चर्चा करते हुए यह मार्गदर्शन किया जाए कि उन त्रुटियों को कैसे हटाया जा सकता है।

✦ ✦ ✦

(ख) वस्तुनिष्ठ प्रश्न

भाषा की प्रश्न-पत्रिका में वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का स्थान महत्त्वपूर्ण है। यहाँ पर ऐसे प्रश्नों के नमूने पेश किये जा रहे हैं: अध्यापक आवश्यकता के अनुसार औचित्य विचार से अपने लिए प्रश्न तैयार करे।

(१) एक वाक्य में उत्तर लिखना।

जैसे : १ संसार में कौन-सा पर्वत सबसे ऊँचा है ?

२ राम ने वनवास क्यों स्वीकार किया ?

३ दर्जी क्या काम करता है ?

(२) अपूर्ण वाक्य को उपवाक्य अथवा वाक्यांश लिखकर पूर्ण करना।

जैसे : १ राम ने वाली का इसलिए वध किया कि ......।

२ सुग्रीव ने हनुमान आदि वानर वीरों को .... लिए चारों ओर भेज दिया।

(३) वाक्य के रिक्त स्थानों में उचित शब्द वा विभक्ति लिखना।

जैसे : १ लक्ष्मण सीता के ...... थे और लक्ष्मण की ...... उर्मिला सीता की ...... थी।

२ सारनाथ ...... प्रदेश में ...... शहर के निकट है।

३ उस भिखमंगे ...... सहायता करो।

४ मनुष्य को मौत ...... नहीं डरना चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(४) कोष्ठक में दिये हुए शब्दों के उचित रूप का प्रयोग करना।

जैसे : १ (वे) साड़ियों का रंग पक्का नहीं।

२ (विद्यार्थी) पाठ की ओर ध्यान देना चाहिए।

(५) दी हुई सूचना के अनुसार कोष्ठक में लिखे शब्दों के उचित रूप बनाना।

जैसे : १ मैं बरसात शुरू होने पर छाता (लेना)।

— (भविष्यत् काल)

२ आप हमें नकद पैसे (देना)। — (आज्ञार्थ)

(६) वाक्य के रिक्त स्थानों में कोष्ठक में दिये हुए शब्दों अथवा विभक्तियों का यथास्थान प्रयोग करना।

जैसे : १ महीने के शुक्ल पक्ष को ...... और वद्य पक्ष को ...... भी कहते हैं। (बदी, सुदी)

२ रामचरितमानस, रामचन्द्रिका और वैदेही-वनवास क्रमशः —— —— और —— की रचनाएँ हैं। — (केशवदास, तुलसीदास, अयोध्यासिंह उपाध्याय)

३ उस स्त्री — कोई सन्तान नहीं है; उस – बहन भी सन्तान-हीन है। – (की, के)

(७) कोष्ठक में दिये हुए शब्दों में से उचित शब्द को चुनना।

जैसे : १ वह अपने मित्र का (इन्तज़ार-इन्तज़ाम) करते-करते थक गया।

२ मेहनत जितनी ... हो उतना ही अच्छा है। (कमी, कम)

(८) नमूने के अनुसार शब्दों के रूप तैयार करना।

जैसे : **बिल्ली .... बिल्लियाँ**

देवरानी ......

नदी ......

अथवा **एक शाखा ...... अनेक शाखाएँ**

माला ...... —

बहू ...... —

पुस्तक ...... —

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(९) शब्दों के रूप बनाना ।

(अ) भाववाचक संज्ञाएँ	:	गरीब, सफल, सादा
(आ) क्रियाएँ	:	खटखट, स्वीकार
(इ) विशेषण	:	अक्ल, खुशबू
(ई) कर्तृवाचक संज्ञाएँ	:	अभिनय, मदद
(उ) क्रियाविशेषण	:	आदत, मजबूर, जरूरत
(ऊ) विरुद्ध अर्थवाले रूप बनाना	:	खुशबू, पात्र, उचित
(ए) स्त्री-लिंग रूप बनाना	:	तेली, मोर
(ऐ) वचन बदलना	:	भैंस, पोथियाँ

इत्यादि

(१०) विरुद्ध अर्थ के शब्द देना ।
जैसे : गरीब, भला, चिकना

(११) शुद्ध रूप में लिखना ।
जैसे : कीर्ती, बुराइ, तकलिफ

(१२) अर्थ में अन्तर बताना ।

जैसे – राज – राज़, हँस – हंस, देहात – देहान्त ।

(१३) वाच्य-परिवर्तन

(१४) वाक्य के अर्थ को कायम रखते हुए शब्द-भेद में परिवर्तन करके वाक्य को फिर से लिखना ।

(१५) वाक्य-परिवर्तन : साधारण से मिश्र, मिश्र से साधारण आदि ।

(१६) जोड़ियाँ बनाना ।

विभिन्न नमूने : लेखक — कृतियाँ
पेशेवर — औज़ार
फूल — रंग
समानार्थक शब्द

शब्द दो खानों में उचित क्रम को बदलकर दिये जाएँ ।

जैसे : (अ) प्रेमचन्द	......	भ्रमरगीत
मैथिलीशरण	......	सूरसागर
सूरदास	......	गोदान

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जैसे : (आ) किसान ...... करघा
लुहार ...... करौंत
बढ़ई ...... हल
जुलाहा ...... घन

(१७) शब्द रूपों को पहचानना।

जैसे : (अ) लिंग पहचानो : दूकान, आत्मा, व्यक्ति
(आ) वचन पहचानो : आशा, बंगला, रिश्ते

(१८) दिये हुए शब्दों में से संज्ञा, विशेषण छाँटना।

जैसे : सफेद, सदाचार, परीक्षा, रोचक।

इस प्रकार अनेक प्रश्न दिये जा सकते हैं। प्रश्न बनाते समय यह ध्यान रखा जाए कि उसका उत्तर निश्चित है – अर्थात् प्रश्न संदिग्ध न हो। उत्तर जाँचते समय कड़ाई बरती जाए। हिज्जे की गलती हो तो एक में से आधा अंक काट लें, अथवा उत्तर को पूर्णतः गलत मानें। अनुमान से काम करने की आदत से बचाने के लिए गलत उत्तरों के हिसाब से सही उत्तरों को दिये हुए अंकों में से कम किये जाएँ। इससे विद्यार्थी उन्हीं प्रश्नों के उत्तर लिखेंगे, जिनके उत्तर वे ठीक से जानते हों।

(ग) मौखिक परीक्षा

भाषा की शिक्षा का मतलब है – भाषा के भाषण, श्रवण, लेखन, पठन जैसे व्यवहारों में प्रावीण्य का सम्पादन करने में बालकों की सहायता करना। पाठशालाओं में समय-समय पर परीक्षाओं द्वारा यह देखा जाता है कि इसमें बालकों ने कितनी सफलता पायी है। लेकिन हमारी परीक्षाएँ अधिकतर लिखित रूप में होती हैं। वस्तुतः यह पद्धति – केवल लिखित परीक्षा पर्याप्त नहीं है। इसलिए लिखित परीक्षा के साथ ही – विशेषतः भाषा-शिक्षा के क्षेत्र में मौखिक परीक्षा का आयोजन किया जाता है। भाषा के व्यवहार में से अधिकतर व्यवहार मौखिक – भाषण रूप होता है। यह बार-बार देखने में आता है कि अनेक छात्र अच्छी, शुद्ध हिन्दी लिख सकते हैं, लेकिन शुद्ध हिन्दी बोल नहीं सकते। उनकी भाषा-शिक्षा की यह त्रुटि ही मानी जाती है। अच्छी हिन्दी में बोलना आखिर अभ्यास पर ही

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.